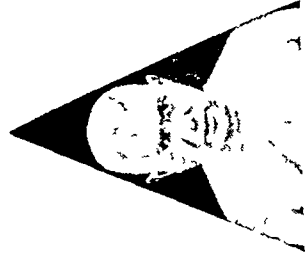


निवेदन ।

स्व० जैनधर्मभूषण ब्रह्मचारीजी श्री सीतलप्रसादजीने वीर स० २४५३ में खण्डवामें चातुर्मास किया था तब आपने वहां ठहरकर इस "प्रतिष्ठासार संग्रह" की रचना की थी। फिर इसके प्रकाशनके लिये खण्डवाकी धर्मोपरायण पचायतने चन्दा करके यह ग्रन्थ अपने रचनेसे प्रकाशित करवाकर इसे "जेनमित्र" साप्ताहिक पत्रके २९ वे वर्षके प्राहकोकी वीर स० २४५५ में भेंटस्वरूप बटवाया था। उस समय हमने २०० प्रतियां विक्रयार्थ अदिक निम्नली थीं जो अल्प समयमें ही विक्रि जानेसे आज २५ वर्षोंसे यह प्रतिष्ठा पाठ नहीं मिलना था और इसकी माग तो आनी हो रहती थी, क्योंकि इसमें पचकल्याणक प्रतिष्ठा विधि हिन्दी अर्थ व हिन्दी कवितामें भी तैयार की गई हैं। इससे यह स्वाध्याय योग्य भी हैं व घर बैठे इसे स्वाध्याय कर एक प्रतिष्ठा देखनेका परोक्ष लाभ मिल सकता है।



इसकी बहुत माग आने पर भी दुःख है कि हम दूम्मे प्रकाशनोके कारण इमे पुन प्रकट नहीं कर सके थे। लेकिन इस सुलभ प्रतिष्ठापाठकी आज हम दूसरी आवृत्ति प्रकट कर रहे हैं जो शालाकार ही रखी गई है।

यह शास्त्र स्वाध्याय करनेयोग्य भी होनेसे यह प्रत्येक मन्दिरमें रखनेयोग्य है तथा प्रतिष्ठाकारक प्रतिष्ठाचार्यके लिये तो यह अतीव उपयोगी है। स्व० पूज्य ब्रह्मचारीजीने इसकी रचना खण्डवामें ४-५ मासमें रातदिन परिश्रम करके ही तैयार की थी जो अतीव उपयोगी बन गया है।

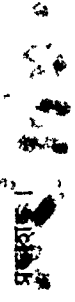
अत जहां २ यह प्रतिष्ठा शास्त्र न हो अवश्य २ मगा लेना चाहिये और प्रतिष्ठाके लिये व स्वाध्यायके लिये इसका उपयोग करना चाहिये।

स्व० ब्र सीतलप्रसादजी लिखित इस शास्त्रकी भूमिका जैसीकी तैसी दी गई है।

वीर स० २४८८ स० २०१९
सूरत,
ता० २७-४-६२

निवेदक—

मूलचन्द किसवदास कापड़िया,



परमात्म अहंत्वं प्रभु, सिद्ध शुद्ध सुखदाय ।
आचारज उपध्याय मुनि, वन्दू मस्तक नाय ॥

साधारण जैन जनता विना दूसरोंके आलम्बनके श्री बिम्ब, मन्दिर व वेदी प्रतिष्ठा कर सके इसलिये यह सुगम प्रतिष्ठाविधि समझ करके लिखी गई है। इनमें ध्यान यह रक्खा गया है कि देखनेवालोंको ऐसा विदित हो कि मानो हम साक्षात् तीर्थंकरके जीवनचरित्रको ही देख रहे हैं। तथा जितना पूजन पाठ आवश्यक है वह रक्खा गया है। इसके समग्रमें श्री जयलेन, आशाधर तथा नेमिचन्द्र इन तीन सुदृष्ट प्रतिष्ठापाठोंकी सहायता ली गई है। इस पाठके सहारेसे वह कठिनाई मिट जायगी जो प्रतिष्ठा करानेवाले पंडितोंकी खोजमें होती है। तथा कोई २ पंडित लोभवश यजमानोंको बहुत तग करते हैं तथा कोई २ यजमानोंके कहे अनुसार समयकी तगीसे बहुतसी विधि छोड़ देते हैं व पूजापाठमें कमी कर देते हैं, वह सब दृष्टिये निकळ जायगी।

इस पुस्तकमें पंचकल्याणकके दृश्य श्री जिनसेनाचार्यकृत महापुराणके अनुसार दिखाये गये हैं। श्री जयसेन आचार्यकृत प्रतिष्ठापाठ सबसे पुराना है तथा उसकी रचना देखनेसे विदित होता है कि यह आचार्य आध्यात्मरसिक व ध्यान तपमें लीन तपस्वी थे। इनका दूसरा नाम वसुविंद था। प्रशस्तिमें उन्होंने अपनेको श्री कुन्दकुन्दाचार्यका शिष्य लिखा है, जैसा इस श्लोकसे प्रगट है—

कुन्दकुन्दाग्रशिष्येण जयसेनेन निर्मित । पाठोऽय सुधियां सम्यक् कर्तव्यवास्तु योगेत् ॥ १२३ ॥

इसलिये यह पाठ १९०० वर्षका पुराना है क्योंकि श्री कुन्दकुन्दरामी विक्रम सन्वत् ४९ में विद्यमान थे इसको अपतीति करनेका कोई कारण नहीं दिखता है। दूसरा पाठ पंडित आशाधरकृत १३ वीं शताब्दीका है उसे पंडितजीने विक्रम सं० १२८५ में नलकच्छपुरमें पूर्ण किया था जैसा इस श्लोकसे प्रगट है—

विक्रमवर्ष सपचाशीतिद्वादशशतस्वर्तितेषु । आश्विनसितांशदिवसे साहसमल्लापराक्षस्य ॥ १९ ॥

तीसरा पाठ यह आशाधरजीके पीछेका मालूम होता है जैसा मराठी टीकाकारने दूमरे श्लोकके अर्थमें लिखा है। यह नेमिचन्द्र ब्राह्मणकुली ब्रह्मचारी तथा विद्वान् थे। जैसा कि प्रशस्तिके श्लोक न० १ से प्रगट है वहां सद्गर्णी शब्द आया है। यह तीसरा पाठ विधिके वर्णनमें सबसे बड़ा है। हमने जयसेनकृत प्रतिष्ठापाठको प्राचीन व निर्ग्रन्थ मुनिकृत मानकर मुख्यतासे उसीका आधार लिया है। इस पाठमें पाच परमेश्वरका ही पूजन यत्र तत्र है। तथा दूमरे दो पाठोंसे कहीं २ विशेष पूजन, विधि व मंत्र समझ किये हैं।

भाषा स्तवन, पूजनादि इसलिये रच दी गई हैं कि प्रतिष्ठा देखनेवाली आधुनिक जनताको तीर्थंकर भगवानके कल्याणका साक्षात् आनन्द आजावे और वे समझते हुए महान पुण्यबन्ध करें। कवितामें मत्तरगलालकृत चौवासी पूजाकी सहायता ली गई है। उसीके छन्दोंके अनुसार अक्षर मात्रा जोड़कर इस पाठके छन्द रचे गए हैं। जिस विधिसे मुझ अल्पबुद्धिने यह संग्रह किया है उसके अनुसार यदि प्रतिष्ठा की जायगी तो साक्षात् लाभ होगा तथा जैन अजैन सब देखकर जैनधर्मका प्रभाव अपने मनमें जमाएंगे। जहातक बना है कोई विधि नहीं छोड़ी गई है। इस पाठमें जहा जहां गान व कविता है उसको बजिसे पढा जावे। जिसके बोलनेके लिये जो पाठ है वह यदि न कह सके तो दूसरा उसके बदलेमें उस कविताको गावे, इसमें कोई हर्ज नहीं है।

मैं इस योग्य तो था नहीं कि इस अति दुर्लभ कार्यको करू परन्तु धर्ममित्र पंडित अजितप्रसादजी एम ए एलएल बी वकील लखनऊकी वर्षोंकी प्रेरणा तथा श्री जिनेंद्र चरणकमलकी भक्ति ही ने इस कार्यको सम्पादन कराया है। विद्वान जन अवश्य मेरे इस साहस पर हंसेंगे। मैं उनसे क्षमा चाहता हुआ यह प्रार्थना करता हू कि इन्में जो कुछ हों उनके सम्बन्धमें हमें सूचित करे जिससे हम उनके सुधारका उपाय करे।

जज्ञा पर प्रतिम के अभियेकका वर्णन आया है वहा पर हमने श्री आदिपुगणको रीतिके अनुसार क्षीरजल तथा गंधोदकसे न्दवन होना दिखाया है। जिनको दधि आदिसे भी न्दवन करना इष्ट हो वे अपनी इच्छानुसार कर सकते हैं।

आश्विन कृष्णा ९,
वीर सं० २४५३, विक्रम सं० १९८४ }
खण्डवा, ता० १९-९-२७

जैनधर्मका सेवक—

ब्र० सीतलप्रसाद ।



विषयसूची

पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
७६	अध्याय तीसरा—गर्भकल्याणकविद्यालय ।	१
७८	इन्द्रकी स्वर्गपुरीकी सभा व कुबेरको आदेश ...	३
८०	नगर राजमहलकी रचना, मातापिताकी भक्ति, बुरजवृष्टि	४
८१	माताका गर्भ देवियों द्वारा शोधन व माताकी भक्ति	६
८२	माताका स्वप्न देखना	६
८३	नित्य पूजा होम	७
८४	राजाकी सभामे स्वर्णका फल	९
८७	इन्द्रोका आकर गर्भकल्याणक करना	१०
९१	गर्भकल्याणकमे २४ तीर्थकर माताकी पूजा	१२
९२	देवियों द्वारा माताकी सेवा करना व प्रशोत्तर	१५
	५० उपयोगी प्रश्नोके उत्तर	१६
	अध्याय चौथा—जन्मकल्याणक ।	१६
९५	प्रसुका जन्म व इन्द्रोका आना व सुमेरुपर ले जाना	१९
९६	सुमेरु पर्वत, क्षीर समुद्र तथा मंडपकी रचना ...	२०
९८	तीर्थकर भगवानका अभिषेक	२५
१०४	जन्मकल्याणकमे २४ तीर्थकोकी पूजा ...	२८
	राज्यागणमे भगवानका पधारना, माता पिताको अर्पण, ताडवस्त्य व पूर्वभवोका वर्णन	३२
	अध्याय पांचवा—गृही जीवन ।	३७
१११	दौलना रूप क्रीडाका उत्सव	४१
११२	तीर्थकरका राज्याभिषेक	४५
	अध्याय छठा—तपकल्याणक ।	४८
११६	भगवानको वैराग्य-वारह भावना चितवन	५४
११८	लौकिक देवोका आना	५८
११९	इन्द्रका पालकी सहित आना	६६
१२०	भगवानका राज्य त्याग व पालकीपर चढ़ बन जाना	

पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१	अध्याय पहला—आवश्यक विधि ।	१
३	प्रतिष्ठा लक्षण (२) जिन मन्दिर निर्माण विधि ...	३
४	मन्दिरजीकी नींव रखना	४
६	प्रतिष्ठा बनानेकी विधि	६
७	प्रतिष्ठा करनेके लिये सुहृते	७
९	प्रतिष्ठा करनेका मंडप बनानेकी विधि... .. .	९
१०	प्रतिष्ठा करनेके लिये आवश्यक पात्र इन्द्रादि	१०
१२	नांदी विधान	१२
१५	मंडप रक्षा विधि व ध्वजादंड स्थापन... .. .	१५
१६	जप करनेकी विधि (११) याग मंडल बनानेकी विधि	१६
१९	मंडलमे श्री जिन विम्ब स्थापन	१९
२०	याग मंडलकी पूजाकी तयारी	२०
२५	अंग शुद्धि, न्यास व सकलीकरण क्रिया.	२५
२८	द्वितीय अध्याय—याग मंडल पूजा विधान ।	२८
३२	याग मंडलकी पूजा—२५० अर्घ्योंकी	३२
३७	अभिषेक विधि (३) होमकी विधि	३७
४१	मंडलकी पूजा	४१
४५	प्रथम बलयके १७ अर्घ	४५
४८	दूसरे बलयमें मृत २४ तीर्थकर अर्घ	४८
५४	तीसरे बलयमें वर्तमान २४ तीर्थकर अर्घ	५४
५८	चौथे बलयमे भावी २४ तीर्थकर अर्घ	५८
६६	पाचवे बलयमे २० विदेह वर्तमान तीर्थकर अर्घ... .. .	६६
	छठे बलयमे आचार्यके ३६ गुणोके अर्घ	
	सातवें बलयमे उपाध्यायके २५ गुणोके अर्घ	
	आठवें बलयमे साधुके २८ मूलगुणोके अर्घ	
	नौमे बलयमें ४८ ऋद्धियोंके अर्घ	

- (५) तपोवनमें तप लेनेकी क्रिया
माटुका यत्र व प्रतिमा पर अक्षर न्याम
प्रतिमा पर संस्कार ..
- (६) तपकल्याणकी पूजा
२४ तीर्थकरोंकी पूजा
अध्याय सातवां-ज्ञानकल्याणक ।
- (१) भगवानका प्रथम आहार
(२) भगवानका क्षपकश्रेणी पर आरूढ होना
माटुका यत्र
- (३) तिलक दान विधि
(४) अधिवासना विधि
(५) मुखोद्घाटन क्रिया
(६) नयनोन्मीलन क्रिया
(७) केवलज्ञान प्राप्ति ..
(८) समवशरण रचना व पूजा ..
चौबीस तीर्थकरके ज्ञानकल्याणकी पूजा
- (९) भगवानका धर्मोपदेश
(१०) भगवानका विहार
(११) धर्मोपदेशकी सभा
अध्याय आठवां-मोक्षकल्याणक ।
- (१) मोक्षकल्याणक विधि
२४ तीर्थकरोंकी मोक्षकल्याणक पूजा
अध्याय नौवां-अंतिम होम, अभिषेक व शांति ।
- (१) जिन यज्ञ विधान
(२) सिद्ध पूजा ..
(३) महर्षि पूजा...
(४) स्वस्ति पाठ..

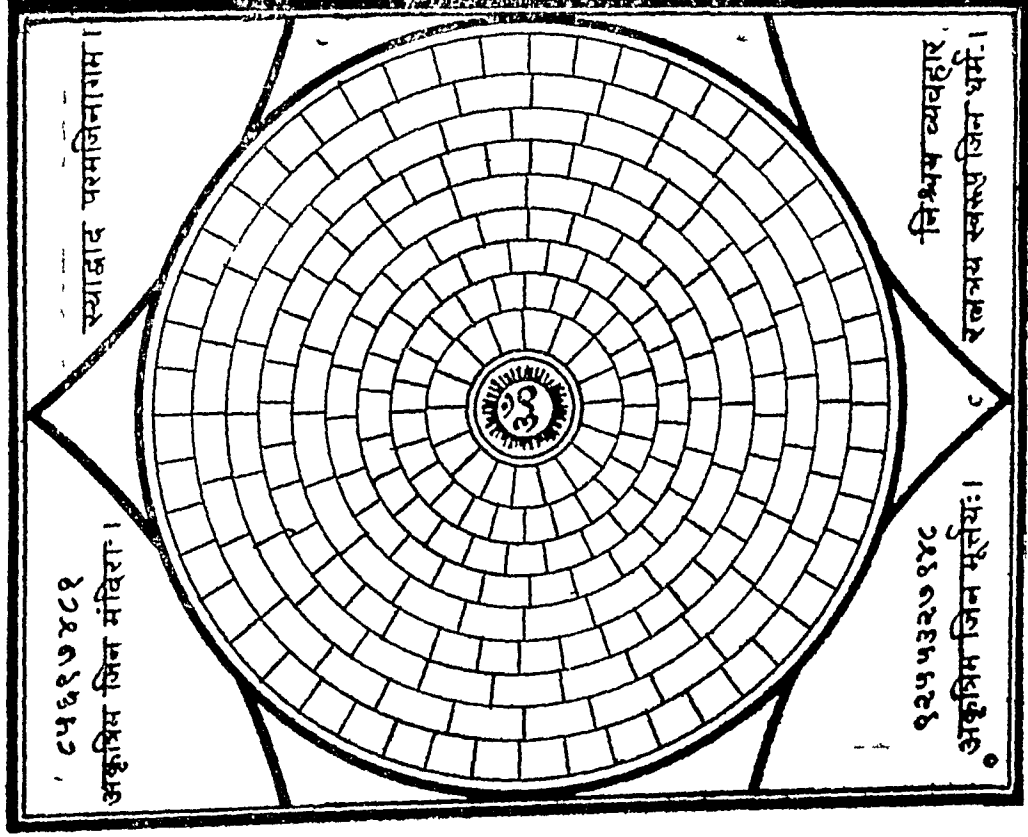
पृष्ठ	अभिषेक विधि	पृष्ठ
१२२	(५) अभिषेक विधि	१७१
१२३	(६) शांति धारा विधान ..	१७२
१२४	अध्याय दशवां-आचार्यादि विम्बप्रतिष्ठा विधि ।	...
१-६	(१) सिद्ध प्रतिविम्ब प्रतिष्ठा	१७८
१२७	(२) आचार्य प्रतिविम्ब प्रतिष्ठा विधि	१८०
...	(३) उपाध्याय विम्बप्रतिष्ठा विधि ...	१८२
१३०	(४) माधु विम्बप्रतिष्ठा विधि	१८४
१३३	(५) श्रुतस्कन्ध प्रतिष्ठाविधि	१८६
१३४	(६) चरणचिह्न प्रतिष्ठा विधि	१८९
१३६	अध्याय ग्यारहवां-मंदिर व वेदीप्रतिष्ठा विधि ।	...
१३७	(१) मंदिर व वेदीप्रतिष्ठा विधि	१९०
१३८	(२) सिद्ध यत्र या विनायक पूजा	१९३
१३९	(३) मंदिरके ऊपर कलश व ध्वजा चढ़ाना .	१९७
१४०	अध्याय बारहवां-भक्तिया ।	...
१४१	(१) सिद्ध भक्ति पाठ	१९८
१४४	(२) श्रुत भक्ति पाठ	१९९
१४८	(३) चारित्र्य भक्ति पाठ	२००
१५३	(४) आचार्य भक्ति पाठ	२०१
१५४	(५) योग भक्ति पाठ	२०१
१५५	(६) निर्वाण भक्ति पाठ	२०२
१६०	(७) तीर्थकर या अर्हन्त भक्ति पाठ ..	२०४
...	(८) शांति भक्ति पाठ	२०६
१६६	(९) समाधि भक्ति पाठ	२०८
१६८	(१०) प्रशस्ति	२०८
१६९	(११) नित्य नियम पूजा, सिद्ध पूजा	२०९
१७०	(१२) शांतिपाठ व विसर्जन	२२०
...	(१३) भाषास्तुति पाठ	२३१

विनायक यंत्र



सिद्धयंत्र

यागमंडलका नकशा



विधि—१ बलय बनावे। सुन्दर कोठे इम तरङ्ग बनावे—

(१) में १७, (२) में २४, (३) में २४, (४) में २४, (५) में २०, (६) में ३६, (७) में २५, (८) में ४८ व कोनेमें ४ इस प्रकार कुल २५० कोठे सुन्दराकार बनावे।

प्रतिष्ठासारसंग्रह

(पञ्चकल्याणकदीपिका)

आवाशयुक्त इच्छया ।

१—प्रतिष्ठा—या स्थापना—यह नाम, स्थापना, द्रव्य, मान चार निक्षेपोंमेंसे स्थापना निक्षेपमें गभित है । किसी भी अनुपस्थित व्यक्तिकी तदाकार मूर्ति उसके स्वरूपको बतानेमें समर्थ होती है । इसी हेतु तीर्थंकरोंकी अर्होंकी ध्यानाकार मूर्ति उनके ध्यानके स्वरूपको दर्शकके मनमें अंकित कर देती है । प्रतिष्ठाका लक्षण श्री जयसेन आचार्यने इस भाति लिखा है—
प्रतिष्ठानं प्रतिष्ठा च, स्थापनं तत्प्रतिक्रिया । तत्समानात्मबुद्धित्वात्तदभेदः सत्त्वादिषु ॥

भावार्थ—प्रतिष्ठान, प्रतिष्ठा, स्थापन, प्रतिक्रियाका भाव यह है कि वसीक समान अपनी बुद्धि हो जाव—अर्थात् यह भाव इसके वह वही स्तवन है—स्तवन प्रकाशमें इवकी जकारत है ।

यत्रारोपात् पञ्चकल्याणमंत्रैः सर्वज्ञस्वस्थापनं तद्विधानैः । तत्कर्मालुहापने स्थापनोक्त, निक्षेपेण प्राप्यते तत्तथैव ॥
भावार्थ—जहाँ पञ्चकल्याणक मन्त्रोंके द्वारा जिलमें वह गुण नहीं है उवमें उव गुणके स्थापन करनेसे तथा उव वरमन्धी विधानके द्वारा सर्वज्ञपना स्थापित किवा जावे वह प्रलिष्ठा है । पूजनपाठादि क्रियाके द्वारा जिलमें स्थापना करनेसे तथा उव वैसे ही वमक्ष लिखा जाता है—भर्ता सर्वज्ञकी मूर्तिके वहाँसे सर्वज्ञका भाव हरममें अंकित हो जाता है ।

वैसे राजाकी स्थापनामें प्रसाधमृदकी व क्रियाकी आवश्यकता है वैसे मूर्तिकी प्रतिष्ठामें जैन सनकी व पूजापाठादि क्रियाकी आवश्यकता है जिलके वह मूर्ति पूजनीय व माननीय होजावे ।

श्री जिनमन्दिर निर्माण—श्री जिनमन्दिर ऐसा बनाना चाहिये जहाँ धर्मसाधन मले प्रकार होसके—गृहस्थ आवक व आविकार्ये पूजा, सामायिक, ब्राह्मसमा, दान आदि कर सकें ।

प्रथम तो वह स्थान ऐसी जगह हो जहाँ आसपास विघ्नकारक व निघ्न मांसहारी, मद्यपानी आदि मनुष्योंकी बस्ती न हो । मन्दिरमें जो पूजापाठादि हो उसमें किसी तरहका विघ्न न आना चाहिये । मन्दिरके लिये इतनी बड़ी जगह लेनी

चाहिये जिसकी चौहद्दीके भीतर बगीचा हो, बीचमें मन्दिर बनवाया जावे । इसका हेतु यह है कि बाहर सबकका कोलाहल धर्मकार्योंमें विद्य न कर सके । मन्दिरजीमें मुख्य वेदीके चारों तरफ प्रदक्षिणा रहनी चाहिये । सामने इतना बरा चौक छाया हुआ रहना चाहिये कि नरगरी बिना बाधाके पूजा पाठ सुन सकें । वेदीका बहुतरा नामसे कुछ ऊँचा होना चाहिये । उसके आगे पूजा करनेके लिये नामिके बराबर मेज हो । इस चौकमें इना व रोशनी भले प्रकार आ सके । इसलिये बाहरसे खिचकियें दोनों तरफ वेदीके अगल बगल होनी चाहिये । छान्दसमा करनेका स्थान ऐसी जगह होना चाहिये कि पूजा करते हुये भी छान्दसमा होसके इसलिये वेदीके चौकको बाहर कोटसे बन्दकर द्वार रहना चाहिए । द्वारके बाहर कुछ दर जहाँ आवाज न आ सके, एक बहा दालान छास्रपमाका हो । उसके एक ओर स्त्रियोंके बैठनेका स्थान हो, दूसरी ओर एक ऐसा शालान हो जहाँ सरस्वती मण्डार कोठा हो व आगे यास्रस्वाध्याय करनेकी जगह हो ।

इस दोनों दालानोंमें भी बाहरसे खिचकियां रहनी चाहिए जिससे रोशनी व वायु भले प्रकार आ सके । यहाँ एक ऐसा कमरा बनाना चाहिये जिसके भीतरसे खिचकियां यमीवेकी तरफ हों व जो बन्द कर लिया जावे व भीतर भव्य जीव शान्तिपूर्वक सामायिक कर सके । प्रयोजस यह भ्याजमें रखा जावे कि पूजा, छान्दसमा, यास्र-स्वाध्याय व सामायिक चारों काम एकसाथ हो सके तो भी कोई बाधा किसी काममें नहीं आनी चाहिए । बगीचेमें फल फूलके सुगन्धित वृक्ष हों व इधर उधर बैठनेके स्थान बने हों जिसमें धर्मत्मा माई ध्यान कर सके या परस्पर अर्पचर्चा कर सके ।

इसी गार्डीवेके कोटमे लगते हुये कुछ कमरे ऐसे हों जहाँ औषधालय व विद्यालय हो सके, कुछ कमरे ऐसे हों जहाँ परदेसी, रथानी व यात्री ठहर सकें । कुछ बूकानें भी कोटके बाहर निकाल दी जाय तो कुछ हर्ब नहीं है । बगीचेमें एक बिरा हुआ वाड़ा ऐसा छोह दिया जावे जहाँ पर त्यागीगण मल निस्तार कर सकें । ऐसे मन्दिरमें वेदी एक हो वा तीन हो परन्तु हरएकमें मूलभायक बड़े पुष्पाकार विराजमान करने चाहिये जिनका दर्शन दूरसे भी होसके । एक वेदीमें एक ही प्रतिमा पाषाण या धातुकी रही अवगाहत्याकी रखनी चाहिये । मात्र एक प्रतिमा धातुकी छोटी रहे जो अभिषेकादि व श्योत्सवादिके समय कालमें लाई जा सके । एक वेदीमें बहुत प्रतिमाओंकी पद्धति ठीक नहीं है । अरइत भगवान् एक गन्धकुटीमें एक ही विराजमान होते हैं ।

पण्डित आषाढजीकृत प्रतिष्ठाभाष्यद्वारमें कथन है कि ऐसी जमीनको मन्दिरके लिये पसन्द करे जो चिकनी हो व सुगन्धित हो व जिसमें वृष आदि उगती हो । नीचे उसके सुग्दा दंगेह गढ़ा हुआ न हो । उत्तम भूमिकी पहिचान यह है कि उस भूमिको एक हाथ गहरी व एक हाथ चौड़ी लग्नी खोदे । निकली हुई मिट्टीसे फिर उस गढ़ेको भर दे, यदि कुछ

मिट्टी बचे तो सम्झना बाहिये भूमि उत्तम है। यदि समान नर आवे तो उसे मध्यम जाने। यदि गढ़ा न मर सके तो उस भूमिको अशुभ समझे। दूसरी परिस्थान यह बताई है कि सूर्य छिपनेके पीछे उस जमीनके चारों तरफ बटारिका परकोटा बनाकर हवा रोक ले फिर “**हो हं फट**” इस मन्त्रको १०८ बार पठकर पुष्प डाले। उस भूमिकी चारों दिशाओंमें कबो मिट्टीके चार बड़े रखे। उनपर बस खराबे घीसे भरे हुये रखे उसमें पूर्वादि दिशाओंमें क्रमसे सफेद, लाल, पीली, काली चती डाले—दीपक जलावे।

अब तक घी रहे तबतक चार आदमी दीपकके पास बैठे बराबर पमोकार मन्त्र पढ़ते हुए मन्त्र जपते रहें। यदि घीकी समाप्ति तक बत्तियां छाफ जलती रें तो भूमिकी शुभ कहना, यदि बुझती हुई मालूम पड़े तो अशुभ समझना चाहिए। मन्दिर निर्माणके सम्बंधमें श्री जयसेनाचार्यजी लिखते हैं कि शुद्ध स्थानमें तथा नगरमें या चनमें या नदीके पास व तीर्थकी भूमिमें विस्तारयुक्त शिखर और ध्वजा सहित जिन मठन बनवावे। रूप, बाग्ही, तालाब, नदी, पगीचा इनकरि शोभित और कीटकादि जन्तुओंसे रहित व मसान तथा शूली आदिके स्थानसे रहित व कले हुये पाषाणोंसे रहित भूमि मन्दिरकी होनी उचित है।

नोट—मन्दिरश्रीको शिखरबन्द बनामा उचित है। गृह चैत्यालय अपने वाके पास या छतके ऊपर हो सकता है जहाँ इच्छानुसार काल तक प्रतिमा रह सकती है। यदि गृहस्थी पूजाके लिये समर्थ नहो तो वह प्रतिमाश्रीको जिनमन्दिरमें विरानमान कर सकता है।

श्री जयसेनाचार्यजी लिखते हैं कि मन्दिरका मुख पूर्व, उत्तर व कदाचित् पश्चिम भी रहस्ये—

“**मुखं तु शुक्रीतर पश्चिमासु, कुर्याज्जिनेशाख्यकस्य मुख्यं ॥ ३३ ॥**

३—मन्दिरकी नीब ३ खना—शुभ दिनों नीब खुदावे और उसे पूजासे शुद्ध करे। फिर पत्थर आदिसे मरकर भूमिके बराबर करे। नीब खोदने पर शिला रखनेके लिये इस प्रकार पूजा करे—नीबके पास ही एक पत्थरपर या चौकी पर सिंहासन विराजमान करके जिन प्रतिमाको पचावे। मुख्य पूजक अनेक नरचारियोंके साथ पूजा करे। पहले तो प्रतिमाका अभिषेक करे फिर ऋद्रव्यसे नित्य देव काँच गुरु पूजा व सिद्ध पूजा करे फिर पाँच शिला अथवा पकी हुई ईंट जो पादमें रखी हों उलको धोकर चन्द्रसे साधिया करे फिर नीबके मन्त्रको १०८ बार पठकर पाँचों शिलामोंपर पुष्प छोड़े।

मंज—हो ह्रीं नमो अर्द्धभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः सिद्धेभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः सूरिभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः पाठकेभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः सर्वसाधुभ्यः स्वाहा।। अथना प्राकृत गमोकार मंत्रमें पहले ॐ हीं अन्तमें

स्वाहा जोरकर छपे तथा पांच ठाँवके कलश भी रखें जिनको भी चोकर साधिया बनाकर भीतर पाँच तरहके रत्न कमसे डाल दें तथा तबिका सिद्ध यत्र या विनायक यंत्र बनाकर उसमें नीच रखनेकी विधि, मूल सह, कुन्दकुन्दान्नय आदि व मन्दिर बनानेवालोंके नामादि लिखें । मंत्र जपनेके पीछे पहले चार कोनोंमें व एक मध्यमें पाँच शिवा रखे फिर उन शिवाओंके ऊपर पाँचों कलशोंको रखे । नीचेके कलशके भीतर श्रीका जलता हुआ दीपक रखते तथा कलशके नीचे पहले यन्त्र स्थापन करके फिर कलशको रखें । इस कलशको ढँक देये । शिला व कलश रखते समय बाजे बजवावे फिर नीचको भरवावे । पश्चात् कारीगरोंको दान देवे फिर पूजा विसर्जन करे । विनायक यन्त्रका वर्णन अध्याय १० में है ।

४-प्रतिष्ठा बनानेकी विधि-प्रतिष्ठा बनवानेके लिये पहाड़से उत्तम मोटी शिला लानी चाहिये । वह शिला प्रासिद्ध स्थानकी चिकनी, ठण्डी, मोटी, सुन्दर, मज्जुत, सुगठित, ठोस व अच्छे रङ्गवाली हो । बिदुरेखा आदि दोष न हों व उसकी ध्वनि भी अच्छी हो । उम शिलाको निकालकर घोड़े तथा साधिया बनाये तथा वहाँ नित्य देव ब्राह्मण गुरु पूजा व सिद्ध पूजा करके फिर १०८ बार णमोकार मंत्र ॐ ह्रीं पहले व स्वाहा पीछे लगाकर पढ़ें और उसपर पुष्प डालें । फिर पूजा विसर्जन करके उसको लावे । जिन मंदिरकी तीन प्रदक्षिणा देकर शुभ दिनमें उम शिलाको सुगन्धित औषधियोंसे घोकर मन्दिरमें रखे तथा सिद्ध स्तुति व स्मृति पाठ पढ़े । फिर शुभ दिनमें कारीगरोंको मूर्ति बनानेके लिये सौंपे । कारीगर अच्छो निगाहवाला, शिरणसास्त्रका जाननेवाला, मदिरा मांसादिका त्यागी, पूर्ण अङ्गवाला, बतुर, क्षमानान व मन, वचन कायसे शुद्ध हो । वह कारीगर जबतक प्रतिष्ठा न बन जावे नियमसे मोचन करे-संपन्न रूप रहे, प्रयत्नपूर्वक पाले तथा सुभीते-से काम करे-उससे जदवी न कराई जावे ।

प्रतिष्ठाका लक्षण पंडित आश्वघोषजीने कहा है—

शान्तप्रसन्नमधुरधनासाग्रथाधिकारश्च । सम्पूर्णभावरुचुचिद्भागं लक्षणाच्चित्तं ॥ ६३ ॥

रौद्रादिदोषनिर्मुक्त प्रातिहार्यार्थकयक्षयुक्त । निर्मोघ्य विधिना पीठे जिनचिम्बं निवेशयेत् ॥ ६४ ॥

भावार्थ—जो शान्त, प्रसन्न, मधुर, नासाग्रस्थित अविकारी दृष्टिवाली हो, जिसका अङ्ग वीतरागतासे पूर्ण हो, अनुपम वर्ण हो व शुभ लक्षणों सहित हो, रौद्रादि बाह्य दोषोंसे रहित हो, अशोक वृक्षादि प्रातिहार्योंसे युक्त हो और दोनों तरफ यक्ष यक्षीसे वेष्टित हो ऐसी जिन प्रतिष्ठाको बनवाकर विधि सहित सिंहासन पर विराजमान करे ।

१-दोष ये हैं—रौद्र, कृष्णांग, सखिशांग, चिपिटनासिका, विकल्प नेत्र, हीममुख, महा उदर, महा हृदय, महान्यस, महा कटी, महा नाद, हीन जंवा, शुष्क जंवा ।

वृत्तिष्ठा—

॥ ५ ॥

दृष्टि ऐसी होनी चाहिये—
 नास्यन्तोन्मीलितास्तदा न विस्फारितमीलिता । निर्धगृह्वंमद्योदृष्टिर्जयित्वा प्रयत्नतः ॥
 नासाप्रनिहिता शान्ता प्रसन्ना निर्विकारया । वीतरागस्य मध्यस्था कर्तव्या हृष्टिहृत्तमा ॥
 अर्थात्—न तो बिलकुल मुंदी हो न फैली हुई हो न तिरछी हो न ऊपरको हो न नीचेको हो । इन दोषोंको बचा-
 कर नासके अप्रमाणमें बरी हुई दृष्टि, आंठ, प्रपन्न, निर्विकारी माध्यस्थ ऐसी दृष्ट वीतराग प्रतिमाकी होनी चाहिये ।
 प्राचीनकालमें अर्द्धतकी प्रतिमामें पापाणके ही छत्र चमरादि प्रातिहार्य बने होते थे । दक्षिणमें जो प्राचीन अत्र
 मूर्तियां मिलती हैं वे सब छत्र चमरादि प्रातिहार्य सहित ही मिलती हैं । इस उतर भारतमें अलगसे छत्र चमरादि चोरी
 लगानेका रिवाज है सो पुराना नहीं है । पाषाण या चातुमें ही छत्र चमरादि बना देनेसे कोई अंका छत्र चमरादिको चोरी
 जानेकी भी नहीं होती है । जिस प्रतिमामें प्रातिहार्य नहीं बने होते हैं वह प्रतिमा सिद्ध भगवानकी होती है । कहीं कहीं
 प्राचीन प्रतिमाओंमें यक्ष शक्तिीके स्थानमें दानों और दो चमरेन्द्र बने हुये मिलते हैं ।

श्री जयसेनाचार्यजीने मूर्तिकारूप ऐसा लिखा है—

स्वर्णरत्नमणिरौप्यनिर्मितं, स्फटिकासलशिलायकं । उत्थितान्बुजमहासनांगितं, जैनविम्बमिह शस्यते बुधैः ॥ ६४ ॥

भाषार्थ—सुवर्ण, रत्नमणि, चांदीसे निर्मित हो व स्फटिक व निर्दोष शिलासे बनी हो व कायोत्सर्ग तथा पद्मासन
 कर अंकित जिनैन्द्रका विम्ब बुद्धमानोने सराहा है ।

श्लोक १५१ से १८२ में विम्ब बनानेकी जो विधि बताई है उसमें लिखा है कि विम्ब ऐसा हो कि विम्बमें श्री
 बुधलक्षण हो व नख केण रहित हो । कायोत्सर्ग व पद्मासन प्रतिमाकी माप वहां बताई है सो उस पाठको देख कर समझ
 लेना चाहिये ।

श्लोक १८० व १८१ उपयोगी हैं । कहा है—
 सुलक्षणं भावबिबुद्धहेतुकं, सम्पूर्णसुद्धावयधं द्विगमधरं । सत्प्रातिहार्यैर्निजचिह्नमासुर, संकारयेद्विम्बमथार्हतः ॥
 शुभम् ॥

सिद्धिभराणां प्रतिमाऽपि योऽप्या, तत्प्रातिहार्यादि विना तथैव । आचार्यसत्पठकसाधुसिद्धक्षेत्रादिकानामपि
 भा. व. बुद्धयै ॥

भाषार्थ—अर्द्धतका विम्ब सत् लक्षण सहित शान्त भावको बढानेवाला, सम्पूर्ण अङ्गोपाङ्ग शुद्ध दिगम्बर रूप आठ
 प्रातिहार्य सहित व अपने विद्भसे प्रकाशमान करना योग्य है । सिद्ध परमेश्रीका विम्ब भी प्रातिहार्य विना स्थापना योग्य है

तथा शत्रुओंकी हृदिके लिये आचार्य, उपाध्याय, साधु तथा सिद्ध क्षेत्र आदिको प्रतिमा भी कानानी योग्य है ।

नोट-इससे सिद्ध है कि आठ प्रतिहार्य सद्धित प्रतिमा अर्द्धतकी, प्रातिहार्य चिना सर्व अङ्गोपाङ्ग सहित प्रतिमा सिद्धकी व पीछी कण्ठक सहित प्रतिमा आचार्य, उपाध्याय, साधुकी तथा समेदशिखादि क्षेत्रोंको मूर्ति ये सब बन सकती हैं । जो वातुमें छिद्र काके सिद्धकी प्रतिमा बनाये हैं सो ठीक नहीं है । इस प्रतिमापर आपनमें चिह्न खुदाना चाहिये । जिस प्रतिमाको जिस तीर्थकाकी प्रसिद्ध काननी हो वर चिह्न तथा उसके साथ प्रतिष्ठाकी मिति मन्वत् मुरुमङ्ग कुन्दकुन्दान्नाय आदि व प्रतिष्ठा काननेवाले श्रावकादिका परिचय सब खुदवा देना चाहिये । बहुत प्राचीन प्रतिमाओंमें लेख नहीं मिलते हैं, यान्तु इस कालमें लेख लिखना बहुत उपकारी है ।

५-प्रतिष्ठा करनेके लिये सुहूर्त-प्रतिष्ठा काननेके लिये शुभ सुहूर्त निकलना लेना चाहिये तब ही प्रतिष्ठा काननी योग्य है । जो मुख्य प्रतिष्ठाकारक हो उसके नामसे सुहूर्त निकलनाया जाये । श्री जयसेनाचार्यजीने श्लोक १८७से २०२में इस विषयका वर्णन किया है उसका कुछ जरूरी आनने योग्य भाग यह है कि मङ्गल, रविवार, अशुभकारको छोड सब वार शुभ हैं; अमावस्या, पूर्णिमा, एकादशी मना है तथा जिस तीर्थकाकी प्रतिमा प्रतिष्ठा कावे, जिस तिथिमें जो कल्याणक हुआ हो उस तिथिमें वर कल्याणक एत है तथा रविवारकी अष्टमी, सोमवारकी तीसरी, मङ्गलवारकी तीसरी, बुधवारकी द्वादशी व दोहर, शुक्रवारकी दसमी- पञ्चमी व पूर्णिमा व शुक्रवारकी छठ व पडिवा, अशुभवारकी चौथ तथा नौवीं श्रेष्ठ हैं ।

६-प्रतिष्ठा करनेका मण्डप बनानेकी विधि-राजाकी आज्ञा लेकर शुभ स्यातमें मण्डप बनाये तब पहले ही प्रतिष्ठाचार्य वहाँके निवासी देव आदिसे २१ बार णमोकार मंत्र पढाकर श्रमप्रार्थना करे कि वहाँ में प्रतिष्ठा विधि करना चाहता हूँ, आप श्रमा करें । मण्डप'येवा बनागा चाहिये जैसा कि नाटक-पर सर्व ताफसे दत्ता होता है । प्रवेशद्वार रखने चाहिये । उनपर मनुष्य नियत हों । क्योंकि दर्शकोंकी भीड परिमित हो इसलिए नितना स्थान सुखसे बैठने योग्य हो तथा पुष्पोंके लिये हो उगने ही टिकट बना लेने चाहिये । आनेवाले लो पुरुओंको भिना कुछ लिये हुये टिकट देकर भीतर नेत्रना चाहिये जब वर बाहर आवे तब फिर टिकट ले लेना चाहिये । मण्डपमें कोठाहल न हो व भकेगानो न हो इसलिये सुप्रबन्धकी जरूरत है । जैसे नाटकघरमें सब सुखसे बैठकर नाटक देखते हैं ऐसे इस मण्डपमें लो पुरुय सुखसे बैठकर भी निनेन्द्रके कल्याणकका दृश्य देख सकें ऐसा प्रबन्ध काना चाहिये ।

पूर्व ओर या उत्तर ओर सामनेको वेदी आदिका स्थान रखना चाहिये जो स्थान नीचे ही भूमिसे कुछ ऊँचा हो । तीन तरफ दर्शकोंको बैठनेका स्थान नाटकके सामान बना देना चाहिये । डेढ तरफ खिणोंके लिये व डेढ तरफ पुरुओंके

लिये । दोनोंके प्रवेश व निकलनेके भिन्न दो दो द्वार अलग २ होने चाहिये । वेदीमें तीन वेदी राश २ बनाना चाहिये । मध्यकी वेदी तीन कटनीदार प्रतिमाओंके विराजमान करनेके लिये, उस वेदीकी बाईं ओर वेदीके दायके तीन कुण्ड गोल, चौष्टे, ४ त्रिकोण होमके लिये बनाने चाहिये व दाहिनी ओर राजगृहकी रचना होनी चाहिये । इनके आगे एक चतुर्गा वारसे मण्डल बनाने व पुजा करनेके लिये योजना चाहिये । इस चतुर्दके आगे एक पादा नाटकेके समान होना चाहिये । उसीके लगवा ही आगे दूसरा चतुर्गारा होना चाहिये जहां प्रतिष्ठा समान्धो अनेक उद्य बगये जा सकें, जैसे मालाका स्वप्न देखना, रात्र समा, इन्द्रका आना, वैश्याय, समग्ररण समा, आदि । इन दोनों चतुर्गारों तक ऐसी आइ कर देना चाहिये कि विवाह प्रतिष्ठामें उपयोगी व्यक्तियोंके और कोई प्रवेश नहीं कर सके । वेदीके पोछे मापगो बनानेको व प्रतिष्ठाके योग्य सामान रखनेको स्थान नियत करना व पास ही जाय व सामायिक करनेका स्थान पोछे नियत करना चाहिये । शास्त्र समा व व उपदेश समाके लिये अलग मण्डप बनाना व उसीमें ऊाके साममें एक पूजा-वेदी जुदो काना जियमें प्रतिमा विराजमान रहे जिससे यात्रीगण वहाँ पूजा, श्राद्धादि क्रियाएं कर सकें । प्रतिष्ठा मण्डपमें सिवाय प्रतिष्ठा यधिके और कार्य कोई न करे । बिना ऐसा प्रसन्न हुये प्रतिष्ठाका आनंद आनितपूर्वक नहीं मिल सकता है तथा छोटे २ बच्चोंके दिव पहलानेके लिये एक भिन्न मण्डप बना देना चाहिये जहां ये खेला करें । वहां कुछ तस्सों लगा देनी चाहिये व कुछ खिलौने रख देने चाहिये । एक मंडप ऐसा हो जिससे स्वदेशी वस्तुओंका वाजार हो उसमें स्त्रियां ही दुकानदार हों । बहुधा स्त्रियोंको वस्तुओंके खरीदनेका शौक होता है यदि उनके लिये स्वदेशी वस्तुओंकी पर्याप्तो प्रदर्शनो रहे व स्त्रियां ही प्रवचक हों तो उनका काम भी निकल जावे तथा जो निर्लज्जवना नीच कौपके सोदेशालोंके साथ स्त्रियोंके मिलने व बात कानेमें होता है वह भी जाता रहे ।

७-प्रतिष्ठा करनेके लिये पात्रोंकी आवश्यकता-नोचे लिखे पात्र प्रतिष्ठाकी विधिमें आवश्यक हैं- (१) प्रतिष्ठा कानेवाला प्रतिष्ठाचार्य, (२) शीर्षक इन्द्र और उपकी इन्द्राणो, (३) कुंड इन्द्र या प्रत्येन्द्र, (४) तीर्थकके पिता, (५) तीर्थकारकी माता, (६) पुत्रा पदानमें सहायक विद्वान्, (७) मापगो तैयार कानेवाले चार महाशय, (८) कनसे कम आठ पत्नी हुई कन्यायें जो देवियोंका काम कर सकें, (९) लीनान्विक देव आठ जो स्त्री रश्चि पुत्र्य मदाचारि हों, (१०) एक सूचनाकर्ता, (११) चार प्रसन्नक ।

(१) प्रतिष्ठाचार्यना लक्षण-बालज्ञाता, सदाचारी, जिनधर्मका दृढ़ श्रद्धानी, मंतोषो, पवित्र क्षीरो, उच्च कुलो, साध वपस्य रहित, ब्रह्मचारी, त्यागी या गृहस्थ हो, जयसे प्रतिष्ठाका कार्य काने एक दफे शोभन करे, शुद्ध ध्या वस्य परे ।

(१) इन्द्रका लक्षण—सम्पत्तिवान, राज्यवान, नवबुद्धक, उच्चकुली, जैनधर्मका श्रद्धाली, सदाचारी, ब्राह्मणशास्त्रा, सप्तव्यसन त्यागी अर्थात् पाक्षिक श्रावकका आचार पालनेवाला हो । यह यज्ञोपवीतका चारी हो, कमसे कम नीचे लिखे गइने पहने —(१) करवनी कमरमें, (२) अंगुलीमें अंगूठी, (३) हाथमें कहे, (४) कंठमें हार, (५) कानोंमें कुडल, (६) मुकुट । जबतक प्रतिष्ठा समाप्त न हो एक दफे भोजन करे, दूसरी दफे पान पदार्थ ले सकता है । तीनों सभ्य सामा-यिक करे । शुद्ध वस्त्र केबारेसे रंगे हुये पहरे, गृहस्थके कार्योंसे निश्चिन्त हो ब्रह्मचर्य पाले । इन्द्राणी भी इन्द्रके समान नियम पाले व पढ़ी हुई विचारवान होनी चाहिये । उसीकी स्त्री होना ठीक है ।

(२) अन्य इन्द्र या प्रत्येन्द्र यदि ११ और हो सके तो अच्छा है । ये सब भी इन्द्रके समान नियम पालनेवाले हों ।
 (४) तीर्थंकरका पिता—मुख्य सचपति जो श्रद्धावान व सदाचारी हो व पाक्षिक श्रावकका नियम पालता हो । प्रतिष्ठा होने तक रात्रि भोजन पानका त्यागी हो, दिनमें एक दफे भोजन करे, अन्य समय पान पदार्थ दूधदि ले सकता है, ब्रह्मचर्य पाले, बगके कार्योंसे निश्चिन्त हो, दो दफे सवेरे स्नान सामायिक करे, चित्तका उदार तथा दानी हो तथा चिन्तित हो ।

- (५) तीर्थंकरकी माता—उमकी स्त्री जो ऊपरके नियम पाले, शिक्षित या सम्भरदार हो ।
- (६) पूजा पढ़ानेमें सहायक २ विद्वान् भी प्रतिष्ठा तक नियमसे रहे, एक मुक्त करे, दूसरी दफे पान पदार्थ लेवें, ब्रह्मचर्य पाले, पाक्षिक श्रावक हों ।
- (७) सामग्री तैयार करनेवाले ४ महाशय भी ऊपरकी भांति बनें ।
- (८) कन्यायें जो १२ वर्षके अनुमान हों, स्वरूपवान हों, उनको केबारेसे रंगे वस्त्र पहनाये जावें, मुकुट लगावें, प्रतिष्ठा होने तक पानी सिवाय रात्रिको कुछ न लेवें, दोनों काल जाप करें ।
- (९) ८ ब्रह्मचारी या स्त्री रक्षित वैरागी या उदासीन भाव रखनेवाले पुरुष सफेद, शुद्ध वस्त्र पहने व चांदीका सफेद ही मुकुट लगावें ।
- (१०) सूचनाकर्ता पढा हुआ बुद्धिमान ऐसा हो जिसका स्वर ऊँचा व गम्भीर तथा माननीय हो व विद्वान हो ।
- (११) चार प्रबन्धक आई ऐसे चतुर हों जो प्रतिष्ठामें आवश्यक वस्तुओंका प्रबन्ध पहलेसे ही कर दें व जो प्रतिष्ठाकार्यसे सम्मति लेते रहें व उसकी आशानुसार सब काम करें व यह देखें कि प्रतिष्ठामें किसे कार्यमें सारधानी व भांति है व वर्चकगणोंका मन चर्मभावमें मीज रहा है ।

८-नान्दी विवान-भी जिन मन्दिरमें किसी शुभ दिन सब नरनारी एकत्र हों तथा ऊपर लिखे सर्व ही पात्र प्रतिष्ठाकी विधि करानेमें सहायक हैं सो एकत्र हों। जब नित्य अभिषेक व पूजन हो जावे तब भी जिन मन्त्रवाक्यके आगे वेदीपर साथिया बनावे और उसके ऊपर एक माला व रस्सेसे वेष्टित कलशकी कुलवती स्त्रियां उस स्वस्तिक पर प्रथम अघ चढाकर विराजमान करें।

फिर इंद्र जिसको स्थापित किया हो उसको तथा तीर्थकाका पिता जिसे स्थापन किया हो ये दोनों शुद्ध चन्दन-चर्चित जलसे स्नान करें और शुद्ध वस्त्र पहनकर आँवें, तब श्री जिनमुनि हों तो उनके सामने नहीं तो प्रतिमात्रीके सामने प्रतिष्ठाचार्य नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर पुष्प क्षेपण करे। दोनों पर अलग २ मन्त्र पढ़कर डाले।

ॐ हीं अई असिआउसा णमो अरहंताणं ससद्धिसद्धगणवराणं अनाहतपराक्रमस्से भवतु।

फिर आगे इंद्र व मुख्य यजमान अर्थात् तीर्थकरका पिता हाथ जोड खड़ा हो। पीछे अन्य सब पात्र खड़े हो और योगभक्ति तथा सिद्धभक्ति प्रतिष्ठाचार्य पढ़ें तथ पढ़ावें। फिर कलश पर पुष्पक्षेपण करें व करावें। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर तीर्थकरके पिता पर पुष्पक्षेपण करें-

“ॐ अघ (यहां देश, नगर, काल व हे) अस्य यजमानस्य (यहां तीर्थकरके पिता बननेवालेका नाम ले) इह्वाका-वंशे श्री ऋषमनाथ संताने काश्यप गोत्रे परावर्तनं यादृध्वरं भवतु भवतु कौं हीं ईं नमः।”

नोट-जिस तीर्थकरकी प्रतिष्ठा करनी हो उसीका वंश व गोत्रका नाम ले। उस यजमानमें जबतक प्रतिष्ठापुणे न हो स्थापित करे। फिर आचार्य यजमानके षड्वंश और इंद्रके मुकुटबंध बांधे। इस दिन इंद्र तथा यजमान उपवासवा एकसुक्त करे तथा आसे प्रतिष्ठा होने तक किसीके पक्तिमें भोजन न करे-शुद्ध भोजन करे। फिर सब पात्र जो जो निपम पहले बताये गये हैं उनके पालनेका संकल्प करें। जिस समय षड् बांधा जावे व मुकुट बांधा जावे उस समय मन्दिरेके बाहर बाजे बजाये जावें। फिर सब पात्र खड़े होकर क्षांति पाठ व विसर्जन करें।

९-रुण्डपरक्षा विधि च ध्वजादण्ड स्थापित करना-जहां प्रतिष्ठाकी विधि की जाय उस मण्डपको यथा-योग्य ध्वजाओंसे सज्जित करें, द्वारों पर बन्दनमालाये बाँधें व चार तरफके मुख्य द्वारों पर धूप चट रस्से जिनमें घृा सदा दिनमें दी जाया करे व चार मुख्य कलश मिट्टीके या धातुके बरसे सज्जित कर व ९ दफे णमोकार मंत्र पढ़कर मंत्रित कर, द्वारों मुख्य द्वारों पर विराजमान करें।

जिस दिन मण्डप प्रतिष्ठा व ध्वजा स्थापन बिबि हो उस दिन नरमारी व प्रतिष्ठा करनेवाले सब पात्र उपस्थित हों । मण्डपकी ऊँचाईसे दुगुना व अधिक ऊँचा ध्वजादण्ड तैयार किया जावे उसमें त्रिकोणी ध्वजा बड़ी शुद्ध वस्त्रकी रङ्गीन तय्यार की जावे । उस ध्वजमें श्री आइतका चित्र आठ प्रतिहार्य सहित चित्रित हो । यदि चित्र न बन सके तो बड़ा ऊँ लिखा जावे तथा नीचे लिखा जावे—जैगधमकी जय । फिर लिखा जावे—श्री जिनेन्द्रमूर्ति प्रतिष्ठाण्डपमे पधारिये । इस ध्वजादंडकी मण्डपके आगे तीन कटनीदार चतुर्गुण बनाकर बीचमें मजबूत गाथा जावे ।

इस दिन ऊपर टेविल पर शास्त्र या ग्रंथ विराजमान करके इन्द्र पक्षे नित्य व सिद्ध पूजा करे । मामने ध्वजादंड रखवा हो । सिद्धमक्ति तथा श्रुतिशक्त पंथ फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर ऋणा पर पुष्प क्षेपे—

ऊँ ह्रीं अहं जिनशासनपताके सखोच्छ्रिता तिष्ठ भव भव वषट् स्वाहा ।

फिर उदक चंदनादि बोलकर अर्घ्य चढावे और ध्वजा दंडको चतुरे पर लुभा करावे ।

फिर इन्द्र नीचेप्रकार देवोंको प्रतिष्ठाविधिमें सेवा करनेकी आज्ञा करे ।

(१) चार प्रकार देवोंको नीचेका श्लोक पढ़कर कहे व मंडपके चारों तरफ पुष्प क्षेपे ।

चतुर्णिजायामरसंघ एष, अगत्य यज्ञे विधिना नियोगं । स्वाकुर्य भवत्या हि यथाहंदेशे, सुस्था भवंत्वा-

निष्कलपनायाम् ॥

(२) पानकुमार देवोंको यह पढ़कर कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातमारुतसुराः पवनोद्गटाशाः, सद्यदसंलसितानिर्मलतांतरीक्षाः ।

वात्याद्विदोषपरिभ्रूयन्सुधरायां, प्रयूहकर्म निखिल परिमार्जयन्तु । ॥

(३) वास्तुकुमार देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातवास्तुविधिपूद्गतमंनिवेशा, योगयांशभागपरिपुष्ट्यपुः प्रवेशाः ।

अस्मिन् मखे रुचिरसुस्थितभूषणांके, सुस्था यथाहंविधिना जिनभक्तिभाज । ॥

(४) मेघकुमारदेवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयात निमलनभः कृतसंनिबन्धा, मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।

अस्मिन्मखे विकृत विक्रियया नितान्ते, सुस्था भवन्तु जिनभक्तिसुदाहरन्तु ॥

(५) अग्निकुमार देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातपावकसुराः सुरराज पूज्य, सस्यांपनाविधिषु संस्कृतविक्रियाशोः।
स्थाने यथोचितकृते परिवद्धकक्षाः, सन्तु त्रियं लभत पुण्यसमाजभाजां ॥

(६) नागकुमार जातिके देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

नागाः समाविशतभृतलसंश्रवेशाः, र्वां-भक्तिमुल्लसितगातत्रया प्रकाश्य ।

आशीर्वादिद्विद्वितविधिनाशदेतो, स्वस्था भवंतु निजयोग्यमहालनेषु ॥

(७) फिर पूर्व ओंके द्वारपाल यक्षको नीचेका श्लोक पढ़कर स्थापित करे तब पूर्व द्वार पर जो कलश रक्खा है उसपर पुष्प क्षेपे—

पुरुहितदिशिस्थिति मे हि करोद्, घृतकांचनदण्डखण्डरुचे । विधिना कुमुदेश्वरसव्यशये, घृतपङ्कज
शक्तिंकंकणके ॥

(८) फिर ऊपरके समान दक्षिण दिशामें स्थापन करे—

वामनाशुयमदिविभगतः, स्थानमेहि जिनयज्ञकर्मणि । भक्तिभारकृतदुष्टनिग्रहः, पूतशासनकृतामबंधयकः ॥

(९) इसी तरह पश्चिम दिशामें करे—

पश्चिमासु विततासु हरिरसु, भूरिभक्तिभरभूकृतपीठाः । अञ्जनवह्निकाम्ययाऽधरे, तिष्ठ विघ्नबिलयं प्रणिधेहि
(१०) इसी तरह उत्तर दिशामें करे—

पुष्पदन्तभवनासुरमध्ये, सरकृतोऽसि यत इत्थमबोधम् । उत्तरत्र मणिदण्डकराप्रस्तिष्ठ बिम्बविनिवृत्तिविधायी ॥
इसतरह चार द्वारपर चार यक्ष द्वारपाल स्थापे ।

(१२) कुबेरको रत्नदृष्टि आदिके लिये नियत करे ।

कारकृतकुसुमानामञ्जलिं सखितोयं, घनदमणिसुरजानीशपूजार्थसार्थे ।

विकिर विकिर शीघ्र भक्तिमुद्रावधिरवा, निगततु परमांके मण्डयोर्धोर्वाकाशे ॥

इतमा पढ़ पुष्प मण्डपके ऊपर क्षेपण करे ।

फिर मन पात्र मिलकर स्तुति पढ़ते हुये ध्वजादण्ड सहित मंडपकी तीन प्रदक्षिणा दें और झांतिपाठ विसर्जन करें।
ध्वजादंड स्थापनके समय व आगे पीछे वादित यज्ञाप जावें ।

(१०) जप करनेकी विधि-विष्णु प्रलिष्टामें १ लाख व मंदिर या वेदी प्रतिष्ठामें १०००० वा ८००० जप करना उचित है ।

इस जपको गर्भस्थानकके होनेके पहले तक मंडपकी वेदीके स्थानमें बैठकर समाप्त किया जावे ।

यदि १० आदमी हो व १००० जप रोज करे तो १० दिन चाहिये । यदि अधिक हों व कम हों तो जिसतरह १ लाख जप पूरे हों वह प्रसन्न किया जावे

एक लाख लौंगे गिन ला जायें । जप करनेवाले आगे अंग्रिकी अंगीठी रख लेवें तथा एक एक मन्त्र पढ़ते हुये एक एक लौंग डालते जायें शुद्ध वस्त्र पहनकर मवेगके समय निराहार निर्मल भावसे जप करें । अशुद्ध बोलनेवाले न हों—

“ ईं हों हीं हू हों हः अमभाउमा सर्ववसुभिनाम्नाय स्वाहा ।

११-योगमण्डल बनानेका विधि-एण्डपमें मूल मध्य वेदीके आगे जो चतुस्रा हो उसपर मंडल बनानेकी आवश्यकता है । मण्डल बनानेके लिये मफेर, पौछा, लाल, काला, हरा इन पांच रंगोंके रंगे हुये चावल तैयार करे और इनसे बहुत सुन्दर मण्डल नीचे प्रमाण बनावे । या अन्य ताइके चुण्णसे मण्डल बनावे जो बिगड़े नहीं । मध्यमें ॐ लिखे, उसके चारों तरफ एक वलय बनावे ।

(१) पहले वलयमें १७ खाने करे व १७ पुञ्ज भिन्न २ रखे या १७ फूल बनावे व १७ नाम नीचे प्रमाण लिखे । अपनी भाई ओसे शुरू काके घूमते हुए दाहिनेको आवे, जैसे प्रदक्षिणा देते हैं—

१ अरहत, २ सिद्ध, ३ आचार्य, ४ उपाध्याय, ५ साधु, ६ अहंत मङ्गल, ७ सिद्ध मंगल, ८ साधु मंगल, ९ केवल प्रहस्रपर्म मङ्गल, १० अहंत लोकोत्तम, ११ सिद्ध लोकोत्तम, १२ साधु लोकोत्तम, १३ केवलीप्रहस्रपर्म लोकोत्तम, (इसको कम काके भी लिख सकता है— के० प्र० धर्म लोकोत्तम), १४ अहंत वरणं, १५ सिद्ध वरणं, १६ साधु वरणं, १७ के० प्र० वरणं ।

(२) उसके बाहर दूसरा वलय खींचे—उसमें २४ अत चौबीसीके २४ खाने करके पुञ्ज रखे या फूल बनावे व अलग २ नीचे प्रकार नाम लिखे—

१ निर्वाण, २ सागर, ३ महासाधु, ४ विमलप्रम, ५ शुद्धामदेव, ६ भीषर, ७ भीदत्त, ८ सिद्धाम, ९ अमलप्रम, १० उद्धार, ११ अमिदेव, १२ संयम, १३ खिन्न, १४ पुष्पांजलि, १५ उत्साह, १६ परमेश्वर, १७ ज्ञानेश्वर, १८ विमलेश्वर, १९ यज्ञोपधर, २० कृष्णमति, २१ ज्ञानमति, २२ शुद्धमति, २३ भीमद्व, २४ अनन्तवीर्य । फिर इरावलय खींचे ।

(३) तीसरा बलय-इसमें भी २४ कोठे कारके २४ पुंज रखले या २४ फूठ बनावे या २४ नाम वर्तमान जिनके लिले-
 १ ऋषभ, २ अजित, ३ संभव, ४ अभिनन्दन, ५ सुमति, ६ पञ्चम, ७ सुपार्थ, ८ चन्द्रम, ९ पुण्ड्र, १० सीतल, ११ श्रेयांस, १२ वासुपुत्र, १३ विमल, १४ अनन्त, १५ धर्म, १६ शक्ति, १७ कुन्धु, १८ आर, १९ मल्ल, २० मुनिमुद्यत, २१ नमि, २२ नेमि, २३ पार्थनाथ, २४ चन्द्रमान । इसके आगे चौथा बलय खींचे ।

(४) चौथा बलय-इसमें भी २४ कोठे खींच कारके २४ पुंज रखले या २४ फूठ बनावे या २४ नाम प्रविश्य जिनके लिले—

१ महापथ, २ सुरप्रभ, ३ सुप्रभ, ४ स्वयंप्रभ, ५ सर्वापुत्र, ६ जयदेव, ७ उदारम, ८ प्रपदि, ९ उरुकेव, १० प्रशकीर्ति, ११ जयकीर्ति, १२ पूर्णबुद्धि, १३ निकषाय, १४ विमलप्रभ, १५ बहुलप्रभ, १६ निर्मल, १७ चित्रगुप्ति, १८ समाधिगुप्ति, १९ स्वयंभू, २० कन्दर्प, २१ जयनाथ, २२ विमल, २३ दिव्यवाद, २४ अनन्तवीर्य । इसके आगे पांचवा बलय खींचे ।

(५) पांचवा बलय- इसमें २० कोठे कारके २० पुंज रखले या २० फूठ बनावे या नीचे लिले २० नाम विदेशके वर्तमान तीर्थकारोंके लिले—

१ सीमंभर, २ युगमन्धर, ३ बाहु, ४ सुबाहु, ५ संजातक, ६ स्वयंप्रभ, ७ ऋडावानन, ८ भ्रान्तवीर्य, ९ सुररेप, १० विशालप्रभ, ११ वज्रवर, १२ चन्द्रानन, १३ चन्द्रबाहु, १४ सुजङ्गम, १५ शिवा, १६ नेमिप्रभ, १७ वीरसेन, १८ महाभद्र, १९ देवयज्ञ, २० अजितवीर्य । इसके आगे छठा बलय खींचे—

(६) छठा बलय-इसमें आचार्यके छत्तौस गुणके लिले छत्तौस कोठे करे, ३६ फूठ बनावे या उनमें इतने ही पुंज करे या गुणोंके नाम नीचे प्रमाण लिले—

१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ धारिप्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्योच्चार, ६ अशुभ तप, ७ अमोदर्य, ८ वृत्ति-परिसंख्यान, ९ रस परिस्थाग, १० विविक्तव्ययामन, ११ काण्डेय, १२ प्रायश्चित्त, १३ वितप, १४ वैयाहृत, १५ स्वाध्याय, १६ व्युत्सर्ग, १७ ध्यान, १८ उत्तम क्षमा, १९ उत्तम मार्दव, २० उत्तम आर्जन, २१ उ० मत्प, २२ उ० शौच, २३ उ० संयम, २४ उ० तप, २५ उ० त्याग, २६ उ० आर्किचन, २७ उ० ब्रह्मचर्य, २८ मनोगुप्ति, २९ वचन-गुप्ति, ३० क्षायगुप्ति, ३१ सामायिक, ३२ वन्दना, ३३ स्तवन, ३४ प्रतिक्रमण, ३५ स्नाध्याय, ३६ कायोत्तर्य । इसके आगे सातवां बलय खींचे—

मातृवां बलय-इसमें २५ कोठे करे, २५ पुंज रखे या २५ फूल बनावे या २५ गुण उपाध्यायके नीचे प्रमाण लिखे-
 १ आचारांग, २ स्रवकृत्यांग, ३ स्थानांग, ४ समनायांग, ५ व्याख्याग्रहसिद्धि, ६ हातुर्वर्मकथा, ७ उपासकाध्ययन,
 ८ अन्तकृद्वांग, ९ अन्तरोपपादिकांग, १० प्रश्नश्याकरण, ११ विपाकसूत्र, १२ उत्पादपूर्व, १३ अग्रायणी, १४ वीर्या-
 नुवाद, १५ अस्तिगस्ति प्रवाद, १६ ज्ञानप्रवाद, १७ सत्यप्रवाद, १८ आत्मप्रवाद, १९ कर्मप्रवाद, २० प्रत्याहार, २१
 विद्यानुवाद, २२ कल्याणवाद, २३ प्राणवाद, २४ क्रियाविद्याल, २५ त्रैलोक्यविदु । इसके आगे आठवां बलय खींचे—
 (८) आठवां बलय-इसमें २८ कोठे करे, २८ पुंज रखे या २८ फूल बनावे या २८ गुण साधुके नीचे
 प्रमाण लिखे—

१ अहिंसा महाव्रत, २ सत्य, ३, अचौर्य, ४ ब्रह्मचर्य, ५ परिग्रह त्याग, ६ ईर्ष्या समिति, ७ माषा स० ८ एषणा
 स०, ९ आदाननिषेध स०, १० व्युत्सर्ग स०, ११ शश्वेन्द्रिय जय, १२ रसनेन्द्रिय जय, १३ घ्राणेन्द्रिय जय, १४ चक्षु-
 रिन्द्रिय जय, १५ श्रोत्रेन्द्रिय जय, १६ सामायिक, १७ वन्दना, १८ स्तवन, १९ प्रतिक्रमण, २० स्वाध्याय, २१ कायो-
 त्पर्ग, २२ श्रमिक्रमण, २३ अस्नान, २४ ब्रह्मत्याग, २५ केशलोच, २६ दन्तधावन, २७ एरुभुक्त, २८ स्थत मोजन ।
 इसके आगे नवमा बलय खींचे ।

(९) नवमां बलय-इसमें ४८ कोठे करे, ४८ पुंज रखे व ४८ फूल बनावे व ४८ ऋद्धे नीचे प्रमाण लिखे ।
 यहाँ इन ऋषियोंके चारक मुनियोंका संकेत है—

१ केवलज्ञान, २ समःपर्यय ज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ कोष्ठभुद्धि, ५ पादानुवाबुद्धि, ६ वीजभुद्धि, ७ संमिसमोत्र,
 ८ दूरस्पर्श, ९ दूरास्वादन, १० दूर घ्राण, ११ दूरावलोकन, १२ दूराश्रण, १३ दक्ष पूर्वित्त, १४ चतुर्विषपूर्वित्त, १५
 प्रत्येकभुद्धित्त, १६ वादित्त, १७ जलादि चारणऋद्धे, १८ आकाश गमन, १९ अजिमादि ऋद्धे, २० अन्तर्धानादि
 ऋद्धि, २१ उग्रतप, २२ दोषतप, २३ तप्ततप, २४ महातप २५ घोरतप, २६ घोर पाकम, २७ घोर ब्रह्मचर्य, २८
 मनोबल, २९ वचन बल, ३० काय बल, ३१ आमषौषधि, ३२ श्वेतीषधि, ३३ जलीषधि, ३४ मलीषधि, ३५ विडोषधि,
 ३६ सैवीषधि, ३७ आस्पयिष. ३८ दृष्टयषेय, ३९ आशीविष, ४० दृष्टेविष, ४१ खोश्रावि, ४२ मधुश्रावि, ४३ घृत
 श्रावि, ४४ अमृतश्रावि, ४५ अक्षीणमहानस, ४६, अक्षीणमहालय, (४७) १४-२३. गण २१, (४८) २९-४८०० तीर्थका
 समास्थित मुनि ।

मण्डलके कोनोंमें चार कोठे बनावे-उनमें चार गुलदस्ते बनावे या नीचे प्रमाण क्रमसे लिखे—

(१) ९२५५३२७९४८ अकृत्रिमजिनमूर्तयः । (२) ८५६९७४८१ अकृत्रिम जिनमन्दाराः । (३) स्थाद्रादपरम जिनापरमः । (४) निश्चयव्यवहाररत्नप्रसररूप जिनधर्मः ।

इस तरह हम मण्डलमें कुल २५० कोठे बतावे—मण्डलको बहुत सुन्दर व दर्शनीय बनाया चाहिये । हम चांदी, गंगा आदि बातओंके चूर्णसे या अन्य किसी चूर्णसे जिनमें प्रतिष्ठा पूर्ण होने तक प्रम जन्तु न पड़े, मडल बना सकते हैं, ऊपर सुन्दर चन्द्रीवा होना चाहिये, तीस छत्र मध्यमें बंधे हों, चमरादिसे सुशोभित हों । मंडलके ऊपर न स्थापना रखना चाहिये न कुछ घटाना चाहिये । बस मात्र स्मृति कार्नाके लिये है । सर्व दर्शकगण देख कार्नाके आने भावोंको निर्मूल करें यह प्रयोजन है । मण्डलको चौकी प० चदर बिछाकर भी बना सकते हैं ।

१२-मण्डलमें श्री जिनविंश स्थापना—याग मडलकी पूजा गर्भस्थानके एक दिन पहले करनी चाहिये । इसके एक दिन पहले श्री जिनमन्दिरसे प्रतिष्ठित विंश लाकर मध्य वेदीमें विगानमान कराया चाहिये । विंशको रथमें या पालकीमें यथायोग्य उत्सवके साथ लाना व विराजमान करना उचित है तथा १२ वेदीयें आठ मङ्कर द्रव्य जो सुन्दर बने हों स्थापित करना चाहिये । अर्थात् १ छत्र, २ ध्वजा, ३ कलश, ४ चमरा, ५ ठाना (ममतिष्ठित), ६ झारी, ७ दर्पण,

१३-याग मण्डलकी पूजाके लिये सद्यारी—जिन दिन याग मण्डलकी पूजा हो मण्डलमें खो पुरुषोंको यथायोग्य बैठनेका प्रबन्ध टिकट द्वारा किया जावे । जो प्रमन्वकर्ता हों उगको प्रबन्ध समन्धी खाम टिकट दिये जावें । जितने पात्र पहले कहे गये हैं उनमें लौकिक देवोंको छोड़कर और सब उभरिषण हों । उामें प्रतिष्ठाचार्य, इन्द्र तथा मुख्य यजमान जो तीर्थकरका पिता है ये तीन नीचे प्रकार क्रिया करके शुद्ध करें । अन्य सब पात्र बैठे रहें । उनपर प्रतिष्ठाचार्य समय २ पुष्पांजलि क्षेपण करें । सामग्री तैयार कानेनाले, सूचनार्कनी व प्रमन्वक रूप शुद्ध विवातमें झरीक न हों तो हर्ज नहीं है । सब शुद्ध बस्त्र सुन्दर केसरिया रंगे हुये पहनें । आचार्य इधेन बस्त्र पहने । प्राण-बस्त्रोंमें वि॥ मिले धाती डुपट्टे पहने जावें जिससे झरीर डलका रहे, पसेवकी रज निकल सके न शुद्ध सब प्रवेश कर सके ।

१४-अङ्कशुद्धि, न्यास व सकलोककरण क्रिया—जब सब पात्र यथायोग्य आसन पर बाग मण्डलके सामने बैठ जावें तब अङ्कशुद्धि विधान आरम्भ करें—
 (१) नीचे लिखा मन्त्र पठकर शुद्ध बल अपने ऊपर व दूरगों पर लिङ्गके-अथोत् अमृता स्नान करे—
 ॐ ह्रीं अमृतै अमृतोन्नवे अमृतवर्धिणि अमृतं स्नायय सं सं ह्रीं ह्रीं वृत् वृत् द्रां द्रां द्रौं द्रौं द्रावय द्रावय सं सं ह्रीं ह्रीं वृत् वृत् सं सं ह्रीं ह्रीं वृत् वृत् ।

(११) फिर नीचेका श्लोक पढ़कर यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहने या बदले—
 यज्ञार्थमेवं सृजतादिचित्रेश्वरेण चिह्न विधिभूषणानां । यज्ञोपवीतं वितत ह्यि रत्नश्रयस्य मार्गं विदधाम्यतोऽहं

(१२) फिर नीचेका श्लोक पढ़कर कटिमेखला या काथनी पहरे—
 अन्यैश्च दीक्षां यजनस्य गाढ कुर्वद्भिरिष्टैः कटिसूत्रमुत्थैः । संभूषणैर्भूषयतां शरीरं, जिनेन्द्रपूजा सुखदाघटेत ॥

नोट—इन गहनोंका पहनना इन्द्रके लिये आवश्यक है ।
 (१३) फिर नीचेका श्लोक पढ़कर नियम करे कि जयतक प्रतिष्ठाका कार्य समाप्त न होना व्यापारादिको चिन्ता छोड़ता हूं व एकचित्त होकर सर्व प्रतिष्ठाका कार्य करूँगा ।

विधेचिंधातुर्यजनोत्सवेऽहं गेहादिसूच्छीमपनोदयामि । अन्नन्यचेताः कृत्रिमसाधामि, स्वर्गादि लक्ष्मीमपि
 ध्यापयामि ॥

(१४) फिर अङ्ग रक्षाके लिये पञ्चमेष्टी वाचक अ सि आ उ सा पांच अक्षरोंको क्रमसे मस्तकमें, ललाटमें, नेत्रोंके मध्यमें, कण्ठमें व वक्ष स्थलमें धारण करे फिर आचार्यमक्ति, सिद्धमक्ति, श्रुतमक्ति तथा चारित्रमक्ति पही जावे, फिर नी वार णमोकार मन्त्र मनमें पढ़कर कायोत्तमर्ग करे व अपने दोषोंकी आलोचना करे । फिर—

(१) ॐ हा णमा अर्हन्ताणं हां अंगुष्ठाभ्यां नमः । ऐसा मन्त्र पढ़कर दोनों अंगुठे शुद्ध करे अर्थात् पानीमें डबोये या पानी छिड़के ।

(२) ॐ ह्रीं णमो दिद्धाणं ह्रीं तजनीभ्यां नमः, तर्जनी दोनों अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(३) ॐ ह्रीं हू णमो आइरीयाणं हू मध्यमाभ्यां नमः, मध्यमा बीचकी दोनों अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(४) ॐ हौं णमो उव्वझायाणं हौं अनामिकाभ्यां नमः, दोनो अनामिका अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(५) ॐ हः णमो लोये सव्वसाहूणं, हः कनिष्ठिकाभ्यां नमः, दोनो सबसे छोटी अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(६) ॐ हां हौं हू हौं हः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः—दोनों हाथोंको दोनों तरफसे शुद्ध करे ।

(७) ॐ ह्रीं णमो अरहन्ताणं ह्रीं मम क्षीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर मस्तक पर पुष्प डाले ।

(८) ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर अपने चेहरे (मुख) पर पुष्प क्षेपे ।

(९) ॐ हू णमो आइरीयाणं हू हृदयं मम रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर छाती पर पुष्प डाले ।

(१०) ॐ हौं णमो उव्वझायाणं हौं मम नाभिं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर नाभि पर पुष्प क्षेपे ।

(११) ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं हः मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा ।

(१२) ॐ ह्रं णमो अरहंताणं हां पूर्नदिक्खात् आगत विद्वान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पठकर पूर्व दिशाकी ओर पुष्प क्षेपे । (१३) ॐ ह्रं णमो सिद्धाण हीं दक्षिण दिक्खात् आगतविद्वान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पठकर दक्षिण दिक्षामें पुष्प क्षेपे ।

(१४) ॐ हूं णमो आहरीयाण हूं पश्चिमदिक्खात् आगतविद्वान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पठकर पश्चिम दिशाकी ओर पु प क्षेपे । (१५) ॐ ह्रौं णमो उवब्झायाण हौं उत्तरदिक्खात् आगतविद्वान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पठकर उत्तर दिशाकी ओर पुष्प क्षेपे ।

(१६) ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं हः सर्वदिक्खात् आगत विद्वान् निवारय निवारय रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पठकर सर्व दिशाओं पर पुष्प क्षेपे ।

(१७) ॐ ह्रं हां णमो अरहंताण हां मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पठकर अपने भीतर अङ्गपर पुष्प क्षेपे ।

(१८) ॐ हीं णमो सिद्धाणं हीं मम बल्ल रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पठकर अपने बल्लोंपर पुष्प क्षेपे ।

(१९) ॐ हूं णमो आहरीयाण हूं मम पूजाद्रव्यं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पठकर पूजाकी सामग्री आदिपर पुष्प क्षेपे ।

(२०) ॐ ह्रौं णमो उवब्झायाणं ह्रं ह्रौं मम स्थले रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पठकर पूजकके स्थानपर पुष्प क्षेपे ।

(२१) ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं हः सर्वं जगत् रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पठकर चारों तरफ लोगों पर पुष्प क्षेपे ।

(२२) ॐ शौं क्षीं क्षे क्षः यह मन्त्र पठ सर्व दिशापर पुष्प क्षेपे (२३) ह्रांहीं ह्रू ह्रौं हाः यह मन्त्र पठ सर्व दिशापर पुष्प क्षेपे ।

(२४) ॐ हीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं श्रावय श्रावय सं स क्खीं क्खीं न्त्तं न्त्तं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय ठ ठः स्वाहा । इस मन्त्रको पठकर बुल्लमें पवित्र जल ले मस्तक पर डाले । (२५) फिर ऐसा ध्यान करे कि अपने मस्तकरूपी मेरुपर्वतपर श्री पार्वमाथ त्रिनेत्र स्थापित हैं अर देवोंके समूह अभिषेक कर रहे हैं, उस जलसे मैं पवित्र भया हूं ।

(२६) फिर नीचे लिखे मन्त्रोंको नौबार ऊपे— ॐ ह्रौं णमो अरहन्ताणं णमो सिद्धाणं स्वाहा । ॐ ह्रौं णमो आहरीयाणं णमो उवब्झायाणं स्वाहा । ॐ ह्रौं णमो लोए सव्वसाहूणं स्वाहा—पीछे मनमें अपने दोषोंकी आलोचना करे ।

(२७) फिर दोनो शार्थोंकी अमुलियोंसे अपने हृदयको स्पृशें और यह मन्त्र पठे— ॐ ह्रं णमो अरहताणं हां स्वाहा ।

- (२८) इसी तरह ललाटको स्पष्ट व पटे-ॐ ह्रीं गमो सिद्धाणं ह्रीं स्वाहा ।
- (२९) इसी तरह सिरके दाहिनी ओर-ॐ ह्रू गमो आहरीयाणं हूं स्वाहा ।
- (३०) इसी तरह सिरके पीछे-ॐ ह्रीं गमो उवव्हायाणं ह्रीं स्वाहा ।
- (३१) इसी तरह सिरके बाईं ओर-ह्रः गमो लोए सव्वसाहूण ह्रः स्वाहा ।
- (३२) नीचे लिखा मन्त्र ७ बार पढ़कर पुष्पोंमें द्रुक देकर सर्व पात्रोंपर व प्रबन्धक था दे पर क्षेपे-ॐ नमोऽस्ते सर्वे रक्ष ह्य हूं फट् स्वाहा । (३३) (फर नीचे लिखा मन्त्र ५८ पुष्पोंको द्रुक देकर सर्व विद्वानोंकी छांतिके लिये सर्व दिशाओं पर क्षेपे-ॐ ह्रू हूं फट् किरिटि वातय घातय परिनिहान् स्फोटय २ सस्र खण्डान् कुरु कुरु छिन्द छिन्द परमन्त्रान् मिद मिद क्षां ह्रवः फट् स्वाहा ।

द्वितीय अध्याय ।

यागस्य लक्ष्मी पूजा ।

ऊपर कहे अनुसार प्रतिष्ठाके मुख्य पात्र जब अपनी युधि कर चुके व रक्षाका उपाय कर चुके तब सबको खड़े होकर व हाथ जोडकर नीचे लिखी स्तुति पढनी चाहिये ।

स्तुति

दोहा—चन्दौ श्री अरहतको, चन्दौ सिद्ध महान् । आचारज उषझाय मुनि, चन्दौ करके ध्यान ॥

पदरो हन्द ।

जय वीतराग सर्वेष देव, तुम ही मङ्गलकर देव देव । तुम ही सबदुर्ता पूज्य देव, तुमरी शरणा सुख-हेतु देव ॥१॥
 तुम अक्षुणीय तुम काम जीत, तुम द्रवणीय तुम लोभ जीत । तुम राक्षसीय तुम कमजीत, तुम मोहजीत तुम मानजीत ॥२॥
 तुम जगत्त्रयेय तुम सत्यध्याय, तुम ही गुण निमलके निधान । तुम समदर्शी समता अधीन, मनि भक्ति करै निज नाय शीस ॥३॥
 तुम ही जब पावन हो उदार, तुम ही दाता निज ज्ञान शार । तुम ही भव अमण विनष्टकार, तुम ही धवद्विसे पारकार । ४॥
 तुम ही प्रथम तुम नहि निराश, लौ भी भक्तगकी पूर्ण आश । यह महिमा कैसे कही जाय, तुम ध्यानमग्न योगी मह य ॥५॥
 वंदे तव पद धम शारदार, यह कार्य होय निर्विघ्न पार । कल्याणक पञ्च करन महान्, उमगे हम तुमरी शरण आन ॥६॥

सब कार्य होय सुख अंतिकार, होवें मङ्गल दिन उदार । राजा पिरजा सब सुखी होय, जिनघर्मतनो उद्योत होय ॥७॥
हम ज्ञानहीन विधि ते अज्ञान, तव भक्ति वरे द्विय गुण पिछान । जो भूलें चूकें क्षम्य नाथ, विनती करते हय जोड हाय ॥८॥

नछा- २० ॥

फिर अभिषेकपूर्वक नित्यनियम पूजा व सिद्ध पूजा वरे ।
अभिषेककी संक्षेपमें विधि—

(१) उच्च आसन पर चौकी या थाली विगजमान करे उस समय यह मन्त्र पढ़ें—ॐ ही अहं क्षं ठः श्री पीठ-
स्थापनं करोम स्थाहा ।

(२) फिर उभ थालो या चौकीका पवित्र जलसे घोवे तब यह मन्त्र पढ़ें—
ॐ हा ही हू हौ हुः नमोऽ ते मगधते श्रीभते पवित्रजलेन श्री पीठक्षालनं करोमि स्थाहा ।

(३) फिर उपपर माथिपा बनाकर श्री जेन प्रतिमाको स्थापित करे तब यह मन्त्र पढ़ें—ॐ ह्रीं अहं वमतीर्थ-
आदिनाथ (यहा अन्य तीर्थकारका नाम ले निम प्रतिमाको विगजमान करे) मगवान् यह पांडुकबिला पीठे तिष्ठ २ स्थाहा ।

(४) फिर शुद्ध जल प्राशुक लेकर प्रतिमाका अभिषेक करे तब यह पढ़ें—

श्रीमद्भिः सुरसैनिस्सगधिर्मलै पुण्याशयाभ्याहृतैः । शीतश्राकवटाश्चितरवितथैः सत्तापविच्छेदैकैः ॥
तृष्णोद्रेकहरै रजः प्रशमकै प्राणोपसैः प्राणिनां । तोयैर्जैनचोऽमृतातिशयिभिः संस्नापयामो जिनम् ॥
सौरभेन परां शुद्धिं, धारिणा तीर्थधारिणा । स्वभावपदमापन्न सिद्धं, संस्नापये जिनम् ॥

(६) गन्धोदक दो बड़े मुखके ग्लासमें भरे व दो ग्लाम केवल जलमें भरे उपमें लंबग डाल दे । एक प्रवीण पुरुषको एक ग्लाम गन्धोदकका व एक ग्लाम जलका दे दे जो सब दर्शक पुरुषोंके पास ले जावें जो मस्तकादिपर लगावें । इसी तरह एक प्रवीण स्त्री या कन्याको दो ग्लाम दे दिने जावें, यह स्त्रियोंको नम्रवार देवे । गन्धोदक गिरे नहीं इससे ग्लाममें देना ठीक है । उगली लवोकर ले लिया जावे फिा उनको दूधमें लवोकर शुद्ध कर लिया जावे । (७) अभिषेकके पीछे इन्द्र मुख्यतासे नित्यप्रति होनेवाली संस्कृत, देव-श्राद्ध-गुरुपूजा करे जो पाठके अन्तमें दी हुई है । (८) फिर शान्तके अर्थ तीनो कुण्डोंमें होम किया जावे ।

होमकी विधि—तीन कुण्डोंमें चौकोर □ कुण्ड जो तीर्थकारके निर्वाणकी अग्निका प्रद्योतक है मध्यमें बनावें, उसकी दाहिनी तरफ अद्धेचन्द्रोकार ॐ कुण्ड बनावे जो सामान्य केवलीकी निर्वाणकी अग्निका प्रद्योतक है और बाई तरफ

त्रिकोण Δ कुण्ड बनावे जो गणधरके निर्वाणकी अशिकां बतानेवाला है। एक हाथ गहरे व हल्की हो इसकी सुतायें हों, अक्षुचन्द्रका व्यास आध हाथका हो। ये कुण्ड तीन कश्मीशर हो। तीनों कटनीपर सब ओर माथिया बनावे—

(१) नीरजसे नमः—यह पठकर जहां प्रोम काना है उप भूमिको पवित्र करे। (२) द्रुपथनाथ नमः—यह पठकर यहां लाभका आसन विछावे। हएक कुण्डमें दो इन्द्र निभन हों। एक इमको मायाओ डाले दूना घो काष्ठको फड़छीसे ढाले। फिर हएक इन्द्र आपन पर बैठ जावे। (३) सोलवन्नाथ नमः—यह पठकर प्राशुरु जरसे चारों ओर छीटे देवे। (४) पिनलाय नमः—यह पठकर भूमिमें पुष्य चढ़ावे। (५) अक्षनाथ नमः—यह पठकर यहां अशुत चढ़ावे। (६) श्रुतधूपाय नमः—यह पठकर धूपगममें धूप खेवे। (७) जानोद्यानाथ नम—यह पठकर दोष चढ़ावे या दोसे आरती करे। (८) परमसिद्धाय नमः—यह पठकर नैवेद्य चढ वे।

(९) कुंडमें साथिया बनावे और नीचे प्रकार लकड़ी इतनी चुने जिमकी ली कुठ ऊँची कुण्डसे रहे, बहुत अधिक न बड़े जिससे कोई प्रकारका गय हो। लाल चन्दन, कपूर, अणार, पीपल व आरुकी लकड़ी व अन्य शुद्ध लकड़ी जिममें जन्तु न हो।

(१०) होबकी सामग्रो—चन्दनका बुगदा, अणुका बुगदा, बादाम व पिस्ताकी गिरी, छुशार, तोडा हृभा खोपडा, किमिस, रक, देवी, लौंग, कपूर, छोटा इलायचीके दाने आदि सुगन्ध द्रव्योंको धूप बनावे। करीब ३ से। हो व इतना ही शुद्ध या हो।

(११) फिर नीचे लिखा मन्त्र पठकर होगकुण्ड व पात्रोंकी शुद्धि जलसे करे अर्थात् जल छिडके। ॐ ह्रीं नमः सर्वज्ञाय सर्वलोकगन्थाय धर्मतीर्थरूपाय श्री शान्तिनाथाय परमपवित्राय पवित्रजलेन होमकुण्डशुद्धि पात्रशुद्धि च करोमि स्वाहा।

(१२) फिर नीचे लिखा मन्त्र पठ कुटमें कपूर जलाकर अग्नि रखे—कुण्डमें थोहो सुखो वाप भी रख दे। जेनेन्द्रवाक्शैरिष सुयसज्ञैः, सशुभ्रदत्तर्भाग्रपतामितीलैः। कुण्डस्थिते ऽथनशुद्धबहो, संशुभ्रण सांगतमातनोमि॥ उसहायि जिणे पणमासि सया, अमलो चिरजो बरवपतरू।

सअ कामबुहा मम रख सया, पुरचिञ्जुही पुरचिञ्जुही ॥ ॐ ॐ ॐ रं रं रं स्वाहा। (१३) फिर तीनों पत्र अग्निको अर्घ्य चढावे। अग्नि तीर्थतकी अग्ने हो जो चौपुले कुण्डमें है येया मोरकर अर्घ्य चढ़ावे—

नीर्थेश्वररत्नस्यमहोत्सवे यं, भक्त्या नतामोन्द्रतिरीटजातम् । आनन्दुरिन्द्राः सकलास्नमेनं, यजे जलाद्यैरिह
गाह्यपत्यम् ॥

ॐ ह्रीं गार्हपत्यं प्रणितानये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । अर्घं । फिर त्रिकोण कुण्डकी अग्नी हो यह कह अर्घं देवें—
गणाधिपस्यान्त्यमहोत्सवे यं, भक्त्या नतामोन्द्रतिरीटजातम् । आनन्दुरिन्द्राः सकलास्नमेनं, यजायहेयाह्वनी-

यमग्निम् ॥

ॐ ह्रीं गार्हनीयं प्रणितानये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । फिर अर्घेचन्द्राकार अग्नी हो अर्घ चढावे व यह कहे—
श्रीकेशलीषान्त्यमहोत्सवे यं, भक्त्या नतामोन्द्रतिरीटजातम् । आनन्दुरिन्द्राः सकलास्नमेनं, यजामहे दक्षिण-
दिव्यमग्निम् ॥

ॐ ह्रीं दक्षिणावर्तं प्रणितानये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । अर्घं ।

(१४) फिर सिद्धार्चा सम्बन्धी पीठिका मन्त्रोंसे होम करे ।

पीठिकाके मन्त्र—ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥२॥ ॐ परमजाताय नमः ॥३॥ ॐ अनु-
पमजाताय नमः ॥४॥ ॐ स्वप्रपानाय नमः ॥५॥ ॐ अचलाय नमः ॥६॥ अक्षताय नमः ॥७॥ ॐ अद्यावावाचाय नमः ॥८॥
ॐ अनंतज्ञानाय नमः ॥९॥ ॐ अनंतदर्शनाय नमः ॥१०॥ ॐ अनंतवीर्याय नमः ॥११॥ ॐ अनंतसुखाय नमः ॥१२॥ ॐ
नीरजसे नमः ॥१३॥ ॐ निर्मलाय नमः ॥१४॥ ॐ अच्छेद्याय नमः ॥१५॥ ॐ अमेद्याय नमः ॥१६॥ ॐ अत्राय नमः
॥१७॥ ॐ अराय नमः ॥१८॥ ॐ अप्रमेयाय नमः ॥१९॥ ॐ अगर्भनासाय नमः ॥२०॥ ॐ अक्षोषाय नमः ॥२१॥
ॐ अविलीनाय नमः ॥२२॥ ॐ परमबनाय नमः ॥२३॥ ॐ परमकृष्टायोगरूपाय नमः ॥२४॥ ॐ लोकाग्रशक्तिने नमो
नमः ॥२५॥ ॐ परमसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२६॥ ॐ अर्हतिमद्भ्यो नमो नमः ॥२७॥ ॐ केवलसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२८॥
ॐ अन्तःकृतिमद्भ्यो नमो नमः ॥२९॥ ॐ परम्परासिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३०॥ अनादिपरंपरासिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३१॥
ॐ अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३२॥ ॐ सद्यःदृष्टयासन्नप्रत्यनिर्वाणपूजाहर्षान्द्राय स्वाहा ॥३३॥ इयं ताह ३३ मंत्र
पठ आहूति देकर फिर नीचे लिखा आशीर्वादसूचक मंत्र पठ आहूति देवे और पुनः ले अपने सर्व पाप बैठनेवालोंके
ऊपर डाले ।

सेवाफल बट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्युचिन्तानानं भवतु । समाधिपरण भवतु ।

अथ जाति मन्त्र—ॐ सत्यजन्मनः शरण प्रथे ॥१॥ ॐ अर्जुनमनः शरण प्रथे ॥१॥ ॐ अर्जुनमनुः शरण प्रथे ॥१॥
 ॐ अर्जुनस्य शरणं प्रथे ॥४॥ ॐ अनादिगमनस्य शरण प्रथे ॥५॥ ॐ अचरुनानः शरण प्रथे ॥६॥
 ॐ रत्नत्रयस्य शरण प्रथे ॥७॥ ॐ सम्यग्दृष्टे र क्षानमूर्ते र सम्प्रति र स्वाहा ॥८॥ इय ताह जातिमन्त्र पठ आठ आहृति
 देकर आशीर्वादद्वयक नीचे लिखा मन्त्र पठ आहृति दे पुण क्षेपे ।

स्तेषाफल बट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशन भवतु । समाधिमरण भवतु ।
 अथ निस्तारक मन्त्र—ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ पंडिताय स्वाहा ॥२॥ ॐ पट्टकूपे स्वाहा ॥३॥ ॐ
 ब्राह्मपतये स्वाहा ॥४॥ ॐ अनादिभोजिनाय स्वाहा ॥५॥ ॐ स्वाहाकाय स्वाहा ॥६॥ ॐ श्रावकाय स्वाहा ॥७॥ देवता-
 नाय स्वाहा ॥८॥ सुब्राह्मणाय स्वाहा ॥९॥ ॐ अनुभाय स्वाहा ॥१०॥ ॐ सम्यग्दृष्टे र निधियते र वैश्राण वैश्राण
 स्वाहा ।

इतरत ११ आहृति दे फिर वी “सेवाफल पट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु” । आदि मत्र पठ
 आहृति दे पुण क्षेपे ।

अथ ऋषि मन्त्र—ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्जुनाय नमः ॥२॥ ॐ निर्गयाय नमः ॥३॥ ॐ वीतरागाय
 नमः ॥४॥ ॐ महावलाय नमः ॥५॥ ॐ त्रिगुताय नमः ॥६॥ ॐ महाश्रीभाय नमः ॥७॥ ॐ विविधयोगाय नमः ॥८॥
 ॐ विविधद्वये नमः ॥९॥ ॐ अङ्गभ्राय नमः ॥१०॥ ॐ पूर्वभ्राय नमः ॥११॥ ॐ अणभाय नमः ॥१२॥ ॐ परमर्षिभ्यो
 नमो नमः ॥१३॥ ॐ अनुभजताय नमो नमः ॥१४॥ ॐ सम्यग्दृष्टे र ध्याते भवते नपारपते कालश्राण काल
 श्राण स्वाहा ॥१५॥

ऐसी १५ आहृति देकर वही निम्न लिखित आशीर्वाद सूत्रक मन्त्र पठ आहृति दे पुण क्षेपे ।
 “सेवाफल बट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु । समाधिमरण भवतु ॥”
 अथ सुरेन्द्र मन्त्र—ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्जुनाय स्वाहा ॥२॥ ॐ दिव्यजाताय स्वाहा ॥३॥ ॐ
 दिव्याविजाताय स्वाहा ॥४॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥५॥ ॐ सोधर्माय स्वाहा ॥६॥ ॐ कल्याणपितृने स्वाहा ॥७॥ ॐ यतु
 चराय स्वाहा ॥८॥ ॐ परंपरेन्द्राय स्वाहा ॥९॥ ॐ अहमिन्द्राय स्वाहा ॥१०॥ ॐ परमाहृताय स्वाहा ॥११॥ ॐ अनुभाय
 स्वाहा ॥१२॥ ॐ सम्यग्दृष्टे र कल्पपते र कल्पमूर्ते र वज्राम्बु र स्वाहा ॥१३॥ इय ताह १३ आहृति दे वरो
 पहिले लिखित आशीर्वादसूत्रक मंत्र पठ आहृति दे पुण क्षेपे ।

अथ परमराजादि मन्त्र-ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अह्मजाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ अनुगमेन्द्राय स्वाहा ॥३॥
 ॐ विजयार्च्यजाताय स्वाहा ॥४॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥५॥ ॐ परमजाताय स्वाहा ॥६॥ पसाईताय स्वाहा ॥७॥
 ॐ अनुपनाय स्वाहा ॥८॥ ॐ ममग्रहृष्टे २ उपतेजः २ दिशांजनः २ मंत्र पठ आहुति दे पुष्प क्षेपे ॥९॥

इम तरह ९ आहुति दे वही आशीर्वादसूचक मंत्र पठ आहुति दे पुष्प क्षेपे ।
 (१५) फिर नीचे मन्त्रसे १०८ आहुति देवे-ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षोणशोरोषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्री
 शंतिनाथाय शान्तिरूपाय सर्वविद्याप्रणाशनाय सर्वशोभापट्टसुविनाशनाय सर्वपाकृच्छुद्रोपद्रवनाशनाय ॐ हां ह्रीं हूं ह्रौं हः अ
 सि आ उ सा सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा । (१६) फिर नीचे ही स्तुते सर्वा इन्द्र मिरुता व खडे होकर पठे—

- तुभ्यं नमो दशगुणोज्जितदिव्यगात्र । कोटिपञ्चाकरनिशाकरजैप्रतेजः ॥
- तुभ्य नमोऽतिचिरदुर्जयघातिजात । घालोपजात दशमारगुणाभिराम ॥ १ ॥
- तुभ्य नमः सुरनिकायकृतेविहारे । दिव्यैश्चतुर्दशविधातिशयरूपेय ॥
- तुभ्य नमस्त्रिसुथनाधिपतित्व चिन्ह । ओ प्रातिहार्थीष्टकलक्षितार्हन् ॥ २ ॥
- तुभ्य नमः परम केवलघोषबाह्वे । तुभ्य नमः सममस्तपदावलोक ॥
- तुभ्य नमो निरुपनाजनिरन्धीर्य । तुभ्यं नमो निर्जनरतरनित्यसौख्य ॥ ३ ॥
- तुभ्य नमः सकलमगलघस्तुसुख्य । तुभ्य नमः शिवसुखवदपापहारिन् ॥
- तुभ्य नमस्त्रिजगदुत्तमलो रूषुष्य । तुभ्य नमः शरणभूत्रय रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥
- तुभ्य नमोस्तु नभकेवलपूर्वलब्धे । तुभ्यं नमोस्तु परमेश्वर्योपलब्धे ॥
- तुभ्य नमोस्तु सुनिष्ठुञ्जरयूथनाथ । तुभ्य नमोस्तु सुवनत्रिनयैरुनाथ ॥ ५ ॥

श्री जिनेन्द्रके साधने बड़े भावसे स्तुति पढ़ें । आचार्य इसका भाग सर्व मण्डलीको समझावे । फिर सर्व मण्डली जो अब तक बंठी थी वह भी तथा सर्व प्रतिष्ठाके पात्र मस्तक भूमि पर लगाके दंडित करें ।

(१७) फिर नीचे लिखा मंत्र पठ इन्द्रादि होमप्रश्नको ललाटमें, दो सुनाओमें, कण्ठमें व हृदयमें ऐसे पांच जगह लगावे ।

रत्नत्रयाचनमयोत्तमशोमभृतिर्युष्माकमाबहतु वासवदिव्यभृतिम् ॥
 षट्खण्डभूमिविजयप्रभवां विभृति । त्रंलोक्यराज्यधिविषयां परमां विभृतिम् ॥

तथा दो बड़े प्यालोंमें मसम रखकर एक प्याला पुरुषको व एक प्याला स्त्रीको, सर्व पुरुष व स्त्रियोंको मसम पांचों अङ्गोंमें लगानेको दें ।

(१८) मण्डलकी पूजा—अन इद्र तथा मुख्य यत्रमान (पिता) वे दो मिलकर सामग्री चढावें, पूजन पढानेवाले आचार्यको सहायता दें, पूजा शुद्ध स्वारी पढो जादे, अन्य सब सुनें । पइले सब पात्र खहे होकर नीचे लिखे प्रमाण पढें—
ॐ त्रय जय जय, नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु, पुनीहि पुनीहि पुनीहि, ॐ नमो अरुन्ताणं, नमो सिद्धाण, नमो आशरीयाण, नमो उवञ्चायाणं, नमोलाए मन्नासाहूणं ।

रुथाएपञ्जा

प्रथमिद्वजनिजेघाञ्जिजगुणप्राप्तावनन्ताक्रमहृष्टिज्ञानचरित्र । सुखचित्तसंज्ञारथभाषाः परं
आगत्याञ्जनिते शितां कितपदैः प्रभवौषडा द्विष्ठतो, मन्त्रारोपणसरकुनैश्च षषडा गृह्णाध्वसचर्चोविधिम् ॥४४॥
भाष.—गीता छन्द—कर्मामको हवन कर निजगुणप्रकाशन आहुई, अंत अर क्रम रहित दर्शन ज्ञानवीर्यं निचान हैं । सुख स्वभावी द्रव्य चित्त मत्त शुद्ध परिणतिमें रमें, आइये सब विद्व चरुण पूजते सब अघ बमें ॥

ह्रीं अत्र जिः प्रतिष्ठावि ने मर्कदागण्डलाक्ता जिनमुनय अत्रावतरत अवतरत सर्वौषट्, ॐ ह्रीं अत्र जिः प्रतिष्ठा-
विधाने सर्वयागमण्डलाक्ता । मुनय अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः, ॐ ह्रीं अत्र जिः प्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिन-
मुनय अत्र मम सर्वदेता मय भव षष्ट । (यहां थापना मण्डलके बीचमें न रखके पुराकी टेबुल ही पर रखके पुण
क्षेपण करे ।)

अष्टक ।

प्रांशुस्वर्णमणिप्रधाततिशुनाभुंगारनालोच्छलद्, गगान्निधुनरिः सुखोपचिनस्वरायो भरेण त्रिधा ।
जन्मारातिविभञ्जनौषधिभित्तैर्नोद्भूगन्धालिना, चाये यागनिधिश्चरानमहृते निश्रयसः प्रापये ॥४४॥
भाषा—छन्द—चाल—गंगासिधू अर पानी, छुषणझारी करलानी । गुरु पंचपरमसुखदाई, हम पूज ध्यान लगाई ॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वज्ञेश्वराजिमधुनिभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपातीति स्वाहा ।

धुसुणमलयजातैश्चवर्त्तनैः शीतगन्धैर्भवजलनिधिमध्ये दुःखदो वाडुवाभिः ।
तदुपशमनिमित्तं षड्कक्षैर्निगजद्—अमरयुषभिरिदत सांद्रसाद्रप्रधाईः ॥४४॥

भाषा-शुद्ध गन्ध लाय मनहारी, भक्तताप, शासन कर्तारी। गुरुपंच परम सुखदाई, हम पूजे ध्यान लगाई ॥४४४॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वज्ञेश्वर जिनमुनिभ्यो भवावापविनाशनाय चन्दनं निर्वापामीति स्वाहा ।

शाशांकस्पृहंङ्गिः कमलजननैरक्षतपदाधिरुढेः, आमण्य शुचिसरलयाद्यैर्गुणधरैः ।

हसद्भिः साम्राज्याधिपतिभ्रमनाहैः सुरभिभिर्जिनार्वाहिंगीची विपुलतरपुञ्जैः परिधले ॥४४५॥

भाषा-शान्तिमम शुचि अक्षत लाए, अक्षयगुणद्वित हुलसाए । गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजे ध्यान लगाई ॥४४५॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अक्षयगुणप्राप्तये अक्षतं निवपामीति स्वाहा ।

दुरन्तमोहानलदीप्यदन्शु कामेन नष्टीकृतमाशुचिन्ध्व, तद्वाणाराज्जीवामनाय गुणपयजामि कल्पद्रुमसङ्घतेर्वा ॥ ४६

भा.-शुभत लपद्रुमन सुमना ले, जग वशाकर काम नखाले, गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजे ध्यान लगाई ॥४४६

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो कामवाणविध्वंसनाय पुष्यं निवपामीति स्वाहा ।

पीयूषपिडनिवहैर्घृतशकरान्नयोगोद्भवनयनचित्तविलासदक्षैः ।

चामाकरादिशुचिभाजनसंस्थितैर्वा, सम्पूजयाम्यशाननाधनवाधनाप । ४४७॥

भाषा-पकवान मनोहर लाए, जासे क्षुद्ररोग शमाए । गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजे ध्यान लगाई ॥४४७॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो क्षुभारोगनिवारणाय नैवेद्यं निर्वापामीति स्वाहा ।

अमितमोहतमोविनिवृत्तये घटितान्नमणिप्रभवात्समिः । अयमहं खलुद्रीपकनामकेजिनपदाग्रसुज परिदीपये ॥

भाषा-मणिरत्नमन्दी शुभ दीपा, तममोहरण उदीपा । गुरु पञ्च परम सुखदाई हम पूजे ध्यान लगाई ॥४४८॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रातष्ठात्सवे सर्वज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो मोक्षोपकारविनाशनाय दीपनिवपामीति स्वाहा ।

धूपोद्घ्राणैर्यजनविधिषु प्रीणिताशेषदिक्कुरुद्वन्द्वश्वगुरुमलापीडकान् सन्वहंङ्गिः ॥

अर्धे कयक्षपणकरणे कारणैराप्तश्राद्धैर्यज्ञार्थीशानिव बहुविधैर्घूपदानप्रशस्तैः । ४४९॥

भा.-शुभ गधित धूप चढाऊँ कर्मोके धेश जलाऊँ । गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजे ध्यान लगाई ॥४४९॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठात्सवे सर्वज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निवपामीति स्वाहा ।

निःश्रेयसपदलब्धये कृतावतारैः प्रमाणपटुभिरिव । स्याद्वादात्मगनिकरैर्यजामि स्यङ्गमनिशामरफले ॥४५०॥

भा.-सुन्दर दिवि भव फल लाए, शिष्यैस्तु सुचरण चढाये । गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजे ध्यान लगाई ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

पात्रे सौषर्णे कृणुमानन्दजयषक् पूजाहंतं विस्फुरितानां हृदयेऽत्र ।

तोषायच्छद्वयसमेतैर्भृन्मर्घं शारतुणाम्य विनयेन मण्डिदधयः ॥४५१॥

भा.-सुधरणके पात्र धराये, शुचि आठों द्रव्य मिलाए, गुरु पचपरम सुखदाई. हम पूजे ध्यान लगाई ॥४५१॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठितस्य सर्वयज्ञेश्वाजिनमुनिभ्यो अर्घ्यप्रदाप्रसये अर्घं निवर्णामीति स्वाहा ।

(अथ २५० कोठोंमें स्थापित पुर्योंको गलन अल्प अर्थ चढाना, थालीमें ही)---

अनन्तकाललक्ष्णद्वयप्रणभ्यो नितो निर्घोय सन्धधन् स्वय शिवोत्तमायलक्ष्मिनि ।

जिनेश्विध्वदशिवश्वनाथमुख्यनामाभिः स्तुत जिनं महासि नीरचन्दनैः फलैरहं ॥४५२॥

भाषा अलिह्ल-काल अनन्ता अरण करत जग जीव हैं । तिनको भषते काठ करत शुचि जीव हैं ॥

ऐसे अहत तीर्थनाथ पद ध्यायके । पूजू अर्घ्य धनाय सुमन एखायके ॥ ४५२ ॥

ॐ ह्रीं अनन्त भवाणमयनिवारकानन्तगणस्तुनाय अहेते अद्य निनेषामीति स्वाहा

कर्मकाष्ठहतमुक् स्वशक्तिः सप्रकाश्यमहनीयमानुचि. लोकतत्त्वतमबले निजात्मनि सस्थित शिवसहोपति

यजे ॥४५३॥

भाषा-इरिगीताहन्द-कम-काष्ठ महान जाले ध्यान-अग्नि जलायके । गुण अष्ट लह वृष्वहारनय निअय अनात

निज आत्ममें थिर रूप रहके, सुधा स्वाद लखायके ।

मो छिद्र हैं कृणुकृत्य चिन्मय, भजू मन उमगायके । ४५३ ॥

ॐ ॥ अष्टमविनायक गिजात्मतत्वविभाक् सिद्धपरमेष्ठिने अर्घं निर्देषामीति स्वाहा ।

सार्थवाहमनवद्यद्विधया शिक्षणाऽनुनिब्रह्मात्मनां वर । ओक्षमार्गमल्लुपकाशकं सयजे गुरुपरंपरमेश्वरम् ॥४५४

भाषा-त्रिभोगेहन्द-सुनिगणको पालत आलस टालत आप संभालन परस यती ।

निनवाणि सुहानी शिवसुखदानो भविजन मानी धर सुघती ॥

दिक्षाके दाता अघसे त्राता मनसुखमाता जानपती ।

शुभ पश्चाचारा पालत प्यारा हैं आचारज कमहती ॥

ॐ ह्रीं अनस्यद्विधाविद्योतनाय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घं निर्देषामीति स्वाहा । (३)

ब्राह्मशागपरिपूर्णसन्धून यः परानुपदिशेत पाठतः । बोधतयथाभिहितार्थसिद्धये तानुपास्य यजयामि पाठकान् ४५५

भाषा त्रेटक छन्द-जय पाठक ज्ञान कृपान नमो; भवि जीवन हत अज्ञान नमो ॥

निज आत्म महानिधि धारक हैं । सशय बन दाह निवारक हैं ॥४५५॥

ॐ ही द्वादशोपपरिपुणश्रुतपाठोन्नत बुद्धिभिवोपाध्यायपरमंष्टुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

उग्रप्रथयतपमाभिसंस्कृतिं ध्यानभानविनिवेशितात्मकं । सायक शिवरमासुखामृतै साधुमीज्यपदलब्धये-
स्वये ॥४५६॥

भाषा-दुर्नबिलविन छन्द-सुभग तप द्वादश कर्तार हैं । ध्यान सार महान प्रचार हैं ॥

सुभ्रुति वाम अबल यति साधते । सुख सु आत्म जन्य सम्हारते ॥ ४५६ ॥

ॐ हीं शारतपोऽमिसंस्कृतध्यानसाध्य यनित साधुयमेष्टिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्हन्नेव त्रिभुवनजनानन्दवानप्रण्डल उग्रो, विद्वन्वस निजसतिकृतादख्यसद्योपनोदात् ॥

संकुर्वन्तत्पृक्तितिरपि स्पष्टमानन्दद्रायिन्येव । स्मृत्या जलचककलैर्चयामि त्रिवारं ॥४५७॥

भाषा-मालिनीछन्द-अरि जगन सु अरिहन्त पूज्य अर्हन् वताये । स पाप गलनहेतु मंगल ध्यान लाए ॥

सग सुखकारण मंगलाक जन्माए । ध्यानी छवि तेरी देखते दुख नशाए ॥४५७॥

ॐ हीं अर्हन्नेवमेष्टिभ्यो अर्घ्यं निवपामीति स्वाहा । (६)

स्वार स्मारं गुणगणल्यणिसारसामर्थ्यसुखैर्यत्प्राप्त्यर्थं प्रयतति जनो मोक्षयतन्धेऽनवथे ॥

प्रत्युद्धान्त भवभवगतानां यथातत्कूलप्यं सिद्धानेव श्रतिभतिबलाद्वचये संविचार्य ॥४५८॥

भाषा-चौपार्य-जय जय सिद्ध परमसुखकारी । तुम गुण सुमरत कर्म निवारी ।

विद्वन्मसूह सहज हरतारे । मंगलमय मंगल करतारे ॥४५८॥

ॐ हीं सिद्ध मङ्गलेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

रागद्वेषोरगपरिशमे मन्थरूपस्वभावा, मिथे शत्रौ समकृतहृदानन्दमांगत्यरूपाः ।

येषां नामस्मरणमपि सन्मंगलं मुक्तिदायीत्यर्थं यज्ञ वसुविधिविधिश्रीगणनः प्राणिपूज्य ॥४५९॥

भाषा-बाईलविक्रीडित-रागद्वेष महानसर्प शमने शम मन्त्रधारी यती । शत्रूमित्र समानभाव करके भवतापहारी यती

मंगल सार महानकार अघहर सत्वानुकम्पयी यती । संयम पूर्णप्रकार साध तपको ससारहारी यती ॥

ॐ हीं साधुपंगलाय अय निवपामीति स्वाहा । (८)

मूर्छां मूर्छां गुरुलघुभिदा द्वेषतर्मप्रदिष्टो, जेनो घर्मः सुरशिवगुरुद्वारदर्शीं नितानं ।

सेव्यो विघ्नप्रहरणविधातुत्तनाथे प्रशस्तः, सपूजेऽहं यजनमन्नोदानसिद्धयथमख्यम् ॥४६०॥

भाषा-शुक्लछन्द-जिगमस है सुखकार जगमें धरत भय अयत्रत । स्वर्ग मोक्ष सुद्वार अनुपम घरे सो जयवंत ॥

भाषा-शुक्लछन्द-जिगमस है सुखकार जगमें सन । सर्वज्ञ राणविहीन वक्ता है प्रमाण महन्त ॥४६०॥

मतिष्ठा-

॥ २९ ॥

अभ्यक्त ज्ञान चरित्र लक्षण भजन जगमें सन । सर्वज्ञ राणविहीन वक्ता है प्रमाण महन्त ॥४६०॥

ॐ ह्रीं केवलप्रश्न र्मभङ्गनाथ अर्धं निवर्षामीति स्वाहा । (९)

शेषां पादस्मृति सुखसुधायोगप्रसार्थनाम प्राप्नुः पुण्य यद्वधनतिना जन्मस्यार्थं लभन्ते ।

लोका धात्र्यां वनगिरिशुबश्चोत्तमस्य जिनेन्द्रा-नर्चे यत्नपल्लवविधिसु व्यक्तधे सुक्तिलक्ष्म्याः ॥४६१॥

भाषा-शुक्लछन्द-चर्ण संस्पृशीते वन गिरि शुद्ध हो नाम सत्तीयको प्राप्त करते भए ।

दशै जिबका करे पूजते दुख हरे जन्म निज साथ भविजीव मानत भए ॥

देश तुम लेखके देव सब छोडके देश तुम उत्तमा सन्त ठानत भए ।

पूजते आपको डालते नापको मोक्षलक्ष्मी निकट आप जानत भए ॥

ॐ ह्रीं शरैल्लोकोत्तमेभ्यो अर्धं निवर्षामीति स्वाहा (१०)

दृष्टिज्ञानप्रतिभटनया कसमीलांलयाऽन्यान्, श्वश्रे संपादयति विधिधा वेदनाः संकरोति ।

तेषां मूलं निबिद्यपरमज्ञानखड्गेन कुर्यात्, निःकर्मत्वं समधिगतवानर्चयते सिद्धनाथः ॥४६२॥

भाषा शुभंतप्रयागछं-दरणा ज्ञान वैरो करन तीव्र भए । नरक पशुगता मांदि प्राणो पठाए ।

तिन्हें ज्ञान अमिते कनन नाथ कीना । परम सिद्ध उत्तम भजूं रागहीना ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्यो अर्धं निवर्षामीति स्वाहा । (११)

सूर्याचन्द्रौ असुदधिपतिभूमिजाथोऽधुरेन्द्रो, यस्यांहयब्जे प्रणतशिरसा लोलुटाति त्रिशुद्धया ।

सोऽय लोके प्रवरगणनापूजितः किं न वा स्याद्, यस्मदूर्ध्वं ह्युनिषगिबृंहं स्वानुभावपदस्तथा ॥४६३॥

भाषा छन्दचौपैया-सूरज चन्द्र देवपति नरपति पद सरोज नित धरे । लोट र मस्तक धर पगमें पातक सब

निकडे ॥

लोकधाधि उत्तम यतिपनमें जैनसाधु सुख कंदे । पूजन सार आत्मगुणपावन होवन आप स्वच्छदे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमेभ्यो अर्धं निवर्षामीति स्वाहा । (१२)

यत्र प्राणिप्रवरकरुणा यत्र मिथ्यात्वनाशो । यत्रोपांते शिष्यपदसमान्वेषणां कामनष्टिः ।
 यत्र प्रोक्ता दुरतधिरतिः सोऽयमशयः कथं न । यस्माद् धर्मो निखिलहितकृत् पूज्यतेऽसौ मयाऽपि ॥४६४॥
 भाषा छंदसु रंगी-जो दया धम विस्तारता विश्वमें । नाश मिथ्यात्व अज्ञान कर विश्वमें ॥

काम भव दूर कर, मोक्ष कर विश्वमें । सत्य जिनबम यह धार ले विश्वमें ॥

ॐ ह्रीं केवलीप्रहस्र वमलोकोत्थाय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा । (१३)

जीवाजीबद्धिविशरणान्वेषणे स्थैर्यभङ्ग ज्ञात्वा तत्कथाऽन्यतरशरण नश्वर मद्भिधानां
 इन्द्रादिनामितिपरिचयाद्वात्परस्त्रोपलब्धिमिष्टैः प्राप्तुं निचितमनसा पूज्यतेऽहं न शरण्यः ॥४६४॥

भाषा—छन्द मङ्गठा—

अथ भ्रमण कराराया शरण नवाया जीव अजीबहि खोज । इन्द्रादिक देवा जाको पूजे जगगुण गाथे रोज ॥
 ऐसे अहतकी शरण आये, रत्नय प्रकटाय । जैसे ही जन्मरण भय नाशे, नित्यानन्दो पाय ॥४६५॥

ॐ ह्रीं अर्हत सुःशोभ्यो अथ निवपामीति स्वाहा । (१४)

याददेहे स्थितिरूपचयः कसणामास्रधेण, तावत्सौख्य कृत उपलभेतस्तत्सोऽहंनेच्छुः ।
 एतत्कृत्यं न भवति विना सिद्धभक्ति यतो मे, पूर्णाधौषप्रयजनविद्यावाश्रितोऽहं शरण्यम् ॥४६६॥
 भाषा छद गाराव-सुखी न जीव हो कभी जहां कि देश साथ है । मदा हिकर्म अ स्वै न शांतता लहात हैं ॥
 जो सिद्धको लखाय अक्ति एक मन करात है बही सुनिद आप हा स्वभाव आत्मपपात है ॥

ॐ ह्रीं सिद्धशोभ्यो अर्घ्यं निवपामीति स्वाहा । (१५)

रांगेद्वेषवर्षेणमनतो निःशुद्धा धीरजीराः, समाराब्धौ विषमगहने मज्जनां निर्निमित्त ।
 दरबाधर्मोवरणतरणि पारयन्तो सुनीशास्तानर्धेण स्थिरगुणधिषा प्रार्चयामि त्रिगुण्या ॥४६७॥
 भाषा—छन्द त्रोटक-नहि राग न द्वेष न काम धरें, भवदधि नौका भवि पार करें ।
 स्वारथ बिन सब हितकारक हैं, ते साशु जजू सुखकारक हैं ॥

ॐ ह्रीं साधुशोभ्यो अथ निवपामीति स्वाहा । (१६)

मित्र सम्पक् परमभयपार्श्वकमे सार्धंदायि, नान्यो घर्मादुद्विरितदहन प्लोषणेंद्रुप्रबाहः ।
 जानंतं वां समहविषिषां सन्निधानाच्छरण्य, ब्राह्मण त्व त्वयि धृत्तगति पूजनार्थेण युक्त ॥४६८॥

बलिष्ठा-

॥ ३१ ॥

भाषा-छन्द चामरो-धर्म ही सु विप्रसाग साथ नाहि त्यागता, वापरू अग्नि को सुमेघ सम बुझावता ।
 धर्म सत्य ज्ञान धर्मो जीवको सम्भारता, भक्ति धर्म जो करे अनन्त ज्ञान वावता ॥

ॐ ही धर्मकारणेभ्यो अर्धे निर्वाणीति स्वाहा ।

मन्त्री ते तान् तरुचन्द्रप्रमाणान्, जापध्यानस्तोत्रमन्त्रै रुद्रव्य ।

द्रव्यक्षेत्रस्फूर्तिस्त्रजावभाषा, नत्वार्येण प्रांशुनां सरसरासि ॥ ४३९ ॥

भाषा-दोहा-पञ्च परध गुरु मार है, मङ्गल उत्तम जान । शरणा राखनको बली, पूजू कर उर ध्यान ॥ ४३९ ॥

ॐ ही अर्हतपरमेष्ठिपशुतिधर्मक्षणांपथपत्रलयसि तपसदशजिनाथोअथज्ञेदेवाभ्यो अर्धे निर्वाणीति स्वाहा ।

इति पूर्णोर्ध्व—(यथां पूर्णाय देव्य एक छोटागा नारियल सुन्दरताके साथ पहले बलगमें कर्षी पर रख दे जिनसे निहित हो कि पहले बल्यकी पूजा हो चुकी, यदि वहाँ तरु हाथ न पहुँचे तो षण्डकते किनारेको नाफ एक नारियल रख दे) ।

अत दूमे बलगमे २४ धूपकालके तीर्थङ्करीकी पूजा जानो

निर्वाणदेव त्रितभङ्गलोकं निर्वाणदायाममन्तसौख्यं । मंपूजयेऽइं मल्लमद्विहेनो रघोश्वर प्राथमिकं जिनेन्द्र ॥

भाषा-पद्धरी छन्द-अदिलोक कारण निर्वाणदेव, शिवसुखदाता सब देव देव ।

पूजू शिवकारण मन लगाय, जासे अचलागर पार जाय ॥ ४७० ॥

ॐ ही निर्वाण जिनाय अघ निवर्णीति स्वाहा ।

श्रीसागर वीतममत्परागद्वेष कृताशेषजनसत्वाद् । अमर्चये नीरवकमदीपेरुहीपिनातोषवदार्थमालं ॥ ४७१ ॥

भाषा-तज रागद्वेष ममता विहाय, पूजू सब षच अर न्नाय नाय । ४७१ ॥

गुणसागर सागर जिन लखाय, जिन लख जन सुख अनुभव लहाय ।

श्रीअन्महासाधुजनं प्रमणत्रयप्रमाणाङ्कनजीवतरुव । रव्याद्वादभंगप्रणिधानहेतुं समर्चये तद्विधानसिद्धये ॥

भाषा-नय अर प्रमाणसे तरुव पाय, जिन जीवतरु निश्चै कराय । साधो तप केवलज्ञान दाय, ते साधु महा वन्द्यै सुभाय ॥ ४७२ ॥

ॐ ही महासाधु जिनाय अर्धे निर्वाणीति स्वाहा ।

यस्यातिसाज्ज्ञानविशालदीपे प्रभाससाङ्गजगदल्पसार । त्रिलोकप्रते सर्पपदत हरौ लसर्चयेऽहं विमलप्रभाख्यं ॥

भाषा-दीपक विशाल निजज्ञान पाय, त्रिलोक लखे विनश्रम उपाय । विमलप्रभ निमलता कराय, जो पूजे जिनको अघ लाय ॥

ॐ ही विमलप्रमाय अर्धे निर्वाणीति स्वाहा । (२१)

समाभितानां मनसो विशुद्धय, कृतावतारं सुनिगीतकीर्तिम् ।
प्रणमयय श्रेष्ठसुदृषयामि शुद्धाभैर्ध्वं चरुभिः प्रदीपैः ॥ ४७४ ॥

भाषा-भवि शरण गेह मन शुद्धिकार, गांधं श्रुति सुनिगण यथा प्रचार ।

शुद्धाभदेव पूजू पिबार, पाऊँ आत्मस गुण मोक्ष द्वार ॥ ४७४ ॥

ॐ श्री शुद्धाभदेवाय अर्घं निर्वाणमीति स्वाहा । (२२)

लक्ष्मीद्वयं बाह्य गतांतरसुभेदव्यपदोप्रे थिलुलोठ यस्मिन् । यस्मात्सद्वा श्रीघरकीर्तिर्भापत्सर्वयेथाश्रितभक्ष्यसार्थम् ॥

भाषा-अंतर बाहर लक्ष्मी लक्ष्मी, इदादिक सेवत नाथ शीस । श्रीघरचरण श्रीशिवकराय, आअपकर्ता

ॐ ह्रीं श्रीवराय अर्घं निर्वाणमीति स्वाहा । (२१) अक्षद्वि तराय ॥

श्रिय तदातीढ सुभक्तिभजां, वृन्दाय यस्माद्विहं नाम जातं ।

श्राद्धसदेव भक्ष्यमीति सुक्तये, यजामि निर्यादुसुवधामलक्ष्म्ये ॥४७६॥

भाषा-जो अर्तिक करे मन बचन काय, दाता शिवलक्ष्माके जिनाय ।

श्रीदत्त चरण पूजू महान् भयभय छूटे लहूँ अमल ज्ञान ॥

ॐ ह्रीं श्रीदत्त जिनाय अथ निर्वाणमीति स्वाहा । (२४)

सिद्धापसांगस्य विस्मर्षिणी तन्मध्यैजनुः सप्तकठशनेन ।

सम्पत्तिशुद्धिर्न मनसो यत्सर्वां सिद्धाभ ! यज्ञेऽर्चयितु समीहे ॥ ४७७ ॥

भाषा-भासण्डल छवि वरणी न जाय, जह जीव लखैँ भद सप्त आय ।

मन शुद्ध करे सम्पत्त पाय, सिद्धाभ भजे भयभय नशाय ॥ ४७७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धाभ जिनाय अर्घं निर्वाणमीति स्वाहा । (२५)

प्रथामतिः कृत्तिकनेकथा हि, मद्दुध्यानलक्ष्म्या यत उत्तमार्थैः ।

सङ्गायते त्वं ह्यमलां विभर्षिं, यतोऽन्वये त्वाममलप्रशाख्य ॥ ४७८ ॥

भाषा-अमलप्रथ निर्मल ज्ञान धरे, सेवामें इन्द्र अनेक खड़े । नित संतसुमंगल गान करें, निज आत्मसार

ॐ ह्रीं अमलप्रथ जिनाय अर्घं निर्वाणमीति स्वाहा । (२६)

विलास करें ॥

अनेकसंसारगत अमेभ्य उद्धारतंति कुघरबादि । यतो मम श्रान्तिपपाकुरु स्वमुद्धारदेव प्रयजे भवंतं ॥४७९॥

भा.-उद्धार जिन उद्धार करें, यथ कारण भांति विनाश करें, हम दूब रहे भवसागरमें, उद्धार करो निज

ॐ ह्रीं उदार जिनाय अथ निर्वपामीति स्वाहा । (२७)

आत्मसर्वे ॥ ४७९ ॥

दुष्टाष्टकसंघनदाहकर्ता यतोऽग्निनामाभ्युदिते यथार्थम् । ततो ममासात्तृणव्रजेऽपि तिष्ठाचये त्वां किमु पौनरुक्ते ।
भाषा-अग्निदेव जिनं हो अग्निमई, अठ कसन ईंधन दाह वहै ।

हम असात् तृणं कर दग्ध प्रभो, निज सम काले जिनराज प्रभो ॥ ४८० ॥

ॐ ह्रीं अग्निदेव जिनाय अथ निर्वपामीति स्वाहा । (२९)

प्राणेन्द्रियद्वैधसुसयमस्य दातारसुखैः कथयामि सार्धं । अदत्तमर्धं जिनसंगृहाण सुसंयमं स्त्रीयशुभं प्रदेहि ॥ ४८१ ॥

भाषा-सयम जिन द्वैविध संयमको, प्राणीरक्षण हृदिय दमको । दीजे निश्चय निज संयमको, हरिये हम सर्व

ॐ ह्रीं सयम जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२९) अंसंयमको ॥

स्वयं शिवः शाश्वतसौख्यदायि, स्वायं प्रभुः स्वात्मशुभाप्रसन्नः ।

तस्मात्तर्धंप्रतिपन्नकामसत्त्वात्तर्चये प्राञ्जलिना नतोऽस्मि ॥ ४८२ ॥

भाषा-शिव जिन शिव शाश्वत सौख्यकरी, निज आत्म विसृति स्वहस्त करी ।

हम शिव बाऽच्छक कर जोड़ नमें, शिव लक्ष्मी को नहिं काहु नमें ॥ ४८२ ॥

ॐ ह्रीं शिव जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (३०)

सत्कुन्दमल्लालजोर्द्विपुष्पैरभ्यर्चयमानः श्रियमादधाति ।

नाम्नाऽप्यमी तादृश एव यस्मात्, पुष्पांजलि त्वां प्रतिपूजयामि ॥ ४८३ ॥

भाषा-पुष्पांजलि पुष्प निते जजिये, सब काम कथया क्षणमें हरिये ।

निज शील स्वभाव हिरभ रहिये, जिन आत्म जनित सुखको लहिये ॥ ४८३ ॥

ॐ ह्रीं पुष्पांजलि जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (३१)

उत्साहयन् ज्ञानघनेश्वराणां, शाश्वताम्बुधिं संयमचन्द्रकीर्तितैः ।

उत्साहनाथो यजनोत्सवेषुऽस्मिन्, संपुजितो मे स्वगुणं ददातु ॥ ४८४ ॥

भाषा-उत्साह जिन उत्साह करे, निज संयम चन्द्र प्रकाश करे ।

समभाव समुद्र बढाबल है, हम पूजत तब गुण पावत है ॥ ४८४ ॥

ॐ ह्रीं उत्साह जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (३२)

नमोऽस्तु नित्यं परमेश्वराय, कृपा यदीयाक्षणसंनिधानात् ।

करोति चिन्तामणिरोचितार्थमिर्वाचये तं परमेश्वराख्यं ॥४८५॥

भाषा—चिन्तामणि सम चिन्ता हरिये, निज सम करिये भव तम हरिये ।

परमेश्वर जिन ऐश्वर्य धरें, जो पूजे ताके विघ्न हरें ॥ ४८५ ॥

ॐ ह्रीं परमेश्वरिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (३३)

यज्ञानरत्नाकारमण्यवती, जगत्त्रयं विन्दुसमं विभाति ।

तं ज्ञानसाम्राज्यपतिं जिनेन्द्रं, ज्ञानेश्वरं संप्रति पूजयामि ॥४८६॥

भाषा—ज्ञानेश्वर ज्ञान समुद्र पाय, त्रैलोक्य विन्दुसम जहं दिव्याय ।

निज आत्मज्ञान प्रकाशकार, बन्दें पूजूं मैं बार बार ॥ ४८६ ॥

ॐ ह्रीं इश्वरिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (३४)

तपोष्ठहृत्पातुसमुह्यपकृतात्मनस्त्यमनिमलानाम् । अस्माहशां तद्गुणसाददानं संपूजयामो विमलेश्वरं त ॥

भाषा—कर्मौने आत्ममलीन किया, तप अग्नि जला निज शुद्ध किया ।

विमलेश्वर जिन मो विमल करो, मल ताप सकल ही शांत करो ॥४८७॥

ॐ ह्रीं विमलेश्वर जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (३५)

यशः प्रसारे सति यस्य विदुः, सुधामय चंद्रकलावदातं । अनेकरूपं विकृतकरूपं, जातं समर्थं हि यशोधरेशं ॥

भाषा—यश जिनका विश्व प्रकाश किया, यशधारी सार्धक नाम किया ॥ ४८८ ॥

भट मोह अरीने शांत किया, यशधारी सार्धक नाम किया ॥ ४८८ ॥

ॐ ह्रीं यशोधर जिनेशाय अत्र निर्वपामीति स्वाहा ।

क्रोधस्मरशातविघातनाय, संजाततीव्रकुचिचारमनाम् ।

प्राप्तं तु कृष्णेति तु शुद्धियोगात्, तं कृष्णमर्चं शुचितामपन्नं ॥४८९॥

भाषा—समता भय क्रोध विनाश किया, जग काम रिपूको शान्त किया ।

शुचिता धर शुचिकर नाथ जजूं, श्री कृष्णमती जिन नित्य मजूं ॥४८९॥

ॐ ह्रीं कृष्णमर्चये जिनाय अत्र निर्वपामीति स्वाहा । (३७)

ज्ञानं मतिर्भाव उपाश्रयादिविरेकरथेएवप्रणिधानयोगात् । ज्ञानेमतिर्धस्य समासजातेपथार्थनामानमहं यजामि ॥

भाषा-शुचि ज्ञानमती जिन ज्ञान घरे, अज्ञान तिसिर सब नाश करे ।
जो पूजे ज्ञान बढावात है, आत्म अनुभव सुख पावत है ॥४९०॥

ॐ ह्रीं ज्ञानमनये जिनाय अर्धं निर्धपामीति स्वाहा । (३८)

समस्यमानान्यपदार्थजातं, धुरंधरं धर्मरथांगनेमिः । जिनेद्वरं शुद्धमतिं यजेत, प्राप्नोति श्रद्धां सतिमेव ना सः ॥

भाषा-शुद्ध मती जिनधर्म-धुरन्धर, जानत विश्व सकल एकीकर ।
शुद्ध बुद्धि होवे जो पूजे, ध्यान करे अचि निर्मल हूजे ॥ ४९१ ॥

ॐ ह्रीं शुद्धमतये जिनाय अर्धं निर्धपामीति स्वाहा । (३९)

संसारलक्ष्म्या अतिनश्वराय, जन्मक्षंसुदासिब कुत्सयन्वा । भद्रा शिबश्रीरिति योगयुक्त्वा श्रीभद्रमीशं
रभसार्धयामि ॥४९२॥

भाषा-संसार विभ्रुति उदास भये, शिवलक्ष्मी सार सुहात भए ।

निज योग बिजाल प्रकाश क्रिया, श्रीभद्र जिनं शिब वास लिया ॥४९२॥

ॐ ह्रीं श्रीभद्र जिनाय अर्धं निवपामीति स्वाहा । (४०)

अनन्तवीर्यादिगुणपसन्नमात्मप्रभवानुभवैकगम्य । अनन्तवीर्यं जिनपं स्तवीमि, यज्ञार्धंभार्गैरुत्पल्यमानं ॥

भाषा-सतवीर्य अनन्त प्रकाश क्रिये, निज आत्म तत्त्व विकाश क्रिये ।

जिन वीर्यं अनन्त प्रभाव घरे, जो पूजे कर्म कलङ्क हरे ॥४९३॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यं जिनाय अर्धं निवपामीति स्वाहा । (४१)

पूर्वं विसर्पिण्यथ कालमप्ये, सज्जातकल्याणपरम्परणाम् ।

संस्मृत्य सार्धं प्रगुणं जिनानां, यज्ञसमाहूय यजे समस्तान् ॥४९४॥

भाषा दोहा-भूत भरत चौबीस जिन, गुण समरू हरवार । मङ्गलकारी लोकमें, सुख शांति दातार ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठापदोत्सवे याज्ञपण्डलेष्वारद्वितीयबलयोन्मुद्रितनिर्वाणधनन्तवीर्योन्वेभ्यो भूतजिनेभ्यो पूर्णार्धे नि० ।

अथ तीसरे बलयमें वर्तमान चौबीस जिन पूजा करनी ।

मनुनाभिमहीधरजातमभुङ्, मरुदेव्युवरावतरन्तमहं । प्रणिपत्य शिरोभ्युदयाय यजे, कृतसुखपत्तिनं पृथक् २ ॥

भाषा चाल छंद-मनु नाभि महीधर जाये, मरुदेवि उदर उतराए । युग आदि सुघन बलाया, कृष्णेश जजो
दूर पाया ॥ (४२)

जितशत्रुघ्नं परिभूषयितु, व्यबहारदिशा तनुसूत्रमबंध । नयनिश्रयतः स्वयमेवभुमजित जिनमवचतु गणेशरं ॥४९६
भाषा-जितशत्रु जने व्यबहारा, निश्रय आयो अबतारा । सब कर्धन जीत लिया है, अजितेश सुनाम भया है ॥

ॐ ह्रीं अजित जिनाय अर्घ्यं निर्वपापीति स्वाहा । (४२)

हदराजसुवन्शानभोमिहर त्रिजगत्प्रयभूषणमभ्युदयं । जिनरुम्भवमूर्ध्वगतिप्रदमर्चनया प्रणमामि पुरस्कृतया ॥
भाषा-हदराज सुवन्श अकाशे, खुरजसम नाथ प्रकाशे । जग भूषण शिष गति दानी, सम्भव जज केवलज्ञानी ॥

ॐ ३० सम्भव जिनाय ऋघं निर्वपापीति स्वाहा । (४३)

कपिकेतनमीश्वरमर्धयतो मृगजन्मजरपदनोदयतः । अथिकश्यमहोत्सवसिद्धिमियादत एव यजे ह्यभिनंदनकं ॥
भाषा-कपिचिह्न धरे अभिनंदा, अथिजीव करे आनन्दा जन्मन मरणा दुख दारें, पूजे ते मोक्ष सिधारें ॥४९८

ॐ ह्रीं अभिनन्दन जिनाय अर्घ्यं निर्वपापीति स्वाहा । (४५)

सुमतिं श्रितमर्धयत् रक्तार्पणतोऽर्घ्यकररुक्मवशासशिबं । मह्यामि पितामहमेतदधिजगतीश्रयसृजितमक्तितुतः
भाषा-सुमतीश जजो सुखकारी, जो शरण गहें मतिधारी ।

मति निर्मल कर शिब पावें, जग श्रमण हि आप मिटावें ॥४९९॥

ॐ ह्रीं सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपापीति स्वाहा । (४६)

धरणेशभव भवभावमितं, जलजप्रभमीश्वरमानमताम् । सुरसंपदियतिं न केति यजे, चरुशीपकलः सुरवासभवै;
भाषा-धरणेश सुदृप उपजाए, पद्मपत्र नाम कहाये । है रक्त कमल पग चिह्वा, पूजत सन्ताप चिहिया ॥५००॥

ॐ ह्रीं एवंप्रम जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपापीति स्वाहा । (४७)

शुभपार्श्वजिनेश्वरपादसुभां, रजसां अयतः कमलाततयः ।

कति नाम भवन्ति न यज्ञसुचि, नयितुं मह्यामिमहृष्यनिभिः ॥५०१॥

भाषा-जिनवरणा रज सिर दीनी, लक्ष्मी अनुपम कर कीनी । हें धन्य सुपारश नाथा, हम छोकें नहि जगसाथा ॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अथ निर्वपापीति स्वाहा । (४८)

मनसा परिचिंतय विभुः स्वरसात, मम कांतिहृत्तिजिनदेश्युणे ।

इति पादसुखं अतिशान्तिव तं, जिनचन्द्रपदं बुजमश्रयत ॥ ५०२ ॥
भाषा-शशि तुम छवि दलस जगमें, आया बसने तब पगमें ।

इम शरण गही जिन चरणा, चन्द्र प्रभ भयतम हरणा ॥ ५०२ ॥

ॐ ही चन्द्रभ्रमजिनाय अर्घ निवपामीति स्वाहा । (४९)

सुमदंतजिनं नभसं सुविधीति पराहसखं हननं गहरं । शुचिदेहतप्रिसरं प्रणुनात् सलिलादिगणैर्घजतां विधिना ॥

भाषा-तुम पुण्यदन्त जितकामी, हे नाम सुविधि अभिरामी ।

बन्दू तेरे जुग चरणा, जासे हो शिबतिय चरणा ॥ ५०३ ॥

ॐ ही पुरदन्त जिनाय अर्घ निवपामीति स्वाहा । (५०)

... .. ॥५०४॥

भाषा-श्री शीतलनाथ अकामी, शिव लक्ष्मीशर अभिरामी । शीतल कर भव आतापा, पूजै हर मन संतापा ॥

ॐ ही शीतलनाथ जिनाय अर्घ निवपामीति स्वाहा । (५१)

अथो जिनस्य चरणौ परिधाय चित्ते, संसारपञ्चतयदुःखमण्डपपात्र ।

अथोऽर्थिनां भक्षति तत्कृतये मयाऽपि, सपूज्यते यजनमद्विचिषु प्रकाशे ॥ ५०५ ॥

भाषा-अर्थास जिना शुभ चरणा, चित्त बाध अङ्गल करणा । परिवर्तन पञ्च विनाशे, धुजनते ज्ञान प्रकाशे ॥ ५०५ ॥

ॐ ही अर्थास जिनाय अर्घ निवपामीति स्वाहा । (५२)

इत्याकुंभं शतिलको धसुपूज्यराजा, यज्ञभजातकविधौ हरिणाचितोऽभूत् ।

तद्भासुपूज्यजिनपार्थनया पुनीतः, एयमद्य तत्प्रतिकृति चरुभिर्यजाभि ॥ ५०६ ॥

भाषा-इक्ष्वाकु सुभंश सुराया, धसुपूज्य तनय प्रकटाया । इंद्रादिक सेवा कीनी, हन पूजै जिनगुण चोन्हो ॥

ॐ ही वासुपूज्य जिनाय अर्घ निवपामीति स्वाहा । (५३)

कांपित्यनाथकृतममृगप्रकारः, इयामाजयाहजननी सुखद नमामि ।

कोलध्वज मिश्वरस्रध्वरेऽस्मिन्नैव, द्विरुक्तमलदापनकर्मसिद्धय ॥ ५०७ ॥

भाषा-कांपित्य पिता कृतवर्मा, माता इयामा शुचि वर्मा । श्रीविमल परम सुखकारी, पूजा द्वै मल हरतारी ॥

ॐ ही श्री विमलनाथ जिनाय अर्घ निवपामीति स्वाहा । (५४)

साकेतनाथपुत्रस्य च सिंहसेनानाम्नश्ननूत्तममराचितपादपद्मं ।

सम्पूजयामि विविधाहर्षणया ह्यनन्तनाथं चतुर्दशजिनं मल्लिहाक्षतीर्थैः ॥५०८॥

भाषा-साकेतनाथनगरी भारी, हरिसेन पिता अधिकारी । सुर अशुर मदा जिनवाणा, पूजे भवसागर तरणा ।

ॐ ह्रीं अमन्तनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५५)

थर्म द्विधोपदिशता सदसोर्द्विधोर्थे, किं किं न नाम जनताहितमन्वदशि ।

श्री धर्मनाथ ! भवतेति सदर्थेनाम, सम्प्राप्तयेऽचनविधिं पुतः करोमि ॥ ५०९ ॥

भाषा-समवसत द्वैविध धर्मा, उपदेशो श्रीजिनधर्मा । हितकारी तत्व बनाए, जासे जन शिष्यमग पाये ॥

ॐ ह्रीं धमनाथ जिनाय अघ निवपामीति स्वाहा । (५६)

श्री हस्तिनापुरपालकविश्वसेन, स्वांके निवेश्य तनयामृतपुच्छितुष्ट ।

ऐराऽपि सा सुकुरुवन्शनिधानमृमिर्धमाद् वभूव जिनशांतिमिहाश्रयामि ॥५१०॥

भाषा-कुरुवन्शो श्री विश्वसेना, ऐरादेवी सुखदेना । श्री हस्तिनापुरं आए, जिनशांति जजो सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं वासिनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५७)

श्री कुन्धुनाथजिनजन्मनिषट्ठनिकायजीवाः सुख निरुपम बुभुजुर्धिगङ्गं ।

किं नाम तस्मृतिनिराकुलमानसोऽह भुक्ष्वे न सत्त्वरमतोऽचेनमारभेय ॥५११॥

भाषा-श्रीकुन्धु दयामय जानो, रक्षक बटकायो प्राणो सुमरत आकुलना भाजे, पूजत ले दब सु ताजे ॥५१२॥

ॐ ह्रीं कुन्धुनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५८)

सदशेनप्लुतसुदर्शनभूपुत्रं, शैलोक्यजीववरक्षणहेतुमित्रम् ।

श्री मिश्रसेनजननीखनिरन्नमर्धे, श्री पुण्यचिन्हमरनाथजिनेन्द्रमध्यम् ॥५१२॥

भाषा-शुभदृष्टी राय सुदर्शन, अर जाए त्रय मू पशन । माता सेना उर रत्न, घर चिह्न सुमन जजं यत्न ॥

ॐ ह्रीं अरनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५९)

कुम्भभोज्ज्वं धरणिदुःखहरं प्रजावर्यानन्दकारकमतन्द्रसुनीन्द्रसेठ्यं ।

श्रीमल्लिनाथविभुसुमध्वरविघ्नशांत्यै, सम्पूजये जलसुचन्दनपुण्यदीपैः ॥५१३॥

भाषा-दुप कुम्भ धरणिसे जाए, जिन मल्लिनाथ सुनि नाये । जिनयज्ञ विघ्न हरतारे, पूजे शुभ अर्घ उतारे ॥

(६०)

ः ही मल्लिनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

राजसुराजहरिवन्शनिभोविभारवान्, वषां विकाप्रियसुतो मुनिसुव्रगाह्वयः ।

कम्पूज्यते शिष्यपथपतिपत्यहेतुगृह्य, मया विधिब्रवस्तुमिरर्हणेऽस्मिन् ॥५१४॥

सुनिमुव्रन शिवपथ कारण, पूजूं सब विन्न निवारण ॥

(६१)

भाषा-हरिवंश सु सुन्दर राजा, वषा माता जिनराजा । मुनिसुव्रन शिवपथ कारण, पूजूं सब विन्न निवारण ॥

ः हीं मुनिसुव्रत जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

सन्मैथिलेशविजयाहृगृहेऽवतीर्ण, कल्याणपञ्चकसमर्धितपादपद्म ।

धर्मावुशारपरिपोषितभव्यशस्य, नित्य नमिं जिनवरं महमार्चयामि ॥५१५॥

ः हीं नमिनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

(६२)

भाषा-मिथुलापुर विजय नरेन्द्रा, कल्याण पांच हर इन्द्रा । नमि धर्मावुशार वषोयो, भव्यत खेतो अकुलाया ॥

ः हीं नमिनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

द्वारावतापतिस्सुद्वज्येशमान्यं, श्री यादवेशवलक्षेत्र पूजितांहिम् ।

शांखाङ्कमंबु रसे चक्रदेहपथे, सद्ब्रह्मचारिमणिनेमिजिनं जलाद्यैः ॥५१६॥

ः हीं नमिनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

(६३)

भाषा-द्वारावति विजयसमुद्रा, जन्मे गदुबश जिनेन्द्रा । हरिबल पूजित जिनवरणा, शांखांकअवुधर वरणा ॥

ः हीं नमिनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

काशीपुरीशसुभ्रूषणविश्वसेनेत्रपिय कमठशाब्दत्रिमण्डनेनं ।

पद्माहिराजविबुधत्रतपूनाक, वन्देऽर्चयामि शारवा नतमौलिनीत ॥५१७॥

ः हीं नमिनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

(६४)

भाषा-काशी विश्वसेन नरेशा, उपजायो पार्श्वजिनेशा । पद्मा अहिपति पग वन्दे, रिपु कमठ मान निकेदे ॥

ः हीं नमिनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धार्थभूपतिगणेन पुरस्क्रियायामानन्दनाण्डवविधौ स्वजन्तु शशासे ।

श्री अणिकेन सदसि ध्रुवभूषदापथ्य, यज्ञऽर्चयामि वरवीरजिनेन्द्रमास्मिन् ॥५१८॥

ः हीं नमिनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

(६५)

भाषा-सिद्धार्थराय त्रय ज्ञानी, सुत षट्समान गुणखानी । समस्तत्र अणिक पूजे, तुम सम हे देव न दूजे ॥

ः हीं नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

अत्राहूतधुपधर्षनिकरे, विम्बप्रतिष्ठोत्सवे सम्पूज्याश्रुतुतरा जिनवरा, विषयभाः सम्प्रति ॥

सञ्जाप्रत्समयादयैकसुकृतानुधार्य मोक्ष गतास्तेऽत्रागत्यं समस्तमध्वरकृत गृहन्तु पूजाविधि ॥

भाषा दोहा-बतमान चौबीस जिन, उद्धारक भवि जीव । बिम्बप्रतिष्ठा साधने, यजूं परम सुखनीव ॥५१९॥

ॐ ही अस्मिन् यागमण्डले मङ्गलुस्त्वापिष्टुठीयवल्योन्युद्विषवर्तमानचतुर्विजिनेभ्यः पूर्णाधि निर्वपामीति स्वाहा ।

यहाँ १ नारियल तीसरे बलयमें कहींपर या मण्डलके किनारे रख दे । अब चौथे बलयमें भविष्य चौबीस तीथङ्क्यों-की पूजा करनी ।

यथा बलेत्यकनलुप्तिकामा, जिनस्य पादायचलौ विचार्य ।

यस्याहपद्मे लभन्ति चकार, सोऽयं महापद्मजिनोऽर्चयेत्सैः ॥५२०॥

भाषा चौपाई-महापद्म जिन भाधीलाथ, भेषिकजीव जगत विख्यात । लक्ष्मी बञ्चल लिप्टी आन, तब चरणा पूजूं

ॐ ह्रीं महापद्म जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६६)

देवावतुर्भद्रनिकायमिन्द्रासौषां पद्मौ सूर्धनि सन्दधानः । तेनैव जातं सुरदेवनाम तमचये घञ्जबिधौ जलाचैः ॥

भाषा-देव चतुर्विधि पूजे पाय, नाय २ सुप्रप्रभ जिनराय । सैं सुप्ररण करके हरषाय, पूजूं हर्ष न अङ्क समाय ॥

ॐ ह्रीं सुप्रप्र जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६७)

सेवार्थमुप्रेक्ष्य न मूर्तिद्राता, कारुण्यबुद्धयैव ददाति लक्ष्मीम् ।

यतो जिनः सुप्रसुरायस्यार्थं नामार्चयेत्सं विधिनाध्वरीयः ॥५२१॥

भाषा-सुप्रसु जिनके बँदू पाय, सेवकजन सुखत्वार लहाथ । करुणाधारी घनदातार, जो अधिनाशी जिय सुखकार ॥

ॐ ह्रीं सुप्रम जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६८)

न केनचित्पहविधायि मोक्षसाम्राज्यलक्ष्म्याः स्वयमेव लब्धं । स्वयंप्रभव स्वयमेवजातं यस्यार्चते पादसरोजयुग्मं ॥

भाषा-मोक्ष राज्य देये नहिं कोय, स्वयं आत्मबल लेवें सोय ।

देव स्वयंप्रभ चरण नम्राय, पूजूं मन बच ध्यान लगाय ॥५२३॥

ॐ ह्रीं स्वयंप्रमदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६९)

सर्वमनःकायवचःप्रहारे कर्मांगसां शस्त्रसभूदु यतो यः । सर्वायुधाख्यामगमममद्य संपूज्यतेऽसौ कृतुभागभाज्यैः ॥

भाषा-मन बच काय गुति धरतार, तोत्र शस्त्र अद्य मारणहार ।

सर्वायुध जिन साम्य प्रचार, पूजत जग मङ्गल करतार ॥५२४॥

ॐ ह्रीं सर्वायुधदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७०)

कर्मद्विषां मूलमपास्य लब्धो, जयोऽन्यमर्थैरपि योऽनवाप्यः
ततो जयाख्यामुपलभ्यमानो, सग्राहणार्थिः परिपुल्यतेऽसौ ॥५२५॥

भाषा-कर्म शत्रुजीतन बलवान्, श्रीजयदेव परम सुखखान पुजन मिथगतम विघटाय, तस्य क्रुतत्व प्रकट दशोय।

ॐ ह्रीं जयदेवाय अथ निर्वपामीति स्वाहा (७)

आरमप्रभावोदयनाश्रितात्, लब्धोदयत्वाद्दुश्यप्रमाख्यां ।

समाप यस्मादपि सार्थकत्वात्, कृतांचनं तस्य कृतो भवामि ॥५२६॥

भाषा-आरमप्रभाव उदयजिन भयो, उदयप्रभजिन तातैं थयो । पूजत उदय पुण्यका होष, पापबन्ध सय

ॐ ह्रीं उदयप्रभजिनाय अथ निर्वपामीति स्वाहा । (७२)

प्रभा मनीषा प्रकृतिर्मतिर्ज्ञा, प्रभृत्पुर्दोषैकफलेति मत्वा ।

जाता प्रभादेश इति प्रशस्तिः स्मृतोऽचैनतोहम्पि प्रयामि ॥५२७॥

भाषा-प्रभा बुद्धिप्रकाश, प्रभादेवजिन हृष्टी आश । पूजत प्रभा ज्ञान उपजाय, संशयतिमिर सबै

ॐ ह्रीं प्रभादेवजिनाय अथ निर्वपामीति स्वाहा । (७३)

उदकदेव त्वग्नि भक्तियोग्या, घटी घटी सा न तदुच्यते हा ।

त्वामेव लब्ध्वा जनन प्रयात्, वर यतस्त्वामहं महामि ॥५२८॥

भाषा-भव्यभक्तिजिनराजकराय, सफल काल तिनका हो जाय । देव उदक पूज जो करें, मनुष्यदेह अपनी

ॐ ह्रीं उदकदेवजिनाय अथ निर्वपामीति स्वाहा । (७४)

सुरासुरस्वांतगत भ्रमैकविष्वसने प्रशक्तोपपत्त्या । कीर्तिं ययौ प्रोष्ठिः सुहृदनामस्तथैर्निरुकोऽहसुदंचयामि ॥

भाषा-सुरविद्याधर प्रश्न कराय, उत्तर देत भरम टल जाय । प्रश्न कीर्तिजिन यशके धार, पूजत कमकलंक

ॐ ह्रीं प्रश्नकीर्तिजिनाय अथ निर्वपामीति स्वाहा । (७५)

पापाश्रवणां दलनाद् यशोभिर्घर्षकेर्जयात् कीर्तिसमागमेन ।

निरुक्तलक्ष्म्ये जयकीर्तिदेव, स्तबलज्जा नित्यमुपाचरामि ॥५३०॥

भाषा-पापदहनते जयको पाय, निर्मल यश जगमें प्रकटाय । गणधरादि नित बन्दन करें, पूजत पापकर्म

ॐ ह्रीं जयकौटिजिनाय अथ निर्वपामीति स्वाहा ।

(७६)

सब हरे ॥

केवल्यमानातिशये समथा, बुद्धिप्रवृत्तियत उत्तमार्थी । तत्पूणबुद्धेश्रणौ पवित्रावधयन यायन्मि भवप्रणष्ट्य ॥
भाषा-बुद्धिपूर्णं जिन बन्दू पाय, केवल ज्ञान कृद्धि प्रकटाय ।

चरण पवित्र करण सुखदाय, पूजत भवबाधा नश जाय ॥५३१॥ ॐ ह्रीं पूणबुद्धिजिनाय अथ निर्व० स्वाहा ॥
क्रोधादयश्चात्मनपलभावं, स्वधर्मनाशान्न जहत्युदीर्णं ।

तेषां हतियेन कृता व्यशक्तेरत, निरुषायं प्रयजामि निस्य ॥५३२॥

भाषा-हैं कषाय जगमें दुखकार, आत्मधर्मके नाशनहार । निरुषाय होगे जिनराज, तात पूजूं मङ्गल काज ॥
ॐ ह्रीं निरुषायजिनाय अर्थ निर्वपामीति स्वाहा । (७८)

मलव्यपायान्मननात्मलाभाद्, यथार्थशब्दं विमलप्रभेति ।

लब्ध कृतौ स्वीयविशुद्धिकामाः, सम्पूजयामस्तमनघयजात ॥५३३॥

भाषा-कमरूप मल नाशनहार, आत्म शुद्धकर्ता सुखकार । विमलप्रभ जिन पूजूं आय, जारो मन विशुद्ध हो जाय ॥
ॐ ह्रीं विमलप्रदेवाय अ निर्वपामीति स्वाहा । (७९)

भास्वद्गुणशामचिआसनेन, पौरस्यसम्प्राप्तविभावितानं ।

संस्मृत्य कामं महुलप्रभ तं, समर्चये तद्गुणलविश्लुब्धः ॥५३४॥

भाषा-दीप्तवन्त गुणधारणहार, बहुलप्रभ पूजों हितकार । आत्मगुण जासो प्रगटाय, मोहतिमिर क्षणमें

ॐ ह्रीं बहुरूपप्रदेवाय अथ निर्वपामीति स्वाहा । (८०)

विनशाय ॥

नीराश्रयानि सुनिमलानि, प्रवाह्येशोऽद्वृत्तवादिना धे ।

येन द्विधा कर्ममलो निरस्तः, स निमल पातु सदर्चितो माम् ॥५३५॥

भाषा-जलनभरत्न विमल कहवाय, सो अमृत व्यवहार वनाय । भाव कम अठकम महान, हत निमल जिन

मनोवचःकाथनियन्त्रणेन, चित्राऽस्मिन् गुप्तियद्वेषासिपूतैः तं चित्रगुप्ताह्वयमचयामि । (८१)

भाषा-मनवचकाय गुप्ति धरतार, चित्रगुप्ति जिन है अचिकार । पूजूं पग तिन भाब लगाय जासे गुप्तत्रय

ॐ ह्रीं चित्रगुप्तिजिनाय अर्थ निर्वपामीति स्वाहा । (८२)

प्रगटाय ॥५३६॥

अपारसंसारगतौ समाधिलब्धौ न यस्माद् विहितः स येन ।

प्रतिष्ठा-

समाधिगुप्तिजिनमचयित्वा, लभे समाधिं तिरति पूजयामि ॥५३७॥

भाषा-चिरभव श्रमण करत दुख सहा, मरण समाधि न कबहुं लहा । गुप्तिस्माधि शरणका परम नजत
 ॐ ह्रीं समाधिगुप्तिजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८६) समाधि प्रगट भाज य ॥

॥ ४३ ॥

स्व विनाऽन्यस्य सुयोगसात्प्रवृत्तिसुदम्बाव्य निजस्वरूपे ।

व्यक्तोबभूवेति जिन स्वयम्बूदध्यात् शिवं पूजनयानयाब्धैः ॥५३८॥

भाषा-अन्यसहाय विना जिनराज, स्वयं लेय परमात्मराज । नाथ स्वगभू मग शिवदाय, पूजन बाधा अब टल
 ॐ ह्रींस्वयम्बूजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८४) जाय ॥

कन्दर्पनाम स्मरन्नुद्भटस्य, सुशेव नामेति तदर्दनोद्घः । प्रशस्तकदर्पहृषाय शक्ति, यतोऽर्चयेऽङ्गनद्रयोऽबुद्धये ॥
 भाषा-मनदर्पके नाशनहार, जिनकक्षप आत्मबलधार । दप अयोग बुद्धिके काज, पूजू अर्घी लिए जनराज ॥

ॐ ह्रीं कन्दजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८५) (१६९)

अनेकनाम्नानि गुणैरनन्तै, जिनस्य बोध्यानि विचारयद्भिः ।

जय तथा न्यासमथैकविंशतनागत स्मरति पूजयामि ॥५४०॥

भाषा-गुण अनंत ते नाम अनंत, श्रीजयनाथ धरत भगवत । पूजू अष्टद्वय कर लाय, विघ्न भूल ज संसे
 ॐ ह्रीं जयनाथजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८६) टल जाय । ५४०॥

अभ्यर्हितात्मप्रगुणस्वभावं, मलापहं श्रीविमलेशमीशं । पात्रेनिघायाधर्मफलशुशोलाखुरशक्त्य जिनमचयामि
 भाषा-पुज्य आत्म गुणधर मलहार, विमलनाथ जग परम उदार । शील परम पावनके काज, पूजू अघ
 ॐ ह्रीं विमलजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८७) लेय जिनराज ॥५४१॥

अनेकभाषा जगति प्रगिद्धा, परन्तु दिव्यो ध्वनिरहंतो वै ।

एवं निरूप्यात्मनि तत्त्वबुद्धिमभ्यर्चयामो जिनदिव्यवाद् ॥५४२॥

भाषा-दिव्यवाद् अहन्त्य अपार, दिव्यध्वनि प्रगटावनहार । अःत्मतत्त्वज्ञाता सिराज, पूजू अघ लेय
 ॐ ह्रीं दिव्यवाद् जिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८८) जिनराज ॥

शस्तेरपारश्चि एव गीतस्तथापि तद्बुव्यक्तिमिति लब्ध्या ।

अनन्तवीय त्वमगाः सुयोगान्त्वामचये त्वरपदष्टमूर्त्तौ ॥५४३॥

अनन्तवीय त्वमगाः सुयोगान्त्वामचये त्वरपदष्टमूर्त्तौ ॥५४३॥

भाषा-शक्ति अपार आत्मधरतार, प्रगट करें जिनयोग संसार वीथ अंततनाथको श्याय, नत मस्तक पूजें हरषाय ॥ (८९)

काले भाविनि ये सुतीर्थधरणात् पूर्वं प्ररूप्यागमे, विरुप्याता निजकर्मसन्ततिवपाकृत्य स्फुरच्छक्तयः ॥ तानत्र प्रतिकृत्यपशुनससे स्मयुजिता भक्तिः, पाश-शेषगुणस्तर्दीप्तिवतपदाबास्थे तु सन्तु श्रिये ॥५४४ भाषा दोहा-तीर्थं ज चौडीस जिन भाधी भव हरतार चिम्बवनिष्ठा कार्यमें, पूजें बिधि निवार ॥

ॐ ह्रीं विष्वप्रतिष्ठाद्यानें मूर्त्तपुनःशेषतुयस्यीन्पुद्रगानागतचतुर्विदिमहाः यद्यतनवी विभ्यो जिनेभ्यः पूर्णार्दी नि० । यक्षां १ नारियन लैथे ज्ञाय भा मण्डलके एक तफ वसे भा पावें बलयमें वीन विदेह तीर्थङ्कराकी पूजा करनी । सीमन्धर मोक्षमहात्म्याः, श्रीहंसचित्ताक्षरभाजुमन्त्र । यत्पुण्डराकरूपुरस्त्रजात्या, पुतीकुंतं महसाचयामि॥

भाषा छन्दः शृ गणी-सोश्र नगरापनि दल राजा सुतं पुण्डराका पुगी राजते दुखहतम् । श्रीमन्धर जिना पूजते दुग्दहना फेर होन न या जगतमें आवजा ॥५४५॥ ॐ ह्रीं सीमन्धराजि० भ० नि०

युगंधरं धर्मनयप्रमाणभृदुवधस्थतिषु युरभृष्टेः सधारणत् रीकहभूजातं, प्रणम्यपुष्पांजलिनिचियामि ॥ भाषा-धमद्वय दस्तु द्वय नय प्रमाणद्वय, साथ जुगमन्धरं कथित वत द्वय । भूपश्री बह सुत ज्ञानकलगत, पूजिये भक्तिसे कर्मकञ्चू हत ॥५४६॥ ॐ ह्रीं जुगमन्धराजि० भ० नि० सुग्रीवराजोद्भवमेणचिह्न, सुर्माभपु री विजयाप्रसूतं । बाहु त्रिलोकाद्धरणाय बाहुं, मखे पवित्रेऽचिन्तमर्घयामि ॥

भाषा-भूपसुग्राव विजयासे जाए प्र ५, एणचहं धरे जातते तान भू । रबच्छ सीमापुरी राजते य ह्नुजिन पूजिये स्नायुको राग रुव दोष विन ॥५४७॥ ॐ ह्रीं बाहुजिनाय भ०

निःशलयशशास्रमभिरिभ्रन्त, सुनन्दया ला लनमुप्रकीर्ति । अशब्दभदेशाधिपति सुष हु तोषादिभिः पूजितुस्तुन्देहृह ॥५४८॥

भाषा-बंधानभ निमल सूयक्रम राजते, कीर्तियय बन्धविन क्षेत्र शुभ शोभते । मात सुन्दर सुनन्दा सु रवहत पूजते बाहु शुभ भवभय निर्गतं ॥ ॐ ह्रीं सुबाहुजिनाय भ० नि०

विदेहसेनारत्नजर्ममाक विदेहवषण्डकपापुरिस्थं । सञ्जातकं, पुण्णजुधररबात, सार्थोक्त्यर्च्येऽन्नमखे जलाद्ये ॥ भाषा-जन्म अलकापुरी देवसेनारत्नज, पुण्णमय जन्मए नाथ सञ्जातकं । पूजिये भावसे द्रव्य आठों लिये, औष रत्न त्याग कर, आत्मरसको पिये ॥५४९॥

ॐ ह्रीं संज्ञातकजिनाय अर्घं निवेपामीति स्वाहा ।

स्वयंकृतात्मप्रभवत्वहेतोः, स्वयंपसु सद्गुरुरयस्वभूत । सन्मङ्गलापूरस्थमनुष्णकांतिचिह्नं यजामोऽत्र महोत्सवेषु ॥
भाषा-जन्मपुर मङ्गला चन्द्र चिह्नं वरे, आपसे आप ही भव उदधि उद्धरे ।

प्रभस्वयं पूजते चित्र सारे टरे, ह्यौय मङ्गल महा कर्मशत्रु डरे ॥५०॥ ॐ ह्रींस्वयंप्रयजिनाय अर्घं नि-
श्रीवीरसेना प्रसवं सुसीमाधीशं, सुराणांमृषभानन तं । ईशं सुसौभाग्यसुवं महेशमर्चं विशालैश्चर्चिर्निवीनैः ॥
भाषा-वीरसेना सुमाता सुसीमापुरो, देवदेवी परमभक्ति उरमें धरी ।

देव ऋषभानन आनन मार है, देवते पूजते भव्य उद्धार है ॥५१॥ ॐ ह्रीं क्रूरभाननदेवाय अर्घं नि०
यस्यास्ति वीर्यस्य न पारमंश्रं, तारागणायैश्च नितांत रम्यं । अनन्तवीर्यमसुमर्चं यित्वा कुनीषाम्यत्रमले पवित्रे ॥
भाषा-वीर्यका पार ना ज्ञानका पार ना, सुक्खका पाग ना ध्यानका पार ना ।

आपमें राजते शांतमय छाजते, अन्तविन वीर्यको पूज अघ भाजते ॥५२॥ अनन्तवीर्यजिनाय अर्घं नि०
वृक्षांकमुचेश्चरणे विजाति, यस्यापरस्ताद् वृषभूतिहेतुः ।

सूरिप्रसु तं बिधिनामहामि, चार्मुख्यतर्षैः शिवतत्त्वलब्धै ॥५३॥

भाषा-अंकवृष धारते धर्म वृष्टी करें, भाष सन्तापहर ज्ञान सुष्टी करें ।
नाथ सूरिप्रभं पूजते दुखहन, मुक्ति नारी वर पादुपे निजधनं ॥ ॐ ह्रीं सुरेप्रभजिनाय अर्घं नि० (९८)
वीर्येशभूमिबृहपुष्पमिद्रमल्लोच्छनं पुण्ड्रपुस्तिरीट । विशालमीशं विजयापसूनमचोमि तद्दुध्यानपरायणोऽह ॥

भाषा-पुण्ड्र पुरवर मात विजया जने, वीर्य राजा पिता ज्ञानचारी मने ।
जुगमचरणं भजे ध्यान इकनाब हो, जिनविशालप्रभ पूज अवहान हो ॥५४॥ ॐ ह्रीं विशालप्रभजि० --

क्षरस्वतीपद्मार्थांगजात, शखां ऋचैः प्रियमीशितारं ।

संमान्य त बज्रधरं जिनेन्द्रं, जलाक्षतैरर्चिनसुं करोमि ॥५५॥

भाषा-बज्रधर जिनधरं पद्मार्थके सुतं, शख चिह्नं धरे मान रूप भयगत ।
मात सरसुति बड़ी इन्द्र भन्तानिता, पूजते जासको पाप मष भाजना ॥ ॐ ह्रीं बज्रराजिनाय अर्घं नि०

बालमीकवंशानुविधिशीतरर्दिमं, दयावतीमातृकमंक्यगावं ।

सन्पुण्डरीकिण्यवनं जिनेन्द्र चन्द्रानन पूजयताज्जशयैः ॥५६॥

भाषा-चन्द्र आनन जिनं चन्द्रको जयकरं, कमविध्वंसकं साधुजनशमकरं ।

भाषा करुणावती नम्र पुण्ड्रीकिनी, पूजते माहकी राज्यधानी छिनी ॥ ॐ ह्रीं चन्द्राननजिनाय अर्घं नि०

श्री रेणुकाभातुकमञ्जचिह्न, देवेशसुपुत्रसुद्वारभावं ।

श्री चन्द्रबाहु जिनमर्चयामि, कृतुप्रयोगे विधिना प्रणम्य ॥५५७॥

भाषा-श्रीमती रेणुका मात है जासकी, पञ्चचिह्न धरे मोहको मात की ।

चन्द्रबाहुजिनं ज्ञानलक्ष्मीधर, पूजते जासके मुक्तिलक्ष्मीवर ॥ ॐ ह्रीं चन्द्रबाहुजिनाय अर्घं नि० स्वाहा ।

सुजङ्घन स्वार्थसुजेन मोक्षपन्थात्ररोहाद्दधुननामकीर्तिम् । महाफलक्ष्मीपतिपुत्रमर्चै चन्द्रांकयुक्तं महिमाविशाला ॥

भाषा-नाथ निज आत्मफल सुदित पथ पग दिया, चन्द्रमा चिह्न धर लोहतम हर लिया ।

बलमहाभूयती है पिता जासके, गमसुज नाथ पूगे न भवमें छके ॥५५८॥ ॐ ह्रीं सुजङ्घमजि० अ० नि०

उवालाप्रसूयेंन सुजातिमाप्ता, कृतार्थभां वा गलसेन सूपः ।

मोडय सुमीमापतिरिश्वरो मे, बोधिं ददातु त्रिजगद्विलासां । ५५९॥

भाषा-मात उवाला सती सेन गल सूपती, पुत्र ईश्वर जने पूजते सुरपती ।

स्वच्छ सोमानगर धर्म विस्तारकर, पूजते हो प्रगट बोधिमय आरर ॥ ॐ ह्रीं ईश्वरजिनाय अर्घं नि०

नेमिप्रभं धर्मार्थांगवाहे, नेमिस्वरूप तपनांकमीडे । वाञ्छन्वैनः शालिसुमप्रदीपैः, धूपैः फलश्चाकरुप्रदानैः ॥

भाषा-नाथनेमिप्रभ नेमि हैं धर्मार्थ, सूर्य चिह्न धरे चालते सुविनयपथ ।

अष्ट द्रव्य लिये पूजते ध्य हने, ज्ञानवैराग्यसे बोधि पांथ घने । ५६०॥ ॐ ह्रीं नेमिप्रमजिनाय अ० नि०

श्री वीरसेनाप्रभवं प्रदुष्टकर्मारिसेनाकरिणे सुगेन्द्रः ।

यः पुण्डरीशं जिनवीरसेन, सद्भूमिपालात्मजमर्चयामि ॥५६१॥

भाषा-वीरसेना सुतं कर्मसेना हत, सेनशूर जिन इन्द्रसे बन्दितां ।

पुण्डरीक नगर भूमि पालक दृप, है पिता ज्ञानसूरा करूँ मैं जप ॥ ॐ ह्रीं वीरसेनजिनाय अ० नि०

यो देवराजक्षितिपालबंशदिवामणिः पूर्वजन्मेष्वरोऽभूत् ।

उमाप्रसूने व्यवहारयुक्त्वा, श्रीमन्महाभद्र उदर्यथेऽसौ ॥५६२॥

भाषा-नम्र विजया तने देव राजा पती, अर उमामातके पुत्र सशय हती ।

जिन महाभद्रको पूजिये भद्रकर, सर्वं मङ्गल करै मोह सन्तापहर ॥ ॐ ह्रीं महाभद्र जिनाय अर्घं नि० ।

गङ्गाफनिरुकारमणि सुखीसापुरीश्वरं वै सनचभृतिपुत्रं । स्वस्तीपद देवपशोजिनेन्द्रमर्चामि मत्स्वस्तिनकराञ्छनोयं ॥
भाषा-है सुखीसा नगर भूप भृतिस्तव, मात गङ्गा जने द्योतते त्रिसुव ।

लाक्षण स्वस्तिकं जिनयशोदेवको, पूजिये वन्दिये सुक्ति गुरुदेवको ॥५६३॥ ॐ ह्रीं देवयज्ञो जिनय अ० नि०
कनकभूषणतिनोऽकमकोपकं, कृतगतपश्चरणादितमोहक । अजितवीर्यजिनं सरसीरुहविषदाचिह्नमहं परिपूजये ॥
भाषा-पद्म चिन्ह धरे मोहको वश करे, पुत्र राजा कनक क्रोधको क्षय करे ।

ध्यान मण्डित महावीर्य अजितं धरे, पूजते जासको कर्मवन्धन दरे ॥५६४॥ ॐ ह्रीं अजितवीर्यजि० अर्ध...
एष पञ्चमकोष्ठपूजितनिनाः सर्वं विदेशोद्भवा । नित्य ये स्थितिमादधुः प्रतिपत्तन्नाममन्त्रोत्तमाः ।

करिष्यत्सस्येऽन्नष्टब्धिषुमित पूर्णं जिनानां मतं । ते कुर्वन्तु शिवात्पलाममनितां पूर्णाघसम्भानिताः ॥५६५॥
भाषा दोहा-राजत वीस विदेश जिन, कबडिं म्माठ शन होय । पूजत वन्दन जासको, विघ्न सकल क्षय होय ॥

ॐ ह्रीं विश्वप्रतिष्ठाधरोद्याने मुख्यपूजार्हं पञ्चमालयोन्युद्वि विदेशेत्रे सुषट्पदितैरुग्रवजिनेशसंयुक्त नित्यनिर्हामाण-
विश्वतिजिनेभ्यः पूर्णार्थं निर्बपामीति स्वाहा । इत्युग्र पञ्चम वलयमे वीस जिनपूजा करके एक नारियल वहां पर या मंडलके
किनारे चढावे ।

अथ छठे वचनमें आचार्य पायेष्टीके ३६ गुणोंकी पूजा कानी ।

मोहयथादासहशोः स पञ्चविज्ञानिचारत्तजनाद्ववापनां ।

सम्यक्तवशुद्धिं प्रतिरक्षतोऽन्वं, आचार्यपर्यात् निजभावशुद्धान् ॥५६६॥

भाषा-युगलपयात छन्द-हटाये अनन्तानुबन्धी कषाये, कारणसे हैं मिथ्यात तीनों स्वपाये ।
अतीचार पचासको हैं बचाए, सु आचार दर्शन परम गुरु धराये ॥

ॐ ह्रीं दर्शनाचारस्युक्ताचार्यपर्यमेष्टिभ्योऽर्धं त्वंपामीति स्वाहा ।

विपर्ययादिप्रहृतेः पदार्थज्ञानं, समासाद्य परात्प्रनिष्ठं । दृढपतीति दधतो मुनीन्द्रानर्चं स्पृहाध्वंसलपूर्णहर्षोन् ॥
भाषा-न संशय विपर्यय न है योह कोई परम ज्ञान निर्मल धरे नत्व जोई ।
स्वपरज्ञानसे भेद विज्ञान धारे, सु आचार ज्ञानं स्व अनुभव ममशरे ॥५६७॥

ॐ ह्रीं ज्ञानचारसंयुक्ताचार्यपर्यमेष्टिभ्यो अथ निर्बपामीति स्वाहा ।

जातमस्वभावे स्थितिमादधानांश्चारित्रचारुव्रतधौर्ध्वतून् ।

द्विधा चरित्राच्चलत्त्वमाप्तानार्थान् यजे सद्गुणस्रसूत्रान् ॥५६८॥

भाषा-सुचारित्र व्यबहार निश्चय स्रस्रहारे, अहिंसादि पाँचों व्रतें शुद्ध धारे ।

अचल आत्ममें शुद्धता सार पाए, जज्जुँ पद गुरूके दरव अष्ट लाए ॥५६८॥

(११२)

ई० ह्रीं चारित्र्यास्युक्ताचार्यपरमेश्वरयो अत्र निवेणामीति स्वाहा ।

बाह्यांतरद्वैधतपोअभियुक्तान्, सुदर्शनाद्रिं हसतोऽवलत्वात् ।

गाढावरोशात्मसुस्रस्रभावात्, यजामि भक्त्या मुनिसंघपूज्यान् ॥५६९॥

भाषा-तपे द्वादशों तप अचल ज्ञानधारी, सह गुरु परीपह सुममता पचारी ।

परम आत्म रस पीबते आगहा तें, भज्जुँ मैं गुरु छूट जाऊँ भवों तें ॥ ईं हीं तपाचारस्युक्ताचार्यपर० अर्घी

स्वात्मानुभावोद्भूतवीर्यशक्तिदृढाभियोगावनत प्रशक्तान् । परीमहापीडनदुष्टदोषागतौ स्ववीर्यप्रचणान् यजेऽहं

भाषा-परम ध्यानमें लीनता आप कीनी, न हटते कभी घोर उपमर्ग दीनी ।

सु आत्म बलीवीर्यकी ढाल धारी, परम गुरु जज्जुँ अष्ट द्रव्यें सम्हारी ॥ ५७० ॥

ई० ह्रीं वीर्याचारसंयुक्ताचार्यपरमेश्वरयो अर्घं निर्वणामीति स्वाहा । (११४)

चतुर्विधाहारविमोचनेन, द्विद्वयादिघल्लपु तुषाधुधादेः । अम्लानभावदधतस्तपस्थानर्चामि यज्ञे प्रवरावतारान् ॥

भाषा-तपः अनशनं जो तपें धीरबीरा, तजें चारविध भोजनं शक्ति घीरा ।

कभी मास पक्ष कभी चार त्रय दो, सु उपवास करते जज्जुँ आप गुण दो ॥५७१॥

ई० ह्रीं अनशनतपोयुक्ताचार्यपरमेश्वरयो अत्र निर्वणामीति स्वाहा । (११५)

त्रिभागभोज्ये क्षितिवेदवह्निप्रामाशने तुष्टिमतोमुनीद्रान् ।

ध्यानावधानाअभिवृद्धिपुष्टान्, निद्रालसौ जेतुमिान् यजामि ॥५७२॥

भाषा-सु ऊनीदरी तप महा स्वच्छकारी, करे नीद आलस्यका नहिं प्रचारा ।

सदा ध्यानकी सावधानी सम्हारे, जज्जुँ मैं गुरुकी करम घन बिदारे ॥

ई० ह्रीं अवमोदर्थं पोऽप्युक्ताचार्यपरमेश्वरयो अर्घं निर्वणामीति स्वाहा । (११६)

शुद्धाप्रलये बसनं नवीनं, रक्तं नीरीक्ष्यैव मुञ्जि करिष्ये । इत्यादिदृष्टौ निरतानलक्ष्यभाषान् मुनीं द्रानहं चंपयामि ॥

भाषा-जम्भी भोजना हेतु पुरमें पधारें, तभी दृढ़ प्रतिज्ञा गुरु आप धारें ।

यही वृत्तिपरिसंख्य तप आशहारी, भजूं जिन गुरु जो कि धारें विचारी ॥५७३॥

(११७)

मिष्टाब्जदुग्धघादिरसापवृत्तेः, परस्य लक्ष्येऽप्यवभासनेन ।

त्यागे सुदं चेष्टितमत्ययोगाद्, धर्तृन् गणेशाधिपतीन् यजामि ॥५७४॥

भाषा-कभी छः रसोंको कभी चार त्रय दो, तजें राग वंजन गुरु लोभजित हो ।

धरें लक्ष्य आत्म सुधा मार पीते, जजूं मैं गुरूको समी दोष बीते ॥

ॐ ह्रीं रसगतिथागतपेऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्धं निर्वणामीति स्वाहा ।

दरीषु शूद्रोपरिषु ठमशाने, दुर्गे स्थले शून्यगृहाबलीषु, शय्यामने योगदृढासनेन, सधार्यमाणान् परिपूजयामि ॥

भाषा-कभी पर्वतों पर गुहा बन मशाने, धरें ध्यान एकांतमें एकताने ।

धरें आसना दृढ अन्नरु शांतिधारी, जजूं मैं गुरूको भरम तापहारी ॥५७५॥

ॐ ह्रीं विविक्तकथामनतपोभियुक्ताचार्यपरमष्टिभ्यो अर्धं निर्वणामीति स्वाहा ।

श्रीरुमे महीध्रे सरितां तटेषु, शारत्सु वर्षासु चतुष्टयेषु । योगं हृधानान् तदुक्कष्टदाने, प्रीतान् सुनीद्वान् चरुभिः

पृणामि ॥५७६॥

भाषा-ऋतु उष्ण पर्वत शरद्वितु नदी तट, अघोषृक्ष वर्षातमें याकि चउ पथ ।

करें योग अलुपम सहें कष्ट सारी, जजूं मैं गुरूको सुमम दम पुकारी ॥

ॐ ह्रीं काङ्केतपभियुक्ताचार्यपरमष्टिभ्यो अर्धं निर्वणामीति स्वाहा ।

संभाव्यदोषानुनय गुरुभ्य, आलोचनापूर्वमहर्निकाये । तच्छुद्धिमात्रे निपुणा शतीशा, सत्वर्धदानेन सुद्विचारः ॥

भाषा-करें दोष आलोचना गुरु सकाशे भरें दण्ड रुधिसों गुरु जो प्रकाशे ।

सुतप अन्तरङ्ग प्रथम शुद्ध कारी, जजूं मैं गुरूको स्व आत्म विहारी ॥५७७॥

ॐ ह्रीं प्राथश्चित्तपभियुक्ताचार्यपरमष्टिभ्यो अर्धं निर्वणामीति स्वाहा ।

सद्दर्शनज्ञानचारित्ररूपभेदतश्चरामगुणेषु पञ्च-पूज्येष्वशुल्यं विनयं दधानाः, मां पांतु यज्ञध्वनया पटिष्ठाः ॥

भाषा-दरश ज्ञान चारित्र आदि गुणोंमें, परम पदमयी पांच परमेष्ठियोंमें ।

विनय तप धरं क्षत्र्य त्रयको निवारं, हर्मं रक्ष श्रीगुरु जजूं अर्घ धारे ॥५७८॥
ॐ ह्रीं विनयतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अथ निवपामीति स्वाहा ।

दिक्संख्यसंधे खलु बातेपित्तकफादिरोगकृमजालिसद्यौ, दद्याद्भ्रंचित्तान्गुनियेगितज्ञांस्तदुदु खरंतूनहमाश्रयामि
भाषा-यती संघ दस विध यद्दी रोग धारे, तथा खेद पीडित सुनी हों विचारे ।

करं सेव उनकी दया चित्त ठाने, जजूं मैं गुरूको भरम ताप हाने ॥ ५७९ ॥
ॐ ह्रीं दैव्यावृत्तितपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अथ निवपामीति स्वाहा ।

श्रुतस्य बोध स्वपरार्थघोषा, स्वाध्याययोगादवभासमानान् ।
आस्नायशृच्छादिषु दत्तचित्तान्, सम्पूजयामोऽर्घविधानमुखेः ॥५८०॥

भाषा-करें बोध निज तत्त्व पर तत्त्व रुचिसे, प्रकाशें परम तत्त्व जगको स्वमतिसे ।
यही तप अमोलक करमको स्वपासे, जजूं मैं गुरूको कुवोधं नशावे ॥

ॐ ह्रीं स्वाध्यायतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ नि० स्वाहा ।
विनश्चरे देहकृते ममत्वत्वागेन कायोस्तुजतोपि पद्मा-सनादियोगानवधार्थचात्मसंपत्सु स्वस्थावहमश्चयामि ॥

भाषा-अपाधन विनाशीक निज देह लखके, तजें मष ममत्वं सुधा आत्म बलके ।
कर तप सु व्युत्सर्ग सन्तापहारी, जजूं मैं गुरूको परम पद विहारी ॥ ५८१ ॥

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अत्र नि० स्वाहा ।
येषां मनोऽनिशमात्तरींद्रभूमेरनङ्गीश्रणाद्धि धर्म्ये । शुक्लोपकण्ठे परिवर्तमानं तानाश्रये दिव्यविधानयज्ञ ॥

भाषा-जु है आतरींद्र कुध्यानं कुज्ञानं, उग्हें नहिं धरें ध्यान धर्म प्रदानं ।
करें शुद्ध उपयोग कर्मपहारी, जजूं मैं गुरूको स्व अनुभव सम्हारी ॥ ५८२ ॥

ॐ ह्रीं ध्यानावहमनविगताचायपरमेष्ठिभ्यो अर्घ नि० स्वाहा ।
येषां श्रुवः क्षेपणमात्रतोऽपि, शक्रस्य शकत्वविघातनं स्यात् ॥

एषविधा अप्युदितकुधार्तां, क्षमा भजन्ते ननु तान् महामि ॥५८३॥
भाषा-करें कीय बाधा बचन दुष्ट बोले, क्षमा ढालसे क्रोध मनमें न कुछ लें ।

धरें शक्ति अनुपम तदपि शाम्बधारी, जजूं मैं गुरूको स्व धर्मप्रचारी ॥

ॐ ह्रीं उत्तमशुभापरमधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्यो भव निर्वाणोति स्वाहा ।

प्रतिष्ठा-

॥५१॥

न जातिनामैश्वर्यविद्वक्त्ररूपमदाः कदाचिज्जननं प्रयाति ।
 येषां मृदिना गुहणाद्रचित्तास्ते द्युरीक्षाः स्वभवाच्छिद्यं मे ॥५८॥
 भाषा-धरै मदन तप ज्ञान आदी स्व मनमें, नरम चित्तसे ध्यान धारें सु बनमें ।
 परम सादर्यं धर्म सम्पत् प्रचारी, जज्जूं में गुरूको सुधा ज्ञान धारी ॥

ॐ ह्रीं उत्तमसादेवधर्मधुःस्वधार्थपरमेष्ठभ्यो अर्घो निर्वाणोति स्वाहा ।

सवत्र निदृच्छन्नशास्त्र बलीप्रदानमानमारोहति चित्तभूमौ ।
 तपोयसोद्भूतफलैरबन्धया, शास्त्र्यांबुमिक्ता त नमोऽनु तेभ्यः ॥५९॥
 भाषा-परम निदृकपट चित्त सूसी स्मर्यारे, लना धर्म वर्ध-रे शांति धारें ॥
 करम अष्ट हन मोक्ष फलको विचारें, जज्जूं में गुरूको । ज्ञान धारें ॥

ॐ ह्रीं उत्तमार्जुनधर्मपिष्टाचार्यपरमेष्ठभ्यो अर्घो निर्वाणोति स्वाहा ।

भाषासमित्या भयलो वसोहसूक्तसत्यादनुभूतया च । हितं मितं भाषयतां मुनीनां, शब्दरविद्वक्त्रमर्चयामि
 भाषा-न रुष लोभ अथ हास्य नहि चित्त धारें, बवन सत्य आगम प्रमाणे उचारें ।
 परम हितमित मिष्ट वाणी प्रचारो, जज्जूं में गुरूको सु समया विहारो ॥६०॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मपतिष्ठिताचार्यपरमेष्ठभ्यो अर्घो निर्वाणोति स्वाहा ।

न लोभ रक्षोऽभ्युदयो न तुष्टगायुद्धी पिशाक्त्यौ सविधं मदेतः ।
 तस्मात् शुचित्वात्मविभा चक्रास्त्रि, येषां तु पादस्थलमर्चयेऽहं ॥६१॥
 भाषा-न है लोभ राक्षस न तुष्टगा पिशाचा, परम शौच धारें मदा जो अजाची ।
 करें आत्म शोभा स्व भंतांष धारी, जज्जूं में गुरूको भवातापहारी ॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठभ्यो अर्घो निर्वाणोति स्वाहा ।

मनोवचःकायभिवानुमोदादिभङ्गश्चेन्द्रियजन्तुरक्षा । वर्धति सत्संयमबुद्धिबीरस्तेषां सशर्कविचिमाचरामि ।
 भाषा-न संयम विराधें करे प्राणिरक्षा, धर्म इन्द्रियोंको मिटावें कुत्खा ।

निजानन्द रावे खरे सयमी हो, जजू मैं गुरूको यमी अरु वमी हो ॥५८८॥

ॐ ह्रीं उत्तमद्विविधसंयमप्राचायपरमेष्ठिभ्यो अथ निर्धामीति स्वाहा

तपोविश्रुवा हृदयं विभक्तिं, येषां महाघोरतपोगुणाग्रथाः ।

इन्द्रादिर्घैश्चयवनं स्वतस्थं तथा युता एव धिबैषिण रयुः ॥

भाषा-तपो सूषण धारते यति विरागी, परम धाम सेवी गुणग्राम त्यागी ।

करे सेव निम्बी म इन्द्रादि देवा, जजू मैं वरणको लहूँ ज्ञान सेवा ॥ ॐ ह्रीं उत्तमतपोऽतिशयवर्मसं० पर० समस्तजतुल्यभय परायसंगत्करी ज्ञानसुदत्तिरिष्टा धर्मोषधीशा अपिते सुनीशास्त्यागेश्वरा द्रातुं मनोमलानि ॥ अभयदान देते परम ज्ञान दाता, सुधर्मोवधी षाटते आत्म ज्ञाता ।

परम त्याग धर्मी परम मन्त्र धर्मी, ज मैं गुरूको कर्म कर्म गर्मी ॥ ५९० ॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मवाणार्चार्थपरम पुण्या अ निर्धामीति स्वाहा ।

आत्मस्वभावात्परे पदार्थो, न हेऽधवाऽधं न परस्य बुद्धिः ।

येषामिति पाणयति प्रमाणं, तेषां पदार्थो करवाणि नित्य ॥५९१॥

भाषा-न पर वस्तु सेरी न संबन्ध मेरा, अलख गुण निखुन शमी आत्म मेरा ।

यही भाव अनुपम प्रकाशे सुध्यानं, जजू मैं गुरूको लहूँ सुद्ध ज्ञानं ॥ ॐ ह्रीं उत्तमार्किकन्यधर्मसं० चा०प० रं भावशा यन्मनसोविकारं, कर्तुं न शक्ताऽऽत्मगुणानुभावात् ।

शीलेशतामादशुस्तमार्थो, यजामि तानार्थवरात् सुनींद्रान् ॥५९२॥

भाषा-परम शील धारी निजाराम चारी, न रं भा सु नारी करे मन विकारी ।

परम ब्रह्मचर्या चलत एकतानं, जजू मैं गुरूको समी पापहानं । ॐ ह्रीं उ०ब्र०महासु० धर्ममहनीयाचार्यपरमे० संरोधनाम्नानसभङ्गवृत्तै, विकल्पसङ्कल्पपरिक्षयात् । शुद्धोपयोगं भजतां सुनीनां, गुप्ति प्रशस्यात्रयजामहे तान् । भाषा-मनः गुप्तिधारी विकल्प प्रहारी, परम शुद्ध उपयोगमें नित विहारी ।

निजानन्दसेवी परम धाम वेवी, जजू मैं गुरूको धरम ध्यान देवी ॥५९३॥ ॐ ह्रीं मनोगुप्तिमयुक्ताचार्यप०

धर्मोपदेशात्सहते कथाया, आभषणात् संभ्रमतादिदोषैः ।

वियोजनाद् ध्यानसुधैकपानाद्, गुप्ति वचोगामटितान् यजामि ॥५९४॥

भाषा-वचन गुप्तिधारी महासौख्यकारी, करें धर्म उपदेण संशय निवारी ।

सुधा सार पीते धरम ध्यान धारी, जजूं मैं गुरूको सदा निर्विकारी ॥ ॐ ह्रीं वचनधारिकाचार्यपरमे०

बन्धाः समिद्धिरचितां दृषस्त्वकीर्णोविवांगपतिमां निरीक्ष्य ।

कण्डूतिनांगानि लिहन्ति येषां, धाराप्रमर्शेण यजामि सम्यक् ॥५२५॥

भाषा-अचल ध्यान धारी खही सूर्ति धारी, जजू खुजाबंधं सृगी अंग अपना सम्हारी ।

धरी काय गुप्त निजानन्द धारी, जजूं मैं गुरूको सु समता प्रचारी ॥ ॐ ह्रीं कायगुप्तिंयुक्ताचार्यपरमे०

सामायिकं जाहति नोपदिष्टं, त्रिकालजातं ननु सर्वकाले ।

रागक्रुधोर्मूलनिवारणेन, यजामि चावश्यककर्मधातुत् ॥५२६॥

भाषा-परम साम्य भांधं धरें जो त्रिकालं, भरम राग द्वेष मद्र मोह टालं ।

पिबैं ज्ञान रस शाति सवता प्रचारी, जजूं मैं गुरूको निजानन्द धारी ॥ ॐ ह्रीं सामायिकावश्यककर्मधारि०

सिद्धश्रुति वैषगुरूश्रुतानां, स्मृति विधायापि परोक्षजातं ।

सद्बन्धनं नित्यमपार्थहानं, कुर्वति तेषां चरणौ यजामि ॥५२७॥

भाषा-करैं वन्दना सिद्ध अ हन्त देवा, मगन तिन गुणोंमें रहैं सार लेवा ।

उन्हींसा निजातम तु अपने विचारें, जजूं मैं गुरूको धरम ध्यान धारे ॥ ॐ ह्रीं वन्दनावश्यकनिरताचार्यप०

तेषां गुणानां स्तवधं सुनींद्रा, बचोभिरुद्भूतमनोमलांकैः ।

कुर्वति चावश्यकमेव यस्मात् पुष्ट्यांजलि तत्पुनः क्षिपामि ॥५२८॥

भाषा-करैं संसंधं सिद्ध अरहन्त देवा, करें गान गुणका लहैं ज्ञान मेवा ।

करैं निर्मलं भावको पाप नाशें, जजूं मैं गुरूको सु समता प्रकाशे ॥ स्तवनावश्यकंयुक्ताचार्यपरमेष्टि०

मलोःसृजादौ क्वचनाप्रदाष प्रतिक्रमेणापनुइन्ति धृष्टं ।

साधुं समुद्दिश्य निशादिबीयोषान् जहत्पर्वधनया धिनोमि ॥५२९॥

भाषा-रगे दोष तन मन बचनके फिरनसे, कह गुरु सर्मापे परम शुद्ध मनसे ।

करैं प्रतिक्रमण अर लहैं दण्ड सुखसे, जजूं मैं गुरूको छुटूं सर्व दुःखसे ॥ ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकनिर०

स्वो नाम चात्माऽध्ययते यदर्थः; स्वाध्याययुक्ता निजमानुबुद्धः ।

श्रुतस्य चिन्ताऽपिदर्थबुद्धिस्तामाश्रये स्वाभिमताथिसिद्धये ॥६००॥
 भाषा-करे भावना आत्मकी ज्ञान ध्याये, पढ़े शास्त्र रुचिसे सुबोध बढ़ाये ।

यही ज्ञान सेवा करम मल छुहावे, जजै मैं गुरूको अबोध हटावे ॥ ॐ ह्रीं स्वाध्यायवश्यकर्मनिस्ताचार्यप०
 मुजप्रलम्बादिविधिज्ञातायाः पौरस्यमाह्याधिगमं बहन्तः ।

व्युत्सर्गमात्रा वशिन्तः कृताथो, अस्मिन् मले यान्तु विधिज्ञपुजां ॥६०१॥
 भाषा-तजै मभ मन्त्रच शरीरादि सेनी, खड़े आत्म ध्याये छुटे कर्म रेती ।

लहै ज्ञान भेदं सु व्युत्सर्ग धारं, जजै मैं गुरूको स्व अनुभव विचारं ॥
 ॐ ह्रीं व्युत्सर्गाद्यकनिस्ताचार्यपमेष्टिभ्यो अथ निवपामोति स्वाहा ।

गुणोद्देशादेवा प्रणिधिबशानोऽन्तगुणिनां । कृता ह्याचार्योगामपचित्तिरिथं भावबहुला ॥
 समस्तान् संसृत्व्य श्रमणसुकुटानर्धमल्लु । प्रपूर्तं संहन्धं मम मखविधिं पूर्यतु वै ॥६०२॥

भाषा दोहा-गुण अनन्त धारो गुरू, शिबमग बालन हार । मंघ सकल रक्षा करे, यज्ञ विघ्न हरतार ॥
 ॐ ह्रीं अस्मत्प्रतष्ठोद्यापने पूजार्थमुत्पापप्रत्ययोनमदित आचार्यपामेष्टिभ्योपूर्णप्र निर्धपामोति स्वाहा ।

इम तरह पूजा काके एक नागिगल छठे बलययें या मण्डरुके किभारे बले ।
 अब मातवें बलयमे स्थापित उपाध्याय पामेष्टीके ५ गुणोको पूजा कानी ।

आचाराङ्गं प्रथम सागरसुनीशब्रणमेदकथं । अष्टादशसहस्रपदं यजामिसर्वोपकारसिद्धयथ ॥६०३॥
 भाषा दुतिविलम्बित छन्द-प्रथम अङ्क कथन आचारको, महम अष्टादश पद धारतो ।

पढन साधु सु अन्ध पढावते, जजै पाठकको अति चाबसे ॥
 ॐ ह्रीं अष्टादश सहस्रपदकावाङ्मनाताउपाध्याय परमण्डिभ्यो अथ निर्धपामोति स्वाहा ।

सूत्रकृताङ्गं द्वितीय षट्त्रिंशत्सहस्रपदकृतमहितं । स्वपरसमयविधानं पाठकपठित यजामि पूजाह ॥६०४॥
 भाषा-द्वितीय सूत्रकृतांग विचारते, स्वपर तत्त्व सु निश्चय लावते ।

पद छत्तीस हजार विशाल है, जजै पाठक शिष्य दयालु हैं ॥

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत्सहस्रपदसंयुक्तसकृतांगज्ञाताउपाध्यायपामेष्टिभ्यो अर्ध निर्धपामोति स्वाहा ।
 स्थानांग द्विकवत्वारिंशत्पदकं षडर्थहशासरणे, एकादिसुभेदयुजः कथं परिपूजये वसुभिः ॥६०५॥

भाषा-तृतीय अङ्क स्थान छः द्रव्यको, पद हजार त्रियालिस धारतो ।
एक द्वे त्रय भेद बखानता, जज्जू पाठक तत्त्व पिछानता ॥

ॐ हीं द्विचत्वारिंशदस्युक्तस्थानांगज्ञाताउपाधयापामेष्ठिनेऽर्थे निर्वपामीति स्वाहा ।
समवायाङ्ग लक्षेकं चतुरितषोमहस्रपद्विशदं । द्रव्यादिचतुष्टयेन तु साम्योक्तिर्यत्र पूजये विधिना ॥६०६॥

भाषा-द्रव्य क्षेत्र समय अर भावसे, साम्य झलकावे विस्तारसे ।

लख सहस्र चौसठ पद धारता, जज्जू पाठक तत्त्व विचारता ॥

ॐ हीं एकलक्षपष्टि पदन्यामसप्तमत्रयांगज्ञाताउपाधयाप मे ष्ठिनेऽत्र निवपामीति स्वाहा ।
व्याख्याप्रज्ञपर्यंगं द्विलक्षसहिताष्टविक्रितिसहस्रपदं । गणत्रयकुनपष्टिसहस्रश्चाक्तिघत्र पूज्यते महस्र ॥६०७॥

भाषा-प्रभ साठ हजार बखानता, सहस्र अठविक्रिति पद धारता ।

द्विलख और विक्रि परकाशना, जज्जू पाठक ध्याल सङ्ग्रहाना ॥

ॐ हीं द्विलक्षअष्टनिक्रितिपस दंगानवठपाख्याप्रज्ञपर्यंगज्ञाताउपाधयापामेष्ठिनेऽत्र निर्वपामीति स्वाहा ।
ज्ञातुर्भक्त्यांगं शालक्षसषट्कप्रश्चागतं पदसञ्चितं दृष्य चर्चापदनोत्तरपूजितं सहस्र ॥६०८॥
भाषा घर्भ चर्चा प्रधानत्तर करे, पांन लाख सहस्र छपरान घरे ।

पद स्रु सधयल ज्ञान बढायना, जज्जू पाठक आत्मस ध्यायता ॥

पद स्रु पचलक्षपर्यंवातमहस्रसप्तदस्रज्ञातुर्भक्त्यांगस्थांकोपाधयापामेष्ठिनेऽत्र निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ हीं पचलक्षपर्यंवातमहस्रसप्तदस्रज्ञातुर्भक्त्यांगस्थांकोपाधयापामेष्ठिनेऽत्र निर्वपामीति स्वाहा । (?)

उपासकपाठकज्ञियलक्षसप्तदस्रज्ञातुर्भक्त्यांगस्थांकोपाधयापामेष्ठिनेऽत्र निर्वपामीति स्वाहा ॥६०९॥

त्रतशीलाधानादिक्रियाप्रवीणं, यजामि सलिलाद्ये ॥६०९॥

भाष-त्रत सुशील क्रिया गुण आषका, पद सुलक्ष ह्रग्यारह धारका ।
सहस्र सप्तति और मिलारथे, जज्जू पाठक ज्ञान बढारथे ॥

ॐ हीं एकादशलक्षसप्ततिमहस्रसप्तदशोमितोपानकाध्ययनांगभारकोपाधयापामेष्ठिने अथ निर्वपामीति स्वाहा ।
अनसकृदंगं दश दश सायुजनोपसगकयकमधितीर्थम् ।

तेषां निःश्रेयसलंभनमपि, गणधरपठित यजामि मुदा ॥६१०॥

भाषा-दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थकर शिवतिय बरे ।

सहस्र अठाइस लाख तौरासा, पद यजूं पाठक जिन सारिसा ॥

ॐ ह्रीं त्रिविशतिलक्षभाठविंशतिसहस्रपदशोभितांतकृतदशाक्षुवारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अथ निर्वपामीति स्वाहा । उपपादानुत्तरकं द्विचत्वारिंशलक्षशेसहस्रपदं । (?) विजयादिषु नियमेन सुनिगतिरुक्तं यजामि महनीय ॥

भाषा-दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थ अनुत्तर अवतरे ।

सहस्र षड् चालिस लाख बानवे, पद धरे पाठक बहु ज्ञान दे ॥६१॥

ॐ ह्रीं द्विभ्रतिलक्षचतुर्भारिशतपदशोभितानुत्तरोपपादिकांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अथ निर्वपामीति स्वाहा । प्रश्रव्याकरणांगं त्रिणवतिलक्षाधिवोदशसहस्रपदं । नष्टोद्विष्टं सुखलाभगतिमाविकथं पूजये चरुफलाद्यैः ॥

भाषा-प्रश्रव्याकरणांग महान ये, सहस्र मोलह लाख तिरानवे ।

पद धरे सुख दुःख विचारता, जजूं पाठक धर्म प्रचारता ॥६२॥

ॐ ह्रीं त्रिभ्रतिलक्षषोडशसहस्रपदशोभितप्रश्रव्याकरणांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽथ निर्वपामीति स्वाहा ।

अंग विपाकसूत्रं कोटयेकचतुरशोनिमहस्रपदं । कर्मोदयमस्त्रानानोदीर्णोदिकथं यजनभागतोऽर्चामि ॥६३॥

भाषा-सहस्र चत्वारसि कोटि एक पद, भरत सूत्रविपाक सुज्ञान पद ।

काम-बन्ध उदय मत्वादिक कथं, जजूं पाठक जोते कामरथ ॥

ॐ ह्रीं एककोटिचतुरशोनिमहस्रपदशोभितविपाकसूत्रांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽथ निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्पादपूर्वकोटिपदपद्धतिजीवसुखषट्कं निजनिजस्वभावघटितं कथयतपंचामि भक्तिभरः ॥६४॥

भाषा-कथन षट् द्रव्योंकी सारता, एक कोटि पदको धारता ।

पूर्व है उत्पाद सु जानकर, ज पाठक निज रुचि ठान कर ॥

ॐ ह्रीं उत्पादपूर्वोपाध्यायपरमेऽठने अथ निर्वपामीति स्वाहा ।

अप्रायणीयपूर्वषण्णवतिकोटिपद तु यत्र तत्त्वकथा । सुनयदुर्णयतस्वपामाणपरूपकं प्रयजे ॥६५॥

भाषा-सुनय दुर्नय आदि प्रमाणता, नबति छ कोटि पद धारता ।

पूर्व अप्रायण विस्तार है, जजू पाठक भवदधि तार है ॥

ॐ ह्रीं अप्रायणीयपूर्वषाकोपाध्यायपरमेऽठने अथ निर्वपामीति स्वाहा ।

वीर्योत्तुवाद्मधिसप्ततिलक्षपादं, द्रव्यस्वतस्वगुणपर्ययवाद्मध्य ।

तत्तत्स्थभाषणतिथीर्थविधानदक्षं, सम्पूजये निजगुणप्रतिपत्तिहेतोः ॥६१६॥

भाषा-द्रव्य गुण पर्यय अल कथन है लाख सत्कार पद यह धरत है ।

पूर्व है अलुनाद सु वीर्थका, जजुं पाठक यतिपर धारका ॥

ॐ ही वीर्थालुनादपूर्व धारकोपाध्यायपरमे पुने अर्थ निर्वपामी न भावा ।

नारत्यस्त्रिन.दमधिषट्पिबुल्लषाद मसोदभंशचनप्रतिपत्तमूल । स्वाहादमौलिभिरुदस्त्रविरोषमात्रं संपूजयेजितकथप्रसदैकदेतुम् ॥

भाषा-कारि न अ सु प्रवाद दुअंघ है, साठ लल मध्यम पद सग है । सशभंग कथत जिन मीर्गकार, जजुं पाठक मोहनिवारकर ॥

ॐ ही अस्त्रिमास्त्रिप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनं अर्थ निवपामीति स्वाहा ।

ज्ञानप्रवादप्र.मकार्तिपदं तु हीन्मेकेन धाणामतपरान्विणयार्थं क कुञ्जानरूपविभौषधं समन्वे रत्पाठकः क्षणभित्ते ममये विचर्थम् ॥

भाषा-ज्ञान आठ सुभेद प्रकाशता, एककस कोटीपद धारत ।

सतत ज्ञान प्रवाद विचारता जजुं पाठक संशय टारता ॥

ॐ ही ज्ञानप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अर्थ निर्वपामीति स्वाहा ।

सत्प्रश्व.डमधिक रसपादजातैः कोटीपदं निस्त्रिज्जत्यधिचारवक्षं ।

धोतुपवक्तुगुणभेदकथापि यत्र तं पूर्वकुख्यलभिषादय उक्तसंज्ञैः ॥

भाषा-कथन अस्त्य सु भाषको कोटि अरु पदधारी पूर्वको ।

पहन सत्यपवाद जिलागमा, जजुं पाठय ज्ञाता आगमा ॥६१९॥

ॐ ही मत्यप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्याऽर्धं लि. स्वाहा (१६१)

आत्मप्रवादरश्चिज्ञातिकोटिपादान, जीवस्य कर्तुगुणभोक्तुगुणादिषादानः

शुद्धेतरप्रणयत्तकथनं तु येषु धंलामहे तदभिलाष्यगुणपवृत्त्यै ॥ ४२० ॥

भाषा-सकल जीव स्वरूप विचारणा, कोटि पद इवर्त्तम सुधारता ।

पहन आत्मप्रवाद महालको, जजुं पाठक दुर्धति ज्ञानको व.२०॥

ॐ ही आत्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्याऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा (१६२)

कर्मप्रवादसमये विद्युसंख्यकोटीसंख्यानज्ञानानिलयुतान् वलुकर्मणां च ।
स्रथापकर्षणनिघान्तसुखानुवादे, एथान् स्थितानमित्तपुजरा धिनोमि ॥६२१॥
भाषा-कर्मबंध विधान वखानता, कोटि पद अस्तीलाख धारता ।

पठत कर्म प्रवाद सुष्ठानसे, जजू पाठय सुद्ध विद्यानसे ॥६२१॥

ॐ ह्रीं कर्धप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायममेष्टिभ्योऽय नि० । (१६४)

प्रत्याहृतेश्चतुरशीतिसुलक्ष्णपद्यान् निक्षेपंस्स्थितिविधानकथप्रसिद्धान् ।

न्यायप्रमाणनयलक्षणसंयुजोऽयं वागार्चने श्रुगभरस्तथनोपयुक्तान् ॥६२२॥

भाषा-नयप्रमाण सुन्यास विनारता, लास्य पद चौरासी वारता ।

पूर्व प्रत्याहार जु नात्र है, जजू पाठक रत्नधारम है ॥६२२॥

ॐ ह्रीं प्रत्याहारपूर्वधारकोपाध्यायममेष्टिभ्योऽयं नि० स्वाहा । (१६५)

विद्यानुवादसुवि चन्द्रसुकोटिकः पलाशा पदा यदधिमन्त्रविधिप्रकारः ।

सरोहिणाप्रभृतिदीधिविदां, प्रसंगस्तं पूजये गुरुसुखांशुजकोशजात ॥६२३॥

भाषा-मंत्र विद्याविधिको साधता, लक्ष दशकोटि पद धारता ।

पूर्व है अनुवाद सुज्ञानका, जजू पाठक मन्मति दायका ॥६२३॥

ॐ ह्रीं विद्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायममेष्टिभ्योऽय नि० स्वाहा । (१६६)

कल्याणवादमनश्रुतमंगसुखं, षड्विंशतिप्रसितकोटिपद समर्थं ।

यच्चास्ति तीर्थकरकामयलत्रिखण्डि, जन्मेरसथास्मिन्निधिरुत्तमभावना च ।६२४॥

भाषा-पुरुष त्रेशठ खादि महानका, कथन वृत्त सकल कल्याणका ।

कोटि छान्दस्य पदको धारता, जजू पाठक अथ मय दारता ॥

ॐ ह्रीं कल्याणवादपूर्वधारकोपाध्यायममेष्टिभ्योऽयं नि० स्वाहा । (१६७)

प्राणप्रवादयतां नराणां, विश्वप्रमाणमितकोटिपदाभियुक्तं ।

काऽऽर्तिभवेन्नियघोरभवरथ, चायुर्वेदादिसुस्वरसुतं परिपूजयामि ॥६२५॥

भाषा-कथन मेद सुधैद्यक शास्त्रका, कोटि तेरह पदका घ्राणका ।

पूर्व नाम सुप्राण प्रवाह है, ऊजू पाठक सुर नत पाद है । १६८॥

ॐ ह्रीं प्राणप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽथ नि० । (१६८)

क्रियाविशाल नवकोटिपथैयुक्तं सुसंगीतकलाविशिष्ट छन्दोगणाद्यानभाष्यंतमध्यापकाजप्र विधौयजामि ४२६
भाषा-कथन छंदकला संगीतको, कोटि नव पद मध्यम रीतको ।

पूर्व नाम सु क्रिया विशाल है, ऊजू पाठक हीनदयाल है ॥ १६९॥

ॐ ह्रीं क्रियाविशालपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्धं नि० । (१६९)

त्रैलोक्यद्विदौ शिवतत्त्वचिन्ता, साद्धौ सुकोठी द्विदशप्रमाणा ।

पदाखिलोकीस्थितिसद्भिधानमन्त्रार्चये आंतिविनाशनाथ । १६९७॥

भाषा-तीन लोक विधान विचारता, कोटि अर्द्ध स द्वादश धारता ।

पूर्वबिन्दु त्रिलोक विशाल है, ऊजू पाठक करत निहाल है ॥ १७०॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यविदुपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्धं नि० । (१७०)

इत्थं श्रीश्रुतदेवतां जिनशरांभोऽयुद्गतासृष्टिश्रुन्मुख्यैर्ग्रथनिवधनाक्षराकृतामालोकयन्तीं त्रयं ।

लोकानां तदवाप्तिपाठनधियोपाध्यायशुद्धारमनः कुराराराधनसद्दिधि घृतमहाघोर्णार्चये भक्तितः ॥ १७१॥

भाषा-अग इकादश पूर्वदश, चार सहायक साध । उजू गुरुके चरण दो, यजन सु अघ्यावाध ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् विषयर्पाष्टोत्सवरादिनादेहृत्पुजार्हिसमन्तरयोन्मु द्रष्टव्यदक्षांगश्रुतदेवताभ्यस्तदागक्षकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यश्च ।

पूर्णार्धं नि०

अथ एत नारियक बलथये ंडलके किनारे रखे आने आरों बलयमें स्थापित सायु परमेष्ठिके २८ गुणोत्ती पूजा कानो ।

जीवाजीयद्विरधिकरणव्यपशशोषठपुरासात्, सुक्ष्मरथूलठरुवहृतिहतेः सर्वथात्यागभावात् ।

सूत्रन्यासं सकलनिरति संदधानान्नुनींद्रा-नाहिसाख्यत्र पररिष्टतान् पूजये आषशुद्धया ॥ १७२॥

भाषा-नागचंद्र-तजे सु रागद्वेष भाव शुद्ध भाव धारते, परम स्वरूप आपका समाधिसे विचारते ।

करै दया सुषाणि अंतु चर अचर वचायते, जजो यति महान प्राणिरक्ष तत निभावते ॥

ॐ ह्रीं अग्निभावावतवायमाधुरमेष्ठिभ्योऽर्धं निवपापीति स्वाहा ।

विधयाभाषासकलविगमात् प्राप्तवाक्शुद्धयुपेतान् स्याद्वादेशान् विविधसनयैर्मर्षानिपकाशम् ।

शंक्रुर्णानन्तिचरणधीदूरगानामसंश्रित-सञ्जाज्यहर्ताश्रुपलगणैःपूजयाम्यध्वरेऽस्मिन् ॥६३०॥
भाषा-अस्तस्य स्वर्धे त्याग वाक् शुद्धता प्रचारते, जिनागमानुकूल तस्व सत्य सत्य धारते ।

अनेक नय प्रकारसे वचन विरोध धारते, जजों यति महान सत्पत्रत सदा सम्हारते ॥६३०॥

श्री ह्रीं अचूतपत्यं सङ्गाव्रतधारकसाधुषामेष्टिभ्यऽर्धं निर्वाणीति स्वाहा । (१७२)

आकर्नव्ये ध्वनि ? निशचपठगृहे रतुकासाः पृथक्त्वं देहात्मीधं करगतमिवाध्यक्षमादर्शयंतः ।

प्राणशार्धं तुणार्धं प २ प्रदलं त्यजतस्तापतां मां चरणचरिष्यथाप्रशक्तं मुनीन्द्राः ॥६३१॥

भाषा-अचोर्ध्वन अज्ञान प्र गौत्र भाष भावते, जजों यती सदा सु ज्ञान ध्यान मन रसावते ।

सुतुस हें महान प्र ज्ञान ौख्य पावते, जजों यती सदा सु ज्ञान ध्यान मन रसावते ॥६३१॥

श्री ह्रीं अचूतपत्यं सङ्गाव्रतधारकसाधुषामेष्टिभ्योऽर्धं निर्वाणीति स्वाहा । (१७३)

निर्यन्तर्वासरगतगतः साः स्त्रियः काष्ठ चञ्चा-तेपयाद्दमान्याश्चिद्विदुदधिस्थान्नवस्तास्त्रियोग ।

स्वप्ने जाग्रद्विनिश्चित्यत्पत्तिमुद्राः स्मरन्तो (?) ये धे शाकं परिदृढमस्तान्यजेऽर्धं तिशुद्धया ॥६३२॥

भाषा-सु द्रव्यार्थं व्रत मञ्जान धार शील पालते, न काष्ठमय कलश देय मामनी विचारते ।

मनुष्यणा सु पशुत्तिय कभी न मन रसावते, जजों यती न स्वप्नमाहि शीलको गमावते ॥

श्री ह्रीं अचूतपत्यं सङ्गाव्रतधारकसाधुषामेष्टिभ्योऽर्धं निर्वाणीति स्वाहा । (१७४)

रागद्वेषाकास्मिन्नुतपरानुत्तदोषांतरंगा ये बाह्या अप्युदितद्वशाथा ते स्वकिचन्यभावात् ।

न पि र्थियं ददुष्कस्तुणाग्राहिणी र्वांतमध्ये, अथा शेषां चरणवरणि पूजयाम्यादरेण ॥६३३॥

भाषा-न राग द्वेष आदि अंतरंग संग धारते, न क्षेत्र आदि बाह्य संग रंक भी सम्हारते ।

अरे तुसास्य भाव आय पर पृथक् विचारते, जजों अर्ता समन्य शाल साम्यता प्रचारते ॥६३३॥

श्री ह्रीं अचूतपत्यं सङ्गाव्रतधारकसाधुषामेष्टिभ्योऽर्धं निर्वाणीति स्वाहा । (१७५)

ईयांपथास्त्रिभित्तचित्तस्त्वहृष्टियोगा-स्वाध्याच्छुद्धोयुगति तधरालोकनेनापि शेषां ।

चषोकालात्तनियत्तमभूजंतुजाति विहाय तार्थ-चासुक्तमिवाशाद् गच्छतोऽर्धं यतीन्द्रात् ॥६३४॥

भाषा-सुचार शाय भूमि अग्र देख पाय धारते, न जोबवाल हाय यत्न सार मन विचारते ।

सुचार मास वृष्ट काल एक थल विराजते, जजों यती तु सन्मती जो ईयां सम्हारते ॥

अविद्या

॥ ६१ ॥

ॐ ही ईर्ष्यापमिति माकमधुपमंष्टिभ्योऽथ निर्वाणमिति स्वाहा । (१७६)
 लोभमोघ-यरिगणत्रयाद् आनिमोपमदी - निःशल्यानान् जिनषचिखुशंठपानप्रपुष्टान् ।
 आधातस्थं श्रुतनिगमयाजीतःप्रशुक्तुर्वा अप्राय बच्चसमित्तिधोरकान् पूजयामि । ६३५॥
 थापा-न क्रोध लोभ हास्य भय कराय स्वास्य धारते, बचन श्रुमिष्ट इष्ट मित प्रसाण ही निवारते ।
 यथार्थ शास्त्र ज्ञानका सुभा सु पात्म पीकते, जजु यनीश इव्य आठ तत्र्य साहि जीयते ॥६३६॥

ॐ ही मापमर्षपुत्राण्युपमे षडभ्यःसर्वं किं जामोत स्वाहा । (१७७)
 षट्चत्वारिंशदतिचरणोऽत्राऽत्यागयोगात्, दोषान् चालुर्दशमलसुखां हापनात् कायहानि ।
 षडशस्त्रीकामश्रुतधिवेगारथारत्तंशुकुतार्था (?) मन्यमानातेऽशनविरतथः पांतु पादाश्रितं स्या ॥६३६॥
 थापा-बहान दोष द्ययालिखों सु दार शास्त्र लेन ह, पड़े जु अन्नराय तुर्त जाल त्याग देत ह ।
 मिले जु भोग पुण्यसे उत्तारों अन्न चारते, जजु यताश काम जीत रागद्वेष दारते ।

ॐ हीं प्रणामप्रतिभासकमधुपमेऽभ्योऽर्थं नैर्वापमोति स्वाहा । (१७८)
 वस्तुग्राहं त्वं परिणासाहाननिक्षेपयोगा (?) - आपः पुं हृदपरिचयाद्विद्यते शुद्ध एवं ।
 पिच्छ-कु-डाग्रहणमपि ये रक्षणाचारहेतोः कुर्त्तोऽप्यग्र निहितहृशसभान्यजे सतममित्यै ॥ ६३७ ॥
 थापा-धरें उताथ वस्तु देख शान खूब लेन ह, न जन्तु क्रोध कष्ट पाय इम विचार लेन ह ।
 अत सु मार पिच्छका सुमार्जिका सुधारते, जजु यता दया निधान जीष दुःख दारते ॥

ॐ हीं आदाननिक्षेणमार्मतिधामकमधुपमंष्टिभ्योऽर्थं निर्वाणमिति स्वाहा (१७९)
 व्युत्सर्गोऽर्थं समितियुगां नासिकानेश्वरायू-पस्थस्थानान् अलहृनिदिधौ सुत्रसागनुकुलं ।
 रक्षन्तोऽन्यानपि सदर्शनं पोष रन्तोऽपुत्र्यां, धन्या दातोन्दिशयारकरा आदंत्त्वर्धनां मे ॥ ६३८ ॥
 थापा-धरें जु अङ्ग नेत्र नासिकादि अल सु देखके, न होय जन्तु घाल घान शुद्धता सुपेखके ।
 परम दया विचार मार व्युत्सर्ग साधते, जजु यनीश चाह दाह शांति पप बुझावते ॥

ॐ हीं व्युत्सर्गप्रतिपालकमधुपमंष्टिभ्योऽर्थं निर्वाणमिति स्वाहा (१८०)
 उष्णः कीतो मृदुलकठिनौ शिवाश्रुक्षौ शुक्रयो, स्नोकः स्पर्शोऽप्युत्तम उदितस्पर्शनात् सप्रमादं ।
 रागद्वेषाद्यपि न दधतश्चेतनाचेतनेषु, किं च स्त्राणां षपुषि विषये तान्यजेहं सुनीद्रान् ॥ ६३९ ॥

भाषा-न उदग गीत मृदु कठिन शुरु लघु स्पर्शते, न चीकने रुक्ष वस्तुसे मिश्रण पावते ।
न रागद्वेषको करे समान आव धारते, जञ्जुं यती दसे मपशो ज्ञान भाव सारते ॥

ॐ ह्रीं रम्येन्द्रियविकारविरतसाधुषामेष्ठभ्योऽय निर्गामीति स्वाहा (१८१)
मिष्टसिंघातो लघणरुद गालकल एवं रलजाग्रहा, प्रोक्तो रसनत्रिषयतश्च रागक्रुधावर्षी ।

त्यागार्त्सर्भप्रकृतिलिपतेः पुद्गलभ्य स्वभावं, अंजानन्तो मुनिपरिवृढाः पांतु मामचिंतास्ते ॥ ६४० ॥
भाषा-न मिष्ट तित्त लौग कटुक आत्म स्याद चाहते, क्कत न रागद्वेष शौच आवको निवाहते ।
सुजातके सुभाय पुद्गलादि मारुय धारते जञ्जुं यती लदा कु चाह दाहको निवाशते ॥

ॐ ह्रीं रम्येन्द्रियविकारविरतसाधुषामेष्ठभ्योऽय निवेपामोति स्वाहा । (१८०)
यातद्वेषस्तुद्धिनिकृतैरुपगतोद्वेष ऊरुम्य-व्यासांगस्य प्रकृतिनियमात् सुगसिद्धोऽपतर्क्यः ।

सारुयस्यामा ह्यलुमलुभगद्वेषगन्धौ विज्ञानन्, वस्तुशाहं भजति समतां तं यतींद्रं यजेऽहं ॥ ६४१ ॥
भाषा-ज्जान पदाथ पुद्गलादि आप्थ शुण न त्यागते, सुगन्ध गन्ध दुःखदाय साधु जहां पावते ।
न रागद्वेष धार घ्राणका विषय निवारते, जञ्जुं यतीश एक रूप शांगता प्रचारते ॥

ॐ ह्रीं शणेन्द्रियविकारविरतसाधुषामेष्ठभ्योऽय निवेपामोति स्वाहा (१८३)
यद्यद्दृश्य नयनविपद्ये तेषु तेऽन्तात्मना चे जन्माग्रान्नि त्रिजगदभितश्चकार्त्तपानात् ।

कृष्णे पीते हरिद्रकणयोरञ्जने पौद्गलेणोड्यारोऽयन्निति परिणतः पूज्यतेऽसौ मयात्र ॥ ६४२ ॥
भाषा-सफेद लाल कृष्ण पीत नील रंग देखते, स्वरूप आ कुरूप देख वस्तु रूप पेलते ।
करे न रागद्वेष मारुय भावको मज्जारते, जञ्जुं यतो महान चक्षु रागको निवारते ॥

ॐ ह्रीं चक्षुद्रियविकार विरतसाधुषामेष्ठिभ्योऽय निर्गामीति स्वाहा । (१८४)
एकः स्तोत्रं चयितु सुदा गद्यपद्यानवधर्वाक्येभ्यः श्वपच जजनी तेऽद्य धार्यो नमेति ।

श्रत्या ऊर्द्वं श्रयसि जहतामित्य तोषं न काप, धत्ते शक्तोऽप्यमरमहिनस्तस्य पूजां विवद्वतः ॥ ६४३ ॥
भाषा-करे शुतीं वनाय एक गद्य पद्य सारते, कहे असभ्य बात एक क्राता प्रमारते ।
न रोष तोप धारते पदार्थको विचारते, जञ्जुं यता महान कर्ण रागद्वेष टारते ॥

ॐ ह्रीं श्रोत्रेन्द्रियविकारविरतसाधुषामेष्ठभ्योऽय निर्गामीति स्वाहा । (१८५)

साम्प्रं घस्य स्फुरानि हृदये निर्वर्णलीकं कदाचि, दायातेऽपि शुभमशुभमसमयापद्वपाकावतारे (?)
 घोरापाडासदसि वपुसि स्पृङ्मृति मन्दधानो, बाहुभ्याभंभुधिमिव तरत्येष साधुमयाचर्यः ॥ ६४४ ॥
 भापा-घरे महान् कांपता न रागद्वेष भाषते, चलं नहीं सुयोगसे विराट कष्ट आवते ।
 तरे समुद्र कयेको जराज ध्यान खेवते, यजूं यना स्वरू । मांदि वेठ तत्र वे भते ॥
 ॐ ही सामागकावकगुणवारकसाधुगमे षष्ठ्योऽर्थं निर्णयामीति स्माहा । (१८६)

स्मारं स्मारं प्रकृतिसिद्धिमां तु पंचेश्वराणां, प्रत्यक्षं वा मननविषयं बन्दमानस्त्रिकालं ।
 कर्मभूक्षणासखसं चर्करेरेगात्मबन्तं सुद्वस्कारं गमयति शिं तं महान्तं भद्राणि ॥ ६४५ ॥
 भाषा-हरे त्रिकाल बन्दना सुपुत्र्य भिद्र साधुको, विचार वार वार आत्म सुद्व शुण सपभावको ।
 करे तु नाश कर्म जां ति मोक्षमार्थं रोकते, यजूं यती महान साथ नाय नाय टाकते ॥
 ॐ ही बन्दनावकगुणवारकसाधुगमे षष्ठ्योऽर्थं निर्णयामीति स्माहा (१८७)

चेतोरक्ष प्रसर्गान्तरार्कणो तीर्थनाथ-पाढान्जेषु प्रनिगुणगणे दत्तचिन्तो गुनान्द्रः ।
 तेषां स्तोत्रं पठति परमात्मव्यथात्वात्सु गं, किं वा सुदं सुमति स लया पुत्रये तद्गुणात्स्य ॥ ६४६ ॥
 भाषा-करै सुगाय शुग लपर तीर्थनाथ देवके, मन पित्रःकका विडार स्वात्ममार स्त्रेथके ।
 वनाय सुद्व भा अल आत्मपण्ड डारते, जधूं यना मरान दार्भ आठ चू डारते ॥
 ॐ ही वानावकगुणवारकसाधुगमे षष्ठ्यो अर्थं विप्रयामीति स्माहा (१८८)

दोषाभावोऽप्यथ त्वयिदिशारनीदारकुले, ज्ञानाज्ञानप्रभयशतो जन्तुःभयद्भिः स्वात् ।
 नित्यं तस्य प्रतिव्यलं प्रयुक्तमान. रथं यो, दोषयानैतद्धि जुड तं धारदार यजामि ॥ ६४७ ॥
 भाषा-करै विचार दोष होय तिल जाये भाषते, क्षवा क्षवाय अर्थ जन्तु जाति कष्ट पावते ।
 आलोचना सुकृतयः स्वदापतो मिदायते, जजूं यना महान ज्ञान भद्रबुद्धे नहावते ॥
 ॐ ही प्रतिक्रियावकगुणवारकसाधुगमे षष्ठ्यो अर्थं निर्णयामीति स्माहा । (१८९)

नित्यं चेतःकृपिरपलनां नैति तथैत्रयार्थे स्वाध्यायार्थेः प्रगुणनिगडैर्नयमानां च भद्रे ।
 भागे पुंजास्तु तपरिधनात्समीपमोदावधानो, वृत्तिं शुद्रां श्रुतिं स महानध्वेऽतेनर्धबुद्धिः ॥ ६४८ ॥
 भाषा-रखै सुधांघ मन कपी महान है जुस्ट खटा, वनाय सांरुलान शास्त्र गठमै जुटावता ।

धरें स्वभाव शुद्ध नित्य आत्मको रमावते, जज्जू यती उदय महान ज्ञानसूर्य पावते ॥

मतिष्ठा-

॥ ६४ ॥

ॐ ह्रीं स्वाध्यायावश्यकगुणधारकपाधुगमेष्ठिभ्यो अर्थं निर्वाणीते स्वाहा । (१९०)
आसे बांडे कुथिनकुणपे यादृशा नव्यहेष-बुद्धिः कार्यं सप्तत्रनियता धीतानोप्वगाणां ।

दयस्कीर्तुं शिखरिषिपिनांस्तनोनिर्धमत्वे कायोत्सर्गं च यति मुनिः सोऽत्र पूजां प्रयातु ॥ ६४९ ॥
भाषा-तज्जे ममस्व कायका ह्ये अनित्य जानते, तु तां च खण्ड मृत्तिका सु पिण्ड सम प्रमाणते ।

खड्गे धनी गुफा ब्रह्मा सध्यान आर धारते, जज्जू यतो महान सोह् रागद्वेष टारते ॥
ॐ ह्रीं कायोत्सर्गाव्यक्रुण्णधार्कपाधुगमेष्ठुभ्यो अर्थं निर्वाणीते स्वाहा । (१९१)

पूर्व हर्म्ये अग्निगणचिन्तामेकपर्यकताऽद्या, साऽयं वाग्स्थनशुपतित्रमान, गेन्द्रकारे ।
सूत्रप्रयोपरितन्भुंश्च स्मथतिश्चिदात्त-नद्वो घस्य स्मरणमपि संहन्ति य, पं स मेऽर्च्य ॥ ६५० ॥

भाषा-करें अयत्न सु सूत्रिये शठार ककट्यानको, कभी नही विचारते पलंग स्वाट चालकी ।
खुहने एक भी नहीं मन्वाचते कुर्भीरसें, जज्जू यतीग सावते सु आत्न तत्त्वं नीदमें ॥

ॐ ह्रीं सूत्रप्रयनिमधार्कपाधुगमेष्ठुभ्यो अर्थं निर्वाणीते स्वाहा । (१९२)
अ-रसे रेणुं-कर विकारणव्यग्रज्ञानमर्षद-धूलिपुंजे मर्लनमपुपि त्यक्तमस्कारयांछ ।

अस्मानत्त्व शिजामन्वः सोभंनिधामेऽपि येषा तेषां पादांबुजयुगमह पारजातकदंब ॥ ६५१ ॥
भाषा-करें नहीं महान संधं राग देहका हते मस्त्रेच शोषनमें पड़े न नीत अम्बु चाकते ।

यती प्रयत्न पथिन्न शौर सन्ध शुद्ध भावते जज्जू अनीका श्लुद्ध पाद कर्भ मेल टारते ॥
ॐ ह्रीं अस्माननिमधार्कपाधुगमेष्ठिनेऽर्थं निर्वाणीते स्वाहा । (१९३)

बालकं फाल धलमशुपरंठगानकोपीनखण्ड-कादाचित्कैऽपुत्रयधियमये नेत्र बांछिंस्तपस्वी ।
दोषं चर्ष परमकुण्डलं जानरूपप्रयुज्, मन्वाथैव यथति परमानन्दधर्त्री तमर्च ६५२ ॥

भाषा-करें नहीं कबूल डाल ब्रह्म खण्ड धीमता, द्विगानि पस्त्र धार लाज अङ्ग त्याग रोक्षती ।
यने पथिन्न अङ्ग शुद्ध बालसे विचार हें, जज्जू गतीज कास जीत शील खडग धार है ॥

ॐ ह्रीं मन्वाथैवत्यागानियमनार्कपाधुगमेष्ठने अर्थं निर्वाणीते स्वाहा । (१९४)
शौरं शस्त्रोजनिपराधीनतायाजमेव (?) जुडा सूत्रप्रयत्नकुमिदा भूतशीर्षाकृतिरथा ।

दोषयैवेति विहितकचोत्पादनो मुष्टिमात्रात्, साक्षान्मोक्षाध्वनिधृतिपदः पूज्यते श्रोतकर्मा ॥ १५३ ॥
भाषा-कैसे सु केशलौच मुष्टि मुष्टि धैर्य भावते, लखाय जन्म जन्तुका स्व केश ना बढावते ।

ममत्त्व देहसे नहीं न शस्त्रसे चुचावते, जजूं यती स्वतन्त्रता विहार चित्त रमावते ॥
ॐ ह्रीं कृतकेशलोचननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽघ निर्वपामीति स्वाहा । (१९५)

एकद्वित्रिप्रभृतिदिवसप्रोषधादिप्रकर्तुं-रास्यम्लानिर्भवति नितरां दन्तशुद्धिं विनाऽत्र ।
दौर्गंध्यान्धु वपुषमकूनस्यैर्यथापन्निदानं, जानन्न योगं मलिनयति नो तं ससर्धं मुनीन्द्रम् ॥६५४॥
भाषा-कैसे न दन्तधन कभो तजा सिंगार अङ्गका, लहे स्व खानपान एकवार साध्य अङ्गका ।

तथापि दंत कणिका महान ज्योति त्यागती, जजूं यतीश शुद्धता अशुद्धता निवारती ॥
ॐ ह्रीं दन्तघावनवर्जननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽघ निर्वपामीति स्वाहा (१९६)

यांचादैन्योदरविघटनादीगतादीनि येषां, निर्मूलतो मनसि च मनालाभलाभांतराये । (१)
तुल्या दृष्टिस्तदपि सकृदेकाहिमुक्तिप्रमाणं, तेषां धर्म्योवगमसुगमत्वाय पादौ यजामि ॥ ६५५ ॥
भाषा-धरे न चाह भोग रोगके समान जानते, शरीर रक्ष काज एकवार भक्त ठानते ।

सकल दिवन्न सु ध्यान शास्त्र पाठमें वितावते, जजूं यती अलाभ अन्न लाभ सा निभावते ॥
ॐ ह्रीं एकमुक्तनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽघ निर्वपामीति स्वाहा । (१९७)

यावदेहं स्थितिधृतिघराशक्तिभङ्गीकरोति, यावज्जंघाचलमचलतां नोज्झितीते मुनित्वे ।
यावत्स्थाय्ये तदपगमने भोजनत्याग एव, सन्यासस्य ग्रहणमिति यद् यस्य नीतिस्तमर्धे ॥६५६॥
भाषा-खडे रहे सुलेय अल देह शक्ति देखते, न होय बल विहार तब मरण समाधि पेखते ।

करें सु आत्म ध्यान भी खडे खडे पहाड़ पर, जजूं यती विराजते निजानुभव चदान पर ॥
ॐ ह्रीं आस्थितभोजननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽघ निर्वपामीति स्वाहा (१९८)

अष्टाविंशतिसद्गुणप्रथियसदूरत्नयाभूषणं, शीलेतिश्वतनुत्तरक्षितवपुः कामेषुभिर्नोइतं ।
आर्हेत्यादिपदस्य बीजमनघं येषां परं पावनं, साधूनां समुदायमुत्तमकुलालंकारमाशाहमहे ॥६५७॥
भाषा-दोहा-अठविंशति गुण धर यती, शील कवच सरदार । रत्नत्रय भूषण धरे, दारे कर्म प्रहार ॥
ॐ ह्रीं भस्मिन्विम्बप्रतिष्ठोत्सवे मुख्यपुजार्हअष्टमत्रलयोन्मुद्रितसाधुपरमेष्ठिभ्यस्तन्मूलगुणप्राग्भ्यश्च पूर्णार्धं नि० ।

पूर्णाधि देकर एक नारियल आठवें बलयपर या मंडलके किनारे रखे ।

अब नीचे बलयमें स्थित ४८ ऋद्धिधारी मुनीश्वरोकी पूजा करनी ।

त्रैलोक्यवर्तिसकलं गुणपर्यायाढ्यं, यस्मिन्करामलकवत् प्रतिवस्तुजातं ।

आभासते त्रिसमयप्रतिबद्धमर्चं, कैवल्यभासुमधिपं प्रनिपत्य मूढनी ॥ ६५८ ॥

भाषा-दोहा-लोकालोक प्रकाशकर, कैवल्यज्ञान विशाल । जो धारें तिन चरणको, पूजुं नमूं चिज भाव ॥

ॐ ह्रीं सकललोकालोकप्रकाशकरनिरावरणकैवल्यलब्धिधारकेभ्योऽथ निर्वापामीति स्वाहा । (१९९)

वक्रजुं भावघटितापरचित्तवर्तिभाषावभासनपरं विपुलजुसेदात् ।

ज्ञानं मनोऽधिगतपर्ययमस्य जातं तं पूजयामि जलचन्दनपुष्पदीपैः ॥

भाषा-वक्र सरल पर चित्तगत, मनपर्यय जानेय । ऋजु विपुलमति भेद धर, पूजुं सासु सुधयेय ॥

ॐ ह्रीं ऋजुमतिविपुलमतिमनःपर्ययधारकेभ्योऽथ निर्वापामीति स्वाहा । (२००)

देशावधि च परमावधिमेव सर्वावध्यादिभेदमनुलाभमदेशपृक्तं ।

ज्ञानं निरूप्य तदवाप्तियुतं सुनीन्द्रं संपूज्य चित्तभवसंशयमाहरामि ॥

भाषा-देश परम सर्वो अवधि, क्षेत्र काल मर्याद । द्रव्य भाषको जानता, धारक पूजूं साव ॥

ॐ ह्रीं अवधिधारकेभ्योऽथ निर्वापामीति स्वाहा । (२०१)

अन्योपदेशामनपेक्ष्य यथा सुकोष्ठे बीजानि तद्गृहपतिर्विनियुज्यमानः ।

अर्थार्थबीजबहुलान्यनतिक्रमाणि संधारयन्तु बिबरोऽर्च्यत उवस्थमन्त्रैः (?) ॥ २०२ ॥

भाषा-कोष्ठ धरे बीजानिको, जानत जिम क्रमधार । तिम जानत अर्थार्थको, पूजूं ऋषिगुण सार ॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धिप्रारप्तेभ्यो अर्थं निर्वापामीति स्वाहा । (२०२)

एकं पदार्थमुपगृह्य सुज्ञातमध्यस्थानेषु तच्छतसमस्तपदग्रहोक्तिम् ।

पादानुसारिधिषणाद्यभियोगभाजां संपूज्य तन्मतिवरं तु समर्चयामि ॥ २०३ ॥

भाषा-अन्थ एक पद ग्रह कहीं, जानत सब पद भाव । बुद्धि पाद अनुसारि धर, जजूं सार घर भाव ॥

ॐ ह्रीं पादानुसारीबुद्धिऋद्धिप्रारप्तेभ्योऽथ निर्वापामीति स्वाहा । (२०३)

कालादियोगमनुसृत्य यथासमग्र, कोटिप्रदं भवति बीजमनिद्रियाद्धि ।

धीर्घांतरायशामनक्षयहेतवनेकपादावधारणमतीन् परिपूजयामि ॥ ६६३ ॥
भाषा-एक बीज पद जानके, कोटिक पद जानेय । धीज बुद्धि धारी सुनी, पूजूं द्रव्य सुलेख ॥

प्रतिष्ठा-

॥ ६७ ॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धिप्रोक्तोऽथ निर्वपामीति स्वाहा । (२०४)
ये चक्रिसैन्यगजवाजिखरोष्ट्रमर्धनानाविधस्वनगणं युगपत् पृथक्त्वात् ।
गृह्णन्ति कर्णपरिणामवशान्मुनीन्द्रास्तानर्धयामि कृतुभागसमर्पणेन ॥ ६६४ ॥
भाषा-चक्रो सेना नर पशु, नाना शब्द करात् । पृथक् पृथक् युगपत् सुने, पूजूं यति भयं ज्ञात ॥

ॐ ह्रीं संभिक्षभोक्तृद्विप्राप्तेभ्योऽर्थं निर्वपामीति स्वाहा । (२०५)
दूरस्थितान्यपि सुमेरुविधुप्रभास्वत्समण्डलानि करपादनखांगुलीभिः ।
संस्पर्शशक्तिसहितद्विधशात् स्पृशंतस्तान् शक्तियुक्तपरिणामगतान् यजामि ॥ ६६५ ॥
भाषा-गिरि सुमेरु रविचन्द्रको, कर पदसे छू जात । शक्ति महत् धारी यती, पूजूं पाप नशत् ॥

ॐ ह्रीं दूरस्थंशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽथ निर्वपामीति स्वाहा । (२०६)
नास्वादयन्ति न च तत्सदने समीहा, तत्रापि शक्तिरमितेति रसग्रहादौ ।
ऋद्धिमृद्धिसहितमशुणान् सुदूरस्वादाथभासनपरान् गणपान् यजामि ॥ ६६६ ॥
भाषा-दूरक्षेत्र मिष्टान्न फल, स्वाद लेन बल धार । ना बांछा रस लेनकी, जजूं साधु गणधर ॥

ॐ ह्रीं दूरास्वादमशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्थं निर्वपामीति स्वाहा । (२०७)
उत्कृष्टनासिकहृषीकगतिं विहाय, तत्स्योर्ध्वगन्धसमवायनशक्तियुक्तात् ।
उत्कृष्टभागपरिणामविधौ सुदूरगन्धाथभासनमतौ नियतान् यजामि ॥ ६६७ ॥
भाषा-घ्राणेन्द्रिय मर्यादसे, अधिक क्षेत्र गन्धान, जान सकत जो साधु हैं, पूजूं ध्यान रूपरत्न ॥

ॐ ह्रीं दू-घ्राणविषयग्राहकशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्थं निर्वपामीति स्वाहा । (२०८)
निर्णीतपूर्णयनोत्थहृषीकशार्ता, चक्रेश्वरस्य नियता तदधिक्यभाषात् ।
दूरावलोकनजशक्तियुतान् यजामि, देवेन्द्रचक्रधरणीन्द्रसमर्चितां हि ॥ ६६८ ॥
भाषा-नेत्रेंद्रियका विषय बल, जो चक्रो जानन्त । तातें अधिक सुजानते, जजूं साधु बलवन्त ॥

ॐ ह्रीं दूरावलोकनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽथ निर्वपामीति स्वाहा । (२०९)

श्रोत्रेन्द्रियस्य नवयोजनशक्तिरिच्छा, नातः परं तदधिकारवनिर्वास्यशब्दात् ।
श्रोतुं प्रशक्तिरुदयत्यतिशायिनी च, येषां तु पादजलजाश्रयण करोमि ॥ ६६९ ॥
भाषा-कर्णेन्द्रिय नवयोजना, शब्द सुनत चकीश । ताते अधिक श्रुशक्तिधर, पूजूं चरण सुनीश ॥

ॐ ह्रीं द्रुश्रवणशक्तिऋद्रिप्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२१०)
अभ्यासयोगविह्वनावपि यन्मुहूर्तमात्रेण पाठयति दिग्प्रमपूर्वसार्धं ।
शब्देन चाथपरिभावनया श्रुतं तच्छक्तिप्रभूतधियजामि मखस्य सिद्धये ॥ ६७० ॥
भाषा-विन अभ्यास मुहूर्तमे, एह जानत दश पूर्व । अर्थ भाव सय जानते, पूजूं यती अपूर्व ॥

ॐ ह्रीं द्रुश्रवित्वऋद्रिप्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२११)
एवं चतुर्दशसुपूर्धगन्-श्रुतार्थं शब्देन ये ह्यमितशक्तिसुदाहरन्ति ।
तानत्र शास्त्रपरिलब्धिविधानश्रुतिसम्पत्तयेऽहमधुनार्हणया धिनोमि ॥ ६७१ ॥
भाषा-चौदह पूर्व मुहूर्तमे, एह जानत अविकार । भाव अर्थ समझे सभी, पूजूं साधु चितार ॥

ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्धगन्-ऋद्रिप्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२१२)
अन्योपदेशाधिरंद्वाप सुसंयमस्य, चारित्रकोटिविधयः स्वयमुद्भवन्ति ।
प्रत्येकबुद्धमतयः खलु ते प्रशस्यारतेषां मनाक् स्मरणतो मम पापनाशः ॥ ६७२ ॥
भाषा-विन उपदेश सुज्ञान लहि, संयम विधि चालन्त । बुद्धि असल प्रत्येक धर पूजूं साधु महन्त ॥

ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्धित्-ऋद्रिप्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२१३)
न्यायागमसृत्तिपुगणपठित्यभावेऽप्याविर्भवति परयादविदारणोद्धाः ।
वादित्वबुद्धय इति श्रमणाः स्वधर्मं, निर्वाहयति समये खलु तान् यजामि ॥ ६७३ ॥
भाषा-न्याय शास्त्र आगम बहू, एहे विना जानन्त । परवादी जीते सकल, पूजूं साधु महन्त ॥

ॐ ह्रीं वादित्-ऋद्रिप्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२१४)
जंघाग्निहेतिकुसुमच्छदंतुषीजश्रेणीसमाजगमना इति चारणांकाः ।
ऋद्रिक्रियापरिणता मुनयः स्वशक्तिसंभावितास्त इह पूजनमालभंतु ॥ ६७४ ॥
भाषा-अग्नि पुष्प तंतू चले, जंघा श्रेणी चाल । चारण ऋद्धि महान धर, पूजूं साधु विशाल ॥

ॐ ह्रीं बलजंघांतुपुष्पत्रयीजश्रणिबहून्यादिनिमित्ताश्रयचारणऋद्धिप्रेम्भ्योऽर्घं निर्बपामीति स्वाहा । (२१५)
 आकाशयाननिपुणा जिनमंदिरेषु, मेवाद्यकृत्रिमधरासु जिनेशचैत्यान् ।

बंधंत उत्तमजनानुपदेशयोगानुद्धारंयति चरणौ तु नमामि तेषां ॥ ६७५ ॥
 बाषा-नभसे उड़कर जात हैं, मेरु आदि शुभ थान । जिन बन्दत भविबोधते, जजूं साद्यु सुख खान ।

ॐ ह्रीं आकाशगमनऋक्तचारणऋद्धिप्रेम्भ्योऽर्घं निर्बपामीति स्वाहा । (२१६)

ऋद्धिः सुविक्रियगता बहुलप्रकारा, तत्र द्विधाविमजनेऽत्रणिमादिसिद्धिः ।
 मुख्यास्त्रिन तत्परिचयपतिपत्तिमन्त्रान् यायन्ति तत्कृतविकारविवर्जिताश्च ॥ ६७६ ॥
 बाषा-अणिमा महिमा आदि बहु, भेद विक्रिया रिद्धि । धरें करें न विकारता, जजूं यतो समृद्धि ॥

ॐ ह्रीं अणिमामद्भिमालधिमार्गिमाप्राप्तप्राकाशशक्तिस्त्रिवऋद्धिप्रेम्भ्योऽर्घं निर्बपामीति स्वाहा । (२१७)

अन्तदधिप्रसुखकामविकीर्णशक्त्येषां स्वयं तपस उद्भवति प्रकृष्टा ।
 तद्विक्रियाद्वितयभेदसुपागतानां, पादप्रधावनविधिमम पातु पाणि ॥ ६७७ ॥
 बाषा-अंतर्दधि कामेच्छ बहु, ऋद्धि विक्रिया जान । तप प्रभाव उपजे स्वयं, जजूं साद्यु अघहान ॥

ॐ ह्रीं विक्रियायां अंतर्बानादिऋद्धिप्रेम्भ्योऽर्घं निर्बपामीति स्वाहा । (२१८)

षष्ठाष्टमद्विदशपक्षकमासमात्राष्टेषुंक्तपरिहारसुदीर्य योगं ।
 आसृत्सुमुग्रतपसा ह्यनिवर्तकारते, पांत्वर्चनाविधिमिमं परिलम्भयन्तु ॥ ६७८ ॥
 बाषा-मास पक्ष दो चार दिन, करत रहें उपवास । आमरणं तप उग्र धर, जजूं साद्यु गुणवास ॥

ॐ ह्रीं उग्रतपऋद्धिप्रेम्भ्योऽर्घं निर्बपामीति स्वाहा । (२१९)

घोरोपवासकरणेऽपि बलिष्ठयोगान्, दौर्गन्ध्यविच्युतमुखान् महदीपदेहान् ।
 पद्मोत्पलादिचुरभिस्वसयान्मुनीन्द्रान्, यायन्ति दीप्त तपसो हरिचन्दनेन ॥ ६७९ ॥
 बाषा-घोर कठिन उपवास धर, कीमतई तन धार । सुरभि श्वास दुर्गन्धविन, जजूं यतो भव णार ।

ॐ ह्रीं दीप्तऋद्धिप्रेम्भ्योऽर्घं निर्बपामीति स्वाहा । (२२०)

वैश्वानरौघपतितांबुकणेन तुल्यमाहारमाशु विलयं ननु याति येषां ।
 विषमूत्रभावपरिणाममुदेति नो वा, ते सन्तु तप्ततपसो मम सद्भिःसृत्यै ॥ ६८० ॥

भाषा-अग्नि साहिं जल सम विलय, भोजन पय होजाय । मल कफ सूत्र न परिणमें, जजूं यती उमगाय ॥

ॐ हीं तप्तपक्वद्विप्राप्तेश्चोर्ध्वं निर्वपामीति स्वाहा । (२२१)

हाराबलीप्रभृतिघोरतपोऽभियुक्ताः, कर्मप्रमाथनधियो यत उत्सहन्ते ।

प्रामादवीश्वशनमप्यतिपातयन्ति, ते ऋन्तु कर्मणतृणाग्निचयाः प्रशान्त्यै ॥ ६८१ ॥

भाषा-सुक्ताबली महान तप, कर्मन नाशन हेतु । कात रंहे उत्साहसे, जजूं साधु सुख हेतु ॥

ॐ हीं महातपक्वद्विप्राप्तेश्चोर्ध्वं निर्वपामीति स्वाहा । (२२२)

कासज्वरादिविबिधोप्रकृज्जादिसत्त्वेष्वप्यकृतानशनकायद्वमान् दमशाने ।

भीमादिगह्वरदरीतटिनीषु दुष्टसंक्लृप्तधाधनसहानहर्मर्चयामि ॥ ६८२ ॥

भाषा-कास श्वास उवर गृसित हो, अनशन तप गिरि माध । दुष्टन कृत उपसर्ग सह, पूजूं साधु अबाध ॥

ॐ हीं घोरोत्पक्वद्विप्राप्तेश्चोर्ध्वं निर्वपामीति स्वाहा । (२२३)

पूर्वोद्वितासु विधियोगपरपरासु, स्फारीकृतोत्तरगुणेषु विक्राशावत्सु ।

येषां पराक्रमहर्तिर्न भवेत्तमर्चं, पादस्थलीमिह सुघोरपरक्रमाणां ॥ ६८३ ॥

भाषा-घोर घोर तप करत भी, होत न बलसे हीन । उत्तर गुण विकसित करें, जजूं साधु निज लीन ॥

ॐ हीं घोरोत्पक्वद्विप्राप्तेश्चोर्ध्वं निर्वपामीति स्वाहा । (२२४)

दुःस्वप्नदुर्गतिमुदुर्भतिद्वौर्ध्वं नस्तुख्याः, क्रिया व्रतविघातकृते प्रशस्ताः ।

तासां तपोविलसनेन समूलकाधं, घातोऽस्ति ते सुरसमर्चितशीलपूज्याः ॥ ६८४ ॥

भाषा-दुष्ट स्वप्न दुर्भति सकल, रहित शील गुण धार, परमव्रत अनुभव करें, जजूं साधु अविकार ॥

ॐ हीं घोरोत्पक्वद्विप्राप्तेश्चोर्ध्वं निर्वपामीति स्वाहा । (२२५)

अन्तर्मुहूर्त्तसमये सकलश्रुतार्थसंचितनेऽपि पुनरुद्धस्तुत्रपाठाः ।

स्वच्छा मनोऽभिलषिता रुचिरस्ति येषां, कुर्यान्मनोबलिन उत्तममांतरं मे ॥ ६८५ ॥

भाषा-सकल शास्त्र चिन्तन करें, एक मुहूर्त भंडार । घटत न रुचि मन बीरता, जजूं यती भवतार ॥

ॐ हीं मनोबलकृद्विप्राप्तेश्चोर्ध्वं निर्वपामीति स्वाहा । (२२६)

जिह्वाश्रुतावरणबीर्यशमक्षयासावन्तर्मुहूर्त्तसमयेषु कृतश्रुतार्थोः ।

प्रभोत्तरोत्तराच्यैरपि शुद्धकण्ठदेशाः सुवाक्ययलिनो मम पांतु यज्ञं ॥ ६८६ ॥
भाषा-सकल शास्त्र पढ़ जात हैं, एक महूर्त मंझार । प्रभोत्तर फर कण्ठ शुचि, धरत यज्ञं हितकार ॥

ॐ हीं वचनबलकृद्दिप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्म्राहा । (२२७)
मेर्वादिपर्वतगणोद्धरणेषु शक्ता, रक्षापिशाचक्षतकोटिवलाधिवीर्याः ।
मासतुंबत्सरयुगाशनमोचनेऽपि हानिर्न कायबलिनः परिपूजयामि ॥ ६८७ ॥

भाषा-मेरु शिखर राखन बली, मास वर्ष उपवास । बटे न जाक्ति शरीरकी, यंजुं साधु सुखवास ॥
ॐ हीं कायबलकृद्दिप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्म्राहा ॥ (२२८)

स्पृशोत्करांहिजनिताद् गदशान्तनं स्यादाकर्षजा यत्र इति प्रतिवृत्तिमाह्वान् । (१)
येषां च बायुरपि तत्स्पृशतां रुजातिनाशान् तन्नुनिवराप्रधरां यजामि ॥ ६८८ ॥
भाषा-अंगुलि आदि स्पृशते, इषास्य पवन हू जाय । रोग स्रक्ल पीड़ा टले, जंजुं साधु सुख पाय ॥

ॐ हीं आस्रपौषिककृद्दिप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्म्राहा ॥ (२२९)
निष्ठीबनं हि सुखपद्मभवं रुजानां, शान्त्यर्थमुक्तदत्तपोविनियोगभाजां ।
क्ष्वेलौषघास्त इह संजनिताघताराः, कुर्वन्तु चित्रनिचयस्य वृत्ति जनानां ॥ ६८९ ॥
भाषा-सुखते उपजे राल जिन, शसल रोग करतार । परम तपस्वी देव तुम, जंजुं साधु अविकार ॥

ॐ हीं क्ष्वेलौषिककृद्दिप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्म्राहा । (२३०)
स्वेदाबलं वितरजोनिचयो हि येषामुत्तिष्ठन्प वायुविलरेण यदगमेति ।
तस्याद्यु नाशमुपयाति रुजां समूहो, जल्लौषधीशमुनयस्त इमे पुनन्तु ॥ ६९० ॥
भाषा-तन पसेव सह उड़े, रोगीजन हू जाय । रोग स्रक्ल नाशो सही, जंजुं साधु उमगाय ॥

ॐ हीं जलौषिककृद्दिप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्म्राहा । (२३१)
नासाक्षिकर्णश्रद्धनादिभ्यं मलं यन्नैरोग्यकारि वमनत्वरकासभाजां ।
तेषां मलौषधसुकीर्तिजुषां सुनीनां, पादाचनेन अशरोगहतिनितांतं ॥ ६९१ ॥
भाषा-नाक आंख कर्णादि मल, तन स्पर्श हो जाय । रोगी रोग शमन करें, जंजुं साधु सुख पाय ॥

ॐ ह्रीं मलौषधिकृद्दिग्गप्तेभ्यो अर्घं निर्वणामीति स्वाहा । (२३२)
 उच्चार एव तदुपाहितवायुरेणू , अंगस्पृशौ च निहतः किल सर्वरोगान् ।
 पादप्रघाशनजलं मम मूर्ध्निपातं, किं दोषशोषणविधौ न समर्थमस्तु ॥ ६९२ ॥
 माषा-मल निपात पर्शीं पवन, रजकण अंग लगाय । रोग सकल क्षणमें हरे, जजूं साधु अघ जाय ॥

ॐ ह्रीं विजौषधिकृद्दिग्गप्तेभ्यो अघ निर्वणामीति स्वाहा । (२३३)
 प्रत्यंगदन्तनखकेशमलादिरस्य, सर्वो हि तन्मिलितवायुरपि ज्वरादि ।
 कामापतानचमिशूलभगदराणां, नाशाय ते हि भविकेन नरेण पूज्याः ॥ ६९३ ॥
 माषा-तन नख केश मलादि बहू, अंग लगी पवनदि । हरे सृगी शुलादि बहू, जजूं साधु भववादि ॥

ॐ ह्रीं मर्वौषधिकृद्दिग्गप्तेभ्यो अघ निर्वणामीति स्वाहा । (२३४)
 येषां विषाक्तमशनं सुखपद्मयातं, स्यान्निर्विषं खलु तदंहिघरापि येन ।
 स्पृष्टा सुधा भवति जन्मजरामृत्युध्वंसो भवेत्किञ्चु पदाश्रयणे न तेषाम् ॥ ६९४ ॥
 माषा-विष मिश्रित आहार भी, जहू निर्विष होजाय । चरण धरें भू अमृती, जजूं साधु दुःख जाय ॥

ॐ ह्रीं आस्याविषकृद्दिग्गप्तेभ्यो अघ निर्वणामीति स्वाहा । (२३५)
 येषां सुदूरमपि दृष्टिसुधानिपातो, यस्योपरिस्खलति तस्य विषं सुतीव्रं ।
 अग्याशु नाशमयते नयनाविवास्ते, कुर्वत्वनुग्रहममी कृतुभागभाजः ॥ ६९५ ॥
 माषा-पङ्क्त दृष्टि जिनकी जहाँ, सर्वहि विष टल जाय । आत्म रमो शुचि संयमी, पूजूं ध्यान लगाय ॥

ॐ ह्रीं दृष्ट्यविषकृद्दिग्गप्तेभ्योऽघ निर्वणामीति स्वाहा । (२३६)
 ये धं युवन्ति यतयोऽकूपया अग्रसस्र, सद्यो मृतिर्भवति तस्य च शक्तिभावात् ।
 येषां कदापि न हि रोषजनिर्घटेन, व्यक्ता तथापि यजतास्यविषान् मुनींरान् ॥ ६९६ ॥
 माषा-मरण होय तत्काल यदि, कहें साधु मर जाव ।
 तदपि क्रोध करते नहीं, पूजूं बल दरशाव ॥

ॐ ह्रीं आशौविषकृद्दिग्गप्तेभ्यो निर्वणामीति स्वाहा । (२३७)
 येषामशातनिचयः स्वयमेव नष्टोऽन्येषां शिबोपचयनात्सुखमाददानाः ।

ते निग्रहात्मनसो यदि सम्भवेयुर्दृष्टयव हंतुमनिशं प्रभवो यजे तान् ॥ ६२७ ॥
भाषा-दृष्टि क्रूर देखें यकी, तुर्त काल वश थाय । निज पर सुखकारी यती, पूजं सत्कि पराय ॥

ॐ ह्रीं दृष्टिविषकृद्धिप्राप्तेश्चोऽथ निर्वापामीति स्वाहा । (२३८)
क्षीराश्रबद्धिसुनिर्भयपदांबुजातद्वंश्रयाद् विरसभोजनमप्युदश्वित् ।

हस्तापितं भवति दुरधरसाक्तवर्णस्वादां तदर्धनगुणसृत्रपानपुष्टाः ॥ ६९८ ॥

भाषा-निरस भोजन कर घरे, क्षीर समान बनाय । क्षीरस्त्रावी कृद्धि घरे, जज्जं साधु हरषाय ॥
ॐ ह्रीं क्षीराश्रवीकृद्धिप्राप्तेश्चोऽथ निर्वापामीति स्वाहा । (२३९)

येषां वचांसि बहुलान्तिजुषा नराणां, दुःखप्रधातयापि च पाणिसंस्था ।
मुक्तिर्नद्युःखदनवत् परिणामवीर्यास्तानर्चयामि मधुसंश्रविणो सुनींद्रान् ॥ ६९९ ॥

भाषा-वचन जास पीड़ा हरे, कटु भोजन मधुराय । मधुश्रावी वर कृद्धि घरे, जज्जं साधु कुमगाय ॥
ॐ ह्रीं मधुश्राविकृद्धिप्राप्तेश्चोऽथ निर्वापामीति स्वाहा । (२१९)

रूक्षान्नमन्निन्नथो करयोऽतु येषां, सर्पिःस्ववीर्यरसपाकवदाविश्याति ।

ते सर्पिराश्रविण उत्तमशक्तिभाजः पापाश्रवप्रमथनं रचयन्तु पुंसाम् ॥ ७०० ॥

भाषा-रूक्ष अन्न करमें घरे, घृत्त रस पूरण थाय । घृतश्रावी वर कृद्धि घर, जज्जं साधु सुख पाय ।
ॐ ह्रीं घृताश्रवीकृद्धिप्राप्तेश्चोऽथ निर्वापामीति स्वाहा । (२४१)

पीयूषसाश्रयति यत्करयोर्धृतं सद्, रूक्षं तथा कृत्कमम्लतर कुम्भोर्द्धयं ।

येषां वचोऽप्यमृतवत् श्रवसोर्निर्धत्तं, संतर्पयत्यमृतान्नपि तान् यजसि ॥ ७०१ ॥

भाषा-रूक्ष कटुक भोजन घरे, अमृत सम होजाय, अमृत सम वच तुसि कर, जज्जं साधु मय जाय ॥
ॐ ह्रीं अमृतश्राविकृद्धिप्राप्तेश्चोऽथ निर्वापामीति स्वाहा । (२२३)

यद्दत्तशेषमशनं यदि चक्रवर्तिसैनाऽपि भोजयति सा खलु तुषियेति ।

तेऽक्षीणशक्तिललिता मुनयो हगाध्वजाता ममाशु वसुकर्महरा भवन्तु ॥ ७०२ ॥

भाषा-दत्त साधु भोजन बचे, चकी कटक जिमाय । तदपि क्षीण होवे नहीं, जज्जं साधु हरषाय ॥

ॐ ह्रीं अक्षीणमहानमोऽग्निप्रोक्ष्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४३)

यत्रोपदेशमरसि प्रसर च्युतेऽपि, तिर्यग्मन्त्र्यविबुधाः शतकोटिसंख्याः ।

आगत्य तत्र निवसेयुरबाधमानासितष्टंति, तान्मुनिवरानहमर्धयामि ॥ ७०३ ॥

भाषा-सङ्कुड़े धानकमें यती, करते वृष उपदेश । बैठे कोटिक नर पशु, जजूं साधु परमेश ॥

ॐ ह्रीं अक्षीणमहालयऋद्धिधारकेभ्यो अघ निर्वपामीति स्वाहा । (२४४)

इत्थं सत्तपसः प्रभाषजनिताः सिद्धयृषिसिद्धपत्तयो, येषां ज्ञानसुधापलीढद्वयाः संसारहेतुच्युताः ।

रोहिण्यादिविधाब्जिदोद्भूतचक्रकारेषु संनिःप्रहा नो वांछन्ति कदापि तत्कृतविधितानाश्रये सन्मुनीन् ॥ ७०४ ॥

भाषा-या प्रमाण ऋद्धीनको, पवन तप परभाष । चाह कष्ट राखत नहीं, जजूं साधु घर भाव ॥

ॐ ह्रीं सकरकुद्धिमपन्नसर्वमुनिभ्यः पूर्णोघ निर्वपामीति स्वाहा ।

अत्रैष चतुर्विंशतितीर्थेशां चतुर्दशशतं मतं । सत्रिपंचाशता युक्तगणिनां प्रयजाभ्यर्हं ॥ ७०५ ॥

भाषा-दोहा-चौदासे त्रेपन मुनी, गणी तीर्थ चौबीस । जजूं द्रव्य काठों लिये, नाय नाय जिज शीस ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थेशां त्रिसप्तसप्ततिं सत्रिपंचादचतुर्दशशतगणभरमुनिभ्योऽघ निर्वपामीति स्वाहा । (२४५)

महद्वैदनिधिद्वयप्रखड्यां कान्मुनेः श्वरान् । सप्तसंवेश्वरं स्तीर्थकुत्सभानियतान्धजे ॥ ७०६ ॥

भाषा-अष्टतालोस हजार अर, उत्रिस लक्ष प्रमाण । तीर्थकर चौबीस यति, संघ यजु घरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं वतमानचतुर्विंशतितीर्थकरमासंस्थायि एकोनत्रिंशच्छष्टचत्वारिंशत्सप्तसप्तमिपुनीन्द्रेभ्योऽघ निर्वपामीति० (२१७)

इस तरह नौत्रै बलयकी पूजा करके एक नारियल उघ बलयमें या मडपके किनारे रखे ।

अत्र चार कोनेमें स्थापित जिनप्रतिमा, मंदिर, शाल व जिनधर्मकी पूजा करनी ।

अक्रुत्रिमाः श्रीजिनमूचयो नव, संपंबविद्याः खलु कोटयस्तथा ।

लक्षास्त्रिपंचामितास्त्रिसगुणाः कुण्डणाः, महस्त्राणि शतं नवानां ॥ ७०७ ॥

भाषा-दोहा-नौसे पचिस कोटि लक्ष, त्रेपन अष्टाबीस । सहस्र ऊनकर बाधना, बिष प्रकृत नम शीस ॥

ॐ ह्रीं नवप्रतपंबविद्यिकोटिं त्रिपंचादष्टशस्रसंविद्यसिं सप्तसप्तसप्तवारिंशत्प्रमितअक्रुत्रिमजिनविंश्वेभ्योऽघ नि० । (२४७)

द्विहीनपंचाशदुपात्तसंरूपकाः, प्रणभ्य ताः पूजनया महाम्यह ।

अष्टौ कोट्यस्तथा लक्षाः षट्पंचाशमितास्तथा, सहस्रं सप्तनवतेरेकाशीतिस्त्रतुःशतं ॥ ७०८ ॥

प्रतिष्ठा

॥ ७५ ॥

एतत्संख्यानं जिनेन्द्राणामकृत्रिमजिनालयान्, अत्राह्वय समाराध्य पूजयाम्यहमध्वरे ॥ ७०९ ॥
 भाषा-दोहा-आठ कोड़ लख छप्पने, सत्तानवे हजार । चारि दालक इक अमो जिन, चैत्य अकृत भज सार ॥
 ईं ह्रीं अष्टकोटिषट्पंचांशुशम्भनवतिशतवृत्तः सप्तपञ्चाशतिर्निर्वाणीति स्वाहा ।
 यो मिथ्यात्वमतंगजेषु तरुणक्षुन्नुग्रसिंहायते, एकांशानपतापितेषु समस्तपीशूबमेघायते ।
 श्वआंघ्रप्रार्हसम्पत्तस्तु अदधं शस्त्राथलम्नायते, स्याद्वाद्धवजमागमं तमभितः संपूजयामो वयं ॥७१०॥
 भाषा-चौपाई-जय मिथ्यात्व नागको सिंहा, एक पक्ष जल धरको मेहा ।

नरक कूपते रक्षक जाना, भज जिन आगम तत्त्व खजाना ॥

ॐ ह्रीं स्याद्वाद्भक्तिजिनागमायाऽर्धं निर्वाणीति स्वाहा । (२४९)

जिनेन्द्रोक्तं धर्मं सुदशयुतभेदं त्रिबिधया, स्थितं सम्यक्तरत्रयलतिकयाऽपि द्विबिधया ।

प्रगीत सागारेतरचरणतो ह्यकमनधं, दयारूपं धंदे मखशुचि समास्थापितसिम ॥ ७११ ॥

भाषा-सुजंगप्रयात छन्द-जिनेन्द्रोक्त धर्मं दयाभाष रूपा, यही द्वैविधा संपभं है अन्तूपा ।

यही रत्नत्रय मय क्षमा आदि दशधा, यही स्वानुभव पूजिये द्रव्य बठधा ॥
 ॐ ह्रीं दण्डक्षणोत्तमादित्रिलक्षणसम्पत्दर्शनज्ञानचारिश्ररूप तथा मुनिगृहस्थाचारमेरेन द्विबिध तथा दयारूपत्वेनेक-

नचर्मायस्य निर्वाणीति स्वाहा ।

यागमपण्डलसमुद्भृता जिनाः सिद्धवीतमदनाः श्रुतानि च ।

चैत्यचैतथगृहधर्ममागमं संयजामि सुविशुद्धिपूर्तये ॥ ७१२ ॥

भाषा-दोहा-अहंतिस्वदाचार्यं गुरु, साधु जिनागम धर्म । चैत्य चैत्य ग्रह देव नभ, यज मण्डल कर समं ॥
 ॐ ह्रीं पर्वयागमण्डलदेवताभ्यः पूर्णार्घिम् । चारो कोनोपर चार नारियल चढ़ाधे ।

शांतिः पुष्टिरनाकुलत्वमुदितप्राजिष्णुताविष्कृतिः, संसारार्णवदुःखदाशमनं निःश्रेयसोद्भृतिता ।

सौराज्यं मुनिवर्यपादभरिषस्याप्रक्रमो नित्यशो, सृयादअशाराक्षिनायकमहापूजाप्रसाचान्मम ॥ ७१३ ॥

भाषा बखिल्ल-सर्धं बिद्वि क्षय जाय शांति बाढ़े सही, भव्य पुष्टता लहे क्षोभ उपजे नहीं ।

पञ्च कल्याणक होंय सबहि मङ्गल करा, जासे भवदाध पार लेय शिबघर शिरा ॥

इत्याशीर्वादः-पुष्पाजलि क्षिपेत् ।

फिर-आचार्य भक्ति, अर्हन्त भक्ति, श्रुतभक्ति, चारित्रभक्ति पढ़े जो अन्तमें दी हुई है।

पश्चात् शांतिपाठ विषर्जन करके यागमण्डलकी पूजा समाप्त करे। जबसे यह मण्डल पूजा शुरू हो तबसे पूर्व होने तक सब नरनारियोंको एकत्र ही सुनना चाहिये। जिसको कोई प्रकारकी भाषा मेटनी हो वह शांतिसे जाये, टिकड़करकर दे देवे, यदि लौटकर आना हो तो एक दूसरे प्रकारका टिकड़ खा जाये जो छुट्टिका हो सो दे दिया जाये। जब यह लौटे फिर सब टिकड़ दे दिया जावे। मण्डल पूर्ण होनेपर सबके टिकड़ ले लिये जावे। यही क्रम हरएक दिन मण्डलके लिये हो। अब मण्डप चारों तरफसे बंद कर दिया जावे वह वेदीके आगे जो दो चतुतरे हैं वहां तीनों तरफ परदा रहे व पहले चतुतरेके आगे अलग परदा रहे। अब यह परदा बंद कर दिये जावे।

तीसरा अध्याय।

शर्मा ऋष्याणक ।

यागमण्डलकी पूजा दिनमें समाप्त हो जानेपर यदि तोषरे पहर समय हो तब तो सध्यासे पहले नीचेकी ऋषण का जावे। यदि दिनमें समय न हो तो रात्रिको क्रिया की जावे।

(१) इन्द्रकी स्वर्गपुरीकी समाप्त व कुवेरको आदेश—वेदीके आगे जो दो चतुतरे हैं, एकर यागमण्डल के दूधा खलो है। यागमण्डल प्रतिष्ठा होने तक रहने दिया जावे। पहले चतुतरेके आगे परदा डालकर दूबरेपर परदेके खीतर पहले समा लगे जावे। सोर्धम इन्द्र व इन्द्राणी बिहावनपर बैठे, कुछ देवता इधर तबरा बैठें, सामने उपदेशी भजन गाले बाजेके साथ हां रहे हो ऐसा सामान रचकर मण्डपमें टिकड़ोंके द्वारा नरनारी एकत्र हो तब परदा उठाया जावे। परदा उठनेके पहले सूचक वाद्यबजाने शुरू करना करे—इन्द्र अपनी समाप्त बैठकर श्री ऋषभदेव तीर्थकारका जन्म होगा ऐसा स्मरण करते हैं और कुवेरको आज्ञा देते हैं कि यह अयाऽया-नगरीकी रचना करे तथा राजाके आंगनमें स्तंभबृष्ट करे तथा कुमारिका देवियोंको आज्ञा करे कि वे माताका गर्भसोपान करें।

परदा यथायक उठे तब भजन हो रहे हो। कुछ देर भजन होकर इन्द्र-इन्द्राणी बिहावनसे उठकर खड़े हो तब समा निवाली और देव भी खड़े हो और नीचे प्रकार श्राजिनेन्द्रकी स्तुति सब मिलाकर हाथ जोड़कर करें, भजन गाना बंद हो। यदि व जेक साथ स्तुति पढ़ी जायके तो वैसा किया जावे अन्यथा यों ही पढी जाय पर स्पष्ट शुद्ध पढ़ी जाय। आचार्य पढ़नेमें बंद देवे।

छन्द त्रिमगी ।

जय जय जिन स्वामी अन्तर्यामी, परमात्म सब दोष हरे। नित्र ज्ञान प्रकाशे भ्रमरत लाशे, सुदलस्य विनितान कर ॥
तुम अनुभव सागर अमृत गागर, जो भाकर नित्र कण्ठ धरे। सो मुख नित्र पावे क्षोम पिटावे, सर्व संहरण नाथ करे ॥

चौपाई ।

जय जय मोह महात्म मारी, नाशन तुम सूरज अविकारी । जय जय मिधातम निशिनीश्री, अखि अविकार महान प्रकाशी ॥
 जय जय मव्य अमर हुछाशी, चरणरुमल शम गन्ध सुवासी । जय जय अति भाव प्रगटावन, धर्म सरोवर शमजल धारण ॥
 जय जय कर्म महागिरि चूर्ण, तुम्हीं वज्र अद्भुत बल पूरण । जय जय चाहा दाह प्रशमानन, तुम हि सेवत्रल सुन्दर पावन ॥
 जय जय काम शत्रु सिनाशन, ब्रह्मवर्थ असिधार प्रकाशन । जय जय क्रोत्र पित्राच विनाशन, क्षमा वज्रवर इन्द्र प्रकाशन ॥
 जय जय मान नाग क्षयकारी, सिंह प्रवल मर्दित्र गुणकारी, जय जय माया लता उखाड़न, आर्जन शूल धार अति पावन ॥
 जय जय लोभ कालिमाटारन, श्रीचन्द्र शुचि गुणविस्तारन । जय जय अवैति पन्थ हटावन, संगम संश्लक्ष अति पावन ॥
 जय जय योग चलन थिकारी, शुद्ध ध्यान दृढ़ भित्ति करारी । हे जिननाथ पाप हम टालो, मक्ति आपनी देय सम्भालो ॥
 मवसागरसे माय उबारो, कर्म आसवन छिद्र निवारो । सुखपागममें नाश हुआओ, ममता मरु विकार हटाओ ॥

रतुति पठ कर सब बैठ जावे । कुछ मिनट पीछे इन्द्र आज्ञा करे—

धनद कुवेर—(ऐसा कहते ही बराममें बठा कुवेर हाथ जोड़ खड़ा हो जाता है) तुम्हें सुखद बात सुनाता हूँ । इस बातके कहनेसे ही पुण्य कमाता हूँ ।

कुछ काल पीछे बर्वायसिद्धिका ब्रजगाभि अइन्द्र चयेगा और नाभिराय मरुदेरीके पवित्र गर्भमें अतरेगा । तुम शीघ्र प्रगोष्या नगरकी रचना करके शोभा करो, रमणीक मनोहर नेत्र प्रेय रत्नोंकी आभा करो, सुन्दर अद्वैतीय राज्य महल बनाओ । नाभिराजा मरुदेवीको पवित्र जलसे स्नान कराओ । परम पुनीत ब्रह्मभूषणोंसे बलिज करो और मनोहर विद्यापनपर विडा लोकरके पर्व आपनोको लज्जिन करो । कुवेर । श्री ऋषभनाथ प्रथम तीर्थरका उदय होगा । जगतका मोह मिथ्यात्व अन्वकार सब क्षय होगा । छ मास पूर्वसे नौ मास गभे तक रत्नवृष्टि करो । राजाका महल मनोज्ञ रत्नोंकी बर्षासे पूर्ण करो । कुमारिका देवियोंको आज्ञा करो कि—
ये माताकी सेवामें आएं, गर्भकी शोधना कर पुण्य कमाएं ।

कुवेर सुनकर आनंदित होता है और उत्तर देता है—“धन्य ! धन्य ! महाराज ! जगतका पुण्योदय हुआ है जो तीर्थरका जन्म होनेवाला है । इस बम्बादको जानकर जो आनन्द हुआ है वह वचन अनोचर है । कुमानायने जो आज्ञा की है उसे बना लेंगा । तीर्थरके माता—पिताकी सेवा करके पुण्य कमाईगा । महाराज, आज मेरा जन्म धन्य हुआ जो मुझे यह परम कल्याणमय कार्य करना सौभाग्य प्राप्त हुआ । तब इन्द्र—इन्द्र णीके बिवाय अन्य सब बरमाके देव उठकर यह छन्द मिळकर पढते हैं—

गीता छन्द—**वन धन्य सुरका आज ही, सम्वाद सुखभर हम सुना । श्री तीर्थरका जन्म होगा, पुण्य हो यासे वरा ॥**
भवि जीव शिवकी राह पावेंगे मिटा मिधातको । हम मी पिपें अमृता महा, जिन तरका भव वातको ॥

हीं श्री है लक्ष्मी नियै स्व स ह्रीं श्रीं स्वा लां ह्रीं तीर्थंकारवित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु कुरु वं मं हं व तं प लक्ष्मी देव्यै स्वाहा ।”

(७) फिर बातमी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ पुष्प क्षेण कर उत्तरदिशामें स्थापित करे । ‘ॐ महति महता शक्तिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं हे शक्ति नियै स्व स ह्रीं श्रीं स्वां लां ह्रीं तीर्थंकारवित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु २ व म हं व तं प शां ते देव्यै स्वाहा ।”

(८) फिर आठमी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ उपर पुष्पक्षेण कर ईशानदिशामें स्थापन करे । ‘ॐ महति महतां पुष्टिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं हे पुष्टि नियै स्व स ह्रीं श्रीं स्वां लां ह्रीं तीर्थंकारवित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु २ व मं हं व तं प पुष्टिदेव्यै स्वाहा ।”

इसतरह श्री, ही, श्रुते, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी, शक्ति और पुष्टे इन आठ दिक् कुमारी देवियोंको आठ दिशामें स्थापित करे फिर आचार्य नीचे लिखा मन्त्र पढे और उन प्रथम पुष्पक्षेण कर कहे ‘ॐ दिक्कुमार्यो जिनमातासु उपे य परिचरता रे चत स्वाहा ।”

दोहा—श्री जिनमाना सेव नित, फगत रहो सुख पाय । पुण्यलाभ हो जानसे, पातक जाय पलाय ।

फिर कुत्रेादि चले जावे, मात्र देवियां खड़ी रह जावें, परदा पढ़ जावे ।

(३) पांच मिनटके भीतर वसी दूधरे चबूतरेपर ऐश्री रचना करे कि एक छेठने लायक विशासन सुन्दर रफेर बलोंसे चञ्चल विछ वे । एक ऊंची टेबुलपर आठ मगल द्रव्य स्थापित करे तथा एक मजूना स्फुटेत्तन पीती व कांचकी इननी बड़ी बनविे जिसमें यह प्रतिमा जिबकी प्रतिष्ठाकी विधि करनी हा सीधी आबके बैठे या खडे । अत्र जिन माता उत्र प्रिहासनपर बैठी हो । इन आठ कन्याओंके कलश दृषरी टेबुलपर रख दिये जावे । परदेके भीतर माताको ये देवियां किभी बडे पालमें विडाकर थोडे कुम्भके जउसे सन करावें, नए शुद्ध वस्त्र पहनावें । कुछ आभूषण रहने दिया जावे, माता बखसे बजकर प्रिहासनपर बैठी हो, मजूना पापमें रखी हो । इन देवियोंमेंसे कोई हाथोंमें कडे पहनाती हो, कोई गलेमें हार पहनानेको हार लिये खडो हा, कोई तिलक देनेको चन्दन लिये खड़ी हो, एक देवीके हाथमें दर्पण हो, एक पुष्पकी माला लिये हो, एक अनदान लिये खड़ी हो, एकके हाथमें सुन्दर ज्वारी जउसे भरी एक पालमें रखी हो, एकके हाथमें पंखा हो । इय तरह देविग कायदेसे खड़ी हों, तत्र परदा उठे । प्रत्र लोग कहे—श्री जिनमाताकी जय, उषर बाजे बजते हों, इषर देवी खडे पहनाकर गलेमें हार डाले, पुण्यमाला डाले, तिलक करे, अतर सुंवनें, दर्पण दिखावे, माता हाथमें अतर लेकर बलोंमें लगावे । फिर प्ररीसे पालमें ही हाथ घोवे । दो देवियां उष मजूनाके भीतर चन्दनसे लेप करके एक पालमें रख कर घोवें फिर भीतर मध्यमें व प्रत्र ओर चन्दनसे पायिया बनावें । फिर प्रत्र देविया खड़ी हो यह स्तुति पढ़े—

हउन्-मात तोहि सेवके सुतुंसिता हमें भई, रागद्वेष टार वीतराग बुद्धि परिणई ।

तू ही लोकसाहि अष्ट भार्यो सुभाग है, इन्द्र तोरी भक्तिमें प्रवीण किये राग है ॥

घन्य घन्य हस्त यह सफल भए सु आज हों, अङ्ग २ घन्य है कृतार्थ भए आज हों ।

घन्य घन्य देवि पुण्य आत्मा विशाल हो, पुत्रका सुलाभ हो सुधर्मका प्रचार हो ॥ इतनेमें परदा गिर जावे ।

(४) माता रातको यहीं बोवे, देवियां भी यहीं रहें, उनके आरामका भी यहीं प्रबन्ध हो । इय तरह आज दिन रातकी किा बनात

की जाये । फिर यदि समय हो तो बर्गोपदेश दिया जाये । दूबरे दिन बड़े पबरेसे गर्भ कल्याणककी विशेष विधि की जाये ।
 (४) माताका स्वप्न देखना—रात्रिको आचार्य प्रतिष्ठायोग्य प्रतिमाओंकी जांच कर वेदीमें स्थापित करे । उनको स्पष्ट करके विराजमान करे तथा जिबकी प्रतिष्ठा विधि करनी हो उसके केशर चन्दनसे छेपकर मजूषा (बदरू)में विराजमान करे, शीशमें भी केशर चन्दन छेपे तथा हरएक बिम्बको बखसे ढक देये, मजूषाके ऊपर भी बख ढक देये, प्रतिमाको मजूषामें रखते हुए न चे लिखा श्लोक व मन्त्र पढ़े—

यो गंगाबुधरानुषुणकृतभूपरकारमिद्रासन, प्रक्कूपं ब्रह्मदाकुलीकृजगद्गर्भं प्रविश्यांससे ॥२८॥

छत्रे वामतिरञ्जयन् रविरिह प्राची परानुग्रह-ग्राहोद्यद्वृतेष्वर्द्धतेरम सुहशां सोऽथ जिनस्तन्मुदे ॥२८॥

ॐ गमोर्हते केवलिते परमयोगिते शुक्लधनान्निर्दिग्धकर्मवनाय वौभाग्य शोताय वरदाय अष्टादशदोषविधिताय स्वाहा ।

फिर सर्व प्रतिमापर पुष्प क्षेपे ।
 बबरे सूर्योदय पहरके मण्डपमें गमनारी टिकटोसे एकत्र होते रहें उषर मगलीक बाजे मण्डपके बाहर बजें । इषर दूबरे वनूतरेपर बाष्पापर जिनमाता केटी रहे । उसके पाष गोदके यहाँ प्रतिमाबहित मजूषा रखी रहे जो अभी कपड़ेसे ढकी रहे । देवियां आठों बदेलीमें (सेवामें) खड़ी हों, मगळद्रव्य एक तरफ रखे हों तथा १६ स्वर्गोंकी मूर्तियां या चित्र एक मेजपर जो कुछ नीचे हो सुन्दरतासे रखे जाय जिनको सब कोई देख सकें । बाजा कुछ देर बज चुके तब परदा उठाया जाये, उष समय धे देवियां नीचे भाति मगळगीत पढ़ें—

गीताछन्द—अरुंत सिद्धार्थ पाठक साधु पद वन्दन करूं, निर्मल निजातम गुण मगन कर पाप ताप सभ क्षमन करूं ।

अब रात्रि तम विषटा सकल झां प्राप्त होत सुकाल है, मानु उदयाचलपे आया नभ किया सब लाल है ॥

पथी मनोहर चन्द बोलें गन्ध पवन बलात है, बहूं ओर है मगवान सुमन शुश्रु प्रफुलित पात है ।

बापे बनें रमणीक माता गीत मंगल हो रहे, तजिये क्षयन उठ जगत ध्यारी वीरती हम कर रहे ।

है समय सामायिक मनोहर ध्याम आतम कीजिये, है कर्म नाशम सभग सुन्दर लाम निज सुख लीजिये ।

इतने हीमें माता बलिं मकती बैठ जाती है, मजूषा पाषमें रखी है और बैठे ही बैसे स्तुति पढ़ती है—

* गीला—बन्दों परम अरुन्त सिद्ध सु साधु समय गुण धरे, अधिकार परमातप निजातम सुख मनोहर संभरे ।
 धम धन प्रभात प्रकान्न पाया जनो सम्भक्ता पगी, अब रात्रि तम मिथ्यात जो सभ विषट मानु कला जगी ॥

इतना कह हाप जोड़ मरतक शुकाकर नाम करे फिर कुछ देर ठहरकर कहे—

* वर्यापि लिखबर्नका प्रचार ऋषभदेवके ज्ञान होने बाद हुआ था, तथापि वहाँ प्रतिष्ठाका भाव पताना हे इससे वधायोग्य कार्य ऋषभ-देवके सिद्धसे दिखाया गया है ।

बढग आदि नागाप्रकारके सुन्दर शल हो । देवीको आते देखकर राजा कहें—प्रिय ! आर्ये, बिरालिये, अर्ध विहाजनपर सुशोभित
हूनिये, यह ब्रमा आपके पधारनेसे प्रफुल्लित होरही है । रानी मरुदेवी बाईतरफ बैठजावे और नीचे लिखे गीतमें वर्णन करें—

छन्द गीता ।

हे नाथ ! पिछली रातमें हम सुपन सोला देखिया, गज बेल सिद्ध सुदेवि कमला न्हवन कारतहिं देखिया ।
द्रय पुष्पमाल सु बन्द्र परण सूर्य सुवरण कलश वी, युग मीन सरबर कमल युत सागर छु सिंहासन भलो ॥
रमणीक सुर्ग विमान उतारत नाग भवन छु आबतो, छुरासन राशि सुकांति पूरण अगनि धूम न पाबतो ।
तब अन्तमें इक वृषभ मेरे सुख प्रवेश करत भया । इनको सुफल सुखिये प्रभू सुस दीनपर करके द्या ॥

महाराज कुछ देर विचारते हैं और तब अंधविज्ञानसे बव डाल जानकर इबतारह कहते हैं—

गीता छन्द ।

गज देखनेसे देखि तेरे पुत्र उत्तम होयगा । बर वृषभका है फल यही बह जगत गुरु भी होयगा ॥ १ ॥
बर सिंह दर्शनसे अपूरव शक्ति धारी हो यगा । पुष्पमालासे बह उत्तम तीर्थ करता होयगा ॥ २ ॥
कमला न्हवनका फल यही छुरगिरि न्हवन सुरपति करें । अर पूर्ण शक्तिसे देखनेसे जगत जन सब सुख करे ॥ ३ ॥
बर सूर्यसे बह हो प्रतापी कुंभ युगसे निधिपति । सर देखनेसे सुभग लक्षण धार होवे जिनपती ॥ ४ ॥
युग मीन खेळत देखनेसे हे प्रिये चित धर सुनो । होवे महा आनन्दसय बह पुत्र अनुपम गुण सनो ॥ ४ अ ॥
सागर निरखते जगतका गुरु सर्वज्ञानी होयगा । बर सिंह आसन देखनेसे राज्य स्वामी होयगा ॥ ५ ॥
अर सुर विमान सुफल यही बह स्वर्गसे बय होयगा । नागेंद्र भवन विशालसे बह अवधिज्ञानी होयगा ॥ ६ ॥
बहु रत्न-राशि दिखावसे बह गुण खजाना होयगा । बर धूम रङ्गित जु अग्निसे बह कर्म ध्वंसक होयगा ॥ ७ ॥
बर वृषभ सुख परवेश फल श्री वृषभ तुम बपु अबतरे । हे देखि तू पुण्यातमा आनन्द मगल नित भरे ॥ ८ ॥

माताका मन इष फलको सुनकर प्रफुल्लित होगया तब बव देखियां मिलकर जा भवतक विगयसे खड़ी थीं मंगलगान करने कर्गी—

गीत छन्द धोदका—हम जिनराज जनम सुन पाये । हर्ष भयो नहीं अंग समाए ॥

धन्य नाथ तुम जगत पिता हो । धन्य मात तुम सुखदाता हो ॥

धन्य समय यह परम सुहावन । आज भए हम जन सब पावन ॥

आज जगतका भाग्य सुहाया । वृषभनाथ सम्बाद सुनाया ॥

या युगके तीर्थंकर प्रथमा । प्रगट ह्योगये तारण अधमा ॥
इम बन्दन कर तुःख नशावे । भव आताप सकल प्रशमावे ॥

धन्य नाथ तुम वीन दयाला । काहु कृपा हम होय निहाला ॥ अन्तमें परदा पढ़ जावे । तब सूचक पात्र पादेके बाह्य पितर बनाता हुआ कुछ गाना हुआ, कुछ देर पछे सूचित करे कि तीर्थंकरके गर्भमें आनेका सम्वाद जानकर इन्द्रादिक देव सब राजाके गृहमें आयेगे और भक्ति करके अपना जन्म सफल मनाएंगे ।

(७) इन्द्रोका आकर गर्भकल्याणक करना-तब पादेके भीतर यह रचना की जाय । दूसरे चतुस्त्रेपर तीर्थंकरकी प्रतिमा जिन मजूषांमें है उसके ऊंचे स्थानपर विराजमान करे, वल्ल जगसे निकाल देवे जिससे प्रतिमा शीशेके भीतरसे दिख सके । पात्र ही एक चौकीपर प्रतिमाकी मजूषासे कुछ ही नीचे माता बैठे हो तथा पात्र ही पिता बैठे हो, देवियां विनय चरित रखी हों, मंगल द्रव्य आठों एक ताफ रखे हों और एक मण्डल २४ कोठोंका सुन्दर एक छोटी चौकीपर मांडा जावे, वह प्रतिमाके आगे विराजमान किया जावे । कुछ समाप्त भी कायदेसे बैठे हों, आगे उपदेशी भजन होते हों तब परदा उठाया जावे । उधर इन्द्र इन्द्राणी व अनेक इन्द्र-समूह बाजा बजाते हुए व नीचे लिखा मंगलगीत गाते हुए मंडपकी तीन प्रदक्षिणा देकर राजसभामें प्रवेश करें ।

गीत-जय तीर्थंकर जय जगतनाथ, अथतरे आज हम हैं सुनाथ ।

धन भाग महारानी सुहाग, जो उर आए जिन सुरग त्याग ॥ १ ॥

इम भक्ति करन उमगे अपार, आए आनन्द धर राज्यद्वार ।

इम अंग सफल अपना करैय, जिन सात पिता सेवा करैय ॥ २ ॥

यह जगत तात यह जगत मात, यह मंगलकारी जगविक्रयात ।

इनकी महिमा नहिं कही जाय, इन आतम निश्चय मोक्ष पाय ॥ ३ ॥

जिनराज जगत उद्धार कार, त्रय जगत पूज्य अघ घूरकार ।

तिनके प्रगटावनहार नाथ, हम आए तुम घर नाय साथ ॥ ४ ॥

ऐसा गीत गाते हुए राजसभामें आकर मात पिताको देखकर आनंदित हो मस्तक नत हो भूमिपर दण्डवत् करते हैं और दो पात्र बजाभूषणसे श्रजित हों जिनको देव बाध लखें, उनको उन माता पिताके आगे एक टेबुल हो तबपर रख भेट करते हुए नीचे लिखा गान पढ़ते हैं । यद्यपि इन्द्र नृत्य व गान कर सकते हैं ।

गान इन्द्रका-तुम देखे दरश सुख पाये नयना । सुख पाये नयना, सुख पाये नयना ॥ तुम० ॥ टेक ॥

तुम जग ताता तुम जग माता, तुम बन्दनसे भव भय ना ॥ तुम० ॥ १ ॥

तुम गृह तीर्थकर प्रभु आए, तुम देखे सोलह सुपना ॥ तुम० ॥ २ ॥
 तुम भव त्यागी मन वैरागी, सम्यक्दृष्टि शुचि वचना ॥ तुम० ॥ ३ ॥
 तुम सुत अनुपम ज्ञान विराजे, तीन ज्ञानधारी सुजना ॥ तुम० ॥ ४ ॥
 तुम सुत राव्य करै सुरनरपे, नीति निपुण शुख उद्धरना ॥ तुम० ॥ ५ ॥
 तुम सुत साधु होय बन विहरे, तप साधत कर्मन हरना ॥ तुम० ॥ ६ ॥
 तुम सुत केवल ज्ञान प्रकाशे, जग मिथ्यातम सब हरना ॥ तुम० ॥ ७ ॥
 तुम सुत धर्म तप सब भाषे, भवि अनेक भवसे तरना ॥ तुम० ॥ ८ ॥
 तुम सुत कर्म हर शिवपुर पहुंचे, फिर कबहुं नहिं अबतरना ॥ तुम० ॥ ९ ॥
 कर्म बन्ध हर आज जन्म फल मानो, गर्भोत्सव कर अघ दहना ॥ तुम० ॥ १० ॥
 इम सब अंग ह्मन्दाणी मिल्कर खड़े हो मण्डलकी पूजा करें, सब बैठ जावें । यहाँ २४ तीर्थकरोकी माताओंकी पूजाकरनी है—

फिर इन्द्र ह्मन्दाणी मिल्कर खड़े हो मण्डलकी पूजा करें, सब बैठ जावें । यहाँ २४ तीर्थकरोकी माताओंकी पूजाकरनी है—
 प्रथम—स्तुति सहित स्थापना ।

बंशाक्षायिकहृत्सुधियां योस्मिन्मन्त्रनामभू-यो वेक्ष्वाकुक्कुरप्रनाथहरियुग्बंधाः पुरोवेषसा ।
 आधानाद्विधिप्रबन्धमहिताः सृष्टास्तत्सुत्थार्थभू-भर्तृस्वामिकजीविता सुकुलजा जैन्यो जयंल्यंविक्ताः ॥ १० ॥
 मृत्याद्विप्रयदृग्विद्युदयनुगचित्कर्मणोआगम-द्रव्यो गौतमगोत्रभागभिजनो नेमिस्तथा सुव्रतः ।
 तद्वत्काश्यगोत्रिणस्तदितरे णोकर्मनो आगम-द्रव्योद्योष्ववभन् स्वयं यदुदरेष्वंधाः प्रसीदंतु ताः ॥ ११ ॥
 मरुदेशीं धृवस्थांवा विजयामजितस्य च । सुवेषणां संभवेयास्य सिद्धार्थी न्वनप्रसोः ॥ १२ ॥
 सुभंगलाहां सुमतेः सुसीमां पद्मरोचिषः । पशुंधरां सुपार्श्वस्य लक्ष्मणां चन्द्रलक्ष्मणः ॥ १३ ॥
 रामां श्रीपुण्ड्रदंतस्य सुनन्दां शीगलाहंतः । बिष्णुभियं श्रेयसश्च वासुद्रव्यसमोर्जयाम् ॥ १४ ॥
 सुशर्मलक्ष्मीं विमलाहंतोऽमंतस्य सुव्रताम् । ऐरिणीं धर्मनाथस्य कमलां शांत्यधीशिनः ॥ १५ ॥
 सुमित्रां कुंभुनाथस्य अरभर्तुः प्रभावतीम् । मल्लैः पद्मावतीं वरां सुव्रतस्य सुनीशिनः ॥ १६ ॥
 विनतां नमिनाथस्य शिवां नेमिजिनेशिनः । देवदत्तां च पार्श्वस्य वीरस्य प्रियकारिणीम् ॥ १७ ॥
 चतुर्विंशतिसंघेतः सवित्रीस्तोत्रंकारिणाम् । स्यापयामीह तदुगर्भपवित्रिजगत्प्राः ॥ १८ ॥

यद्द स्तुति पद पुण्य क्षेपे ।

भाषा-दोहा-श्री जिन चौबिस मात शुभ, तीर्थंकर उपजाय कियो जगत कल्याण बहु, पूजो द्रव्य मंगाय ॥
 ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातुरोऽत्रावतर २ संवीषद् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ २ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम
 सन्निहितो मम २ वषट् सन्निधिकरणम् ।

छन्द चाली-भरि गंगा-जल अविकारी, मुनि चित सम शुचिता धारी ।

जिन मात जजुं सुखदाई, जिन धर्म प्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातृभ्यो वलं निर्वपामीति स्वाहा ।

घसि केशर चन्दन लाऊं, भव ताप सकल प्रशमाऊं ।

जिन मात जजुं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्र मातृभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ अक्षत दीर्घ अखण्डे, तुरुणा पर्वत निज खण्डे ।

जिन मात जजुं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्र मातृभ्यो अथतं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुधारण मय पावन फूला, चित काम व्यथा निर्मूला ।

जिन मात जजुं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्र मातृभ्यो पुष्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताजा पकवान बनाऊं, जासे शुद्ध रोग नशाऊं ।

जिन मात जजुं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातृभ्यो चरुं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक रत्नन मय लाऊं, सब दर्शनमोह हटाऊं । जिन मात जजुं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातृभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपायन धूप जलाऊं, कर्मनका बंश मिटाऊं । जिन मात जजुं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

- ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 फल उत्तम उत्तम लालं, शिब फल उद्देश बनाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सदाई ॥
- ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 शुचि आठों द्रव्य मिलालं, गुण गाकर मन हरषालं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सदाई ॥
- ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

गर्भकव्याणक तिथिका प्रत्येक अर्घं ।

- गीताछन्द-सर्वार्थसिद्धि विमानसे जिन ऋषभ चय आए यहां, मरुदेवी माता गरम शोभै होय उत्सव शुभतहा ।
 आषाढ बदि दुतिया दिना सब हन्द्र पूजें आयके, हमहूँ करै पूजा सुमाना गुण अपूरव ध्यायके ॥
- ॐ ह्रीं आषाढकृष्णा द्वितीयायां श्रीं धृषणमाथजिनेन्द्र गर्भधारिकाय माता मरुदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)
- दोहा-जेठ अमावस सार दिन, गर्भ आय अजितेश । विजया माता हम जजें, मेटैं सख कलेश ॥
- ॐ ह्रीं जेठकृष्णामावास्यां श्रीं अजितजिनेन्द्रगर्भधारिकाय श्रीं विजयादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)
- संकाछन्द-फागुन असित सित अष्टमीको गर्भ आए नाथ, धन पुण्य मात सुसैनका संभव धरे सुख साय ।
 उपकार जगका जो अया सूर गुरु कथन थक जाय, हम तपायके शुभ अर्घ पूजें विघ्न सब टल जाय ॥
- ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णाष्टमां श्रीं संपवतः, र्थः ऋगर्भधारिकाय माता सुसैन्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)
- गाथाछन्द-गर्भस्थिति अभिनन्दा, वैसाख सित अष्टमी दिना सारा ।

सिद्धार्थो शुभ माता पूजूं चाण सुजान उपकारा ॥

- ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल षष्ठा श्रीं अभिनन्दननाथं श्रीं सिद्धार्थदेव्यै अथ निर्वपामीति स्वाहा (४)

सोरठा-श्रावण सित पख आप, पात मंगला उर बसे । श्री सुमतीश जिनाय, पूजूं माता भावसों ॥

- ॐ ह्रीं श्री श्रावण शुक्ला द्वितीयायां श्रीं सुप्रति जनेन्द्रं गर्भे धारिकाय श्रीं मंगलादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५)
 छन्द बिलखणी-बही षष्ठी जानो सुभग महिना माघ सुदिना, सुसीमा साताके गर्भ तिष्ठै पद्य सु जिना ।

जजों लैके अघं मात देवी द्वन्द चरणा, कटैं जासे हमरे सकल कर्म लेहु शरणा ॥

- ॐ ह्रीं श्री माघ कृष्ण षष्ठां श्रीं पद्मप्रथ जिनेन्द्रं गर्भे धारिकाय श्रीं सुसीमादेव्यै अथ निर्वपामीति स्वाहा । (६)

छंद षोडश-भादप शुक्ल छठी तिथि जानी, गर्भ धरे शुषधी महरानी ।

श्री सुषार्थ जिननाथ पधारे, जजूं मात दुख टाल हमारे ॥

ॐ ह्रीं मादव शुक्लाष्टम्यां श्री सुषार्थ जिनेन्द्रं गर्भधारिकाय श्री पृथ्वीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)
छंद त्रिखारणी-सुभग चैतर महिना असित पखमें पांचम दिना, सुलखना माताने गर्भ धारे चन्द्र सु जिना ॥

जजौं लैके अर्घं मात जिनके शुद्ध बरणा, कटै जासे हमरे सकल कर्म लेहु शरणा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण पंचम्यां श्री चन्द्रप्रभुजिनेन्द्रं गर्भ धारिकाय श्री सुलक्षणादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)
सोरठा-पुरुषदंत भगवान, मात रमाके अवतरे । फागुन नौमि महान, जजौं मातके चरण जुग ॥

ॐ ह्रीं फागुनकृष्णश्रवम्यां पुरुषदंतजिनेन्द्रं गर्भे धारिकाय रमादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

बाली-बदि चैत तनी छठ जानी, सीतल प्रसु उपजे ज्ञानी । नंदा माता हरखानी, पूजूं देवी उर आनी ॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्ण अष्टम्यां श्री सीतल जिनं गर्भे धारिकाय श्री नन्दादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

बाली-बदी जेठ तनी छठि जानी, विष्णुश्री मात बखानी । अर्घांसनाथ उपजाए, पूजूं माता गुण गाए ॥

ॐ ह्रीं व्येष्ट कृष्ण षष्ट्यां श्री भेर्घांपनार्थं गर्भे धारिकाय श्री विष्णुश्रीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

बाली-आषाढ़ बही छठि गाई, श्री बासुपुत्र्य जिनराई । सु जया माता हरखानी, पूजूं ता पद उर आनी ॥

ॐ ह्रीं भाषाढ़कृष्णषष्ठ्यां श्री बासुव्यजिनं गर्भे धारिकाय श्री जयादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)

छंद मालती-जेठ बदी दसमी गणिये शुष, मात सुश्रयामा गर्भ पधारे,

नाथ विमल आकुलता हारी, तीन ज्ञानधर धर्म प्रधारे ।

ता माताका धन्य भाग हें, पूजत हें हम अर्घं सुधारे,

मंगल पांच विघ्न नशांके, बीतरागता याब सप्पहारे ।

ॐ ह्रीं व्येष्टकृष्णदशम्यां श्री विमलनाथ गर्भे धारिकाय श्री श्यामादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)
बडिछ-एकम कातिक कृष्ण गर्भमें आयके, नाथ अनन्त सु सुरजा माता पायके ।

पूजूं देवी सार धन्य तिस भाग है, जासे विघ्न पलाय उदय सौभाग है ॥

ॐ ह्रीं कातिककृष्णा एकम भी अनंतनाथं गर्भे धारिकाय श्री सुरजादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

अडिह-मात सुव्रता धर्म जिनं उर धारियो, तेरति सुदि वैशाख सु सुख संवारियो ।

पूजूं माता इयाय धर्म उद्धारणी, शिवपद जासे होय सुमंगल कारिणी ॥

ॐ ही वैशाख शुक्ल त्रयोदश्यां श्री गर्भे जित गर्भे वारिकाय श्री सुव्रतादेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)
शिवानी-सहा ऐरादेवो परम जननी शान्ति जिनका, सुदा सातें पादों करत पूजा इन्द्र तिनकी ।

जजूं मैं ले अर्घ्य रात जिनके हृदय चारणा, यजे मम अथ सारे ननत भव है जास शरणा ॥
ॐ ही भादो शुक्ल मध्यम्या श्री शान्तिजित गर्भे वारिकाय श्री ऐरादेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)

चाली सारन ब्रह्मया अन्धिपारी, जिन गर्भं रहे सुखकारी ।

पशु कु शु ओमतो माता, पूजू जासो लहुं साता ॥

ॐ ही श्रालय कृष्ण दश्यां श्री कृष्ण त्रिनं गर्भे वारिकाय श्रीप्रतो देव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)

छन्द मालती-है गुण शाल गनी सरिता, अरनाथ मना जननी सुख खानी ।

मिश्रा नाम प्रसिद्ध जगतमें, सेव करत देवी हरखानी ॥

सुक्ति होनको यज्ञ धारत है, सत्यक रत्नअथ पहचानी ।

काशुनका सित तीज दिवा अर, गर्भं बरे जजि हों महरानी ॥

ॐ ही कालगुणशुक्ल तृतीयाथां श्री अरनाथं गर्भे वारिकाय श्री मित्रादेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)

दोहा-चैत्र शुक्ल पञ्चिमा वसे, महिनाथ जिनक्षेप । प्रजावतीके गर्भमें, जजूं मात कर सेव ॥

ॐ ही चैत्रशुक्ल एतं श्री महिनाथं गर्भे वारिकाय श्री प्रजापतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)

अडिह-आवण वदि दुतिया दिन, सुव्रतिनाथ जू, इयासा उरसैं दसे ज्ञान अथ लायजू ।

ता माताके चरणरुचल पूजें लढा, मंगल होय महान बिघ्न जाधैं विदा ॥

ॐ ही आवणकृष्णा द्वितीयाया श्री मुनिसुव्रतजिनं गर्भे वारिकाय इयामादेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)

सोम्या-नदिनाथ अगवाअ, बिपुला साया उर वसे । कार वदी कुज जान, ता देवी पूजूं सुदा ॥

ॐ ही अश्विन कृष्ण द्वितीयायां श्रीतमिनाथं गर्भे वारिकाय विपुलादेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)

मालती-कार्तिक मास सुदो वठिके दिन, श्री जिन नेम प्रमू सुखकारी ।

मात शिवाके गभ पवारे, सुदित अए जगके नरनारी ॥

धन्य मात शिव-पथ अनुगामी, मोक्ष नगरकी है अधिकारी ।

पूजें द्रव्य आठ शुभ लैके, मिटग कालिमा कर्म अपारी ॥

ॐ हों कार्तिक शुक्ल पण्ड्यां श्रीने मजिनं गम धारिकाय त्रिवादेव्यै भव निर्णामीति साक्षा । (२२)

बालीछन्द-त्रैशाख बर्दा तुज जाना, श्रीपार्श्वनाथ भगवाना । वामादेवी उर आप, पूजत हस आब लगाए ॥

ॐ हों वैशाख कृष्णा द्वितीयायां श्रीगार्धजिन गर्भ धारिकाय वामादेव्यै अर्धं निर्णामीति साक्षा । (२३)

छन्दमालती-मास अषाढ सुदी छठिके दिन, श्री जिन वीर प्रभु गुणधारी ।

त्रिशला माता गर्भ पधारे, सफल लोडको मंगलकारी ॥

मोक्षमहलकी है अधिकारी, ज्ञान सुयाकी भोगनहारी ।

जजूं मानके चरण युगलको, डरुं विघ्न होऊं अधिकारी ॥

ॐ हों वाषाढ शुक्ल पध्यां श्री गौ प्रभु गर्भ धारिकाय श्री त्रिवलादेव्यै अत्र निर्णामीति साक्षा । (२४)

जयमाल ।

छन्द श्रीगणी-धन्य हैं धन्य हैं मात जिननायकी, इन्द्र देवी करैं शक्ति आर्वां यकी ।

पूजि हों द्रव्य ले विघ्न लारे टरुं, गर्भ कल्याण पूजन सकल अघ दलें ॥ १

रूपकी खान हैं शीलकी खान हैं, धर्मकी खान हैं ज्ञानकी खान हैं ।

पुण्यकी खान हैं, सुखकी खान हैं, तीर्थजजनी महा शानिकी खान हैं ॥ २ ॥

मेइ विज्ञानसे आप पर जानतीं, जैन सिद्धानका मर्म पदधानती ।

आत्म-विज्ञानसे मोहको हानतीं, सत्य चारित्रसे सोझ पथ मानतीं ॥ ३ ॥

होग आहार नीहार नहिं धारतीं, धीर्ध असुपम महा देह विस्तारती ।

गर्भ तारण किये दुःख सब दालतीं, रूपको ज्ञानको वृद्धि कर डालतीं ॥ ४ ॥

मात चौधिस महामोक्ष अधिकारिणां, पुत्र जननीं जिनें मोक्षमें धारिणा ।

गर्भ कल्याणमें पूजते आपको, हो सकल यज्ञ यह छाड़ सन्नापको ॥ ५ ॥

बना त्रिपंगीछन्द-जय मंगलकारी मात हवारी बाधाहारो कर्धे हरो,

तुम गुण शुचिधारी हो अधिकारी, सम हस यम निज मांदि बरो ।

इस पूजे षोडशें संगल पाँचें, शक्ति बढ़ायेँ वृष पाके,

जिन यज्ञ मनोहर शान्त सुधाकर, सफल करैँ तब गुण गाके ॥

ॐ हीं चतुर्विधति जिन मातृभ्यः अर्धं निर्गमामीति स्वाहा ।

फिर इन्द्र व अन्य जो गन्धके पात्र नहां हों माना पिता वच खड़े हो विद्वमक्ति, चात्रिमक्ति व शक्तिमक्ति करेँ (जो पाठके अन्तमें हैं) और कायोर्वर्ष रूपमें १०८ देफेणमोकारमन्त्र जपकर मन्त्रापर पुष्प क्षेण करेँ तथा अन्य प्रतिमाओंपर जो प्रतिष्ठाके लिये हों पुष्प क्षेण करे—विषर्जन पठ इव सम्यकी पूजा समाप्त करेँ ।

(८) देवियोंका माताकी सेवा व प्रशोत्तर करतना—तीनरे पहर या रात्रिको जब तबपरा हो तब फिर मण्डप नरनारियोंसे भरा जावे । परदेके भीतर दूधरे चबूतरेपर इन भाति दर्शनीय रचना रची जावे—एक विद्यामनपर माता बैठो हा, मन्त्रा वल्लसे बकी पाममें विराजित हो । आठ कुमारिभा देविमें तरुद २ सेग कर रही हों, आठ मंगल द्रव्य एव और रखे हों, एक देवी तलपार लिये पड़े खड़ी हों, दा देविया दोनों आर चमक कर रही हों एक देवी पञ्जा लिये धारे २ पञ्जा का रही हो, एव अनादाय लिये हो, एक झूलोका गुल्दत्ता, एक पनीकी शारो, एक माताके चरण दाबनो हो । ऐसी दशामें परदा लठे । पढ़ले ही सूत्रक पाम यद्द वभालो कहि कि विष्णुमारिया माताकी सेवा कर रही हैं तथा तरुद २ के अक्षत करके माताको प्रणम कर रही हैं । जा पादा उठ जावे तय दो मिनट पछे दा चमर १ तलपार व २ पखेयाली इन चारो लोडकर शेष वार देविगो बापने द्वायकी वस्तु एक ओर रखकर बैठ जावेँ और नमनगर या कपनार मानासे प्रशोत्तर करे ।

प्रथ १-दाहा-अरल उच छाया स्वकिर, दृश नाब कया होय । कौन मनोहर अण मध, एव हाण्डर कया होय ॥
उत्तर-माता-मालकामन-मथति दोहा-माल वृक्ष यम और सुन, केश मणि सुख अंग ।

मालकामन वाक्यसे, उचय अर्पका अंग ॥

प्रथ (२)-कः सुपिजरेखें रंछे, कः निष्ठुरा बाणि । कः आघार जीनका, कः अत्रा सुत जाणि ॥

इव देहेका पूरा कीजिये ।

मावा उ०-सुकुः सुपिजरेखें रंछे, काक निष्ठुरा बाणि । कः अन्वार जीवका, सुक अस्तर सुग जाणि म

प्रथ (२)-कौन गर्भमें आपके, कौन नहीं तुह पाव । कौन हते सूखा मनुष उतरका अरावा ॥

उ० माता-तुक् अर्थात् पुत्र, सुक् अर्थात् शोक; रुक् अर्थात् रोग । दोहा-पुत्र द्वेषि सम गर्भमें, शोक नहीं सुस पाव ।

रोग, हते सूखा मनुष, यही बात है खास ॥

प्रथ (४)-दक्किर भोजन कौन है, गराराको जल पाव । कौन नाथ है आपका, उत्तर कीजे जान ॥

उत्तर-रूप, भूप, अर्थात्-कृत्रिकर भोजन बाल है, गहरा रूप बखान । मृत नाथ मेरा सही, देवी उत्तर जान ॥
 प्रश्न (५)-नाम जिनन्द्र यत्नानिये, हाथी लक्षण और । एक बाक्यमें अर्थ दो, कह दोजे बुधि खोल ॥
 उत्तर-सुखद अर्थात्-देवोंको बर देत है प्रसु सुखरव बखान । सुन्दर शब्द सुखानको, धारक नाग प्रमाण ॥

- प्रश्न (६)-तुमसी त्रिया कौन जग आन । उता-माता-तीर्थकर सुन जने मखान ।
 प्रश्न (७)-जगमें सुभट कौनसे माय । उता-जे नर जीते-विषय कषाय ।
 प्रश्न (८)-कौन कहावे कायर हीन । उता-इन्द्रीमद मेहन बल हीन ।
 प्रश्न (९)-कौन भतपुरुष नर भय धार । उत्तर-जो मांघ पुरुषारथ धार ।
 प्रश्न (१०)-कौन कापुरुष कहिये मम । उता-जो जठ माघ न जाने धर्म ।
 प्रश्न (११)-धिकर कश्चि मर्धग उत्तर-जे नर करें प्रतिष्ठा भङ्ग ।
 प्रश्न (१२)-कहे कौन नर नित्य पबित । उता-ब्रह्मवर्ध धरो दिङ्ग विस ।
 प्रश्न (१३)-कौन पशु मानुष आकार । उत्तर-जिनके हिरदे नाहि बिचार ।
 प्रश्न (१४)-यद्यि कौनसे उत्तर देख । उता-जैन सिद्धान्त सुनें नहिं जेह ।
 प्रश्न (१५)-मूढ नाम नर कैसे लहे । उता-जा द्वित सांघ वचन नहिं कहे ।
 प्रश्न (१६)-लम्बी सुना कौन कर हीन । उता-जिन पूजा सुनि दान न कीन ।
 प्रश्न (१७)-कौन पांगले पाष समेन । उता-जे भीरथ परसे न भयेन ।
 प्रश्न (१८)-कौन कुरूप जनन कहु पृह । उता-शाल शिंगार विना नर जेह ।
 प्रश्न (१९)-वेग कहा करिये बड़ राग । उता-दिशा ग्रहण जगतको र्पाण ।
 प्रश्न (२०)-जियको कौन शरण है माय । उता-पंच परम शुभ सखा सहाय ।
 प्रश्न (२१)-कौन तपस्वी भव-दुःख भरे । उता-आत्मम अनुभव बिन तप करे ।
 प्रश्न (२२)-जगमें कौन रतन है सार । उता-सम्पददर्शन रतन अपार ।
 प्रश्न (२३)-को बिन नर यह पशु समान । उता-बिधा बिन नर पशु समान ।
 प्रश्न (२४)-उता-कौन हते त्रय जग बश होय । उता-मोह हते त्रय जग बश होय ।
 प्रश्न (२५)-क्या बिन गृहधारी दुख पाय । उता-पैसे बिन नित ही दुख पाय ।

- प्रश्न (२६)-नाम पुरुष कैसे सफलप्राय । उत्तर-जो पुरुषप्राय करे धनप्राय ।
 प्रश्न (२७)-कौन पुत्र है सुनक समान । उत्तर-विद्या विनय हीन सुत जान ।
 प्रश्न (२८)-काफी व्यक्ति करे सुख होय । उत्तर-श्री जिनराज भक्ति सुख होय ।
 प्रश्न (२९)-कासे नर जग उन्नति करे । उत्तर-धृया समय नहिं खोबे करे ।
 प्रश्न (३०)-मात प्रथम क्या करिये माय । उत्तर-सामायिक शुभ ध्यान लगाय ।
 प्रश्न (३१)-कन्या कैसे स्मर गनाय । उत्तर-जो विद्या पढ़ विनय कराय ।
 प्रश्न (३२)-कौन समय कन्या घर जोग । उत्तर-जब युवति दृढ़ हो सुत जोग ।
 प्रश्न (३३)-कौन घर कन्या घर जोग । उत्तर-उद्योगी युवान दृढ़ योग ।
 प्रश्न (३४)-कौन नर ग्रह सुमति गहाय । उत्तर-मिष्ट बचन भावी सुखदाय ।
 प्रश्न (३५)-कौन काज उत्तम है माय । उत्तर-आत्म ध्यान परम सुखदाय ।
 प्रश्न (३६)-कौन कथासे पाप नशाय । उत्तर-धर्म कथासे पाप नशाय ।
 प्रश्न (३७)-को व्यवहार धर्म सुखदाय । उत्तर-धर्म अहिंसा जग सुखदाय ।
 प्रश्न (३८)-कौन धनी जगमें सुख प्राय । उत्तर-मन्तोषी दानी सुखदाय ।
 प्रश्न (३९)-कौन माय जगको बश करे । उत्तर-हितमिष्ट मिष्ट बचन उच्चरे ।
 प्रश्न (४०)-कौन उपाये मन बदलाय । उत्तर-हितमिष्ट धर्म उपदेश सुनाय ।
 प्रश्न (४१)-कौन भांति प्रय लोक जिताय । उत्तर-शुक्लध्यान जो धरै स्वभाय ।
 प्रश्न (४२)-कौन करे अचिरतिका नाश । उत्तर-सम दम सहित समय अभ्यास ।
 प्रश्न (४३)-कौन उत्तरे कर्मन भार । उत्तर-जो द्वादश तप करै लम्भार ।
 प्रश्न (४४)-कौन ग्रही मनमें सुख प्राय । उत्तर-न्याय मार्गें धन जो कमाय ।
 प्रश्न (४५)-मात कौन रोगी नई होय । उत्तर-जो विवेकसे भोगो होय ।
 प्रश्न (४६)-संकट समय कौन सहकार । उत्तर-धैर्य धर्म मत तत्पर विचार ।
 प्रश्न (४७)-मरण समय क्या करिये काम । उत्तर-समना भाव शान्त परिणाम ।
 प्रश्न (४८)-मित्र कौन है जग हितकार । उत्तर-जो कुमार्गसे लेय निकार ।

प्रथम (४९)-कष्टु कौन है मात बताय । उत्तर-वर्ष छुड़ाय कुपय ले जाय ।
 प्रथम (५०)-शरण कौनकी है सुखकार । उत्तर-आत्म निज तीर्थकर मार ।
 इसी तरह और भी उपयोगी प्रश्न का हो सकते हैं । पंछे पत्थिवाली जोरसे पत्था करे, पुण्यवाली कुछ सुनावे, अत्तावाली अत्तर सुवावे, व कपड़ोंमें लगावे, चक्कीवाली जोरसे चक्का करे । इतनमें राजे बाहर बनें । इसर जगसे पहण्डेकी ताद रतनकी बयां हो । यदि रत्न या धितारे या चांदी सोनेके कुछ रूप हो तो रगे हुए पंछे चावठ बायमें पिठाळे । दो मिनट तक नुव शर्वां हो तब पर लोम जयजयकार कर्हे । पश्च त् देवियां माताके घामने बड़ी हो सुति पढ़े—

चौथाई-जय मात परम अतिकारी, देखत हमको सुख है भारी
 तुम सेवार्ते पुण्य कमाया, अपना सुर भव सफल कराया ॥ १ ॥
 घन तीर्थकर तीर्थे प्रचारे, मिथयदृष्टी जीव उबारें ।
 आप तरें औनको तारे, धर्म जहाज जगम विस्तार ॥ २ ॥
 नितको जनने हाना माना, यार्ते जग उद्दारी प्राणा ।
 नीन लोक निरताजा माया, नमन करत तोरुं जगमाना ॥ ३ ॥
 तू है श्री जिन गृह सुखकारी, जिन तीर्थकर उरमें भारी ।
 यार्ते परम पूज्य सुखदाई, नमन करत पुन पुन हे माई ॥ ४ ॥
 तुम शिवगामी उचन नारी, जौलासूयण उत्तम भारी ।
 श्री जिनमात कृपा अय करिये, सेतक संव पायक हरिये ॥ ५ ॥
 इस तरह देवियां गाती र्हे, पादा गिर जावे । यहितक गर्भ-लगण ककी विधि पूर्ण हुई ।



अध्याय चौथा ।

जन्मब्रह्मण्याणकम् ।

गर्भकल्याणकसे दूबरे दिन भवेरे जन्मकल्याणककी क्रिया करानी उचित है ।

(१) प्रसुता जन्म होना व इन्द्रका ज्ञाना—बड़े बचेर ही सब लगेको आमरण किया जावे, टिकटों द्वारा मंडपमें बैठे । प्रतिष्ठाके पात्र रात्र ही बैठेके निकट आवे । खास कर आचार्य व इन्द्र तथा पिता आक्षर गर्भकल्याणकमें कही हुई विधिक अनुष्ठान जैसा न० (५) में कहा है अगबुद्धि, व एकलीकरण करे, अमरक्षा करे व अभियेक करके नित्यपूजा व सिद्धपूजा करे । फिर उन्नी प्रमाण तीनों कुण्डोंमें होम उषी तगह कहे हुए प्रमाण हो जावे । यह सब काम हो चुकनेपर फिर अगेकी क्रिया बताते हैं ।

अति प्रातःकालसे यह काम शुरू हूा क्योंकि जबतक जन्मकल्याणक पूर्ण न हो तबतक सब पात्रोंको व दर्शकोंको यथाशक्ति भोजन न करना योग्य है । तब सब इन्द्र इन्द्राणी बहासे चले जावें, आचार्य व माता पिता आदि रहें । आगे पादा पड़ जावे । परदेके भीतर सिद्धासनपर माता बंठी हो, पादमें प्रतिमा ब्रह्मित मन्त्रा विराजमान हो व आठ मंगलद्रव्य रखे हो व आठो देविषा सेवामें हाजिर हो । ऐसा प्रबन्ध किया जावे कि बाहर खूब बाजे बजे, घण्टा बडियालमें नजनेका प्रबन्ध हो तथा बाहर इन्द्र अपनी सेना तैयार करे । भवनवासीके दृष्ट, अन्तरके आठ, कल्पयासीके बाहर व ज्योतिषीके एक ऐसे कुल इन्द्र ३१ है । ३१ सब इन्द्र जखर बने जो शुद्ध धोती दुपट्टा पीछा पहने हों, मुकुट लगाए हों । यदि ३१ प्रत्येन्द्र और हो सके तो वे भी वन जावें । २७ इन्द्रोंके व प्रत्येन्द्रोंके मुकुटोंपर सबके जातिवाचक नाम अंकित हो सके तो बराए जावें । इनका प्रयोजन ऐसा कि दर्शकोंका शोभनिक विदित हो । वे नाम ऐसे रहें—(१) असुरेन्द्र (२) नागेन्द्र (३) विद्युतेन्द्र (४) छुपणेंद्र (५) अग्नेन्द्र (६) वातेन्द्र (७) स्तनितेन्द्र (८) उदधीन्द्र (९) द्वीपेन्द्र (१०) दिगिन्द्र (११) किजरेन्द्र (१२) कि पुरुषेन्द्र (१३) महारगेन्द्र (१४) गन्वर्नेन्द्र (१५) यक्षेन्द्र (१६) राक्षसेन्द्र (१७) भूरेन्द्र (१८) पिशाचेन्द्र (१९) चन्द्रेन्द्र (२०) सौवर्णेन्द्र (२१) ईशानेन्द्र (२२) शान्तिकुमारेन्द्र (२३) माहेन्द्रेन्द्र (२४) ब्रह्मेन्द्र (२५) ज्ञान्तिकेन्द्र (२६) शुक्रेन्द्र (२७) शनारेन्द्र (२८) आलतेन्द्र (२९) प्राणतेन्द्र (३०) आरणेन्द्र (३१) अच्युतेन्द्र । यदि प्रत्येन्द्र बने ता इन्द्रके स्थानमें हरेन्द्रके आगे प्रत्येन्द्र जोड़ा जावे जैसे असुर प्रत्येन्द्र, चन्द्रका प्रत्येन्द्र स्वर्य है ।

ऐरावत हाथीके समान हाथीपर इद्राणी ब्रह्मित सौधर्म, ईशान, वनतकुमार, माहेन्द्र ये चार इन्द्र बैठे हों । अन्य इन्द्र दूबरे बाहनोपर बैठ सकते हैं, जैसे घोड़े बैल आदि पर सब सजे हुए हों । इन्द्रकी सेना ७ प्रकारकी होती है—हाथी, घोड़े, रथ, गंधर्व, नृत्य-कारिणी, अम्भराण, गंधर्व और वृषभ । यथाश्मभय ये नामान एकत्र किया जाय । मण्डपकी कुल दूरीसे यह सुलभ निकल चुके व बाजे गाजेके साथ मण्डपकी तरफ आ रहा हो, साथमें नरनागी भी हों, इधर मण्डपमें दूबरे चकूतरे पर नित्य पूजा व होमके पछे जत्र परदेके भीतर सब सामान एकत्र हो जावे और बाजे बजते हों, घण्टा बडियाल बजते हों और ध्वज पात्र अपने २ हाथोंमें पुष्प ले लेवे, तथा भगवानके विराजमान करनेका एक भद्रासन ऊंचा विराजमान हो जहासे भगवान सबको दीख सकें । इध आसनको नीचे लिखा

मन्त्र पढ़ पवित्र करें। “ॐ हा हीं ह्रूं हः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रजकेन श्री पंठप्रक्षालन इरोमि स्वाहा” जल्के छोटि देखे। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ तत्र पर श्री लिखे—“ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं श्लेखन करोमि स्वाहा” अब परदा उठावा जावे तत्र यकायक आचार्य कायोविधर्म ध्यान कर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ प्रतिमाकी भद्रापन पर विराजमान करे।

“ॐ ह्रीं त्रलोक्योद्धारणधीर जिनेन्द्र मद्रापने उववेशयामि स्वाहा।” इह समय षट् नरनारी चारों तरफ जय जय नद नद शब्द कहें व खुस बाजे बजें। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुष्प प्रतिमा पर क्षेपे। “ॐ हां हीं ह्रूं ह्रीं श्रीं विद्वचक्राधिपत्ये अष्टगुणसमृदाय फट् स्वाहा” तथा यदि और प्रतिमा प्रतिष्ठाकी हों तो उनपर भी क्षेपण करें। फिर आचार्य नीचेके श्लोक पढ़ें—
देव त्वरय्य जाते त्रिभुवनमखिलं नाथ जातं सनाथं।

जातो सूर्तीय धर्मः कुब्जतबहुतमो ध्वस्तमथैव जातम् ॥
स्वर्भोक्षद्वारः कृपाटं फुटमिह निगृहं नाथ पुण्याहमासी।

जातं लोकप्रचक्षुर्ध्रैव जय भगवत्जीव गर्धरश्च नंद ॥ ७ ॥
तथा भाषामें स्तुति पढ़ें।

चौपाई-धन्य नाथ तुम आज प्रकाशे। तीन भवन जन अब हुआसे ॥
धर्म तीर्थ मानो उपजाया। कुमति मार्गीका ध्वंश कराया ॥
भोक्ष द्वार पट अब उघड़ाए। जीबो बघोरि नाथ स्वमाए ॥

इतना पढ़ फिर मूल प्रतिमापर व अन्य पर पुष्प क्षेपे। इधर मगल पाठ पढ़ा जाता हो कि इन्द्रकी सेना आकर पहुँचे तथा मण्डपकी तीन प्रदक्षिणा देखे। सर्व चमाल बाहर खड़ा हो—(जो इन्द्र बने हों उनको विशेष टिकट दिया जावे) बिना टिकट कोई भीतर प्रवेश न कर सके। तब इन्द्र इन्द्राणी हाथीसे उतरे और इन्द्र इन्द्राणीसे कहे—

दोहा-देवी जाहु मसूति घर, लाधो तीर्थ कुमार। माता कष्ट न होय कछु, राखो यही विचार।
मात्र इन्द्राणी भीतर चबूतरेपर आवे, इन्द्र बाहर रहे। प्रतिमाजीके पाप उच समय माता हो व देविया हों व आचार्य हो तथा और कोई न हो। इन्द्राणी विनय प्रहित जाकर पहले कुल देर तीर्थकर व माताका दर्शन करे फिर तीर्थकारकी मूर्तिकी व माताकी तीन प्रदक्षिणा देकर पहले मूर्तिको नमस्कार करे फिर बापने खड़ी होकर स्तुति पढ़े।
चौपाई-धन धन मात परम सुखकारी, तीन लोक जननी हितकारी।

मंगलकारी पुण्यवती तू, पुत्रवती शुचि ज्ञानमनी तू ॥

तब दर्शनते हम सुख पाए, हर्ष हृदयमें नाहिं समाए ।

घन्य जन्म माता हम जाना, देख तुझे अर श्री भगवाना ॥

॥ ९७ ॥

रुति कारनेके पीछे कुछ देर विनयसे खड़ी रहे । इतनेमें माताको नींदभी आजावि तज एक चारियलको फपड़ेसे ढका हुआ जो बधा रक्खा है पहलेसे ही उभको उब भद्रासनपर रखकर और भगवानको दोनों हाथोंसे उठाके और नार २ देखतार प्रपन्न हो और अपना मस्तक नमावे, तब आठौं देविया आठ मंगल द्रव्य हाथमें लेकर आगे २ चले—(मंगल द्रव्य—छत्र, ध्वजा, कलश, चमर, ठोथा (सुप्रतिष्ठ), भारी, दर्पण, पखा (ताड़का) । माता बड़ी विनयसे भगवानको ले जा रही हैं, जब नमारी खड़े हो जाते हैं और चादी मोनेके पुष्प या रंगे हुए चावलकी वृष्टि प्रभुपर करते हैं जो नगरारियोंको अपने पाँच पहलेस रखने चाहिये । मण्डपके बाहर प्रभ इन्द्रोके आगे बीवर्षे इन्द्र राह देख रहा है । इन्द्राणी जाकर इन्द्रके दोनों हाथोंकी हथेलीपर भगवानको विगामान कर देती है, तब इन्द्र बड़े भावसे भगवा-नका स्वरूप देखता है । जिन समय इन्द्राणी प्रतिभाजीको ले जावि उब समय धाचार्य अन्य प्रतिष्ठायोग्य मतिथीपर भी पुष्प क्षेपण करे । फिर इन्द्र नीचे प्रकार रति पठता है, बब समाज रुप है । मण्डपसे नरनारी भी धीरे २ आ जाते हैं और जलधर्म शरीक होजाते हैं ।

पद्मही छन्द—तुम जगग ज्योति तुम जगत ईश, तुम जगत गुरु जग जगत शीस ॥

तुम केवलज्ञान प्रकाशकार, तुम ही सूरज तप्त मोहरार ।
 तुम देखे मन्थ कमल कुन्दाय, अब अमर तुरत तर्से पलाय ॥ १ ॥
 जय महा गुरु जय विश्वज्ञान, जय गुणसमुद्र करुणालिधाज ॥ २ ॥
 जो चरण कमल माथे धराय, बह मन्थ तुरत सद्ज्ञान पाय ।
 हे नाथ ! मुक्ति लक्ष्मी आधार, तुम्हको देखत है प्रेम धार ॥ ३ ॥
 कुलकुन्थ भए हम दर्श पाय, हम हर्ष नहीं चित्तमें सभाय ।
 हम जन्म सफल मानो आधार, तुम्हको परशो हे अब उचार ॥ ४ ॥

इस तरह श्रुति पढ़के मस्तक नमावि तब गर्भ इन्द्रादिक देव जय जय शब्द करे थ मस्तक नमावे, तब इद्र उच्च स्वरसे आह्ला करे, हाथ ऊँचा कर कहे—“हे देवगणों ! श्री तीर्थंकर महाराजकी भक्तिमें आनन्द मनाते हुए, जय जयकार शब्द कहते हुए, मंगल गीत गाते हुए, भगवानके गुणोंमें अट्टरागी होते हुए, भाव क्रम व नियमसे चलते हुए शीघ्र ही सुमेरु पर्वतपर पधारो और क्षीरसागरके पवित्र जलसे प्रभुका पाण्डुक शिलापर अभिषेक करके अपने जन्मको सुचारो ।” इतना कह इद्र इन्द्राणी ऐरावत हाथीपर चढ़ जाते हैं । भगवान् बीवर्षे इन्द्रकी गोदमें हैं, ईशान इद्र पीछे बैठे छत्र धरफेद किये हुए हैं । जनतकुमार और माहेन्द्र इद्र दोनों ओर खड़े होकर चमर ढार रहे हैं । इब तरह जलधर्म नियमके साथ १ घण्टेके भीतर सुमेरु पर्वतपर पहुच जावे ।

(२) सुमेरु पर्वतकी, क्षीर समुद्रकी तथा मंडपकी रचना—सुहृद मंडपसे उत्तरदिशाकी ओर किसी एकान्त स्थानमें जो पवित्र हो, सुमेरु पर्वत बनाया जावे। जो तीन कटनीदार सुन्दर हो उसको सुवर्णमई पीतरगसे पोता जावे। ऊपर जानेके लिये दो तरफ सीढियाँ हों। ऊपर बीचमें ऐसा एक गड्ढा किया जावे कि भगवानके नद्वयनका जल भीतरसे जाकर जमीनके भीतर ही चला जावे, ऊपरसे गिरकर वहे नहीं कि पैरोंमें आवे। सबके ऊपर पाहृक्कशिखा अर्धचन्द्राकार बनाई जावे जो षफेद रगसे पुती हो, स्फटिकके समान चमकती हो। इसके ऊपर कमलाकार बिहारसन बने जो पीतरगका हो। उसके इधर उधर इन्द्रोंके तबड़े होनेके दो कुल लुचे आपन हो जो बिहारसनसे नीचे हों। सीढियोंको छोड़कर कटनीके षड तरफ छोटे २ वृक्षोंके नादे सुन्दरनाके लिये रखे जायें ३ १६ मदिरीके स्थानमें १६ मदिरीके आकार ४ नीचे भूमिपर चारों ओर, चार चार चारों ओर तीन कटनीके वहा बना दिये जायें। यह त्रिविन् रगोंसे पुते हुए हों जिससे प्रगत हो कि मेरुके चारों बनोंमें १६ मदिरी हें। इध पर्वतसे इतनी दूर तिनती दूर दो पत्तियोंसे इन्द्र या देव खड़े होकर हाथोहाथ कलश लावके, एक नहर क्षीरमुद्रके स्थापनमें बनाई जावे, तिसमें नद्वयन होनेके पहले शुद्ध दूधसे मित्रा हुआ पानी भर दिया जावे जिसमें लहरे आती हों ३ पानों दूध समान तीखे। धृगके बचाव यादिके निमित्त मण्डप ऊपर छा दिया जावे ताकि षड समूह मण्डपके भीतर आजावे। पर्वत भी उसीके नीचे रहे। १०८ कलश १ १ कलश गन्धोदकका ऐसे १०९, गुर्ण, चारी या अन्य घातुके एकसे तैयार रहें। यदि घातुके न हों तो मिट्टीके ही लिये जावें। ये षड षडश सोत्तर उभ नहरके दो तरफ ५४, ५४ रख दिये जावें, उनमें घाथिया किया जावे, ढकनेको कलका पुष्प हो या कोई पत्ता हो या नारियल हो या सुन्दर रत्नो हों। कलशोंके स्थापनके समय “ॐ ह्रीं सरस्यै कलशस्थापन करोमि स्वाहा।” यह मंत्र पढ़े। गन्धोदकके कलशमें चन्दन, केसर, अगर आदि सुगन्धित द्रव्योंसे मित्रा हुआ जल भरा जावे। ये १०८ कलश खाली रखे रहें। घामप्रो तैयार की जावे तथा एक संज्ञो को हां या तल-तपर २४ कोठोंका मण्डल तैयार किया जावे। भगवानके पहुचनेके पहले ही आचार्य ‘नीरजसे नम’ इध मंत्रसे षड भूमिको शुद्ध कर आवे। यहापर दर्शकोंके बैठनेका स्थान नियत किया जावे। पूजा ३ अभिषेकका स्थान अलग २ किया जावे। पर्वतसे नहर तरफका मार्ग जानेका बाफ रक्खा जावे। बैठनेवाले इधसे हटकर बैठे। चारों तरफ पर्वतके कुल भूमि छोड़कर दर्शक बैठें।

(३) तीर्थकर भगवानका अभिषेक—अभिषेकके समय आठ दिक्पाठ—अग्नि, यम, नैऋत्य, वरुण, पवन, रुवेर, ईशान और धरणेंद्र आठ दिशाओंमें सुन्दर लड़ी लिये हुए मण्डपमें खड़े रहें, इन पर भी मुकुट हो। ऐगद्यत हाथी चढित सर्व समूह पहले इध पर्वतकी तीन प्रदक्षिणा देखे। जिव बिहारसन पर भगवान विराजमान होंगे तबको नाचे लिये मंत्रसे जलके छंटे देकर पवित्र करे।

“ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रू ह्रीं ह्र नमो ह्रैते भगवते श्रीमते पवित्रजलेन पीठप्रच्छालन करोमि स्वाहा।” फिर तबपर नाचे लिखा मंत्र पठ श्री लिखें। “ॐ ह्रीं श्रीं अहं श्रीलेखन करोमि स्वाहा।” तीन प्रदक्षिणा देनेके पीछे श्री भगवानको हाथोसे उतार कर इद्र नीचे लिखा मंत्र पठ कर बिहारसन पर विराजमान करे, षड जय जय शब्द कहें।

“ॐ ह्रीं ह्रै श्रीं बर्मतीर्थायिनायभगवन्निहपांडुकशिलापंठे तिष्ठ तित्थिति स्वाहा।” फिर नाचे लिखा मंत्र पढ़ प्रतिमाको स्पर्श करे।

ॐ उग्रहाय दिव्यदेहाय सज्जोजादाय महत्पण्णाय अणतचतुष्टयाय परमसुहृदैष्ट्याय णिमलाय प्रयमुषे अजरारपरमपदपत्ताय परमपदाय मम इत्यवि षण्णिदिदाय स्वाहा । फिर शीवर्म व ईशान इन्द्र प्रतिमाके दोनों तरफ खड़े हो जाँव और ऊपर कोई न रहे, आचार्य भी नीचे आ जावे । क्षीर समुद्र तक दोनों ओर पक्तित्रन्ध सीढीसे लेकर इन्द्रगण एक एक इतनेर दूर खड़े हों कि कलशको हाथोहाथ दे सके । नहरके पाच ५४-५४ कलश रखें हों, एक एक कलश भरके व टकके एकर दूबरेको देता जावे । कलश दोनों इन्द्रोंके हाथमें थावे तब मगलीक मनोहर वाचे बजने लगे, लिया मगल पढ़ने लगे । जय जय शब्द होवे । ऊँचा हाथ करके शीवर्म व ईशान इन्द्र न्हयन करे । न्हयनका जल नीचे न थावे, पिरापनसे नीचे जाकर मेरुके भीतर चला जावे । एक दो वर्तन पात्र रख दिये जावे । जो भरते जाँव । न्हयन शुरू करनेके पहले आचार्य नीचे खड़े हुए यह मन्त्र पढ़े—

“ॐ क्षीरसमुद्रारिपुरितेन मणिमयमगलऋजोऽन भगवदहर्त्त प्रतिकृति स्थापयामः ॐ श्रीं ह्रीं व म ह्र स त प ह्रीं र्शीं ह्र वः नमोर्हिते स्वाहा ।” यह मन्त्र बराबर पढ़ना रहे जब तक १०८ कलशका न्हयन न हो जावे । दोनों इन्द्र बराबर न्हयन कराके एक एक भाई नीचेकी कटनीपर दोनों ओर खड़ा रहे जो खाली कलशोंको इन्द्रोंके हाथसे लेकर न चले रखाता जावे । उधीको वह नारिगल व टकना भी इन्द्र न्हयन करनेके पहले दे दे-जितने इन्द्र पक्ति बाधकर गहर तक खड़े हों । जब वहाँके सन कलश उठाकर एक एक ही हारएन्के हाथमें रख जावे तब शीवर्म ईशान इन्द्र नाचे आ जावें और नारी वारीसे एकर इन्द्र चढकर स्नान करावे और नीचे आ जावे । इस तरह १०८ कलशका स्नान पूर्ण हो जावे । जिन समय बड़े धूमायनमें वृत्र भो खेरे जाती हो जिनकी सुगन्ध वन और फैले । फिर शीवर्म इन्द्र ऊपर जाता है और गन्दोदकके कलशसे अभिषेक करना है । उद्य समय आचार्य वही मन्त्र पढ़ते है परन्तु “क्षीरत्समुद्रवारिपरिपूरितेन” के स्थानमें गन्धोदकपुरितेन इतना बदल देते है । फिर इन्द्र भगवानके ऊपर खच्छ स्नानकी धारा डालता है तब गतिपाठ सब ईद्र पढ़ते है—

दोषकृत्सन्-शान्तिजिनं श्रुतिनिर्भलसक्त्वं श्रीलशुणव्रत्संघमपात्रम् । अष्टशताच्चिन्मलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तमस्तु जनेत्रम् ॥

पञ्चमशीरिस्तचक्रपराणां पुजितसिन्द्रनरेन्द्रगणेश्व । शान्तिकं गणशान्तिवसुभीषुः पौड्यतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥

दिव्यतरुः सुप्रपुष्टवृष्टिदुन्दुभिनहन्योजनयोषी । आलापनारणचाभयुग्मे यस्य विभ्रति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥

ते जगद्विचिन्थान्विजिनेन्द्र शान्तिकं शिरसा प्रणमामि । सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मन्त्रमं पठते परमां च ॥४॥

नसन्तलिका—येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहारस्तैः, यक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्मैः ।

ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपारतीयैः रुपाः सततशान्तिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥

ऋद्रवजा-संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यरूपोधनानाम् ।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥

तारावृत्तम्—क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः ।

काले काले च सम्यग्दर्पतु अथवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां, मासभ्रूलीधलोकै ।

जेनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप—प्रध्वस्तवातिरुर्जाणः केवलज्ञानभारकराः कुर्वन्तु जगत्: शान्तिं धृषमायाः त्रिनेश्वराः ॥ ८ ॥

किं नीचे त्रिडा श्लोक आचार्य पढ़े ।

“यो नैर्मत्पयुगादिभृषिगन्तुर्दीप्त्या यलेनोर्जना । युक्तश्चालपत्रयकायुगनिर्गं मन्त्रश्च सुक्तिश्रिया ॥

नार्यसास्य जगत्प्रभो स्वगतः किं त्वापुमेवानुगुणा । निद्राशंरभिमिक्त एव भगवान्पात्रदपागालिङ्गः ।

शान्तिं च शान्तिं विजयं विवृतिं तुष्टिं च पुष्टिं -दलस्य जन्तो ।

दीर्घायुर्गन्धमनीष्टसिद्धिं कुयाञ्जिनस्तानजलप्रपादः ।

यह मंत्र पढ़कर मस्तकपर लगाने ।

निर्मलं निर्मलं तरणं पापनं पापनाशनं, जिनगन्धोदकं वन्दे, अष्टकर्मविनाशान्म् ॥

अथवा नीचेका श्लोक पढ गन्धोदक लगावे ।

वातिनामविधा, त्वा विपुलश्रीः वयस्योनिषो । देवस्यास्य पवित्रगामकलनाहसूलं शिबिं अगलं ।

कुर्वाद् अथ अर्धादिवाचनसं ह्रसोश्चन्द्रसोफर- प्रोषद्वर्मलक्षामिधर्मनमिडं तद्गुण्यगन्धोदकम् ॥ ७ ॥

किं नीचे श्लोकोंमें गन्धोदक लगा जाय । दो रखाप प्राशुक जलसे धरे हो । एक गन्धोदक धरक पानीका रसाय क्रियोमें किती अन्धा द्वारा व ? गन्धोदक व ? गनीका खाव पुरुषोंमें किती पुरुष द्वारा येना जावे । ऊपरसे योदावा गन्धोदक लेकर नीचे आचार्य श्रादि हव इन्द्र पूजाके पात्र लगाकर जन्म भक्त करे । इन्द्र नीचे आचार्य और इन्द्राणी जाकर पण्डे भगवानके अगमें देशर चन्दनका लेप करे, मस्तकमें मुकुट धारे, निळक लगवे, कर्णोंमें तुण्डड, गलेमें शार, मुतामं बालूस्व, हाथोंमें मंडे, जपाने मन्वनी, कर्णोंमें मृदुल, शुद्ध सुन्दर वती व कण्ठे पढ़नावे । पढ़ते ही एत देवी इन वलाभूर्गोको द्विये रूप इन्द्राणोने पाए पढ़वे । अन्य हव इन्द्रादि कत नावे । इन्द्राणी भी नीचे आचार्यमें-वैठ जावे, मात्र प्रोवर्म इन्द्र बड़े हीका नीचेकी म्बुनि पढ़े—

स्तुति ।

स्वं देव ! शीतरागोऽसि नार्थः स्ताननिवृत्ते । तथापि अस्तिवशागः सग्रीमि कनिचिरपदैः ॥ ७७४ ॥

मङ्गलं शरण लोकोत्तमीऽहं जिनराज जिनः । सिद्ध आचार्यनमस्सुख्यः साधुः साधुनितामहः ॥ ७७५ ॥

पाप्यः पापहरोऽधीशो निःकषाधो गुणाग्रणी । पावनं परमं उद्योतिः परमेष्टी सनातनः ॥ ७७६ ॥
 अन्वक्तो वद्यक्तमूर्तिसमस्यलक्षयो लक्षणातिगः । सुलक्ष्म्यो लक्षणज्ञेय पापशत्रुकदारधीः ॥ ७७७ ॥
 प्रणोनाथः प्रमाणात्मा सुनयो नयतन्वचित् । प्रणधिः प्रणयो नाथो ज्ञानदर्शननायकः ॥ ७७८ ॥
 पुराणपुरुषोऽहायरूपो रूपान्तिगो सहान् । कासहा कसनो कान्धः कासगामी क्लान्निधिः ॥ ७७९ ॥
 अन्नः कासयित्वा कान्तः कान्तनातीकामुकः । कालुष्यहंता कामारि कोपावेशहरो हरः ॥ ७८० ॥
 म्बधंश्रुर्विचिरुस्साहघीरः सुकृतभावनः । स्रष्टा भूतपतिः साक्षी त्रैलोक्यपरमेश्वरः ॥ ७८१ ॥
 प्रभृष्टुणरधिदेवान्ता विश्वराड् विश्वतोमुखः । विश्वयोनिर्जिष्णुरीशः संचदः पुण्यनायकः ॥ ७८२ ॥
 धर्मावुवासे धर्मज्ञो वेदविद् वदगांधार । भव्यमानुसंख्येष्टस्यं चि ब्रह्मपदेश्वरः ॥ ७८३ ॥
 भृष्टुः स्थिरतरः रथाणुमचलो विमलो विभुः । महीयान् जातिस्त्रकारः कृतकृत्यो भरस्पतिः ॥ ७८४ ॥
 धारमी पाचस्पतिः प्राज्ञो गुणरत्नाकरो निधिः । शास्ता सर्वज्ञ ईशानः आशः सर्वत्रलोचनः ॥ ७८५ ॥
 कूटस्थो निर्विकारोऽस्तिनास्त्रबाह्यगिरांपतिः । स्याद्वादनयको नेता मोक्षमर्गोपदेशकः ॥ ७८६ ॥
 निरीहः सुगतो भास्वान् लोकालोकविभाषसुः । अनन्तगुणरंपुत्रयो नित्यमज्ञोऽसि विश्वराड् ॥ ७८७ ॥
 एवमष्टोत्तरशां नाम्नां पालु मां अबलम्बनात् । मोचय स्यात्समसंभृतिं देहि देहि महेश्वर ॥ ७८८ ॥

फिर भाषामें स्तुति पढ़े—

पढ़री छन्द—जग वीतराग हत राग दोष, राषत दर्शन क्षाधिक अदोष ।

तुम पाप हरण हो निःकषाध, पावन परमेष्टी गुण निकाय ॥ १ ॥

तुम नय प्रमाण ज्ञाता अज्ञोष, श्रुतज्ञान सकल जानो विशेष ।

तुम अयधिज्ञान धारी विशाल, मति ज्ञान धरण सुखकर कृपाल ॥ २ ॥

तुम काम रहित हो काम जील, तुम विद्यानिधि हो कर्म जीत ।

तुम शांत स्यभाधी स्वयं बुद्ध, तुम कृष्णानिधि धर्मी अक्रुद्ध ॥ ३ ॥

तुम बदतांशर कृतकृत ईश, बाह्यस्पति गुणनिधि गिरा ईश ।

तुम मोक्षमार्गी उपदेशकार, महिमा तुमरी को लहे पार ॥ ४ ॥

देहा—नाम लिये श्रुतिके किये, पातक सर्व पलाय । मंगल होवे लोकमें, स्यात्समभृति प्रगटाय ॥

फिा इन्द्र मण्डलकी पूजा करे । पहले नीचे प्रमाण करे—

यस्योदारदयस्य जन्महरतो, जन्माभिवेकोत्सवं । चारी मेरुमहीधरस्य शिखरे दुर्गवैस्तुदुग्धोदवेः ॥
 चक्रे शक्रगणो महागुणनिधेः श्रीपादपद्मद्वयं । तस्यैकादशधा महेन महतसाराधयमाराराधये ॥८॥
 ॐ ह्रीं श्रीरिषमजिनेन्द्र अत्रावतर २ स्रवौषट् आह्वानम् । अत्र मम वनिहितो भवभव यषट् वनिधिकरणम् ।
 यत्रगाधविशालनिर्मलगुणे लोकत्रयं सर्वदा । सालोकं प्रतिविवितां प्रविशतां हिस्यमृतानन्दनम् ॥
 सर्वाब्जानिमिषारसपद्मं स्तुतिगतं तापापहं धीमता-महत्तीर्थमपूर्वमक्षयस्त्रिहं पार्धारथा धारये ॥ १ ॥
 ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तानन्तज्ञानशक्तये जलं निर्वापीति स्वाहा ॥
 गन्धश्चन्दगन्धश्च-धुरतरौ यद्विषयेदोद्भवौ, गन्धर्वाद्यमरसुतो विजयते गन्धातरं दर्शनम् ।
 गन्धादीनिखिलानवैति पित्राहं गन्धादिसुक्तोऽपि य-सं गन्धाद्यगन्धसञ्जाजहतये गन्धेन संपूजये ॥

ॐ ह्रीं परमपद्मजमौगन्धयन्धुगय गन्धं निर्वापीति स्वाहा ।
 इन्द्राहीन्द्रमसचितैरुपमैर्ह्रिद्वैर्बलक्षय्यतैः, यस्य श्री पदसन्नखेन्दुपविधे गङ्गाजालाधितम् ।
 ज्ञानं यस्य राजस्रसक्षतमश्रुद्धीर्थं सुखं दर्शनम्, चाभ्यस्यक्षमस्मरपदे जिनमिभं सूक्ष्माक्षतैरक्षतैः ॥
 ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे गणपतलपदाय अक्षतं निर्वापीति स्वाहा ।
 यस्य ह्रदस्योजने सदसि जद्गन्धाभिः स्वोपसा-नप्यर्पान्मुपनोगणान्मुपनसो वपति विश्ववसदा ।
 यः सिद्धिं सुमनः सुखं सुमनसा सं ध्यायतामावाह-सं देवं सुमनोऽखैश्च सुमनोभेदः समभ्यर्चये ॥
 ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे समनःसुखमदाय पुण्यं निर्वापीति स्वाहा ।

यद्वाधाधविचजित निरुपसं स्याद्योऽन्यत्सूचितं, नित्यानन्दसुखेन तेन लभते यस्तुसिवात्यंतिकीम् ।
 यं चाराधय सुभाशिनो ननु सुधास्वाहं लभंते चिरम्, तस्योद्यद्दसचारुणैश्च ब्रह्मणा श्रीपादसाराधये ॥
 ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तानन्तसुखंस्वताय चकं निर्वापीति स्वाहा ।
 स्वस्थान्यस्य सहस्रकाशान्विधौ दीपोपयोऽप्यन्यवहं, यः सर्वं उबलघनन्तकिरणैस्त्रिलोक्यदीपोस्तयतः ।
 येनोद्दीपितधर्मतीर्थमद्यत्सत्यं विभोस्तस्य स्व-दीप्यादीपितदिडसुखस्य चरणौ दीपैः समुदीपये ॥
 ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तदर्शनाय दीपं निर्वापीति स्वाहा ।

येनेदं सुवनत्रयं चिरमश्रुदुद्रूपित सोप्यहो, मोहो येन सुधूपितो निजमहोध्यानाग्निना निर्दयम् ।

पदं धूपये ॥

यस्यास्थानपदस्थधूपघटजैधूमज्जगद्धूपितम्, धूपैस्तस्य जगद्धशीकरणसद्रूपैः पदं धूपये ॥
 ॐ ह्रीं पामत्राणो वसोक्तत्रलोकनाथाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

यत्प्रत्यया फलदायि पुण्यसुखित पुण्यं न चं यध्यते, पापं नैव फलप्रदं किमपि नो पापं न चं प्राप्यते ॥
 आर्तुन्त्यं फलप्रदसुखं शिवसुखं नित्यं फलं लभ्यते, पादौ तस्य फलोत्पत्तादिमुफलैः अयः पदाघार्चये ॥

ॐ ह्रीं धामत्राणो अशोष्टफलादाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अंगं लाति मलं च गालयति यन्मुख्यं ततो संगलं, देवोऽहंभृवमंगलोऽभिखिन्तुस्तैर्धनैः साधुभिः ॥
 चञ्चचाभरगालघृन्तसुकुरैर्मुख्येनरैर्मंगल-सुखं मङ्गलमिच्छसुणान्स्वप्राप्तुमारारुध्यते ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ऐं अं नमोऽहं मङ्गलमंगलद्रव्यानेनं गुल्लोऽहं नमः परम मंगलेश्वरः स्वाहा ।
 यद्वा मालद्रव्योर्मैसे किञ्चको लेकर उतारे व रक्खे ।

इत्यल्लिग्नफलोक्तोक्तश्री-कलितललितसूतं कीर्तितेन्द्रैर्जनीन्द्रैः ॥ १० ॥

जिनवशं तथ पादोपांततः पातयामः, शयद्वयशमनार्थमर्थतः शांतिघाम् ॥ १० ॥
 जिनवशं तथ पादोपांततः पातयामः, शयद्वयशमनार्थमर्थतः शांतिघामि नि पातयामि शांतिक्रम्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं ह्रीं ऐं अं आर्हत इदं शांतिघामा गुणहीध्व २ अहं नमः भद्र भवतु जगता शांतिघारां नि पातयामि शांतिक्रम्यः स्वाहा ।
 यद्वा जलकी तीन घाग देवे ।

पुष्पेबोरिषदो वर्यं पुनरिद्ध पुष्पेषु निःशेषकम्, निष्पीतानि अयुत्रनैवैशमिदं निष्पापसंसेवितम् ॥

इत्यालोच्य नमस्कृत्यास्य सद्भिरयाशाश्रयनीकते, निष्पीतगखिलतत्त्वपादकमले पुष्पाणि निःपापये ॥
 ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ऐं अं आर्हत इदं पुष्पाजलिगर्चनं गुल्लोऽहं २ नमोऽहंभृवो ध्यातृभिर्भीषितफक्केभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ऐं अं आर्हत इदं पुष्पाजलिगर्चनं गुल्लोऽहं २ नमः अत्र त्रिधियोभो स्मरण कर २ ४ तीर्थज्ञकी पूजा करे ।
 यद्वा पुष्पोकी अज्जली देवे । फिग मण्डलमें स्थापित २ ४ ज-न तिधियोभो स्मरण कर २ ४ तीर्थज्ञकी पूजा करे ।

जिन नाथ चोविस चाण पूजा करत हस उप्रगाय, जग जन्म लेके जग उधारो जके इम चित लाय ।
 तिग जन्म फलखाणक सु उतरसब इन्द्र लाय सुकीन, हस हू सुमर ता अमयको पूजत धिये शुचि कीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीं शत्रभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थकता, जन्मस्मरणकप्रार्था अत्र अमतर २ धवीषट् आह्वानम् । अत्र तिष्ठ
 तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम वनिहितो मत्र म वषट् वनिधोकारणम् ।

ॐ ह्रीं शत्रभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रार्थेभ्यो जन्मजराशुधुविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम वनिहितो मत्र म वषट् वनिधोकारणम् ।

ॐ ह्रीं शत्रभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रार्थेभ्यो जन्मजराशुधुविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम वनिहितो मत्र म वषट् वनिधोकारणम् ।

ॐ ह्रीं शत्रभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रार्थेभ्यो जन्मजराशुधुविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम वनिहितो मत्र म वषट् वनिधोकारणम् ।

षण्डन देशरसय लाऊं, भवकी आताप शमाऊं । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तरजाई ॥

ॐ हौं कषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो सप्तागतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ हौं शबभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो अक्षय गुणको झलकाऊ । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

सुन्दर पुष्पनि चुनि लाऊं, निज काम वगधा हटवाऊं । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं शबभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो कामवाणविश्वशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पकवान मधुर शुचि लाऊ, हनि रोग क्षुधा सुख पाऊ । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं शबभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय चरु निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक करके उजियारा, निज मोल निमिर निरवारा । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं शबभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो माहाग्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपायन धूप खिवाऊं, निज अष्ट करस जलवाऊं । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं कषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो अष्टमंदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फाल उरस उरस लाऊं, शिवफल जासे उपजाऊं । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं कषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुख आठौं हठय मिलाऊं, मैं आठौं गुण झलकाऊं । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं शबभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येकके २४ अर्थ ।

बदि बैन नथनि सुख भाई, अकरेवि जने हरापाई । श्री रिषभनाथ युग आदी । पूजूं भय सेट अनादी ॥

ॐ हौं चैत्रकृष्ण नवम्यां श्री बृषभनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्तय अर्थं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

सलथी सुख बाघ बदीकी, पिजया माग जिजलीकी । उपजे श्री अजिन जिनेशा, पूजूं मेढो सय क्लेशा ।

ॐ हौं माघवर्गनी दशम्यां श्री अजितनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्तय अर्थं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

तातिक छदि पूरणमागी, माता सुसन हुलासी । श्री लभभवनाथ प्रकाशे, पूजत आपा पर भाशे ॥

ॐ हौं कार्तिकशुक्ला पूर्णमास्या श्री वभवनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्तय अर्थं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

सुभ चौदस बाघ सुदीकी, अभिनन्दननाथ विवेकी । उपजे सिद्धार्थी माता, पूजूं पाऊं सुख साता ॥

- ॐ ह्रीं माघशुक्ला चतुर्दश्यां श्री अश्विभद्रनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४)
 ग्यारस है चैत सुदीकी, मंगला माता जिनजीकी । भी सुमति जने सुखदाई, पूजूं मैं अर्घं बड़ाई ॥
- ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला एकादश्यां श्री सुपतिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५)
 कातिक बदि तेरसि जानो, श्री पद्मप्रभू उपजानो । हे मात सुसीमा ताकी, पूजूं ले रुचि समताकी ॥
- ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्णा त्रयोदश्यां श्री पद्मप्रभूजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)
 शुचि द्वादश जेठ सुदीकी, पृथवी माता जिनजीकी, जिननाथ सुपारस जाए, पूजूं हम मन हरबाए ॥
- ॐ ह्रीं ज्येष्ठ शुक्ला द्वादश्यां श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)
 शुभ पूस बदी ग्यारसको, हे जन्म चन्द्रप्रभु जिनको । धन्य मात सुलखनादेवी, पूजूं जिनको सुनिसेबी ॥
- ॐ ह्रीं पौष कृष्णा एकादश्यां श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)
 अगहन सुदि एक्रम जाना, जिन मात रमा सुख खाना । श्री पुष्पदंत उपजाए, पूजतहुं ध्यान लगाए ॥
- ॐ ह्रीं भगहनशुक्ला एक श्रीपुष्पदंत जिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)
 द्वादश बदि माघ सुहानी, नंदा माता सुखदानी । श्री शीतल जिन उपजाए, हम पूजत हीं विघ्न नशाए ॥
- ॐ ह्रीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१०)
 फागुन बदि ग्यारस नीकी, जननी विमला जिनजीकी । श्रेयांसनाथ उपजाए, हम पूजत हीं सुख पाए ॥
- ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णा दशम्यां श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)
 बदि फाल्गुन चौबसि जाना, विजया माता सुख खाना । श्री वासुपुत्र्य भगवाना, पूजूं पाऊं जिन ज्ञाना ॥
- ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा चतुर्दश्यां श्रीवाष्पुत्र्यजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)
 शुभ द्वादश माघ बदीकी, इधामा माता जिनजीकी । श्री विमलनाथ उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए ॥
- ॐ ह्रीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१३)
 द्वादशि बदि जेठ प्रमाणी, सुरजा माता सुखदानी । जिननाथ अनन्त सुजाए, पूजत हम नाहिं अघाए ॥
- ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा द्वादश्यां श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)
 तेरसि सुदि माघ महीना, श्रीधर्मनाथ अघ छीना । माया सुव्रता उपजाये, हम पूजत ज्ञान बढ़ाए ॥
- ॐ ह्रीं माघ शुक्ला त्रयोदश्यां श्रीबर्मनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)
 बदि चौदस जेठ सुहानी, ऐरादेवी गुन खानी, श्रीशालि जने सुख पाए, हम पूजत प्रेम बढ़ाए ॥

ॐ ह्रीं ३ ८ कृष्णा चतुर्दश्या श्रीशक्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्तु (११०)
पट्टि- नाख सुदीकी, लक्ष्मीमति माता नोकी । श्रीकृन्धनाथ उपजाए, पूजा उम अर्घं यहाए ॥

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल एक श्रीकृन्धुनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)
अगहन सुदि चौदस आनी, मित्रादेवी हरषानी । अरि तीखर उपजाए, पूजे हम मन धन काए ॥

ॐ ह्रीं अगहन शुक्ल चतुर्दश्या श्रीभरतिर्यंकराय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं नोर्वपामीति स्वाहा । (१८)
अगहन सुदि ग्यारस आए, श्रीमल्लिनाथ उपजाए । है सात प्रजापति प्यारी, पूजत अघ बिनसौ भारी ॥

ॐ ह्रीं अगहन शुक्ल एकादश्या श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अघ निवपामीति स्वाहा । (१९)
दशमी बैसाख बदीका, इयासा माता जिनजीकी । मुनिमुन्नज जिन उपजाए, हम पूजत पाप नशाए ॥

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्णा दशम्या श्रीमुनिव्रतजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निवपामीति स्वाहा । (२०)
दशमी आषाढ बदीकी, बिपुला साता जिनजीका । नमि तीर्थे उपजाए पूजत हम ध्यान लगाए ॥

ॐ ह्रीं आषाढ कृष्णा दशम्या श्रीनमिजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । २१)
आषण शुक्ला छठि जानो, उपजे जिननेमि प्रमाणो । जननी सु शिवा जिनजीकी, हम पूजत है थल शिवकी ॥

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ल षष्ठ्या श्रीनेमनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)
बदि पूष चतुर्दशि जानी, वामादेवी हरषानी । जिन पार्थ्व जने गुणखानी, पूजे हम नाग निशानी ॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा चतुर्दश्या श्रीपार्थ्वजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)
शुभ चैत्र प्रयोदश शुक्ला, माता गुणखानी प्रशला । श्रीपद्धमान जिन जाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्या श्रीपद्धमानजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

जयमाल ।

जुगप्रयात—नमो जै नमो जै नमो जै जिनेशा, तुम्हीं ज्ञान सूरज तुम्हीं शिव पवेशा ।
 तुम्हें दर्ग करके महामोह भाजे, तुम्हें पर्य करके सकल ताप भाजे ॥ १ ॥
 तुम्हें ध्यानमें धारते जो गिराई, परम आत्म अनुभव छटा सार पाई ।
 तुम्हें पूजते नित्य हन्नादि सेवा, लई पुण्य अद्भुत परम ज्ञान सेवा ॥ २ ॥
 तुम्हारी जनम तीन भू दुख निबारी, महामोह मिथ्यात हियसे निकारी ।

तुम्हो तीन बोध धरे, जन्महीसे, तुम्हें दर्शनं क्षायिकं जन्महीसे ॥ ३ ॥
 तुम्हें आत्मदर्शन रहे, जन्महीसे, तुम्हें तत्र बोधं रहे जन्महीसे ।
 तुम्हारा महारुण्य आश्चर्यकारी, सु महिमा तुम्हारी सदा पापहारी ॥ ४ ॥
 तुम्हारा महारुण्य आश्चर्यकारी, सु महिमा कालिमा पापकी अंग परसे ।
 करा शुभ न्हवन क्षीरसागर सु जलसे, मिठी कालिमा इसी हेतु सेवा ॥ ५ ॥
 हुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहं पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ।
 हुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहं पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ।

दुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहं पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ।
 हुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहं पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ।

दोहा—भोजिन चौबीस जन्मकी, महिमा उरमें धार । पूज करत पातक टलें, बड़े ज्ञान अचिकार ।
 अं ही चतुर्विंशतिनेम्यो जन्मऋण्यकप्रसिन्धो महाअर्घं निर्वपाभीति स्वाहा । फिर इन्द्र ऊर जाता है और भगवानका नाम व

चिह्न प्रगट करता है । चरणको स्पर्शकर यह मंत्र पढ़कर पुन भगवानपर क्षेपण करता है—
 अं ही इशकुले नाभिमूर्पतेर्मरुदेव्यामुपनस्यादिदेवुरुषस्य ऋषभदेवस्वामिनोऽन्नविन्धे वृषभाकित्वात् तद्गुणस्थानं तेजोमयं

करोमि स्वाहा । अं अय महातुभावः परमेश्वरो वृषभेश्वरो भवतु ।
 फिर नीचे क्लिखे मंत्रको पढते हुए इन्द्र अग स्पर्श व पुण्य प्रसुर डाले । (मंत्रको आचार्य पढ़ सकता है नीचेसे ।)
 अं ऋषभादिव्यदेहाय बधोजाताय महाप्रज्ञाय अनन्तचतुष्टयाय परमबुद्ध पतिष्ठिताय निर्मलाय स्वयमुद्भे अजरामरपदप्राप्ताय

चतुर्मुखपामेष्ठिनेऽईते त्रैलोक्यनाथाय त्रलोक्यपूज्याय अष्टदिव्यनागप्रपूजिताय देवाधिदेवाय परमार्थब्रह्मिहोऽधि स्वाहा । (३) अं
 (१) अं अस्मिन्विन्धे निःस्वेदस्वगुणो विलषतु स्वाहा । (२) अं अस्मिन्विन्धे मलरहितस्वगुणो विलषतु स्वाहा । (५) अं अस्मिन्-
 (१) अं अस्मिन्विन्धे क्षीरवर्णधितस्वगुणो विलषतु स्वाहा । (६) अं अस्मिन्विन्धे अदमुतरूपगुणो विलषतु स्वाहा । (७) अं अस्मिन्विन्धे यतुल-

विन्धे यप्रवृषभनाराचगुणो विलषतु स्वाहा । (८) अं अस्मिन्विन्धे अष्टोत्तराश्वत्थशृग्व्यजस्वगुणो विलषतु स्वाहा ।
 यरीरगुणो विलषतु स्वाहा । (१०) अं अस्मिन्विन्धे हितमितप्रियवचनस्वगुणो विलषतु स्वाहा ।
 वीर्यस्वगुणो विलषतु स्वाहा । (१०) अं अस्मिन्विन्धे कि नाम व चिह्न यह प्रगट किया गया व दश अतिशय जन्म ब्रह्मन्धी ब्रह्मनाये व कहे कि इनका स्थापन

इषमें विव किया गया । फिर आचार्य नीचेके मंत्रको पढता जावे । इन्द्र अग स्पर्श व पुण्य मूर्तिपर क्षेपे ।
 यहाँ आचार्य सबको कहे कि नाम व चिह्न यह प्रगट किया गया व दश अतिशय जन्म ब्रह्मन्धी ब्रह्मनाये व कहे कि इनका स्थापन

(१) अं अईदूभ्यो नमः, (२) अं पादानुवारिभ्यो नमः, (३) अं काष्ठबुद्धेभ्यो नमः, (४) अं वोजबुद्धिभ्यो नमः, (५) अं वभिन्नश्रातुभ्यो नमः, (६) अं परमावधिभ्यो नमः, (७) अं हौं वरगुणवृत्तितुश्रुवणो (१२) अं ऋषयादियधेमानासिभ्यो वषट्पवट्ट
 वर्षावधिभ्यो नमः, (१०) अं परमावधिभ्यो नमः, (११) अं हौं वरगुणवृत्तितुश्रुवणो (१२) अं ऋषयादियधेमानासिभ्यो वषट्पवट्ट
 स्वाहा । (१३) अं णमोभयवदो बहुमाणस्व रिषहरस्व चक्र जलत गच्छई आयाव पायाळ लोयाण भूयाणं जए वा विवादे वा रगयणे

वा णामणे वा महणे वा बव्वजीवत्ताण अपराजितो भवद्दुस्सवस्व स्वाहा ।

ऊपर क्लिप्त बद्धमान मन्त्र कहा जाता है । इन्धप्रकार आकारशुद्धि करे । व नीचे प्रकार श्लोक पढ़कर विषर्जन करे ।
 ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि, शास्त्रोक्तं न ह्यतं मया । तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु, त्वग्रप्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥
 आह्वानं नैव जानामि, नैव जानामि पूजनम् । बिसर्जनं न जानामि, क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
 मग्नहीनं क्रियाहीनं, द्रव्यहीन तथैव च । तत्सर्वं क्षम्यतां देव, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥
 आह्वाना ये पूरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम् । ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥४॥

फिर आज्ञा करे—हे इन्द्रादिदेवो ! जिततरह श्री तीर्थंकर महाराजको जाए ये उषी तरह लेजाकर मातापिताकी गोदमें अर्पण कर व उन्हें भक्तिद्वारा प्रपन्नकर हम उनके पुण्य क्रमाना योग्य है । आज्ञा करनेके पीछे आचार्य व इन्द्रादि पूजा समयके पात्र मेरुकी तीन प्रदक्षिणा कीई स्तुति पढ़ते हुए देवें । फिर भगवानको इन्द्र उठाये । पूर्वके समान ऐरावत हाथीपर इन्द्रादि बैठें और जय जय शब्द हों और बाजे बजें । जुलूस १ घंटेके भीतर भीतर मंडपमें आजावें ।

(४) राज्यांगणमें भगवानका पधारना और मात पिताको अर्पण व नृत्य—मंडपमें बैठनेका प्रथम टिकटोद्वारा रहे । जुलूस पट्टवनेपर इन्द्र इन्द्राणी घोसे और इन्द्रो व देवोंके साथ मंडपमें आवें । इसके पहले ही दूरे चतूरेपर महाराज नाभिराज एक सिंहासनपर बैठें हों । दूरे एक सिंहासनपर माता मरुदेवी निद्रित दशामें बहारेसे बैठी हो, पाठमें वज्रसे लिपटा नारियल रक्सा हो, कुछ वभाबद भी हो तथा माता पिताके बीचमें ऊंचा सिंहासन भगवानके बैठनेका हो, परदा उठे । इन्द्र गोदमें तीर्थंकर भगवानको लिये हुए आवे और सिंहासनपर विराजमान करे तब यह मन्त्र पढ़ें—

ॐ नमोऽर्हते केवलित्ने परमयोगिने अनतविशुद्धपरिणामपरिपुरश्छुद्धानामिनिर्दंगवकर्मवीजाय प्राप्तानंतचतुष्टयाय बौमाग्यशांताय मगलाय वरदाय अष्टादशदोषरहिताय स्वाहा ।

तब वन बैठ जावें । इन्द्राणी उठकर माताके पाठ आवे और हाथ फेरदे, मायामयी निद्रा हटावे, उब नारियलको उठाके । तब माता आश्चर्यमें बठ खड़ी हो । माता पिता दोनों खड़े हो तीर्थंकरकी छविकी देव देखकर प्रपन्न हों और फिर बैठ जावें । तब इन्द्र उठे और माता पिताके आगे वज्राभूषणकी भेट रखे । दो थाल उब समय आजावें । एक थाल माताके व १ पिताके आगे रखे और पुण्योकी सुगंधित माळा पिताके गलेमें पहारावे और उबकी स्तुति करे—

चौपाई—धन्य धन्य तुम लोक संक्षारा, तुमरो सफल जन्म संसारा ।

तीन जगत गुरु तुम उपजाये, यातें जगत पूज्य ठहराए ॥ १ ॥

तुम उदयाचल पर्वत मानो, पूर्वदिशा देवी मरु जानो ।

भानू समान प्रभु प्रगटाए, मोह ध्वांत हर लोक मिटाए ॥ २ ॥

ग्रह तुमरा जिनमंदिर सारा, पूज्यनीय त्रिसुवन सुखकारा ।
तुम दोनों हो शिव अधिकारी, यातें पूजनीय हरबारी ॥ ३ ॥

ऐसी स्तुति करके इन्द्र भगवानको उठाकर माताकी गोदमें देता है, माता उठकर लेती है और विनय बहित बैठ जाती है और बारबार प्रसुको निरखती है । उबर प्रतिष्ठाचार्य अन्य प्रतिमाओंको थोड़े जलसे अभिषेक कर पोलकर केशर चन्दनका लेप करके यह कहते जाते हैं—“ अस्मिन् बिम्बे जन्मकल्याणक आरोपयामि स्वाहा ” और हरएकको ब्रह्माभूषणोंसे बलिजित करते हैं । हरएक मूर्तिके लिये अलग-अलग ब्रह्माभूषण होने चाहिये और फिर “ दश अतिशयाकार शुद्धि नाम (यहाँ जो नामका चिह्न हो वह लेकर) आदिकाम् आरोपयामि स्वाहा ” ऐसा कहकर हरएक मूर्तिपर पुष्प डाले । और नमस्कार करे । इषर इन्द्र फिर उठे और किष्प तरह मेरुपर नहवन हुआ था उसे कहे तथा भगवानके पूर्वजन्मके ९ भवोंका रक्षेपसे वर्णन करे वो तुरतिरूप गानके साथ बड़े भावसे कहे—

चौपाई—इम देवन सह मेठ पधारे, पांडुकवनमें आन सिधारे ।

पांडुक शिला महा शुचि रूपा, थाप्यो प्रसुको आनन्द रूपा ॥ १ ॥

क्षीरोदधिसे कलश मंगाए, स्वर्णमई जल भर सुर लाए ।

श्रीजिनेन्द्र अभिषेक सु कीना, जन्म सफल हमने कर लीना ॥ २ ॥

शची ब्रह्म आभूषण धारे, पूज प्रभूको यहाँ पधारे ।

धन्य जीव श्रीआदि जिनेशा, सुक्तिनाथ तीर्थकर भेषा ॥ ३ ॥

यह संसार महान अपारा, आदि अन्त विन रहत करारा ।

यामें जीव कर्मवश घूर्में, विन सम्यक्त स्वधर्म न चूर्में ॥ ४ ॥

भव अनंत यह जीव धरे है, अमृत अमृत नहिं अंत करे है ।

जीव नाथका अमरण करे था, पुण्य उदयसे दुःख हरे था ॥ ५ ॥

एक भय लिया विदेह मंझारा, विद्याधर नृप पुत्र दुलारा ।

नाम महाबल राज्य सु कोना, जैनधर्ममें हृद चित दीना ॥ ६ ॥

अंत समाधि धार तन त्यागा, द्वितिय स्वर्ग उपजा शुभ भागा ।

देव नाम ललितांग सुपाया, स्वयंप्रभादेवी मन भाया ॥ ७ ॥

तहंते चय विदेह उपजाया, ब्रह्मजंघ नृप हो सुख पाया ।

स्वयंप्रभा भी तहं उपजाई, नारि श्रीमती नृपके भाई ॥ ८ ॥

दोनोंने मुनि बान सु दीना, उत्तम भोगभूमि सुख लीना ।
 तहं चारन मुनि आ उपदेशा, धर्म जिनेश्वर हत रति द्वेषा ॥ ९ ॥
 सुनत ग्रहण दोनोंने कीना, सम्यग्दृष्टी हुए प्रवीणा ।
 द्वितीय स्वर्गमें श्रीधर देवा, द्वितीय स्वर्गमम अकसुत देवा ॥ १० ॥
 श्रीधर धर्मध्यान तहं कीना, चयकर जन्म विदेह सु लीना ।
 राजपुत्र हो सुविधि दयाला, श्राद्धक ग्यारह प्रतिमा पाला ॥ ११ ॥
 अंतिम साशु महाव्रत धारे, और समाधिमरण सुखकारे ।
 प्राणत्याग सोलस दिवि आए, अच्युतेंद्र होकर सुख पाए ॥ १२ ॥
 तहंसे चय विदेह उपजाये, वज्रनाभि सम्राट सुष्ठाए ।
 षड्वर्ति साधे छः खंडा, राज्य कियो सु न्याय दृष मंडा ॥ १३ ॥
 धारे सुनिव्रत तप यहू कीना, आतम ध्यान कर्म कृष कीना ।
 सोलहकारण भाव सुध्याए, तीर्थंकर शुभ कर्म बंधाए ॥ १४ ॥
 उपशमश्रेणीसे तन त्यागा, चौथे गुणथानकमें लागा ।
 सवौरयसिद्धी उपजाए, तेतिस सागर आयू पाए ॥ १५ ॥
 तहं भी धर्म भाव चित लाए, पुण्य उदय या नगरी आए ।
 धन श्री रिषभ दृषभ शुभ अंका, तुम टालत भव भ्रम आतंका ॥ १६ ॥
 हम दर्शनसे जो सुख पाया, वचन अगोवर जात न गाया ।
 धन्य पिताश्री नामि सुराजा, मखेवी माता हित काजा ॥ १७ ॥
 देव जनम हम अब सफलाया, तुम सेवन कर पाप हटाया ।
 चिर जीवो श्री आदि कुमार, धर्मतीर्थका करहु प्रचारा ॥ १८ ॥

इषतराह श्रुति पढ़े । यदि इन्द्र तुल्य जानता हो तो करे अन्यथा ब्रह्ममें कोई इन्द्र प्रमान तुल्य व भजन १५ मिनटके लिये करे,
 जब ब्रह्मा मुने, इन्द्र भी बैठ जावे । फिर इन्द्र बैठे । उनी समय कमसे कम पांच देव मुकुटबारी छोटी वयके नाकक ८-९ आवें ।

इन्द्र भगवानके अगूठेमें अमृत बमान दूध लगावे और यह मंत्र पढ़े “ ॐ ह्रीं श्री तीर्थकारगुण्डे अमृतं स्थापयामि स्वाहा ” और तब पांच देवोंको आज्ञा करे—‘ हे देवों ! तुम तीर्थकारकी ग्लोभाति सेवा करना और पुण्य’ कमाकर जन्म सफल करना । तब वे देव कहें—हम आपकी आपकी आज्ञा बजा लाएंगे, प्रभुको सेवाकर पुण्य कमाएंगे । फिर इन्द्र भगवानको उठाता है तब सब ब्रह्मा खड़ी हो जाती है, माता पिता भी खड़े हो जाते हैं और सब कोई पुष्पोंकी व चांदो सोनेके फूलोंकी वर्षा प्रभुके ऊपर करते हैं । पहले चबूतरेके बाहर जो परदा पड़ा था वह उठता है, इधर उधरके परदे उठ जाते हैं तथा मूलवेदीके बगलमें जो राव्यमहल बना था वहां बिहावनपर प्रभुको विराजमान कर देता है । उस समय इन्द्र पहले लिखा मंत्र पढ़ता है—“ ॐ नमः ईते अष्टादशदोषरहिताय स्वाहा ” नमस्कार करता है और लौटने लगता है, इतनेमें बाहरका परदा गिरता है । जन्मकल्याणकोरश्मि पूर्ण होता है, सब अपने-२ स्थानपर जाते हैं, आहार पान करते हैं । यहाँतक क्रिया पूर्ण करके ही भोजन करना उचित है । इस सब क्रियाको लगातार ही करना चाहिये । पबरेसे दो बजे दोपहर तक हो सकती है ।



अध्याय पांचवां ।

गृही जीवन ।

(१) दीलनारूप स्त्रीड़ाका उत्सव—रात्रिको मध्यमें दोलन क्रीड़ा की जावे । दूबरे चबूतरेपर झूला सुन्दर लगाया जावे उसमें हिंदोला बजोया जावे, उसपर प्रभुको वस्त्राभूषण सहित, मुकुट सहित विराजमान किया जावे । आठ देवियां हाजिर हों आठ दिशाओंमें खड़ी हों । उनमेंसे पंछेके कोनेकी दो दोनों तरफ चमर धारे । पांच कुमारदेवोंको जिाको इन्द्रने नियत किया था हिंदोलेके पीछे खड़ा कर दिया जावे । माता खड़ी २ भगवानको झुलानी ले, वामने एक टेबुलपर रुपयोंकी भेटके लिये बड़ा थाल रखा हो, कोनेमें एक माई दातारोंके नाम लिखनेवाला बैठा हो । सब सामान बज जावे तथा परदा उठया जावे । उस समय जयजयकार शब्द हो । प्रथम ही इन्द्राणी कई देवियोंके साथ दो थालोंमें ब्रह्माभूषणादि बजाकर लावे व हाथमें अक्षरफी व रुपया लावे और ब्रह्ममें आकर वे दोनों थाल भेटरूप बगलमें रखे तथा प्रणाम करके स्तुति पढ़ें—

चौपाई—जय जय नाथ दरश तुम पाए, तुम बहिसा धरणी नहिं जाए ।

तुम अपार सुन्दरता धारी, काम जीत जगजन मनहारी ॥ १ ॥

तुम त्रिमानधारी परमेशा, देखत तुम्ह मिटे सब क्लेशा ।

हम आतुर बहंगति संसारा, तुमहिं दुःख भेटन अविकारा ॥ २ ॥

तु नग मोड़ तिमिर निर्धारी, सम सम यमसे सब अघ टारी ।

अन्य भान तुझ पुण्य अपारा, तीर्थकर सुत तब जगधारा ॥ ३ ॥

ऐसी स्तुतिकर मोहर या रुपया रत्न मेटरूप थालमें डारकर हिंडोला हिलावे और फिर नमस्कार कर विनय सहित देवियोंके प्राय लौट जावे ॥ नोट—इस समय जो आमदनी थालमें आवे वह सब प्रतिष्ठामें खर्चमें लगाई जावे ।

फिर नर नारियां आकर भगवानको सुलावे । इसका प्रबन्ध ऐसा किया जावे कि १० टिकट खाए बनाए जावें । १ टिकट पांच पुरुष नम्बरवार फिर पांच स्त्रियां नम्बरवार छोड़ी जावें । ये नम्बरवार जावें । रुपया आदि थालमें मेटकर प्रभुको सुलावें । नमस्कार कर लौट आवें । आधी मिनटसे अधिक कोई न सुलावे, जब पांच लौट आवे व टिकट वापिस आजावे तब फिर पांचको भेना जावे । इसतरह नम्बरवार स्त्री-पुरुष दोनों आते जाते रहें । मंडपमें बैठे लोग जय जय शब्द कहें तथा घामने भगवानके घामने भजन गान नृत्य मनोहर होता रहे । जब सब मेट देखुंके व अपना मनभर भगवानको सुला चुकें तब परदा डाल दिया जावे । भीतर भगवानको राज्यमहलकी धेदीपर वल सहित विराजमान किया जावे ।

(२) तीर्थंकरको राज्याभिषेक—जन्मकल्याणकके दूबरे दिन सबेरे आचार्य इन्द्र आदि सहित सबेरे ही मंडपमें जन्मकल्याणकके दिनकी भांति एकलीकरण, अभिषेक व निरयपूजा बिद्वयूजा तथा होम करे । फिर पहले चबूतरे पर परदा डाला जावे । दूबरे चबूतरे पर राजसभाकी रचना की जावे । बीचमें बैठनेका आसन हो । उसके पास ही नाभिराजाका आसन हो, कुल समापद कायदेसे बैठे हों । अभिषेक व पूजाका प्रबन्ध हो व भगवानको राजयोग वल व सङ्ग आदि शल देनेका प्रबन्ध हो । परदा ठेठे तब सब इन्द्र प्रत्येन्द्र व आचार्य आवें, आठ मगलद्वय स्थापित हों । इन्द्र महाराज नाभिको मस्तक झुकाकर नमन करे व स्तुति करे ।

दोहा—श्री तीर्थंकर राज्यपद, देनेका उत्साह । किया आपने नाभिजी, है यह उत्तम राह ।

प्रभु समर्थ पालन प्रजा, न्याय मार्गमें आज । राज्यार्पणकी सकल विधि, कराना है सुखसाज ।

तब नाभिराज कहते हैं—

दोहा—राज्यतिलक अर्पण विधि, कीजे हे दिविराज । होय सुखा सारी प्रजा, होय अटल यह राज ।

आज्ञा पाते ही इन्द्र भीतर जाकर प्रभुको राज्यमहलसे लाते हैं तब सब खड़े होते हैं, नयन्यकार शब्द होते हैं, पुष्पोंकी वर्षा होती है । बीचमें गृह्यनका आसन विराजमान कर उपपर प्रभुको स्थापित करता है । बलाभूषण अलग उतारकर रखता है । इतनेहीमें दूबरे इन्द्र तथा आठ देवीकन्याए सुन्दर कलशोंको जलसे भरे हुए पुष्पमालासे शोभित व कमल या नारियलसे ढके हुए व केशरका प्राथिया बना हुआ अपने दोनों हाथोंपर धरे हुए लाते हैं । घामने गीत व नृत्य होता है । बाहर खूब बाजे बजते हैं । वे सब इन्द्र और देवियां एक साथ गाती हैं—

गीताल्हद—शचिनाथ हम जल शुद्ध लाए, क्षीरसागरसे भला ।

गंगा महा नद सिंधु आदी, कुंड गंगासे भला ॥

दुर्लभ होकर बन्धी जातिके सामर शयनभूति भक्त ।
बहिष्केत करार सुलभ है जो कर्मिणापके भक्त ।

मन है इन्हें हानि उह करके न केक करे । बहिष्केत उह करके न केक करे ।
कर्मिणापके भक्त । बहिष्केत करार सुलभ है जो कर्मिणापके भक्त ।
बहिष्केत करार सुलभ है जो कर्मिणापके भक्त । बहिष्केत करार सुलभ है जो कर्मिणापके भक्त ।
न केक करे । न केक करे । न केक करे । न केक करे । न केक करे । न केक करे ।
न केक करे । न केक करे । न केक करे । न केक करे । न केक करे । न केक करे ।

चैतन्य—जय जय नौर्यकर अचिकारी । जय जय मुक्तिकर गर भारी ॥ देव ॥
जय जय प्रजा न्याय विस्तारी । जय जय अनुपम बल अपिकारी ॥ अथ ॥
जय जय शस्त्र शास्त्रगुण धारी । जय जय विद्या-निपुण अघारी ॥ अथ ॥
जय जय पद्मद्वय मनु भारी । जय जय जगत धरन उद्धारि ॥ अथ ॥
जय जय कर्मभूमि विस्तारी । जय जय धारि शिबं भवतारी ॥ अथ ॥

आली करके फिर इन्द्र बल व शल सङ्ग भादिसे बलिन करे । कर्मपुण व राजपाल जलै व अर आशुषण धनाने ।
इतनेहीमें नाभिराज वरते हैं और इषमालि कहकर भयना मुहुट सतारकर पथके सतारकर भालण करते हैं—

दोहा—सर्व राज महाराजके, पालक दीनदपाल । तुम ही हो जग प्रुष्य पशु, सुधभयेव जगपाल ॥

फिर इन्द्रने मस्तकपर पट्टबन भी किया तब सब बैठ जाते हैं । अथार्थे पुरा व गात्र १५ शिखर तक होता है । तब इन्द्र व सैन्य
विजय बलि चले जाते हैं । अष्ट देवियां रह जाती है जो प्रथुके पीछे लकी रहती हैं जार्थे दो देवियां अन्धो पिडाबनपर पग में
तबहीसे चमर कर रही हैं । अब अनेक राजालोग आकर पयुको भेठ पदांगर नगरकार कर अथार्थे बैठ जाते हैं पदके राधा बरि, फिर
राजा ककम्पन, फिर काश्यप फिर सोमप्रम आते हैं । इनके पीछे अनेक राजा जिनके शगतके नाम आचार्य कहते जाते हैं और गेड
बरकर बमार्थे बैठते हैं । नोट—जो रुपया भेटमें आने सो प्रतिष्ठाकार्थी सार्थ हो । कुल नाम यथा विधे जाते हैं—

- (१) अंगदेश, (२) बगदेश, (३) कर्लमदेश, (४) तुल्यदेश, (५) कर्णतकदेश, (६) पाण्ड्यदेश, (७) तंजोरदेश, (८) विपुलेश,
- (९) कच्छदेश, (१०) गुजरातदेश, (११) महाराष्ट्रदेश, (१२) पंजाबदेश, (१३) मल्लभदेश, (१४) राजपूताना, (१५) गोपालदेश,
- (१६) मूलानदेश, (१७) मध्यप्रदेश, (१८) खानदेश, (१९) नीगाकदेश, (२०) आजागदेश, (२१) मध्यदेश, (२२) तिब्बत,

(२३) चीनदेश, (२४) श्याम, (२५) जापान, (२६) रूप, (२७) प्रीरुदेश, (२८) रमदेश, (२९) फारसदेश, (३०) अजदेश,
(३१) गांधारदेश, (३२) मिश्रदेश। इत्यादि,

फिर सब जब बैठ जायें तब भगवानकी ओरसे राज्यनीतिका उपदेश आचार्य व राज्य कोई विद्वान् स्वयं प्रभाव पड़े
इस तरह कहें—

राजा हरि ! (इतना कहनेपर राजा खड़ा होजाये) आपको भगवान् इरिषशका नायक स्थापित करते हैं। वह हाथ जोड़
सस्तक नमा बैठ जाता है।

राजा सोमप्रभ ! (वह भी उठता है) आपको भगवान् कुरुवशका शिक्षामणि स्थापित करते हैं। उसी तरह वह भी नमन कर
बैठ जाता है।

राजा अंकपन ! (वह भी उठता है) आपको भगवान् नायवशका अश्विपति नियत करते हैं। उसी तरह नमन कर बैठता है।
राजा काश्यप ! (वह भी उठता है) आपको भगवान् उप्रवशका शिरोमणि नियत करते हैं। उसी तरह नमस्कार कर बैठता है।

आजसे भगवान् यह नियम करते हैं कि जो शत्रु बाराणकर अपने वाहुबलसे प्रजाकी रक्षा करनेको समर्थ है वे क्षत्रीयवशी व
क्षत्रियवर्णभारी कहलाएंगे। जो बल व बलद्वारा अनेक देशोंमें यात्रा करके व्यापार करनेयोग्य हैं वे वैश्यवशी या वैश्यवर्णभारी कहलाएंगे।
जो इन दोनों प्रकारकी योग्यता नहीं रखते हैं तथा सेवा आदि कारके य आज्ञा पालन करके आजीविका करनेयोग्य है उनको शूद्र कहा
जायगा। भगवान् आज तीन वर्णोंकी स्थापना करते हैं। भगवान् असिकर्मके द्वारा क्षत्रियोंके, मन्त्रि, कृषि, वाणिज्यद्वारा वैश्योंको व
शिल्प तथा विधाकला द्वारा शूद्रोंको आजीविका करनेका अधिकार नियत करते हैं तथा यह भी नियम बनाते हैं कि हरएक वर्णवाले
अपनी २ आजीविका करें तथा विवाहका यह नियम करते हैं कि प्रत्येक वर्णवाले अपने वर्णमें विवाह करें, काम पड़े क्षत्रिय वैश्य
तथा शूद्रकी ओर वैश्य शूद्रकी कन्याको विवाह कर सकता है। भगवान् अपने आधीन राजाओंको यह आज्ञा करते हैं—

चौपाई—है कृतयुग यह तुम जानो। निज निज कुरूप करो सुख मानो ॥

आलसभाव न चितमें राखो। परिश्रमी मन सुख अभिलाखो ॥ १ ॥

सज्जन दुर्जन जन दो भेदा। सज्जन पालहु खल कर सेवा ॥

प्रजा कारहु रक्षा रुचि लाई। दुर्जनको नित दण्ड दिलाई ॥ २ ॥

सख धरण उद्देश यही है। प्रजा सुखी हो तस्य यही है ॥

दुष्टनका निग्रह जहं नाहीं। सुख सन्तोष होय तहं नाहीं ॥ ३ ॥

गृही नहीं करतव निज पाले । दुखी होय विपता बहु झाले ॥
 दया दुष्टजन नहिं अधिकारी । दण्ड बिना नहिं हों समधारी ॥ ४ ॥
 पृथ्वी यह बहु धान्य उपाधि । अनेक और उपजाये ॥
 गोधन कृषि कारण उपकारी । देय पोषन कर भारी ॥ ५ ॥
 धन कृणकी रक्षा करना है । सर्वदेश तिरपत रखना है ॥
 कर इतना ही लेन विचारो । प्रजा कभी दुखमें नहिं धारो ॥ ६ ॥
 प्रजा सुखी तह राज्य सुखी है । राज्य बही जह कोई न दुखी है ॥
 कर ग्रह विद्या करहु प्रभारा । विद्याधिन नर जन्म अलारा ॥ ७ ॥
 पुत्री पुत्र उभय अधिकारी । विद्या कला देहु अति भारी ॥
 करहु स्वाध्याय रक्षा जगजनकी । रोग शोग नहिं बाधा तनकी ॥ ८ ॥
 प्रजा पुत्रसम पालहु ज्ञाता । दीन अनाथ करहु नित साता ।
 सदा ध्यान रखिये ब्रह्मा । प्रजा होय सुख शांति समजा ॥ ९ ॥
 शिल्प कलासे वस्तु बनाओ । देश देश भेजो घन लाओ ॥
 जहां वाणिक्य तहां घन आवे । घन जिल देश वही सुख पावे ॥ १० ॥
 जीवन सादा शुद्ध विनाओ । विषय मोहमें तन न गलाओ ॥
 इन्द्रियभोग न्यायसे कीजे । जासे बल तन दुति नहिं छीजे ॥ ११ ॥
 है सन्तोष परम सुखकारी । परधनकी हच्छा दुखकारी ॥
 निज तिय सम्पतिमें सुख जानो । पर तिय पर सम्पति पर जानो ॥ १२ ॥
 समया वृथा कबहीं नहिं डालो । समय असूत्र जान तन पालो ॥
 होय सुखी नर नारि सदा ही । यह प्रबन्ध करिये गुणग्राही ॥ १३ ॥
 फिर सब सहे होजाये (नाभिराजा तो राज्य देकर पड़े ही चके गए थे) और गति पड़े । परदा गिरे-
 छद्-जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र नाथजी । धन्य यह समय मडान सुख निधान साथजी ॥
 दीनबंधु हो दयालु जगत पाल कीजिये । दुःख क्लेश शोग सेट तृपत नाथ कीजिये ॥ १ ॥

राज्य यह महान आपका परम प्रकाश हो। यश अपार विस्तार अन्यायका विनाश हो ॥
धन्य धन्य नाथ तुम्हीं ज्ञानमें प्रधान हो। राखिये कृपा जिनेन्द्र लोकमें महान हो ॥

जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र नाथजी। धन्य यह समय महान सुखनिधान नाथजी ॥२॥
आचार्य प्रतिमाको राज्यनहलमें विराजमान करते हैं तथा प्रतिमाओंको मुकुट व शल देकर " अस्मिन् क्विचे राज्यभिर्भेकं आरोपयामि स्वाहा " ऐसा कहकर पुण्य क्षेपण करते हैं। इन्हे १० वजे तक क्रिया होजावे।

अध्याय छठा।

तपकल्याणक।

(१) भगवान्को वैराग्य—इसी दिन जन सवरे राज्यभिषेक क्रिया था, १ गजेसे तपकल्याणककी विधि करें। मण्डपसे कुछ दूर एक बन हूँद लेंवें जहाँ बड़का वृक्ष हो उचीके नीचे कवचमदेवका तपकल्याणक करना। जिन तीर्थंकरकी प्रतिष्ठा करनी हो उच्च तीर्थंकरके उची वृक्षको तलाश करे। यदि वैषा न मिले तो २४ मेंसे कोई भी वृक्षके तले यह कल्याणक होवे। २४ वृक्षोंके क्रमसे नाम ये हैं—
१-वट या बर्गद, २-शतशुद्ध, ३-ताल, ४-बाल, ५-प्रियपु, ६-प्रियपु, ७-श्रीखण्ड, ८-नागवृक्ष, ९-घाल, १०-पलाश, ११-तीँद, १२-पाटक, १३-नन्दू, १४-पिपल, १५-दधिपर्ण, १६-दिदिवृक्ष, १७-तिरुक, १८-आम्र, १९-अशोक, २०-बध्वा, २१-मोडपरी, २२-बाँस, २३-बन, २४-घाल।

वनमें वृक्षके चारों ओर स्थान स्पष्ट हो। शुद्ध जलको छिड़क कर पवित्र करले वहाँ ही एक पाषाणकी शिला ऊची भगवान्को विराजमान करनेको नियत करे तथा अगे १ मडक बनावे जिसमें २४ कोठे हों, पूजाकी सब सामग्री तैयार की जावे, मण्डप भी छाया जावे जिसमें सुखसे सब बैठ सके। बटवृक्षको नियत कर आचार्य पहले सब देख आवे व प्रबंध कर आवे। उधर मंडपमें नरनारी टिकटों द्वारा बुलाए जावें। दूबरे चतुस्रेपर भगवान्की राज्य समा लगाई जावे। बशल भगवान् विराजमान हों। आगे तुल्य व भजन होता हो, ऐसी समा करके परदा खोला जावे। उच्च समय नीलाजना नामसे एक देवीको इन्द्र भेजे वह आकर सत्य करने लगे। कोई कन्या जो थोड़ाशा नृत्य जानती हो वो नाचते नाचते एकदम भूमिपर गिरकर अचेतनी होजावे। उची समय आचार्य भगवान्की ओरसे नीचे प्रकार कहे—

दोहा—धिक धिक् या संसारमें, नित्य नहीं पर्योय। देखत देखत बिलय हो, बुधता कोन लहाय ॥ १ ॥

मरणकाल आवे निकट, कोय न राखनहार कोटिक यस्त विचारिये, निर्फल हों हरबार ॥ २ ॥

क्षण क्षण उम्र बिलात है, ज्यों ज्यों काल चिताय। मरण करत माँने सुखी, हम युवान वय आय ॥ ३ ॥

जरा जु बाधन भयकारी, आगत है ततकाल। पकड़ तिसे निर्बल करे, उसे काल बिकराल ॥ ४ ॥

या संसार अपारमें, चारों गति दुःखदाय । शारीरिक मनसा बहुत, क्लेश होंय भयदाय ॥ ५ ॥
 देव आदि भी ना सुखी, तृष्णावश दुःख पाय । देख जलत पर सम्पदा, इष्ट वियोग धराय ॥ ६ ॥
 जो जाने निज आपको, मरवै निज सुख सार । निजमें आपी मगन हो, सो सुखिया संसार ॥ ७ ॥
 मोह अंध जे जीवड़ा, धन कुटुम्बमें लीन । आकुलता नितपति लहै, दशा बनाई दीन ॥ ८ ॥
 द्रष्टव्य भिन्न हर जीवका, जब पलटे पर्याय । उपजै मरै जु एकला, कोई नहीं सहाय ॥ ९ ॥
 तीव्र क्लेश रोग शोकाका, आपी सुगते जाय । लाथी सगा न देखिये, भिन्न भिन्न है जीव ॥ १० ॥
 जब यह तन भी मम नहीं, साथ न जावै कोय । परिजन पुरजन धन कणा, किहू विधि साथी होय ॥ ११ ॥
 यह शरीर सुन्दर दिखे, भीतर मल समुदाय । खड़न गलन आक्षत वरै, तुरत मृतक होजाय ॥ १२ ॥
 तीन जगतमें अशुचि है, मानुष तन अधिकाय । बल्ल माल जलशुचि दरंभ, परशुधनुचि होजाय ॥ १३ ॥
 मिथ्या श्रद्धा धारकै, हिसादिक बहु पाप । करे कषायन वश रहे, हो प्रमाद सन्नाप ॥ १४ ॥
 मन बष काय न थिर रहे, योग भाव हिल जाय । कर्म वर्गणा पुंज तब, आवत तह अविकाय ॥ १५ ॥
 बध होय पिजरा बने, कार्मण तन दुखदाय । जब तक यह दूटे नहीं, मुक्ति न कोय लहाय ॥ १६ ॥
 संवर भाव विचरिये, सम्यग्दर्शन सार । संयम अर धैराग्यसे, रुकै कर्मकी धार ॥ १७ ॥
 आत्म ध्यान महा अगनि, जब निजमें मजलाय । कौटिक भव बांधे करम, तुरत भस्म होजाय ॥ १८ ॥
 तप समान इस जीवका, मित्र न को संसार । निश्चय तप निज आत्मसा, तारै भवदधि खार ॥ १९ ॥
 पुरुषाकार अकृत्रिमा, लोक अनादि अनन्त । ऊरध मध्य अधो बिषे, सिद्ध लोक सुखवन्त ॥ २० ॥
 दुर्लभ है इस लोकमें, नर तन दीरघ आयु । इन्द्रिय बलकी पूर्णता, डसै, न रोग कु वायु ॥ २१ ॥
 एक इन्द्रिय पर्यायते, सठन कठिन संसार । विरला नर तन पावता, जो सब तनमें सार ॥ २२ ॥
 या तन पाय न तप किया, लिखा न निजरस स्वाद । मूरख अवसर चूकता, छाड़ै ना परमाद ॥ २३ ॥
 धर्म मित्र या जीवका, जो शखे शिव बाहिं । दुर्गतिसे रक्षा करै, सुख देवै अधिकाहिं ॥ २४ ॥
 हा हा धिक् धिक् है मुझे, इतना काल गमाय । मोह राज्य पुत्रादिमें, कर निज सुख विसराय ॥ २५ ॥
 अब संयम धरना सही, जिन धारा बहु लोक । कर्म काट शिव थल बसे, पाया निज सुख थोक ॥ २६ ॥

कुछ खिलम्ब करना नहीं, सभ्य न पलटत जाय। क्षण क्षण आयु बिलात है, राखनको न लुपाय ॥२७॥
धम मित्रकी शरणमें, रहना ही सुखकार। जो तारे अब खिद्युते, पहुचावे शिव द्वार ॥२८॥

(२) लौकिक देवागम—इतनेमें आठ लौकिक देव बफेद घोटो दुपधा पहेने व बफेद ही मुकुट लगाए समामें विनय पहित जाते हैं और पुष्पोकी अजली मूर्तिके आगे चढ़ाकर नीचेप्रकार स्तुति करते हैं—

स्वामिस्य जगत्त्रये प्रसरतां सांगलयलाला यतः, सर्वेभ्यः सुकृतं भविष्यति अश्लीथीशुनां भोधरात् ।

घोरापञ्चलनापनोदनितो मन्व्यात्मनां जायतां, वैराग्यावगमस्तवया वरिचितस्त्वस्मै नमस्ते पुनः ॥८२३॥

संसारदुःखयिनिवृत्तिपरायणः स्वय बुद्ध्या अवस्थितिमिमां स्वपरात्मनां शिवं ।

कर्तव्यसावभिप्रतस्वनियोगभावुकानस्मान् प्रपंचयति निःकर्मणोत्सयस्तव ॥८३४॥

के धा वयं त्वदुपदेशविधानदक्षाः स्वायंभवस्य सकलागमपूनहृष्टः ।

आत्मैव केवलमयो प्रतिबुद्धसार्गं नीतः स्वय ज खलु भव्यगणोऽपि तात ॥८५॥

अयं पितेयं जननी तथेति लोका सुधार्थं व्यवहारयन्ति ।

विश्वेशिता विश्वपितामहस्तुं माताऽसि सर्वप्रतिपालनेच्छुः ॥८२६॥

अबाप्तसंसारतटः स्वलब्ध्या निमित्तमन्यत्समुपस्थितोऽसि ।

स्वयं प्रबुद्धः प्र भविष्णुरीशः कदापि नास्मत्स्तवनेन बुद्धः ॥८७॥

प्रकाशितं सूर्यसुदीक्ष्य दीपः स्वयं स्वदीपया किमु भाषयेत्तं ।

गंगा स्वयं शीतलतोपदाश्री किं पत्थलेन स्वतृषां भनक्ति ॥८२८॥

जय कल्याणपरम्पर मदनमयङ्कर निजशक्तिपते ।

जय शाश्वतसुखकर त्रिसुवनमहिधर जय जय जय गुणारत्नपते ॥८२९॥

भाषा—छन्द सुश्र्विनी—धन्य तू नाथ जो चित्त गहा धन्य हो नाथ वैराग्य उत्तम लहा ॥
तीर्थ धर्म महा वृष्टि हो लोकमें । मोह आपत्ति अगनां शर्मैं लोकमें ॥ १ ॥
ससृता दुःख मेहन तुम्ही बीर हो । कर्म सेना प्रहारन तुम्ही धीर हो ॥
बोध केवल प्रकाशन तुम्ही सूर्य हो, भव्य कमलनि विकासन तुम्हीं सूर्य हो ॥ २ ॥

हो स्वयंयुद्ध सम्यक्त गुण धारकं, ज्ञान वैराग्य जलमोहमल टारकं ।
शक्ति अनुपम धरो काम बल नाशकं, आपमें व्याप ही व्यापको भाशकं ॥ ३ ॥
नाथ अब देर कुछ भी नहीं काजिये, धार संयम कवच ध्यान असि लीजिये ।
चार घाती महा कर्म क्षय कीजिये, धर्म त्रय रत्नत्रय देव यश लीजिये ॥ ४ ॥
आपको बोधने बल धरें हम नहीं, मात्र भक्ति करें पाप आवें नहीं ।
सफल गात्रं यह नाथ भेदे तुम्हें, जन्म माना सफल नाथ देखे तुम्हें ॥ ५ ॥

इपरह बड़े भावसे स्तुति पढ़के पुण्याजलि प्रशुक्र चार्णोंपर क्षेपण करके व नमस्कार करके विनय बह्नि लोट जावें—

(३) इन्द्रागमन पालकी सहित—इतनेहीमें इन्द्रादिदेव एक दलश जलका लिये व ब्रह्माभूषणका भाल लिये तथा पाळकीको कंधेपर धरे वभामें बाते हैं । पाळकी आदिको यथायोग्य बरकर इन्द्रादि नमस्कार कर कहते हैं—

छन्द सुर्वनी—हे प्रभू मोक्ष नगरी विजय कारणे, आत्म सुख मार अनुभव अदा धारणे ।
शुक्ति लक्ष्मी मनोरु रजु वश कारणे, सिद्ध पद मारको नित्य संधारणे ॥ १ ॥
जो विपारा मनोरथ सफल हो मही, मोक्ष शत्रुपे तेरी निजय हो सही ।
कोष आदि कषाये क्षत्री नष्ट हों, ध्यान अग्नि जलें कर्म गण नष्ट हों ॥ २ ॥
ब्राधु पदवी धरो व्रत महा याचंगी, तीन गुप्ति लम्हालो स्वमिति उर धरो ।
हैं परम धर्म दश तोहि रक्षा करें, ह्यौय उपमर्ग संकट उन्हें जग करें ॥ ३ ॥
धन्य जिनराज पुरुषार्थ फीना विमल, नष्ट रागादि कर आत्म कीजे विमल ।
हम तो भक्ति करें और समरथ नहीं, ह्यौय पावन इसीसे न हों दुख कहीं ॥ ४ ॥

(४) भगवानका राज्य त्याग व पालकीपर चढ़ वन जाना—फिर आचार्य नोचेका श्लोक पढ प्रतिमापर पुण्याजलि क्षेपे ।
स्वक वभाको कहे कि भगवान् राज्यका त्याग कराते हैं और पुत्र भारतको राज्य देते हैं—

हृदाधैरैराग्य भगः श्वराज्यं पुत्राय वा भूपतिस्त्राक्षि हृत्या ।

यः क्षात्रधर्मं श्रितपंचभेदं दिदेश साक्षाच्च स एव विपः ॥

तब इन्द्र प्रतिमाजीको प्रताकर मत्तकण रमसे, वहीपर आचार्य एक नारियल रख दे य उपपर भगवानका मुकुट उतार कर रख दे । इससे यह सूचित करता है कि पुत्रको राज्यपट दिया । इन्द्र विम्बको स्नान करानेके लिये तब आपनपर विराजमान करे तब आचार्य यह मंत्र पढ़े—“ हा ई धर्मतीर्ण आदिगाथ भगवन् पांडुरुशिका पीठे तिष्ठ निष्ठ स्वाहा । ”

दीक्षोद्यमं मोक्षसुखैकसकं यं स्नापयच्चिकुरशेषशकाः ।

समेस्य संयः परया विभूत्या तं स्नापयाम्यष्टशतेन कुंभैः ॥

ॐ ह्रीं जय जय नय अर्हंतं भगवत शुद्धोदकेन स्नापयामि इति स्वाहा । फिर इन्द्र वरुणसे पौछकर, हलके चन्दनसे स्नान करे तब आचार्य यह श्लोक पढ़ें—

इन्दो जिनेन्द्रस्नपनावसाने दिव्यांगरागेण यमालिलेय ।

कपूरकालागकुंकुमाढ्यश्रीचन्दनेनास्य समालभेऽगम् ॥

ॐ ह्रीं यहजबौगधगधुरांगस्यगवलेपनकरोमि स्वाहा ।

फिर इन्द्र पौछकर पाठमें नए लाए वरुण आभूषण पहनावे तब आचार्य नीचे लिखा श्लोक पढ़ें—

विभूषयामासं जगत्त्रयस्य विभूषणं दिव्यविभूषणाद्यैः ।

पुरदरोऽयं भगवज्जिनेन्द्रं स एव देवो जिनविष एषः ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनागं विविषवलाभाणेन विभूषयामि स्वाहा । फिर आचाय नीचे लिखा वर्द्धमान मंत्र बातवार पढ़कर प्रभुपर बातवार पुष्प क्षेपे—“ ॐ णमा भयदो बद्धमाणस्य रिषहस्व नस्य वक्के जलत गच्छइ । आयास पायाल लोयाण भूयाण यूये वा विवादे वा रणगणे वा रायंगणे छम्भणे वा मोहणे वा पव्वजीवत्ताण अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा ।

फिर दीक्षा केते समय भगवानने दान किया तबकी स्थापनाके लिये आचार्य नीचेका श्लोक पढ़कर प्रतिमाके आगे पुष्प क्षेपे और कुञ्ज रुपये दानके लिये देदिये जावे उसे प्रबन्धकर्ता यथायोग्य देदेवे ।

दीक्षानुखस्तीर्थकरो जनेभ्यः किमिच्छकं दानमसो ददौ यः ।

दानं च सुकरुणमितीव वक्तु स एव देवो जिनविष एषः ॥ १ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ पाळकीपर पुष्प ढालें

महीतलायांतदिनेशविषयंकावहादोपमणिप्रभाढ्या ।

जिनेन या श्रीशिविकाधिरूढा दिव्यात्र साक्षादियमस्तु सैव ॥ २ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक व मन्त्र आचार्य पढ़ें । इन्द्र विनय रहित भगवानको ठठाकर पाळकीपर विराजमान करे तब जय जय शब्द हो पुष्पवृष्टि हो ।

आपुच्छय यंधुत्तुचित्तं महेच्छः किमिच्छकं दानविधिं विधाय ।

निष्कामतिरमावसथाध्वनो यः स एव देवो जिनविष एषः ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीबर्मातीर्थविनाय भगवनिह शिबिकायां तिष्ठ तिस्रहा ।

इस समय क्रमसे कम चार भूमिगोचरी राजा व चार विषाण तैयार रहे । ये ही पालकीको कक्षेपर रह सकेंगे—पंघमेंसे कौन बने इसके निर्णयके लिये अन्य स्थानपर बोला बोलकर पढ़के तय किया जावे । जो रुपया आवे प्रतिष्ठामें सर्व हो । जितनी दूर बन हो उत्र मर्यादाके बाठ भाग किये जावें—१ भाग तक भूमिगोचरी भगवानकी पालकीको लेकर चलें, फिर एक भागतक विषाण राजा के चलें, फिर इन्द्रादिक देव के चलें । जिन समय चार भूमिगोचरी राजा पालकी ठठावें तब समय नीचेका श्लोक पढ़ आचार्य प्रतिमा पर पुण्य डालें—

यथाभितां श्रीशिबिकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ॥

जगसुः पृथिव्यां प्रथमं नरेन्द्राः स एव देवो जिनर्षिष एषः ॥ १ ॥

जब विषाण के चलें तब यह पढ़े—

यथाभितां श्रीशिबिकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ॥

जगसुः पृथिव्यामथ सेचरेन्द्राः स एव देवो जिनर्षिष एषः ॥ २ ॥

फिर जब इन्द्र के चलें तब यह श्लोक पढ़े और पुण्य क्षेपे—

यस्य प्रभोः श्रीशिबिकां प्रमोदात् स्कंधे समारोप्य वियत्पथेन ।

तपोवनं निन्युरथामरेंद्राः स एव देवो जिनर्षिष एषः ॥

दोनों तरफ इन्द्रादि चमर ढारते जावें, बाषमें मडियां हों, बाजे बजें, नृत्य होता हो, भजन होते हों, पर्व पंघ बाध जावे । बाध घटेके भीतर वनमें पहुच जावे ।

(५) तप वनमें तप लेनेकी क्रिया—पहलेसे ही आचार्य जाकर तपोभूमिकी नीचे लिखा मंत्र पढ़ शुद्ध करे, पानी छिड़के—

“ ॐ नीरजसे नमः ” फिर बटवृक्षकी स्थापना नीचे लिखा मंत्र पढ़ करें, वृक्षपर पुण्य क्षेपे ।

ॐ ह्रीं गमो ब्राह्मताण धृषभजिनस्य कटाक्ष्य जिनदीक्षा वृक्ष अवतर २ ब्रवीषट् । फिर नीचेका श्लोक पढ़ दीक्षामंडपपर पुण्य क्षेपे—
एवं विनिष्कस्य यमाससात् पुण्याश्रमं तीर्थकरः प्रशान्तः ।

स एव वायं जिनमण्डपोस्तु श्रीमूलवेद्यां विहितप्रतीच्यां ॥

फिर आचार्य शिबिकाके स्थापनके लिये नीचे लिखा श्लोक पढ़ शिबणपर बाधिया बनावे व पुण्य क्षेपे—

स्वचित्तकल्पे विपुले विशुद्धे शिलातले यत्र तु चन्द्रकान्ते ।

सुरेन्द्रकल्पे भगवान्निविष्टस्तदेष पीठं दृढमेतदस्तु ॥

फिर नीचेका श्लोक न मत्र पदा जाने तथा इन्द्र पालकीसे भगवानको उतारकर शिलापर पबरावे । मुस पूर्व या उत्तर हो—

उद्धतुसः पूर्वमुसोऽथवा यो निविष्टवायुतथिलोपरिष्ठात् ।

प्रतऽयथा निर्धृतिस्त्राशनोत्कः स एव देवो जिनर्षिष एषः ॥

ॐ ही बर्मतीर्षिणाथ भगवनिह सुरेन्द्रविचितचन्द्रकान्तशिकाते तिष्ठ तिष्ठ स्वाहा ।

फिर नीचे लिखा श्लोक पठ आचार्य चारोंतरफ पुष्प क्षेपे—

तपोवन यत्तद्विशस्तु दीक्षावृक्षोऽपि सोयं न शिक्षापि सेयं ।

स पुण्यकालोऽव्ययमेव यद्यदीक्षोचितं तत्तद्विशस्तु सर्वं ॥

फिर आचार्यभक्ति और श्रुतभक्ति पठे । फिर नीचे लिखा श्लोक मत्र पद प्रतिमापर पुष्प क्षेपे न ब्रह्मभूषण उतारकर एक थालीमें रखे ।

यः सर्वसिद्धान्प्रणिपत्य केशानुरपाठ्य दिव्यांबरालयभूषाः ।

त्यक्त्वा प्रब्रजाज निजातल्लब्धै स एव देवो जिनर्षिष एषः ॥

ॐ नमो भगवतेऽर्हते षणः नामाधिकप्रपनाय ब्रह्मभूषणमपनयामि स्वाहा । फिर भगवानकी प्रतिमाके मस्तकमें गाढी केशर लगाकर तबपर लौंग केशोंके भाँवोंकी स्थापनामें चिपका दे । नमः सिद्धेभ्यः कहकर तत्र केशरूप लौंगोंको किची अन्य पेटी या थालीमें रखे अर्थात् केशलौंच करे । सूत्रक पात्र हरएक क्रियाको ब्रह्मज्ञाता जावे तब दर्शकगण जय जयकार करें । उन केशोंकी थालीको वेदीपर रखी रहने दी जावे । फिर आचार्य ऐसा कहे—“अहं इवं वायवाविरतोऽस्मि” फिर विद्वमक्रिया पाठ पठे ।

पश्चात् केशरसे चोनेकी महीन सुईद्वारा प्रतिमापर अंक न्यास करे—पहले आचार्य मातृका मंत्र १०८ बार पढ़कर भाँवोंके द्वारा अपने अगमें अक्षरोंको वेठा ले । इष्ट समय ब्रह्मजनोंका मत लगानेको या तो १२ तपका सपदेश हो वा वैरागी भजन हो—

मातृका मंत्र ।

ॐ नमोऽर्हं न आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ए ऐ ओ औ अ अः क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह । कीं हीं कौं स्वाहा ।

भागै जहाँ प्रतिमाके अगोंपर इन अक्षरोंको लिखना कहेंगे वही अपने अगोंपर भी ध्यानसे बैठा ले ।

(१) ओं नमः ऐसा कहकर अ अक्षरको ललाट या माथेपर लिखे । (२) औं आं नमः ऐसा कहकर आ की मुखकी गोलाईपर लिखे अर्थात् मुखवृत्तपर लिखे । (३) ॐ इ नमः ऐसा कह इ को दाहने आलमें लिखे । (४) ॐ ई नमः ऐसा कह ई को बाईं आलमें लिखे । (५) ॐ उ नमः ऐसा कह उको दाहने कानमें लिखे । (६) ॐ ऊ नमः ऐसा कह ऊ को बाए कानमें लिखे ।

(७) ॐ ऋ नमः ऐषा क्व ऋ को दाहनी तरफके नाक छिद्रमें लिखे । (८) ॐ ऋ नमः ऐषा क्व ऋ को बाई तरफके नाक छिद्रमें लिखे । (९) ॐ लं नमः ऐषा क्व ल को दाहने (गण्डस्थ) गाळपर लिखे । (१०) ॐ लृ नमः ऐषा क्व लृ को बाए गाळपर लिखे । (११) ॐ ए नमः ऐषा क्व ए को ऊपरको ओठमें । (१२) ॐ ऐ नमः ऐषा क्व ऐ को नीचेके ओठमें । (१३) ॐ ओं को नमः ऐषा को ओं को ऊपर व नीचेके दातोंमें । (१४) ॐ अ अः इति नमः ऐषा क्व अ अः को चिह्नके ऊपर लिखे । (१५) ॐ क ख नमः ऐषा क्व क ख को दाहनी मुजापर । (१६) ॐ ग घ नमः ऐषा क्व ग घ को दाहने हाथकी अंगुलियोंमें । (१७) ॐ ङ नमः ऐषा क्व ङ को दाहने हाथके अप्रभागमें या हथेलीमें । (१८) ॐ च छ नमः ऐषा क्व च छ को बाई मुजापर । (१९) ॐ ज झ नमः ऐषा क्व ज झ हाथकी अंगुलियोंमें । (२०) ॐ ञ नमः ऐषा क्व ञ को बाए हाथके अप्रभागमें या बाई हथेलीपर । (२१) ॐ ट ठ नमः ऐषा क्व ट ठ को दाहने चरणके मूळमें । (२२) ॐ ड ढ नमः ऐषा क्व ड ढ को दाहने चरणकी गुल्फमें या टिकूर्यामें । (२३) ॐ ण नमः ऐषा क्व ण को दाहने चरणके अप्रभागमें या तल्वेमें । (२४) त थ नमः ऐषा क्व त थ को बाए चरणके मूळमें । (२५) ॐ द ध नमः ऐषा क्व द ध को बाए चरणकी गुल्फमें । (२६) ॐ नं नमः ऐषा क्व न को बाए चरणके अप्रभागमें । (२७) ॐ प फ नमः ऐषा क्व प फ को दाहने पगकी पीठपर । (२८) ॐ व भ नमः ऐषा क्व व भ को बाए पगकी पीठपर । (२९) ॐ म नमः ऐषा क्व म को उदरमें । (३०) ॐ य नमः ऐषा क्व य को हृदयमें । (३१) ॐ र नमः ऐषा क्व र को दाहने कंधेपर । (३२) ॐ ल नमः ऐषा क्व ल को गलेमें (ककुब्धि) । (३३) ॐ व नमः ऐषा क्व व को बाए कंधेपर । (३४) ॐ श नमः ऐषा क्व श को हृदयसे लेकर दाहने हाथ तक लिखे । (३५) ॐ षं नमः ऐषा क्व ष को हृदयसे लेकर बाए हाथ तक लिखे । (३६) ॐ षं नमः ऐषा क्व षं को हृदयसे लेकर दाहने पग तक लिखे । (३७) ॐ हं नमः ऐषा क्व ह को हृदयसे लेकर बाए पग तक लिखे । (३८) ॐ क्ष नमः ऐषा क्व क्ष को हृदयसे लेकर उदर तक लिखे ।

फिर आचार्य १०८ दफे नीचे लिखा अनादिबिद्म मंत्र जपे—“ॐ णमो अरहाताण, णमो सिद्धाण, णमो आश्रीयाण णमो उव्वञ्जायाणं” णमो लोए उव्वञ्जाहूण । चत्तारिमगळ, अरहतमगळ, बिद्धमगळ, षाडूमगळ, केवलपणत्तोश्ममोगल । चत्तारिलो गुत्तमा, अरहत लो गुत्तमा, बिद्धलो गुत्तमा, षाडूलो गुत्तमा, केवलपणत्तोश्ममो लो गुत्तमा, चत्तारिषरण पव्वज्जामि, अरहतषरण पव्वज्जामि, बिद्धषरण पव्वज्जामि, षाडूषरण पव्वज्जामि, केवलपणत्तोश्ममोषरण पव्वज्जामि । झौं झौं स्वाहा । १०८ लौंग लेकर जपठे या माळासे जपठे ।

फिर एक रकाबीमें लौंग या पुष्प लेकर प्रतिमापर नीचे लिखे मंत्रोंका संस्कार करे । अब उपदेश या भजन बन्द हो जावें । जैसे आचार्य मंत्र बोले तबीका भाव सूत्रक पात्र या कोई दर्शकोंको समझाता जाय—“ जैसे जब कहा जाय बर्द्शनसंस्कारः भवतु तब समझावे कि भगवानके विश्वमें सम्यग्दर्शनका संस्कार प्राप्त हो यह भावना की गई है । इत्यादि ।

(१) ॐ ह्रीं इह अर्हति बर्द्शनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । इतना कह पुष्प या लौंग क्षेपे । इषी तरह पुष्प क्षेपता जाय । (२) ॐ

हीं इह अर्हति वज्रानुत्पत्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३) अं हीं इह अर्हति चारित्र्यस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४) अं हीं इह अर्हति सत्पः
 परकारः स्फुरतु स्वाहा । (५) अं हीं इह अर्हति (यथा दर्शन ज्ञान चारित्र्य व तपके वीर्ये प्रयोजन मालूम होता है) पदवीचतुष्टयस्कारः
 स्फुरतु स्वाहा । (६) अं हीं इह अर्हति अष्टप्रवचनमातृकास्कारः स्फुरतु स्वाहा । (पांच समिति तीन गुप्तिको अष्टप्रवचनमातृका कहते हैं)
 (७) अं हीं इह अर्हति शुद्धशुद्धकावलम्बस्कारः स्फुरतु स्वाहा (आठ शुद्धि-भाव शुद्धि, कायशुद्धि, विनयशुद्धि, ईर्ष्यापशुद्धि, भिक्षाशुद्धि,
 प्रतिष्ठापनशुद्धि, शयनासनशुद्धि तथा वाक्यशुद्धि)-(८) अं हीं अर्हति द्वाविंशतिपराषहजयस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (९) अं हीं इह अर्हति
 त्रियोगेन वयमाशुत्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१०) अं हीं इह अर्हति कुनकारितानुमोदनेरितिवारनिवृत्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (११) अं इह अर्हति शीलव्रतस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१२) अं हीं इह अर्हति दशव्यसोपरमस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (५ इन्द्रियव्यसम,
 ५ प्राणव्यसम या पांच प्रकार जीव रक्षण) । (१३) अं हीं इह अर्हति पञ्चेन्द्रियनिर्जयस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१४) अं हीं इह अर्हति
 वज्रानचतुष्टयनिर्वाहस्कारः स्फुरतु स्वाहा (यथा मतिज्ञानादि चार स्थिर रहे) । (१५) अं हीं इह अर्हति सत्तमक्षमादि दशविषयवर्मावर्णनस्कारः
 स्फुरतु स्वाहा । (१६) अं हीं इह अर्हति अष्टादशवह्नशीलपरिशौचनस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१७) अं हीं इह अर्हति चतुरशीतवह्नी-
 तारगुणवमाश्रयस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१८) अं हीं इह अर्हति अतिशयविशिष्टवर्मावर्णनस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१९) अं हीं इह अर्हति
 अप्रमत्तव्ययस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२०) अं हीं इह अर्हति सुदृढयुतनेजोवाप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२१) अं हीं इह अर्हति अप्रमत्त-
 पक्षपक्षेण्यारोहणस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२२) अं हीं इह अर्हति अनन्तगुणविशुद्धिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२३) अं हीं इह अर्हति
 अयाप्रमत्तकरण या अन्धःकरणप्राप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२४) अं हीं इह अर्हति पृथक्स्ववित्तकीचाराशुक्लध्यानस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (२५) अं हीं इह अर्हति अपूर्वकरणप्राप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२६) अं हीं इह अर्हति अनिवृत्तिकरणप्राप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (२७) अं हीं इह अर्हति वादरकवायचूर्णनस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२८) अं हीं इह अर्हति सूक्ष्मकवायचूर्णनस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (२९) अं हीं इह अर्हति सूक्ष्मवाग्म्यायचारित्र्यस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३०) अं हीं इह अर्हति प्रकीर्णमोहस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (३१) अं हीं इह अर्हति यथास्वयातचारित्र्यावाप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३२) अं हीं इह अर्हति एकस्ववित्तकीचाराशुक्लध्यानाव-
 लम्बनस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३३) अं हीं इह अर्हति धातिवातपमुद्भूतकैवल्यवागमस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३४) अं हीं इह अर्हति
 वर्मतीर्थवृत्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३५) अं हीं इह अर्हति सूक्ष्मक्रियाशुक्लध्यानपरिणत्वस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३६) अं हीं इह
 अर्हति शीलेशीकरणस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३७) अं हीं इह अर्हति परमवयस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (३८) अं हीं इह अर्हति योगचूर्णकृतिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३९) अं हीं इह अर्हति योगयुतिभास्वस्कारः स्फुरतु स्वाहा (अयोग्य
 गुणस्थान प्राप्ति) । (४०) अं हीं इह अर्हति पशुच्छनक्रियाशुक्लध्यानप्राप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४१) अं हीं इह अर्हति निर्जरायाः
 परमकाष्ठासूक्ष्मस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४२) अं हीं इह अर्हति पूर्वकर्मक्षयाप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४३) अं हीं इह अर्हति
 अनादिभवपरावर्तनविनाशस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४४) अं हीं इह अर्हति द्रव्यक्षेत्रकाळभवभाष्यपरावर्तननिष्कृतिस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

(४५) ॐ ह इह अर्हति षतुर्गतिपरावृत्तिपरंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनतगुणषिद्धत्वप्राप्तिपरंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४७) ॐ ह्रीं इह अर्हति अदेहबहन्शनोप्रयोगचास्त्रिपरंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४८) ॐ ह्रीं अहं इहाहंतिविद्ये अदेहबहोत्वदर्शनोपयोगै-
श्र्यपर्यप्राप्तिपरंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । नोट-सूत्रकार या पंडित यह ब्रह्मवि कि इष ब्रिम्बमें यहगुण प्रकाशमान हों ऐसा स्थापन इष ब्रिम्बमें किया जाता है । अब पूजा की जाये । मंडलके आगे आचार्य पूजा करे इन्द्र भी शामिल हो ।

(६) तपकल्याणककी पूजा ।

अथासिंधाराव्रतसद्धितीयं निर्वाणदीक्षाग्रहणं लघानम् । यमर्चयामासुरशेषशकास्तमर्चयामो जगदर्चनीयम् ॥

ऐसा कह पुष्पांजलि क्षेपे ।

सारशांतरसनिलजितात्मबन्धपदाश्रयति तेन वारिणा ॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥

ॐ ह्रीं श्री तीर्थकृन्मुनिलकाम जन्मनराश्रुधुविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

सद्गुणमणुनचदनेन ते कीर्तिवत्सकलतोषपोषिणा ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ चंदनं ॥ २ ॥

स्वन्मुखेन्दुभजनार्थमागतैर्भ्रतृजैरिव दलक्षकाक्षतैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥

सुप्रसादसुकुमारताद्विभिस्रबद्धचोभिरिव नव्यपुरुषकैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ पुरुषं ॥ ४ ॥

आरुणाय चरुणासृतांशुबद्धयंजनैरपि तदंकरांकिभिः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ चरुं ॥ ५ ॥

धर्मदीपक न ते वयं समा, भवतुमित्थमितवत्पदीपकैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ दीपं ॥ ६ ॥

सेव्यवाद् नपयेद्भ्रभंगंस्तयान्ब्रह्मधूपधूमकैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ धूपं ॥ ७ ॥

नम्रभव्यसुकृतानुकारिभिः सारभूतसहकारकाङ्क्षिभिः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ फलं ॥ ८ ॥

गुणमणिगणसिंघूर्णव्यलोकैकबंधून् । प्रकटितजिनसागारैश्चस्तमिथ्यात्वमार्गीन् ॥
परिचितनिजतत्त्वान्पालिताश्रोपसत्त्वान् । शम्भरसजितचंद्रानर्धयामो सुनीन्द्रान् ॥ अर्ध्यं ॥

श्रीभद्रबोधप्रयाह्य प्रबिम्बलचरितस्वात्मसद्दयाननिष्ठ ।

स्याद्वादांभोजमानो भ्रिजगहुपकृतिव्यग्रयोगीश्वर त्वाम् ॥

अर्ध्यं चानर्धनानाविधिविहितं द्रव्यसुद्धार्यं वर्धं ।

प्रेक्षिष्योदारपुष्पांजलिअलिकलितं श्रूरिभक्तया नमामः ॥ अर्धार्घ्यं ॥ १० ॥

अब २४ भगवानकी तपकल्याणककी पूजा की जावे ।

गीता छन्द—श्री रिषभदेव सु आदि जिन श्रीवर्द्धमान तु अंत हैं ।

बन्दुहुं चरण वारिज तिन्होंके जपत तिनको संत हैं ॥

करके तपस्या साधु त्रत ले मुक्तिके स्वामी अए ।

तिन तपकल्याणक यजनको द्रव्य आठों हैं तए ॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादि वर्द्धमानजिन भग्रावतरावतर बबौवट् अत्र तिष्ठ ठ ठ, अत्र मम बनिहितो भवर वषट् ।

छन्द वाढी—शुचि गंगाजल भर झारी, रुज जन्म मरण क्षयकारी ।

तपसी जिन चौबिस गाए, हृद्य पूजत विघ्न नशाए ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि वर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो जल निर्वपामीति स्वाहा ।

शीतल चंदन घसि लाऊं, भयका आताप शमाऊं । तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ चंदनं ॥
अक्षत ले शशि दुत्तिकारी, अक्षयगुणके करतारी । तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ अक्षतं ॥
बहु फूल सुवर्ण चुनाऊं, निज काम व्यथा हटथाऊं । तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ पुष्पं ॥
चरु ताजे स्वच्छ बनाऊं, निज रोग क्षुधा मिटवाऊं । तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ चरुं ॥
दीपक ले तम हरतारा, निज ज्ञानप्रभा विस्तारा । तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ दीपं ॥
धूयायन धूप खिवाऊं, निज आठों कर्म जलाऊं । तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ धूपं ॥
फल सुन्दर ताजे लाऊं, शिबफल ले चाह मिटाऊं । तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ फलं ॥
शुभ आठों द्रव्य मिलाऊ, करि अर्ध परमसुख पाऊ । तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ अर्धं ॥

नीमी बदि चैत प्रमाणी, वृषमेश तपस्या ठानी । निजमें निज रूप पिछाना, हम पूजत पाप नशाना ॥

ॐ ही चैत्रकृष्णानवर्ष्या श्री ऋषभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

दशमी शुभ माघ बदीको, अजितेश लियो तप नीको । जगका सब मोह हटाया, हम पूजत पापभगाया ॥

ॐ ही माघकृष्णादशम्या श्री अजितनाथाय जिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

भगसिर सुदि पूरणमासी, संभव जिन होय उदासी । केशलौच महातप धारो, हम पूजत भय निरवारो ॥

ॐ ही अगहनशुक्लपूरणमास्या श्रीरुच्यनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

द्वादश शुभ माघ सुदीकी, अभिन्दन बन चलनेकी । चिन ठान परमतप लीना, हम पूजत हैं गुण चीन्हा ॥

ॐ ही माघशुक्लद्वादश्या श्री अभिनन्दनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

नीमी वैशाख सुदीमें, तप धारा जाकर बनमें । ओ सुमतिनाथ सुनिराई, पूजूं मैं ध्यान लगाई ॥

ॐ ही वैशाखशुक्लानवम्या श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५)

कातिक बदि तेरसि गाई, पद्म प्रभु समता आई, बन जाय घोर तप कीना, पूजें हम सम सुख भीना ।

ॐ ही कार्तिकृष्णात्रयोदश्या श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

सुदि द्वादश जेठ सुहाई, धारा भावन प्रभु आई, तप लीना केश उपोड़े, पूजूं सुपाथ्य यति ठाड़े ॥

ॐ ही ज्येष्ठशुक्लद्वादश्या श्री सुपाथ्यजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

एकादश पौष बदीको, चन्द्रप्रभु धारा तपको । धनमें जिन ध्यान लगाया, हम पूजत ही सुख पाया ॥

ॐ ही पौष कृष्णाएकादश्या श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

अगहन सुदि एकन जाना, श्री पुष्पवत्त अगधाना । तप धार ध्याय निज कीना, पूजूं आतम गुण चीन्हा ॥

ॐ ही अगहनशुक्लएक श्री पुष्पवत्तजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

द्वादशि बदी माघ महीना, शीतल प्रभु ससता भीना । तप राखो योग सम्हारो, पूजें हम कर्म निवारो ॥

ॐ ही माघकृष्णा द्वादश्या श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय तप जन्मकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

बदि फाल्गुण ग्यारस गाई, अयांसनाय सुल्लदाई, हो तपही ध्यान एभाया, हम पूजत हैं जिनराया ॥

ॐ ही फाल्गुणकृष्णा एकादश्या श्री अयांसनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

बदि फाल्गुण चौदसि स्वामी, श्रीवासुपुत्र्य शिवनामी । तपसो हो ससता खाधी, रूप पूजत धार समाधी ॥

ॐ ही फाल्गुणकृष्णा एकादश्या श्री वासुपुत्र्यजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)

वदि माघ चौथ हितकारी, श्री विमल सुदीक्षा धारी । निज परिणतिमें लय पाई, हम पूजत ध्यान लगाई ॥

ॐ ह्रीं माघ कृष्णाचतुर्थ्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

द्वादशि वदि जेठ सुहानी, बन आए जिन त्रय ज्ञानी । घर सामायिक तप साधा, हम पूजूं अनंत हरबाधा ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णाद्वादश्यां श्री अनतनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

तेरस सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ तप लीना । वनमें प्रसु ध्यान लगाया, हम पूजत मुनिपद धयाया ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

चौदस शुभ जेठ बदीमें, श्री शांति पधारे वनमें । तड़ परिग्रह तज तप लीना, पूजूं आतमरस भीना ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)

करि दूर परिग्रह सारी, बैसाख सुदी पड़िबारी । श्री कुन्धु स्वात्मरस जाना, पूजनसे हो कल्याणा ॥

ॐ ह्रीं बैशाखशुक्लप्रतिपदाभ्यां श्री कुन्धुनाथजिनेन्द्राय जम्भकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)

अगहन सुदि दशमी गई, अरनाथ छोड़ गृह जाई । तप कीना होय दिगंबर, पूजें हम शुभ भावां कर ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लचतुर्दश्यां श्री अरनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय निर्वपामीति स्वाहा । (१८)

अगहन सुदि ग्यारम कीना, सिर केशलोच हित चीन्हा । आमछ्दि घती व्रतधारी, पूजें नित साम्य प्रचारी ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लएकादश्यां श्री मछिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)

बैसाख वदि दशमीको, मुनिसुव्रत धारा व्रतको । समता रसमें लौ लाए, हम पूजत हा सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं बैशाखकृष्णादशम्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)

दशमी आषाढ वदोकी, नमिनाथ हुए एकाकी । वनमें निज आतम धयाए, हम पूजत ही सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णादशम्यां श्री नेमिनाथाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)

छठि श्रावण शुक्ला आई, श्री नेमिनाथ बन जाई । करुणा धर पशु छुडाए, धारा तप पूजूं धयाए ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठ्यां श्री नेमनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)

छवि पौष ङ्कादशि श्यामा, श्री पार्श्वनाथ गुणधामा । तप ले बन आसन ठाना, हम पूजत शिवपद पाना ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाचतुर्दश्यां श्री पार्श्वजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)

अगहन वदि दशमी गई, बारा भावन शुभ भाई । श्री बर्द्धमान तप धारा, हम पूजत हों सब पारा ॥

ॐ ह्रीं अगहनकृष्णादशम्यां श्री बर्द्धमानजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

भुजगप्रयात छन्द—नमस्ते नमस्ते सुनिन्दा । निवारें भली भांतिसे कर्म फन्दा ॥
 संभारे सु द्वादश तपं बन मंझारी । सदा हम नमत हैं तिन्हें मन सम्हारी ॥ १ ॥
 त्रयोदश प्रकार सु चारित्र धारा । अहिंसा महा सत्य अस्तेय प्यारा ॥
 परम ब्रह्मवर्य परिग्रह तजाया । सु धारा महा संयमं मन लगाया ॥ २ ॥
 दया धार भूको निरखकर चलत हैं । सुभाषा महा शुद्ध मीठी बढत हैं ।
 करै शुद्ध भोजन सभी दोष टालें । दयाको धरे वस्तु लें मल निकाले ॥ ३ ॥
 बचन काय मन गुप्तिको नित्य धारें । धरम ध्यानसे आरम अपना विचारें ॥
 धरें सास्य आबं रहें लीन निजमें । सु चारित्र निश्चय धरें शुद्ध मनमें ॥ ४ ॥
 ऋषभ आदि श्री वीर चौबीस जिनेशा । बड़े वीर क्षत्री गुणी ज्ञान ईशा ।
 खड्ग ध्यान आतम कुशल मोह नाशा । जजें हम यतनसें स्वआतम प्रकाशा ॥ ५ ॥

दोहा—धन्य साधु सभ गुण धरें, सहें परीसह धीर । पूजत मंगल हों महा, टलें जगतजन वीर ॥

ॐ हीं श्री ऋषभादि वीरांत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो महार्घं निर्वयामीति स्वाहा ।

पूजाके पीछे फिर आचार्य नीचेका श्लोक पढ़ सामाधिक चारित्रिका स्थापन प्रतिमामें करके पुष्प प्रतिमापर क्षेपें ।

यः सर्वसावद्यनिवृत्तिरूपं, चारित्रनाथं विगतप्रमादं ।
 आसेद्विबान्सिद्धगुणानुरक्तः, स एव देवो जिनविम्ब एषः ॥

फिर चार बत्तीका दीपक जलाकर नीचे लिखा श्लोक पढ़ प्रतिमापर पुष्प क्षेपें । संघको सूचित करे कि भगवानको मनःपर्यय-ज्ञानकी प्राप्ति हुई है अर्थात् भगवान ४ ज्ञानचारी हैं ।

यदा तु सामयिकभाववृत्तं, तदा सन्नःपर्यययुयबोधं ।
 अतश्चतुर्ज्ञानधिराजितो यः, स एव देवो जिनविम्ब एषः ॥

फिर इन्द्रादि प्रणाम करके शान्तिभक्ति पढ़ें । फिर आचार्य भगवान्के केशोंको पात्रमें स्थापकर नीचेका श्लोक पढ़कर भगवान्के आगे पुष्प ढालें—

यस्य प्रभोः केशकलापमिन्द्रः, सम्पुञ्ज निष्पन्न च रत्नपात्रम् ।
निक्षेपयामास पयः पयोधौ, स एव देवो जिज्ञासिन्मथ एवः ॥

फिर आचार्य इन्द्रको कहे “ इन पवित्र केशोंको क्षीरघमुद्रमें क्षेपो ”, इन्द्र लेकर गाले वालेके बाय देवोंके बाय जाकर किर्वा नदी या कूपमें क्षेपे । फिर आचार्य सर्व उपस्थित मंडलीसे नियमादि व व्रतादि ऐनको कहे । कुछ देर पीछे विसर्जन करके जय बोले, सर्व प्रभु जाधि । आचार्य मूर्तियोंको कपड़ेमें ढककर मूल वेदीपर लाकर विराजमान करे तब अन्य प्रतिमाओंके वखादि उतारकर चन्दनसे छेपकर फिर पौछकर मूल प्रातमाके समान अक न्यास करे अर्थात् अक्षरोंको खिले फिर ४८ प्रकार पढके प्रवपरा पुष्प ढांछे और कहे— अस्मिन् विन्धे तपकल्याणक आरोपयामि स्वाहा । फिर नमस्कार कर तपकल्याणककी क्रिया समाप्त करे ।

अध्याय सातवां । ज्ञानकल्याणक ।

(१) भगवानका प्रथम आहार—तपकल्याणकके दूधरे अर्चये, इन्द्र आदि पात्र मंडपमें आवें और पढेके दिनकी भांति अग शुद्ध करके अभिषेक व पूजा तथा होम करलें । मंडपमें ही यह दृश्य दिखाया जावे । पढेके चवतूरे तक परदा पड़ा हो । दूधरे चवतूरे पर जहातक विधि एकत्र की जावे वहांतक परदा रहे । दूसरे चवतूरे पर राजा सोम व श्रेयांशके घरकी कल्पना की जावे । आहार देनेके लिये श्शुका रघु तैयार किया जावे व पूजनकी घामश्री हो । एक स्थान आहार देनेको व एक स्थान पढेके भगवानकी विराजमान कर पूजा करनेको रहे । कोई दो गुरुश्योंको राजा सोम व श्रेयांश स्थापित किया जावे । इसके लिए बोली बोल की जावे—जो अधिक रुमया प्रतिष्ठाके सर्वमें दे उन्हें ही बनाया जावे । यह पढेकी किया जावे । जो बनें वे ही बहित हों व न्यायमार्गी जिनधर्मके पके श्रद्धालु हों । राजा सोम व श्रेयांश शुद्ध धोती दुपट्टा पहनें, मस्तक ढके, दोनों स्त्रियां भी शुद्ध वल पहनें । चारों जने नारियलसे ढका पानीका कलश लेकर चवतूरेके आगे ही द्वाारापेक्षणके निमित्त खड़े हों । इतनेमें परदा उठे ।

आचार्य मूल प्रतिमाको लेकर मंडपके बाहरसे शिरपर धरकर लीवे उच समय सर्व प्रभाजन जयजयकार शब्द कहे । अब चवतूरेके पात्र प्रसु आजवें तब राजा सोम कहे—“ अत्र आहार पानी शुद्ध, तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ ” फिर आचार्य भगवानको उच आसनपर विराजमान करे तब दातार राजा सोम भगवानके चाणोंको शुद्ध जलसे धोवें, गन्धोदक लगावें फिर हाथ धो अष्टद्वयसे नीचे प्रकार पूजन करें । पूजन करके तीन प्रदक्षिणा दे नमस्कार करें फिर नौ दफे णमोकार मंत्र पढ़ें । भगवानको आचार्य उठाकर दूपरे उच आसनपर विराजमान करें तब राजा सोम श्शुकरकी धारा भगवानके हाथपर ढांछे तब हां ऊपरसे रत्नोंकी व पुष्पोंकी छुट्टि हो । मंडपके बाहर बाजे बजे,

भीतर घंटा घड़ियाल बजे, मन्द सुगन्धित पवन चबानेके लिये सुगन्धित धूप खेई जावि तथा लोग यह कहै-धन्य यह दान, धन्य यह पात्र । श्रीतीर्थकर ऋषभदेव, धन्य यह दातार ! चारौ तरफ खूब जयजयकार शब्द हो । फिर शुद्ध जलसे हाथोको धोकर कपड़ेसे पौछ दे । आचार्य प्रतिमाको दूसरे आसनपर विराजमान करे और आचार्य या सूचक पात्र या अन्य कोई पंडित दानका महान्य्य समझावै तथा उप समय राजा सोम व श्रेयास लो ब्रह्मिष्ठ हाथ जोड़े प्रसुके षन्मुख खड़े रहे तथा चार दान व विधादानार्थ कुछ रकमकी घोषणा करावै तथा आचार्य अन्य लोगोंको भी दानकी प्रेरणा करे । यदि दानकी इच्छा हो तो मुखिया पट्टी लेकर धक्के पात्र घूम आवि । इधर आचार्य भगवानको लेकर मंडपसे बाहर ले जाकर मूल वेदीपर विराजमान करे, दूसरे चबूतरेपर भी परदा पड़ जावि परन्तु मंडपमें मजन होने लगें । जबतक दान न लिख जावि मंडपसे किसीको जाने न दिया जावि ।

पूजा जो आह रके समय पढ़ी जावे ।

पहले ही राजा सोम व श्रेयास मिलकर स्तुति पढ़े—

पढ़ी छन्द—जय जय तीर्थकर गुरु महान, हम देख हुए कृतकृत्य प्राण ।
 महिमा तुमरी बरणी न जाय, तुम शिव मारग साधत स्वभाव ॥ १ ॥
 जय धन्य धन्य ऋषभेश आज, तुम दर्शनसे सब पाप भाज ।
 हम हुए सु पावन गात्र आज, जय धन्य धन्य तप सार साज ॥ २ ॥
 तुम छोड़ परिग्रह मार नाथ, लीनो चारित तप ज्ञान साथ ।
 निज आत्म ध्यान प्रकाशकार, तुम कर्म जलावन वृत्ति धार ॥ ३ ॥
 जय सर्व जीव रक्षक कृपाल, जय धारत रत्नत्रय विशाल ।
 जय सौनी आत्म मननकार, जग जीव उद्धारण मार्ग धार ॥ ४ ॥
 हम गृह पवित्र तुम चरण पाय, हम मन पवित्र तुम ध्याय ध्याय ।
 हम भए कृतारथ आप पाय, तुम चरण सेवने चित बढ़ाय ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थकर पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् । यालमें पुष्प डाले ।

वपत तिलका—सुन्दर पवित्र गंगाजल लेय झारी, डारुं त्रिधार तुम चरणन अग्र भारी ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर सुनींद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्ताहा ।

श्री चन्दनादि शुभ केजार मिश्र लाये, अब ताप उपशान्न करण निज भाव ध्याए ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ चंदनं ॥
 शुभ श्वेत निर्मल सुअक्षत धार थाली, अक्षय गुणा प्रगट कारण शक्तिशाली ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ अक्षतं ॥
 चम्पा गुलाब इत्यादि सु पुण्य धारे, है काम शत्रु बलवान तिसे विदारे ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ पुष्पं ॥
 फेणी सुहाल बरफी पकवान लाए, क्षुद्ररोग नाशने कारण काल पाए ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ बहं ॥
 शुभ दीप रत्नत्रय लाय तमोपहारी, तम मोह नाश मम होय अपार भारी ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ दीपं ॥
 सुन्दर सुगन्धित सु पावन धूप खेऊं, अरु कर्म काटको बाल निजात्म बेऊं ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ धूपं ॥
 द्राक्षा बदाम फल सार मराय थाली, शिव लाभ होय सुखसे समता संभाली ॥
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ फलं ॥
 शुभ अष्ट द्रव्य मय उत्तम अर्घ लाया, संसार खार जल तारण हेतु आया ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ अर्घं ॥

जयमाल ।

छन्द सृष्टिनी-जय सुदारूप तेरे सदा दोष ना, ज्ञान श्रद्धान पूरित धरें शोक ना ।

राजको त्याग वैराग्य धारी भए, मुक्तिका राज लेने परम मुनि थये ॥ १ ॥

आत्मको जानके पापको भानके, तत्त्वको पायके ध्यान उर आनके ।

कोधको हानके मानको हानके, लोभको जीतके मोहको भानके ॥ २ ॥

धर्म सय होयके साधते मोक्षको, बाधते मोक्षको जीतते द्वेषको ।

शांतिता धारते साम्यता पालते, आप पूजन क्रिये सर्व अथ बालते ॥ ३ ॥

धन्य हैं आज हम दान सम्यक् करें, पात्र उत्तम महा पापके दुख दूरें ।

पुण्य सम्पत्त अरें काज हमरे सरें, आप सम होयके जन्म सागर तरें ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर मुनीन्द्रिय महार्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

(२) भगवानका क्षपकभेणीपर आरूढ़ होना—बड़े १० वजे तक आहारदानकी विधि हो जावे । दो घंटे छुट्टी रहे । १२ बजेसे मळपमें कार्य प्रारंभ किया जावे । १२॥ बजे सर्व षण्ण्ड टिकटों द्वारा एकत्र किया जावे । आज ज्ञानकल्याणक होकर शाम तक प्रभुका नगरमें विहार व उपदेश होजावे । रात्रिको मळपमें उपदेश हो । विहार करनेके लिये यथायोग्य जुलूस तैयार रहे । रथपर प्रभुका विहार हो जो २ घंटेके भीतर लौट आवे । रास्तेमें चार जगह बामियाना रहे । ऐसा रास्ता लिया जावे जो जाते हुए दूबरा हो व आते हुए दूबरा हो । जब विहार हवि जो बामियाना हो, वहा रथ ठहर जावे. वहा १ भजन व २० भिन्न धर्मोपदेश हो । मळपमें दूबरे चबूतरेपर एक वनकी शोभा तैयार की जावे, कुछ गमले रख दिये जावे व एक छायादार वृक्ष रहे जिष्के नीचे उच्च शिळापर भगवान् अकेले तप करते हुए बैठे हों ऐसी रचना उच्च वृक्षकी स्थापनाके लिये नीचेका श्लोक पठ उषपर पुष्प क्षेपे—

शाखाच्छायेन योसौ हरति खलु सतां कर्मधर्मांशुतापम् ।

यः सौख्योदारस्वारं फलति शुभफलं मोक्षनाकादिभेदम् ॥

सेधते यं तदर्थं विबुधजनखगा यस्य चैवं प्रभावः ।

संगज्जानो हि तस्य त्रिभुवनमहितः सोस्तु बोधिद्रुमोऽयम् ॥ १ ॥

जिष् शिळापर आचार्य विराजमान करे उषसे ऊपर मातृका यंत्र नीचे प्रमाण लिखे । फिर प्रतिमाजीको विराजमान करे ।

मातृका मंत्र ।

ॐ नमो	क ख ग घ ङ			च छ ज झ ञ
	अं अ.	अ आ	इ ई	
	ओ औ	हं	उ ऊ	
श ष स ह	ए ऐ	ल लळ	ऋ ॠ	ट ठ ड ढ ण
	य र ल व	प फ ब भ म		

ह्रीं ह्रीं क्रौं स्वाहा ।

और इधी मंत्रको १०८ बार पढ़कर आगे जलधारा देवे ।

मातृका मंत्र ।

ॐ नमोऽई अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ए ऐ ओ औ अ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह, ह्रीं ह्रीं क्रौं स्वाहा ।

फिर पादा ठठवि तव भव जयजगकार शब्द कहें । दूबरे चतुरेपर शिवाय आचार्यके और कोई न हो । सूचक पात्र एक कोनेमें खड़ा हुआ कहे कि भगवान् ध्यानमें मग्न हैं तपस्या कर रहे हैं । आचार्यके पात्र पूजनकी सामग्री हो ।

२-३ धिनट ठहरकर आचार्य उठे और प्रतिमाजीको नमस्कार करता हुआ यह स्तुति पढ़े—

छन्द मुक्तादान—नमोऽस्तु नमोऽस्तु सुनीश । परम तपके करमार रिषीश ॥

न मोह न भान न क्रोध न लोभ । न हास्य न खेद न द्रोह न क्षोभ ॥ १ ॥

ममन्व न राग पदारथ सर्वं । चिदात्म वेदत छांडत गर्भं ॥
सु भेद विज्ञान जगो चित्त बीच । सु आत्म अनुभव लावत खींच ॥ २ ॥
स्वतन्त्र रचन्त करत निज काज । कषाय रिपु दलनेको आज ॥
लियो सत ध्यान मई अति सार । नमूं तुमको जिन कर्म निधार ॥ ३ ॥

फिर नीचेका श्लोक पढकर अर्घ देवे ।

बाह्याभ्यन्तरभेदतो द्विचिद्यता तत्रापि षट्भेदकं, बाह्याचान्तरमेधितस्वधिविभवप्रत्यूहनिणोशनात् ।
भक्ष्याभावात्तदूनतात्रतपरोसंख्यानषट्स्वादानामोहैकांतशशास्त्रनांगकदनान्येवं तु बाह्यं तपः ॥ ८४४ ॥
ॐ ह्रीं अनशानावमोदर्यवृत्तिपरिषङ्गानरुपरित्यागैकांतशय्यासनकायकेश षट्प्रकार बाह्यतपोधारकाय जिनाय अर्घ नि० स्वाहा ।
अंत्ये दोषविसंगतो न भवति प्रायश्चित्तानां क्रमो, नो वा यत्र विनेयताव्युपरमादौपाधिकस्योद्भवः ।
नान्यत्र स्थितिमस्तु स्याद्युतया चैयावृत्तेः प्रक्रमो, नो वा शास्त्रसुशोलेनं त्विति परपार्थेण बोधेन ॥८४५॥
ध्युरसर्गं प्रतिवासरं प्रसरतो ध्यानं स्वमाध्यायत, आख्यामात्रमुपाचरत्प्रतिकृतेर्नांगप्रलं भावनात् ।
गाढोत्कृष्टसुहंस्य जिनपश्यास्येति संरूढितः, कलसं तच्छुचि नाम तत्फलगणैः संपूजयाम्यादरात् ॥८४६॥

ॐ ह्रीं प्रायश्चितविनयैरगाढुत्तरस्त्रावायभ्यु र्गोध्यान षट्प्रकारातरगतपोनिष्ठाय जिनाय अर्घ निर्व्रमामोति स्वाहा ।
यहाँपर सूचक कहदे कि प्रसु १२ तका बावन कर रहे हैं, धर्मध्यानमे मग्न है ।

दोहा—अप्रमत्त ध्यानक चढ़े, अवःकरणमें लीन । क्षपक श्रेणिका यत्न है, कर्म करे अति दीन ॥
सम्यक्त बालक प्रकृति, सात नहीं प्रसु पास । देव नरक तिर्यश्चगति, नहीं तहाँ है वास ॥

ॐ ह्रीं अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती अवःकरणप्रवृत्त मिथ्यात्वादि दशकर्मवृत्तारहित श्रोत्रिनाय अर्घ ।

यहाँ दो आचार्य या सूचकपात्र समाको समझा दे कि भगवान क्षाकश्रेणीपर चढ़नेका लयन कर रहे हैं । पातिसय अप्रमत्त गुण-स्थानमें अधःकरण लब्धिको प्रारम्भ किया है । एता भगवान्की कार्त्तामें १० प्रकृति नहीं है ।

दोहा—फिर अपूर्व ध्यानक चढ़े, शुद्ध ध्यान गड्डीन । मोह-शक्ति विध्वंसक, साव अपूरव कीन ।

ॐ ह्रीं अपूर्वगुणस्थानारूढ श्रीजिनाय अर्घ । एता समझाया जाय कि प्रसु क्षपकश्रेणीमें चढ़े, आठवें गुणस्थानमें जाकर मोहकी २१ प्रकृतियोंके बलको निर्वल कर रहे हैं । (६ अनन्तानुबन्धी विषय)—

दोहा—धानक अनिवृत्ती चढे, सुद्ध भाव असि धार । त्रिशत छः कर्मन प्रकृति, कीना प्रसु संहार ॥
नरकगति तिर्यच गति, और आनुपूर्वीय । इक वे ते चहुं जातिको, उद्योता तप लीय ॥
पावर सूक्ष्म साधारणे, खोटी निद्रा तीन । विंशति प्रकृति कषायकी, लोभ विना क्षय लीन ॥
ॐ हीं अनिवृत्तिगुणस्थानारूढबद्धत्रिशत्प्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।
यहा प्रकट किया जाय कि प्रभुने शुक्लध्यानकी अग्निसे ३६ कर्मोंका क्षय कर डाला ।

दोहा—सूक्ष्म कषाय सुधानमें, चढे नाथ अति धीर । लोभ प्रकृति नास्ती सकल, मोह हृत्यो जगवीर ॥
ॐ हीं सूक्ष्मकषायगुणस्थानारूढलेभप्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

यहा सूचना हो कि १० वें में लोभका नाश किया ।

दोहा—बारम क्षीण कषाय गुण, चढे प्रभू बलवान । द्विताय सुल्ल ध्यावत भये, एक भाव अमलान ॥
ॐ हीं क्षीणकषायगुणस्थानारूढएकत्ववितर्कवीचार शुक्लध्यानधारकाय श्रीजिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

(२) तिलकदान विधि—फिर आचार्य खड़े हो बहुत वितयसे चारित्रभक्ति पढ़े और नीचे लिखे मंत्र पढ़े । इषमय लग्य शुभ हो ।
ॐ हां हीं हूँ हौं हः अषि आ र वा एहि एवीषट् । ॐ हा हां हूँ हौं हः अषि आ र वा अत्र तिष्ठ ठ ठः ॐ हां हीं हूँ हौं हः
अषि आ र वा अत्र मम प्रच्छिदितो भव भव वषट् । फिर नीचे लिखे मंत्रका १०८ दफे जाप करे ।

ॐ हीं श्री अर्हं अषि आ र वा अप्रतिहत शक्तिर्भवतु हीं स्वाहा । यह जाप करके फिर सुगधित केशसे प्रतिमाके नाभिस्थानमें
धोनेकी बटाईसे हँ ऐवा लिखे—(४) अधिवासना विधि—फिर जल चन्दनादि चढावे—

सुगन्धिशीतलैः स्वच्छैः साधुभिविर्मलैर्जलैः, अनन्तज्ञानहृषीर्थं सुखरूपं जिनं यजे ।
ॐ हीं श्री नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा जल ।

काश्मीरचन्दनसेन विच्छन्धशुभभत्सौम्यमतमधुपावलिङ्गकृतेन ।

पीठस्थलीं जिनपतेरधिपादपद्मं, संचर्षयामि मुनिभिः परितः पवित्राः ॥ ८५२ ॥

ॐ हीं अर्हते पूर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु चन्दन गुहाण गुहाण स्वाहा । चन्दन चढावे ।

मुक्ताफलच्छविपरालजितकामकांतिपोद्भूतमोहतिमिरैकफलोपहेतु ।

शाल्यक्षतार्थपरिपूणपवित्रपात्रसुतारयामि भवतो जिनपस्य पार्श्वे ॥ ८५३ ॥

ॐ हीं अर्हते पूर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु अक्षतान् गुहाण गुहाण स्वाहा । अक्षतं ।

सौरभ्यम्पांद्रमकारदमनोऽभिरामपुरुषैः सुवर्णहरिचन्दनपारिजातैः ।
श्रीमोक्षमानिवनितापरिलभनाय, मालश्रादिभिश्चरणधोरणिमुत्सृजामि ॥ ८५४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु पुष्पाणि गृहाण स्वाहा । पुष्प ।

षष्ठोपवासविधये नमस्सर्पिषाक्तनैवेद्यभाजनमिदं परिचर्ये स्म ।

चारं तदीयपरिहृत्यभिधाप्रसिद्धये संस्थापयेज्जिनवरात्रिमभूनधात्र्यां ॥ ८५३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु नैवेद्य गृहाण स्वाहा ।

रपूर्जमशूखविततिप्रहतांधकारं, दीपं घृतादिमणित्रिविधालशोभं ।

उद्दिन्नशुक्लयुगलांतिमभागभाजो, देहद्यति द्विगुणकोटियुतां करोमि ॥ ८५७ ॥

ॐ ह्रीं प्रज्वल प्रज्वल अग्निन्तेजसे दीप गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्पूरचन्दनपरागसुरम्यधूपक्षेपोऽतु मे सकलकर्महृतिप्रधानः ।

इत्येद्य भावमभिधाय हसंतिकायाद्भुत्क्षेपयामि किल धूपसमूहमेनं ॥ ८५८ ॥

ॐ ह्रीं प्रवर्तते दह दह तेजोऽधिपतये बभूहभूताय धूपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्मोष्ठकापहरणं फलमस्ति सुख्यं, तत्प्राप्तिसमुखतया स्थितवानसि त्वं ।

यस्मादनेकगुणलास्यकलानिधानघाम्रास्तस्यलभदभ्रफलैर्धजामि ॥ ८५९ ॥

ॐ ह्रीं आश्रितजनायामिमतफलानि ददातु ददातु स्वाहा ।

त्रैलोक्याभपदं त्रिकालपतिताशेषार्थपर्यायजानन्नानन्तविकल्पनस्तुटकरं संसारचकोत्तरं ।

ज्योतिः केवलनामकमवतो ध्यानावतानप्रभोर्योऽयं तुर्यविशंशनक्षणमहः कोष्येष जीयात्पुनः ॥ ८६० ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते द्वितीयशुक्लध्यानोपात्यसमयप्राप्तय अर्घ ।

यस्याश्रयेण सकलाघटुगौघदाहशक्तिवमाप चरितं चरितं जनेन ।

तत्त्वारूपश्वतयरूपमपास्य चारमन्त्यं यथाख्यमगमत्परिपूर्णांगं ॥ ८६१ ॥

ॐ ह्रीं यथाख्यातचारित्रवारकाय जिनाय अर्घं यहाँतक अधिवासना विधि हुई—

(५) श्री मुखोद्घाटन क्रिया—

नूरुं निराधृतिचमस्कृतिकारि तेजो, नो शक्यमीक्षितवतामपि भावुकानां ।
हृद्येवमपिपानयानयनेन जंभोरग्रे शुखाग्रमदृशसुपाकरोसि ॥ ८५५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते ष्वं शरीरावस्थिताय चमदन फल मत् धाम्यधुत मुत्र वल ददामि स्वाहा ।

रतना कहे तब परदा पड़ जावे—सूचक कहे कि भगवान्को केवलज्ञान होनेवाला है । जवतक परदा न लठे आप पत्र मनमें णमोकार मत्रका जाप करें व बिद्ध परमात्माका ध्यान करें । आचार्य परदेके भीतर होजाय कोई तरफ दिखाव न हो । इष प्रमय यदि कोई मुनि महाराज हों या ऐलक या शुल्लक या चारित्रवान् प्रतिमावारी ब्रह्मचारी हों तो उनको आचार्य भीतर ले ले । यदि न हों तो कोई हजै नहीं है । एक शुद्ध बलमें बात प्रकार अनाज बावकर मुखपर ढककर कपेट दे । तथा आगे जौकी माला रख दे ।

फिर आचार्य नम्र होजावे व ऐलकादि भी नम्र होजावे । ॐ नमः सिद्धेभ्यः ऐषा मत्र पढ़ें । आचार्य इष मत्रको पढते हुए चारोंतरफ जलधारा दे बिद्धचक्र यत्रको पाव रखकर नीचे लिखी स्तुति पढे, हाथ दोनों जोड लड़े रहे ।

स्वस्तिश्रीऋषभो देवोऽजिनः स्वस्त्यास्तु संभवः । अग्निनंदननामा च स्वस्ति श्रीसुमति प्रभुः ॥ ८६१ ॥
पद्मपद्मः स्वस्ति देवः सुशार्ध्वः स्वस्ति जायतां । चंद्रपद्मः स्वस्ति नोऽस्तु पुष्यदंतश्च शीतलः ॥ ८६२ ॥
श्रेयान् स्वस्ति वासुण्ड्यो धिमलः स्वस्त्यनंतजित् । धर्मो जिनः सदा स्वस्ति शांति कुंशुश्च स्वस्तिपरः ८६३ ॥
मल्लिनाथः स्वस्ति मुनिसुव्रतः स्वस्ति चै नमिः । नेमिजिनः स्वस्ति पार्श्वो वीरः स्वस्ति जायतां ८६४ ॥
भूतभाविजिनाः ऋषे स्वस्ति श्रीसिद्धनायकाः । आचार्य स्वस्त्युपाध्यायः साधवः स्वस्ति संतु नः ॥ ८६५ ॥

यह पढकर पुण्याजलि देवे । फिर नीचेका श्लोक व मत्र पढकर मुखके ऊपरसे कपडेको हटा ले ।

अथाख्यातं प्रांतोदयधरणिधुन्मूर्द्धनि प्रकाशोच्छ्वासाभ्या युगपदुपयुंजं स्त्रिसुवनं ।

दधस्त्र्योतिः स्थायंभधमपगतावृत्यपपथो मुखोद्घाटं लक्ष्म्यां व्रजतु ययनीं दूरसुदयेत् ॥ ८६६ ॥

ॐ उपहादिवड्डमाणान पचमहाक्लणसपण्णान महइमहावीरवड्डमाणसामीण सिज्ज मे महइमहाविजा अट्टमहापाडिहेरचड्डियाण सयत्तकलाघराण भज्जाजादरूपाण च उतीवातिषयविसेवञ्जुतोण बत्तीवदेवीदमणिमत्तयमहियाण पयत्तलोयस्स स्वतिपुट्ट ठिकल्लेणानाउआरोग-
करण बल्लदेववासुदेवचक्कररिषिमुणिजदिअणमारोवगूढाण उद्वयत्तेशुद्धफत्तराण शुइश्यवहस्सणिलयाण परापरपरमप्याण अणाद्धिणिह्णान
बल्लिवाड्डवल्लिपदाण वीरे वीरे ॐ हा क्षा सेणवीरे वड्डमाणवीरे णहस्सजयतमाईए वल्लसेत्तयमगयाण अस्सदवमपइड्डियाण उपहादवीरमगल-
महापुरिषाण णिच्चकात्तइड्डियाण इत्थमणिहिया मे भवतु ठ ठ. क्ष क्ष स्वाहा । यह श्री मुखोद्घाटन क्रिया हुई—

(६) नयनोन्मीलन क्रिया—फिर रकावीमें कपूर जलाकर सुवर्णकी पत्थरकी रकले और दाहने हाथमें लेकर सोह मंत्रको ध्याता हुआ तथा १०८ दफे 'ॐ ह्रीं श्रीं अहं नमः' पढ़े । फिर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़कर नेत्रमें पत्थरई फेरे—

येनावद्धनिरुढकर्मविकृतिपालंबिका निघृणिं, छिन्नात्सानमजं स्वयमुद्यमपूर्वीयं स्वयं भासवान् ।

सोऽयं मोक्षसामकटाक्षसरणिप्रिसारपदः आजिनः, लाक्षादन्न निरूपितः स खलु सां पायादपायात्सदा ॥८३७॥
 ॐ णमो अरहताण गाणदघणचकुमुमयाण अभिरघायणविमकतेयाण बति तुंठ पुट्टि वरदव्मपाठिठेण व झ अमिय वरवीण स्वाहा । यह मंत्र जयसेन कृन पाठमें है । नेमचन्द कृन पाठमें यह मंत्र है—“ ॐ ह्रीं अहं नमो अरहताण अघि वा उ वा श्रीं ॐ ह्रीं ई ” त्रिकाल त्रिलोकपूजित पूर्वज्ञप्रित रक्त नील काचन कृष्ण नेत्रोन्मीलनानतज्ञान अनतदर्शन, अनतवीर्य, अनतसुखात्मकाय नयनोन्मीलन विदधामि प्रवौषट् । फिर आचार्य और मुनि आदि जो हों सो मिलकर सूरिमंत्र पढ़ें—

ॐ ह्रीं णमोअरहताण णमोसिद्धाण णमोथाइरीयाण णमोउव्वायाण णमो छोए व्वन्नाहूण, चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, बाहूमगल, केवल्लिपणतोषम्मोमगल । चत्तारिलोकोत्तमा—अरहतलोकोत्तमा सिद्धलोकोत्तमा बाहूलोकोत्तमा, केवल्लिपणतोषम्मोलोकोत्तमा । चत्तारिघरण पव्वज्जामि अरइतडरण पव्वज्जामि सिद्धघरण पव्वज्जामि बाहूघरण पव्वज्जामि केवल्लिपणतोषम्मघरणं पव्वज्जामि । क्री ह्रीं स्वाहा । दोनों कानोंमें पढ़कर पुष्प प्रतिनापर क्षेपे तथा पूर्वज्ञपना प्रगट करे ।

नोट—सूरिमंत्रके देनेका वर्णन मात्र जयसेन पाठमें है, आशाधर व नेमचन्द कृनमें नहीं है । हमने सूरिमंत्र क्या है ऐसा प्रश्न दो उदाचोन प्रतिष्ठा करानेवालोंसे पूछा परन्तु उन्होंने भी बताया नहीं । जयसेन पृ० १३६ में “ अथ सूरिमंत्र ” ऐसा लिखके आगे जो मंत्र लिखा था सो हमने नकल कर दिया है । यदि और कोई मंत्र हो तो प्राचोन प्रतिष्ठा करानेवाले उसे हो पढ़े व इव पुस्तकमें सुधार दें । किसी बातको लिपाके रखना उचित नहीं है । फिर नीचेकी गाथा पढ़कर यवकी मालाको हटाळे—

ॐ सुत्तक्खरगडभाणं अरहंताण णमोत्थि भावेण . जो कुणह अणणमणो सो गच्छह उत्तमं ठाण ॥

फिर नीचेका श्लोक पढ़ अर्घ्य देवे ।

शुक्लद्वयेन परिहृत्य तपोधितानमरामानमाशु परिकल्प्य कृतावकाशं ।

ज्ञानावलोकनसमत्ययनाशमापन्मोहस्य पूर्वदलेन समस्तभावात् ॥ ८४८ ॥

ॐ ह्रीं मोहनीय ज्ञानदर्शनावरणान्तराय निर्नाशकाय जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

फिर नीचेको गाथा पढ़कर पुष्प प्रतिमापर डाले—

ॐ केवल्लणाणदिवायरकिरणकलावप्यासासिपणाणे णवकेवल्लदूर्ध्वगमसुअणियपरमपपववएसो ।
 असहायणाणइंसणमहिओ इदिकेवली होदि । जोयेण जुत्तो ति स जानिजिणो अणाहिणिहणारिसे वुत्तो ॥

इत्येवोऽईन् बाह्यादवतीर्णो विश्व पातु इति स्वाहा ।

तब बाहर नज़े वजने लगे। आचार्य भगवानके आगे बहुतसा कपूर जलता हुआ रखे और परदा उठे तब सब जय जय कहे। तब आचार्य व सूत्रक कहै कि भगवान्को केवलज्ञानकी प्राप्ति होगई है। आचार्य परदा खोलनेके पहले ब्रह्म पहन ले। फिर आचार्य बहुत विनयसे नमस्कार करे और नीचे लिखी स्तुति पढे। स्तुतिके पीछे नमन करके यह सूचित करे कि भगवानने दूसरे ब्रह्मध्यानसे १६ प्रकृतियोंका नाश किया। ज्ञानावर्णीय ५, दर्शनावर्णीय ६, अन्तराय ५, -४७ पहले नाशो थीं इत्थं तरह ६३ प्रकृतियोंको नाशकर या चार घातिया कर्म नाशकर भगवानने केवलज्ञान प्राप्त किया है।

स्तुति।

पद्मी छन्द—जय केवलज्ञान प्रकाश धरं । ज्ञान-वर्णाय विनाश करं ॥

जय केवल दर्शन नायक हो । दर्शन आवर्णी घायक हो ॥ १ ॥

जय वीर्य अनन्त प्रकाशक हो । जय अन्तराय अघ नाशक हो ॥

तुम मोह बली क्षय कारक हो । क्षायिक समकितके धारक हो ॥ २ ॥

क्षायिक चारित्र विशाल धरं । आनन्द अनन्त प्रकाश धर ॥

जग मांहि अपूरव सूरज हो । विकसन भवि जीवन नीरज हो ॥ ३ ॥

मिथ्यात्व महा तम टालन हो । शिव मग उत्तम दरशावन हो ॥

तुम तारण तरण तरंड धरं । सुखकारण रत्नकरण्ड धरं ॥ ४ ॥

५ मिनट तक भगवानका दर्शन सब करने २ यथा वैठे हुए कर चुके कि परदा गिर जावे। परदेके बाहर इन्द्र आता है, उसीके साथ कुबेरदेव भी आता है। इन्द्र सभीकी तरफ घकेत करके कहता है—

कुबेर ! अभी हां तीर्थनायक श्री ऋषभदेवको केवलज्ञानका प्रकाश हुआ है। तीर्थप्रचार करनेका अवसर उपस्थित हुआ है। तुम शीघ्र समवर्णकी रचना तैयार करो, हम सब इन्द्रादि देव आते हैं। प्रभुकी भक्तिर ब उत्तम धर्मावृत पीकर तुमिता पायगे और अपने भवभवके पापोंका पहार करेंगे। कुबेर नमन कर कहता है—“जो आज्ञा”-पहले कुबेर जाता है फिर इन्द्र भी जाते हैं।

(८) समवर्ण रचना व पूजा—परदेके भीतर समवर्णकी रचना तैयार की जाती है। वनकी रचना तुर्त हटानी चाहिये। गणकुटी विराजमान करके तीन छत्र रीं, दोनों तरफ दो इन्द्र चमर ढालते हों, बिहावन हो, मामडल हो, आगे आठ मगलद्रव्य हों। गणकुटीके आगे २४ कीठोंका माडला एक छोटी चौकीपर रचा हुआ सुन्दर रक्खा जाय, आगे पूजा करनेका सामान हो, आगे चढ़ानेके लिये कुछ रक्खा जाय। इत्थत्थ रचना बन जावे। वृक्ष जो पहले था वह गणकुटीके पीछे रहने दिया जावे। यदि समवर्णके नकशेका

परदा हो तो एक तरफ टांग दिया जावे। यदि तीन कटनीदार चबूतरा हो व उसपर गवखुटी रहे तो और भी ठीक है। पहली कटनीपर आठ मण्डद्वय हों व धर्मचक्र हों। दूसरी कटनीपर ध्वजाएं हों क्योंकि भगवान अन्तरीक्ष विराजते हैं इसलिये स्फटिक कमलाकार व शीशोका कमलाकार बिहासन हो तो और भी शोभा हो। इस तरह रचना होनेपर परदा उठे। उस समय “श्री वृषभदेवके समवशरणकी जय” ऐसे शब्द चारों ओरसे हों।

इतनेहीमें सौधर्म इन्द्र व अन्य इन्द्रदेवोंके साथ व इन्द्राणी कुछ अन्य देवियोंके साथ नाजा नजाते हुए जय जय शब्द कहते हुए मंडामें पधारों व पुष्पांजलि देकर नमस्कार करें। एक ओर इन्द्र तथा आचार्य पूजा करे, इधर उधर इन्द्राणी पूजा करे। इधर उधर सामान पूजाका रखा हो। सब बैठे हों। तब नीचे प्रमाण अर्घ चढावे—

सत्तानात्रग्राहकं दर्शनं च, तद्भेदानां ग्राहकं ज्ञानसुक्त।

ताभ्यां स्वास्थं पूर्णसुक्तं सुखं तच्छक्तेर्व्यक्तिर्वीर्यमन्नार्चयामि ॥ ८६९ ॥

ॐ हों नमोऽईते भगवतेऽन्तज्ञानदर्शनसुखवीर्यविभाजते जिनाय अर्घं निर्घणामीति स्वाहा।

यहां आचार्य या सूचकपात्र चार चतुष्टयको १ मिनटके भीतर समझादे।

सम्यक्त्वं चरितं सुबोधनहृशी वीर्यं ददिलोभको,

भोगोपादिसुजी हि यस्य नवकं लब्धैः सदा क्षायिक।

सम्पन्नं खलु केवलोद्गमनतस्तं मांपतं ध्यायतो,

बिद्धानां निचयः प्रणाशनमियात्तसंस्मृतिपार्थनात् ॥ ८७० ॥

ॐ हों नमोऽईते भगवते नवकेवललब्धिभोगे अर्घं। यहां नव केवल लब्धियोंको समझा दिया जावे। (क्षाययिष्यक्त, क्षायिकचरित्, अनन्तज्ञान, अनन्तदशन, अनन्तवीर्य, अनन्तदान, अनन्तलाभ अनन्तभोग, अनन्तउपभोग।)

सौमिक्ष्य सुकुरोपमक्षितिरथ। व्योमक्रमप्रक्रमः, प्राणघातखिनिर्गमश्च कबलाहारवधपायः परैः।

अक्लेशोपचयश्चतुर्मुखहृशिविद्येश्वरतथ गानो-रच्छायत्त्वमकेशवृद्धिरिति वै दिक्सखपकोः केवले ॥ ८७१ ॥

ॐ हों नमोऽईते भगवते दशकेवलातिशयेभ्यंऽर्वम्। (यहा १० अतिशय ब्रह्मशा दी जावें।) १ सुभिक्षपना, २ दर्पण समान पृथ्वी, ३ आकाशकी निर्मलता, ४ प्राणिवक्ता अभाव ५ कबलाहारका अभाव, ६ उपवर्गका अभाव, ७ चार मुख दीखना, ८ सर्व विद्या ईश्वरपना, ९ शरीरकी छाया न पडना, १० नखकेश न बढना।

दिव्या वाग् जनसौहृदं प्रतिपदं सर्वाह्नगोच्चारुहा, भूरादर्शला सुदुश्चसनसन्मोदौ तु भूः शालिनी ।
सौरभ्यांबुधरी सुवृष्टिरमला पादक्षयाधोलले, स्वच्छांभोरुहनिर्मितिः खमसलं दिग्संसदश्चक्रकं ॥ ८७२ ॥
धर्माख्यां पुरतश्च अज्जनमनोमिथ्यात्वब्रंशेदनं, देवाह्वानपरस्पाधिकमुदा सन्मंगलाष्टाविति ।
दिव्यातीशयसंयुतो जिनपतिः शक्राज्ञया रैबुचा, वल्लरे श्रीसमवादिसंस्तृतिपदे ऋंतिप्रवांस्तान्मुदे ॥८७३॥

ॐ ह्रीं नमोऽहंते भगवते चतुर्दशदेवकृनातिशयसंपन्नाय जिनाय अर्घ । (यहा १४ देवकृन अतिशय वताई जावे ।) १ अर्द्धमागवी
दिव्यध्वनि, २ मेत्रीभाव प्रचार, ३ ध्वंशुके फल कुल, ४ कटकरहित भूमि, ५ मंद सुगंध पवन, ६ पर्वधान्यमई क्षेत्र, ७ गन्धोदक वर्षा,
८ विहार समय सुनर्ण कमल रचना, ९ निर्मल आकाश, १० देवकृत परस्पर बुलाना, ११ धर्मचक्र, १२ आठ मंगल द्रव्य, १३
प्राणियोंमें मिथ्या भावका अभाव, १४ दिशाओंमें आनन्द ।

(नोट—अन्य ग्रन्थमें ऊपरके १० अतिशयोमें पलकें न लगना है, दर्पण समान पृथ्वी नहीं है ।)

मानस्तमसरः सपुष्पविपिनं सत्त्वातिका चाश्रितः, प्राकारादिसुनाट्यभूमिविपिने नाकालयक्षमारुहाः ।
स्तूपा स्मर्यततिर्ध्वजावलिसेभे सद्गंधेदिक्रमोऽ-शोकोर्वीरहसिंहयादनश्चिसिस्थायी जिन पातु नः ॥८७४॥

ॐ ह्रीं नमोऽहंते भगवते समवशाणविभूतिषपन्नाय जिनाय अर्घ । (यहा समवशाणका कुछ भाव वता दिया जावे)—
वनस्पतिस्वेऽपि गतप्रशोको, बभूवातिमदप्रसूनः ।

अनेकसंदर्शकशोकहारी, वृक्षो जिनेन्द्राश्रयणप्रभावात् ॥ ८७५ ॥
ॐ ह्रीं अशोकपातिहार्यपन्नाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रेयस्तरुः फलति नोऽमरसौह्यमुच्चैर्षोस्तुक्त्यपरिलंभनसन्निषेण ।
दैर्घ्यैः कृना सुमनसां परिवृष्टिरेषां, मोदं वदातु भवदुःखजुषां जनानां ॥ ८७६ ॥

ॐ ह्रीं देवकृतपुष्पवृष्टिमातिहार्यपन्नाय जिनाय अर्घ । (यहा पुष्पोकी वर्षा की जावे)—
त्रैलोक्यवस्तुमनतस्सराणावबोधो, येन स्वयं श्रवणगोचरतां गतेन ।

संजायते मुखरदौष्टविघातशून्यो, भूयाद् ध्वनिर्भगदप्रसरातिहृत्ता ॥ ८७७ ॥
ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिमातिहार्यपन्नाय जिनाय अर्घ ।

यक्षेशपाणिलतिकाङ्कुरसंगतानि, तुर्योधिवष्टिगणनान्यपि देवमद्याः ।
त्रीचिप्रमाणि भवतो द्विकपाश्वयोस्तौ, सच्चामराण्यघचय मम निर्दलंतु ॥ ८७८ ॥

ॐ ह्रीं वतुःषष्टिचामरातिहार्येषपनाय जिनाय अर्घ ।

सिंहासने छदिरियं जिनदेवतायाः, केषां कनोवधुतपापहरी न वा स्यात् ।

स्याद्वादसंस्कृतपदार्थगुणप्रकाशोऽस्या मेस्तु निर्हंतमदाविलज्जातशक्तः ॥ ८७९ ॥

ॐ ह्रीं विहासनप्रातिहार्येषपनाय जिनाय अर्घ ।

आमण्डलेऽष्यवपुष्टिञ्चि भागरद्विषकृत्से जनस्य वषसप्रकृदशनेन ।

अद्धानमासगुरुधर्मपररराणां, गाढं अवेत्तद्वितदेशपतिर्नमस्यः ॥ ८८० ॥

ॐ ह्रीं भामण्डलप्रातिहार्येषपनाय जिनाय अर्घ

देवस्य मोहविलयं परिशंसितु द्राक्, देवाः स्पष्टस्तलतः परिवाहयेति ।

वाद्यानि सगलनिवाद्यक्रानि मद्यो, मिथ्यात्नमोहजघिनः शुभगानि च स्युः ॥ ८८१ ॥

ॐ ह्रीं दुदुभिप्रातिहार्येषपनाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

छत्रत्रयं जिनपभूर्धनि आत्ममानं, त्रैलोक्यराजपतिताम्रभिदशोषद् वा ।

भोसार्कवह्निर्निभं स्मितपीतरक्तनादिराजतम्रिद्ध मम संगलाय ॥ ८८२ ॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्येषपनाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

नालारापन्नचमरध्वजसुधर्तीकभृगुगारदपणवटा प्रतिथीथिचारं ।

खन्मगलानि पुरतो विलसंति यस्य, पादारविद्युगलं शिरसा वहामि ॥ ८८३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टमण्डलव्यसपनाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

बुद्धीशामरनाथिकार्यवस्तु उयोनिरुद्वयंमरनागस्त्री भवमेकाकिपुरुषसज्ज्योतिरुकरूपामाराः ।

मर्त्यो वा पशवश्च यस्य हि स तथा आदित्यसंख्या वृषपीयूषं रवभक्तानुरूपसखिलं स्वादंति तस्मै नमः ॥ ८८४ ॥

ॐ ह्रीं द्वादशमभासपत्तिधर्मनाथ जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

(यद्वा १२ सभामें कौनर बठते हैं वो समझादे—१ मुनि, २ आर्थिका व श्राविका, ३ कल्पवाची देवी, ४ ज्योतिषी देवी, ५ व्यंतरदेवी, ६ भवनवाची देवी, ७ भवनवाची देव, ८ व्यंतरदेव, ९ ज्योतिषी देव, १० कल्पवाची देव, ११ मनुष्य, १२ पशु) ।

आगे २४ कोठोके मडककी पूजा की जाय ।

गीताछद-चौबीस जिनवर तीर्थकारी, ज्ञान कल्याण धरं । महिमा अपार प्रकाश जगमें, मोह मिथ्या तम हरं ॥
कीने बहुत भविजीव सुखिया, दुःखनागर उद्धरं । तिनकी चरण पूजा करं, तिन सम बने यह रुचि धरं ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनैन्द्रेभ्यो पुष्पाजलि क्षिपेत् । (पुष्प डाले)

छद चामरा-नीर ल्याय शीतलं महान सिष्टता धरे, गन्ध शुद्ध मेलिके पबिन्न द्वारिका भरे ।

नाथ चौविंसों महान वर्तमान फालके, बोध उत्सर्ध करूं प्रभाव सर्व टालके ॥

ॐ ह्रीं रेषभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतिजिनैन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्वेत चन्दन सुगन्धयुक्त लार लणके, पात्रमें धराय शान्तिकारणे चढायेके ॥ नाथ ० ॥ चन्दनं ॥

नन्दुलं मले सुश्वेत वर्ण दीप लाइये, पाच गुण सु अक्षतं अतृप्तिना नशाइये ॥ नाथ० ॥ अक्षतं ॥

वर्ण वर्ण पुष्प सार लाइये चुनायेके, फाम कष्ट नाश हेतु पूजिये स्वभायके ॥ नाथ० ॥ पुष्प ॥

क्षीर मोदकादि शुद्ध तुंतं हो बनाइये, मुखरोग नाश हेतु चर्णमें चढाइये ॥ नाथ० ॥ नैवेद्यं ॥

दीप धार रत्नमय प्रकाशना महान है, मोह अंधकार हर शोन स्वच्छ ज्ञान है ॥ नाथ० ॥ दीपं ॥

धूप गन्ध सार लाय धूपदान खेइये, कर्म आठको जलाय आप आप वेइये ॥ नाथ० ॥ धूपं ॥

लौंग औ पदाम आम्र आदि पक्क फल लिये, सु सुक्तिधाम पायके श्वभात्र अमृत पिये ॥ नाथ० ॥ फलं ॥

तोय गंध अक्षतं सु पुष्प चार चरु धरे, दीप धूप फल मिलाय अर्घ देय सुख करे ॥ नाथ० ॥ अर्घ्यं ॥

छद वाली-एकादशि फागुन षड्विकी, मरुदेवी माता जिनकी ।

इत घाती केवल पायो, पूजन हम चित उमगायो ॥

ॐ ह्रीं फल्गुणकृष्णा एकादश्या श्रीवृषभनाथ जिनैन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

एकादशि पूष सुदीको, अजितेश हतो घातीको । निर्मल निज ज्ञान उपाये, हम पूजत सम सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं पीषशुक्ला एकादश्या श्री अजिननाथाय जिनैन्द्राय ज्ञानकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

कार्तिक वदि चौप सुहाई, स भव केवल निधि पाई । भविजीवन बोध दियो है, मिथ्यामत नाश कियो है ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाचतुर्थ्या श्रीधंभवनाथजिनैन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

चौदशिशुभपौषसुदीको, अग्निन्दनहनघातीको। केवलयाधर्मप्रभारा, पूज् चरणाहितकारा ॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्ला चतुर्दशं श्री अग्निन्दननाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

एकादशिशुभसुदीको, जिनसुमतिज्ञानलब्धीको। पाकरअविजीवउधारे, हमपूजतभवहरतारे ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ला एकादशं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५)

मधुशुक्लापूरणमानी, पद्मसुतरयअभ्यासी। केवललेतरनप्रकाशा, हमपूजतसुखसाधा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ला पूर्णमास्यां श्री पद्मसुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

छठिफागुनकीअंधयारी, चउघातीरुर्मनिघारी। निमलनिजज्ञानउपया, घनघनसुपार्थजिनराया ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा षष्ठ्यां श्री सुवर्खजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

फागुनवदिनौमिसुहाई, बन्दरपमआत्मध्याई। हनघातीकेवलपाया, हमपूजतसुखउपजाया ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा नवम्यां श्री बन्दरपमसुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

कातिकसुखिदुतियाजानो, श्रीपुषदंतअगथानो। रजहरकेवलदरशानो, हमपूजतपापधिलानो ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्ला द्वितीयायां श्री पुषदंतजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

चौदसिवदिपौषसुहानी, शीतलपसुकेवलज्ञानी। भवकासंतापहटाया, समतासागरपगटाया ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णा चतुर्दशं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

वदिमाघअमावसिजानो, श्रेयांसज्ञानउपजानो। सप्तजामेंश्रेयकराया, हमपूजतमंगलपाया ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा अमावस्यां श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

शुभदुतिशमाघसुदीको, पायोकेवललब्धीको। श्रीवापुसुज्यभधितारी, हमपूजतअष्टप्रकारी ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्ला द्वितीयायां श्री वापुसुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)

छठिमाघवदीहटघाती, केवललब्धीसुखलाती। पाईश्रीविमलजिनेशा, हमपूजतकटतकलेशा ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा षष्ठ्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

वदिचैनअमावसिगाई, निसुकेवलज्ञानउपाई। पूज्अनन्तजिनचरणा, जोहैंअशरणकेशरणा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्या श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

मासांतपौषदिनभारी, श्रीधर्मनाथहितकारी। पायोकेवलसद्बोध, हमपूजेंछांडकुबोध ॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्ला एकादशं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

- ॐ हीं पौषपूर्णिमायाम् श्री भर्मानायजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)
सुदि पूस इकादसि जानी, श्री शांतिनाथ सुखदानी । लहि केवल धर्म प्रचारा, पूजूं मैं अघ हरतारा ॥
- ॐ हीं पौषशुक्लाएकादश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)
बदि चैत्र तृतीया स्वामी, कुन्धुनाथ गुण धामी । निमल केवल उपजायो, हम पूजत ज्ञान बढ़ायो ॥
- ॐ हीं चैत्रकृष्णातृतीयां श्री कुन्धुनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)
कार्तिक सुदि बारस जानो, लहि केवलज्ञान प्रमाणो । परतत्त्व निजत्त्व प्रकाशा, अरनाथ जज्ञो हतआशा ॥
- ॐ हीं कार्तिकशुक्लद्वादश्यां श्री अरनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)
बदि पूष द्वितीया जाना, श्री महिनाथ भगवाना । इत घाती केवल पाए, हम पूजत ध्यान लगाए ॥
- ॐ हीं पौषकृष्णाद्वितीयां श्री महिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानतपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)
वैसाख बदि नौमीको, सुनिसुव्रत जिन केवलको । लहि वीर्य अनन्त सम्हारा, पूजूं मैं सुख करतारा ॥
- ॐ हीं वैशाखकृष्णानवम्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय ज्ञान कल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)
अगहन सुदि ग्यारस आप, नमिनाथ ध्यान लौ लाए । पाया केवल सुखदाई, हम पूजत चित हरवाई ॥
- ॐ हीं अगहनशुक्ला एकादश्यां श्री नेमिनाथायजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)
पडिवा शुभ कार सुदीको, श्री नेमनाथ जिनजीको । इच्छो केवल सत ज्ञानं, हम पूजत ही बुद्ध हानं ॥
- ॐ हीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदायां श्री नेमनाथजिनेन्द्राय ज्ञानतपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)
तियि चैत्र चतुर्थी इयामा, श्री पार्श्वप्रभू गुण धामा । केवल लहि तत्त्व प्रकाशा, हम पूजत कर शिव आशा ॥
- ॐ हीं चैत्रकृष्णाचतुर्थी श्री पार्श्वजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)
दशमी वैशाख सुदीको, श्री बद्धमान जिनजीको । उपजो केवल सुखदाई, हम पूजत विघ्न नशाई ॥
- ॐ हीं वैशाखशुक्लादशम्यां श्री बद्धमानजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)
**सुखिणी छन्द-स्तुति-जय ऋषभनाथजी ज्ञानके सागरा, घातिया घातकर आप केवल बरा ।
 कर्मबन्धनमई सांकला तोड़कर, आपका स्वाव ले स्वाव पर छोड़कर ॥ १ ॥
 धन्य तू धन्य तू धन्य तू नाथजी, सर्व साधू नमें तोहिको नाथजी ।
 दर्श तेरा करै ताप मिट जात है, मर्म भाजै सभी पाप इट जात है ॥ २ ॥**

धन्य पुरुषार्थ तेरा, महा अशुभतं, मोहसा शत्रु मारा त्रिघाती हतं ।
 जीत प्रलोकको सर्वदर्शी भए, कर्म सेना हती दुर्ग चेतन लए ॥ ३ ॥
 आप सत् तीर्थ प्रथ रत्नसे निर्मिता, भव्य लेखें शरण होय भव भव रिता ।
 वे कुशलसे तिरें संसृती सागरा, जाय ऊरध लहें सिद्ध सुन्दर घरा ॥ ४ ॥
 यह समबशर्ण भवि जीव सुख पात हैं, बाणि तेरी सुनें मन यही भात हैं ।
 नाथ कीजे हमें धर्म अमृत महा, इस विना सुख नहीं दुःख भवमें सहा ॥ ५ ॥
 ना क्षुधा ना तृषा राग ना द्वेष है, खेद चिन्ता नहीं आति ना क्लेश है ।
 लोभ मद क्रोध माया नहीं लेश है, बन्धता हूं तुम्हें तू हि परमेश है ॥ ६ ॥

इंद्र ऊपरकी स्तुतिको पमास ही न कर पाए कि इतनेमें ही बभामें महाराज भरत व अन्य उनके कुछ भाई ऐसे ५-७ राजा अपनी२ ली बहिन अर्ध लिये जाते हैं और विनय करके सदाक चन्दनादि पदकर अर्घ्य चढ़ाते हैं । उष समय कियी एक तरफ व भारतादि पुरुष एक तरफ खड़े हो स्तुति पढ़ते हैं—

पदरी छन्द—जय परम ज्योति ब्रह्मा सुनीश, जय आदिदेव धृषनाथ ईश ।
 परमेष्ठी परमात्म जिनेश, अजरामर अक्षय गुण विवेश ॥ १ ॥
 शङ्कर शिवकर हर सर्व मोह, योगी योगीश्वर काम द्रोह ।
 हो सूक्ष्म निरञ्जन सिद्ध बुद्ध, कर्मजन सेदन तोय शुद्ध ॥ २ ॥
 भवि कमल प्रकाशन रवि महान, उत्तम वागीश्वर राग हान ।
 हो वीत द्वेष हो ब्रह्म रूप, सम्पद्गृष्टी गुण राज भूप ॥ ३ ॥
 निर्मल सुख इन्द्रिय रहित धार, सर्वश सर्वदर्शी अपार ।
 तुम वीर्य अनन्त धरो जिनेश, तुम गुण पावत नहिं गणेश ॥ ४ ॥
 तुम नाम लिये अध दूर जाय, तुम दर्शनते भव भय नशाय ।
 स्वामिन् अब तत्त्वतका प्रभेद, कहिये जासे हठे कर्म छेद ॥ ५ ॥

यह स्तुति पद नमस्कार कर सब यथायोग्य बैठ जाते हैं । जब भारतजी आदि आए थे तब इन्द्र व आचार्य व इन्द्राणी सब यथायोग्य बैठ गए थे ।

(९) भगवानका धर्मोपदेश—अब आचार्य मात्र उठते हैं। वे पूजा करते हैं। सूचक पात्र या अन्य विद्वान् धमाकी भगवानका उपदेश संक्षेपमें समझाता जाता है—

ज्ञानाभिन्नः सततचिदाद्युत्त एवोऽस्ति जीवोऽनार्द्यतः स्याच्छिष्यजगद्वितश्रक्रमायोगयोगात् ।
पर्यायार्थैर्नरसुरपशुश्वश्रिभेदाद्विरर्थयाथातथ्यैर्निस्तुखचिदानंद एव ह्यसैत्सीत् ॥ ८८५ ॥

ॐ ही जीवतत्त्वस्वरूपनिरूपकाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

तत्र सूचकपात्र यह दोहा पढकर अर्थ कादे। पढ़के यह कहे कि भगवानकी दिव्यध्वनि प्रारम्भ हुई है। भगवान् तत्त्वोंको दर्शाते हैं।

दोहा—जीव अनादि अनन्त है, चेतनमय अविकार। कर्मबन्ध तो जग अर्धे, कर्म छुटे अब पार।

इसी तरह द्वार पर तरंगको दोहा कढकर सूचक समझता है।

रूपी रपशोद्विभिरपि गुणः स्वः प्रधानैर्निरुक्तः, स्कंधानुभ्यामननुविष्टृत्तिरव्याप्तः पुद्गलः स्यात् ।
कर्माकर्मप्रकृतिनिगडैर्विश्वमापद्य हेतुर्बन्धस्येति प्रभवति जिनः जल्पयंतं नमामि ॥ ८८६ ॥

ॐ ही पुद्गलतत्त्वस्वरूपरूपकाय जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—रूपी पुद्गल द्रव्य है, अणु आ खद्य स्वरूप। कर्म और नौकर्मसे, बंधे जीव बहु रूप।

लोकस्थानां भवति गमने जावत्पुद्गलानां, हेतुर्धर्मः स्रष्टृत्वाविनौदास्यमाद्यप्रमेयः ।

लोकालोकस्थितिष्विभ्रजनेऽप्राण एतं सु धर्मं, स्वास्मानं संगदति जिनायः सोऽस्तु मे ह्येवाहता ॥ ८८७ ॥

ॐ ही धर्मतत्त्वनिरूपकाय जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—जिय पुद्गलके गमनमें, उदासीन स्रष्टृत्वा । लोकालोक धिभागकर, धर्म द्रव्य अविकार ।

चैतक्षपंयं तत उपगता जीषमत्पुद्गलानां, स्याता धर्मः स्रष्टृत्वायौदास्यमाद्येऽपि तेषाम् ।

एवं तस्य स्वभवमसद्विद्यमानो जिनेन्द्रो, आहक्षाणां भवविधिर्हतिः संकरोत्वात्मनीनां ॥ ८८८ ॥

ॐ ही अवर्धद्रव्यस्वरूपरूपकाय जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—जिय पुद्गलके भंभनमें, उदासीन स्रष्टृत्वा । लोकद्रव्यापि असूर्त है, द्रव्य अधर्म निहार ।

जीवाजीवाद्युपधुनितयाऽऽधार स्यूतो खान्तो, मध्ये तस्य त्रिभुवनमिदं लोकनाम्ना पमिद्धं ।

सर्वेषां स्यादवकथानंद इत्यसूर्तिर्महांश्चाकाशोऽनजिजगुणगणं वक्ति तं पूजयामि ॥ ८८९ ॥

ॐ ही आकाशद्रव्यस्वरूपरूपकाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रतिष्ठा

॥१४९॥

दोहा-सर्वं द्रव्यं अवकाशा दे, है अनन्त आकाश । मध्य लोक षट् द्रव्य मय, बाहर फक्ताकाश ॥
 वस्तुदू-सूनागुणपरिणमस्यानुभूतेष्व हेतुः, ससार्थानां यदुपगमनादेव जातिं विधत्ते ।

सोऽयं कालो व्यवहरणकार्यानुमेयः क्रियायां, कर्तृत्वादित्यकथयदिनो मुक्तिलक्ष्मीं ददातु ॥ ८९० ॥

ॐ ह्रीं कालद्रव्यस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-वस्तु परिणमन हेतु है, निश्चय काल प्रमाण । सम्यक् घटी दिन रात इति, व्यवहृत काल वखाण ॥
 कायस्थांतवचःक्रियापरिणनिर्योगः शुभो, वाऽशुभ-स्तकर्मोर्गमनायनं निजयुजो रागद्विषो रुद्रवात ।
 ईर्योमार्गं भवौषधद्विविधया तत्संविधि वेदयन् । जीयाच्छर्कपतिपूज्यपादकमलस्तीर्थकरः पुण्यगीः ॥ ८९१ ॥

ॐ ह्रीं आश्रयतत्त्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-काय वचन मन परिणमन, योग शुभाशुभ रूप ! कर्मोश्च कारण यही, मोहसहित भव रूप ॥
 कषायाद्युत्पत्तेश्चैतान्प्रविषयं स्वतंत्रं कृतं तद्विधे-र्योश्याः कर्मविभावशक्तिसहिता ये पुद्गलाश्चात्मना ।
 संश्लिष्टा अवगानैक्यमटिनास्तत्प्रक्रमो धंभमाक्त्वं छित्त्वा निजशुद्धभावविरतिप्राप्तः स मे स्यात् गुरुः ॥ ८९२ ॥

ॐ ह्रीं वषतत्त्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-कर्म वर्गणा जीवके, भाव कषाय प्रमाण । एक क्षेत्र अवगाह हो, बंधतरा यद्गजान ॥
 तद्रोधः खलु सरो निगदितो द्रव्यायसेदाद् द्विधा, तद्धेतुर्व्रतगुप्तिधर्मसमितिषध्यां चरित्रात्मता ।
 मूलं निर्जरणस्य कर्भंविभतेर्नृनागमस्य स्वय, तद्रूपं कथितं गणेश्वरपुरोभागे स आशो मय ॥ ८९३ ॥

ॐ ह्रीं-ध्वरतत्त्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-गुप्ति समति व्रत धर्मसे, कर्मोश्च रुक् जाय, वीतरागस्य भाव जहं, संवशतत्त्व सुहाय ॥
 स्वोद्भूयानुभवात्तथा कुततपोवीर्येण तच्छालनाद्, द्वेषा निर्जरणं विसंयमियमिस्वाम्याश्रयेणास्ति यत् ।
 तद्रूपं समवश्रिंशं गदितवान् भव्यात्मनां श्रेयसः, संप्राप्त्य स जिनोऽस्तु से दुरितसंब्रतस्य सच्छित्तये ॥

ॐ ह्रीं निर्जातत्त्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-कर्म अवधिसे निर्जरै, तप प्रभाव क्षय होय । दुद्धिध निजरा अत्यधिक, संयमीनिके होय ॥
 मोहस्यात्थतनाशात् ज्ञपितिहृशचिदाच्छादकाशेषलोपात्,
 प्रत्यूहस्यापि मूलं कवचिमशानादात्मशक्तेः प्रकाशात् ।

निःसापत्नं उच्यते परमशिवसुखास्वादसंबन्धमाना,

सुक्तिश्रीर्विष्णुतत्त्वं त्विति सकलजनादेश्यमुक्ते जिनेन्द्रैः ॥ ८९५ ॥

ॐ ह्रीं मोक्षतत्त्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-मौहादिक सप्त कर्मसे, रहित मोक्ष सुखरूप । आत्मशक्ति पूरण प्रगट, अविनाशी इक रूप ॥

देवोर्द्ध्वं सकलामधव्यपगतो हृष्टवाग्देशको, भव्यद्वैर्नारागदोषकलनो मोक्षार्थिभिः श्रेयसे ।

आश्रेयः परिसेवनीय उदितज्ञानप्रभौघः स्वयं, शास्ता सर्वहितः प्रमाणपटुभिर्ध्वेयो जिनः पातुः नः ॥ ८९६ ॥

ॐ ह्रीं आप्तस्वरूपरूपकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-वीतराग सर्वज्ञ जिन, हित उपदेशी जान । निर्मल तत्र प्रकाश कर, भजो आप्त पहचान ॥

रागद्वेषकलंकपंकगणिकाहीनो विसंवादको, निर्वाँछो हितदेशनो व्रतगुणग्रामाग्रण्य प्रभुः ।

आस्माकं भवपद्धतावनुसद्वाघादितानां महा-नाराध्यः प्रियकारको गुरुरयं प्रोक्तो जिनेन स्वया ॥ ८९७ ॥

ॐ ह्रीं गुरुस्वरूपनिरूपक जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-बैरागी निस्पृह व्रती, सर्वपरिग्रह हीन । आत्मध्यानी गुरु कहे, हितकर तत्र प्रवीण ।

यत्रामूलननूनमन्यजडतापीडोत्कथाप्रच्युतिर्यत्र श्रेयसि दीपिकेव सरणिः प्राकाश्यमास्कंदते ।

विश्वप्रोतमहार्तिमोहमदिरानिभ्रतसंनं सद्गुणाश्लेषा वास्त्रियं जिनवरैर्गीतो (1) धृषोऽस्तुश्रिये ॥ ८९८ ॥

ॐ ह्रीं धर्मस्वरूपरूपकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-वस्तु मय मोहहर, पीडा सप्त निवार । शिवकारण भव उद्धरण, धर्म सप्त अबिकार ॥

शब्दावाच्यमवस्त्वनादिकृतसंकेतेन वस्तुग्रहः,

केनापि ध्वनिना भवत्यथ स वै संजायते मातृकृत ।

सौप्त्येक्षासहिती एनेकगुणतस्ता एव तस्मात् स्थितं

वस्तु स्यात्पदसंस्कृतं तदुदयन स्याद्वाक एवार्हतः ॥ ८९९ ॥

ॐ ह्रीं मनोर्द्धते भगवते स्वाहात्स्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-वस्तु वाक्य अवाक्य है, नित्यानित्य स्वरूप । अथ प्रमाण तै साधनां, स्वाद्वाक सुस्वरूप ॥

तीर्थेषां भरतेशिनो हलजुषां नारायणानां ततः, शश्रूणां त्रिपुरद्विषां च महतां सद्भाग्यसंघालिनां ।
पुण्यापुण्यचरित्रमत्र निहितं पूर्वायुयोगं विदन्, दृष्टान्तप्रतिपत्तिर्द्वं जिनपतिः प्रारब्धवान् शासनं ॥९००॥

ॐ ह्रीं प्रथमानुयोगवेदस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-तीर्थंकर चक्रीषा हर, प्रतिहर हलचर व्रत । पुण्य पाप दृष्टान्त कहे, प्रथमनुयोग पवित्त ॥

संस्थानायामसंख्यागणितमसृश्रुतां मार्गणास्थानतज्ज-

कर्मोदीर्णोदयादिप्रकथनमधिपो वर्णयामास सम्यक् ।

लोकालोकोक्तभेदे नरकसुरमनुष्यादिसंस्थित्युदंतष्टुत्ति

त्वारख्यानमेतत्करणगमनुयोगं प्रकाश्य स्वयंभूः (?) ॥९०१॥

ॐ ह्रीं करणानुयोगवेदस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-लोकत्रय रचना सकल, जीव मार्गणा धान । करणानुयोग बखानता, कर्मबंध आख्यान ॥

शीलानां संयमानां व्रतसमितिविभ्रादिसाध्वर्हितानां,

सागारार्थोक्तमीवधृतविरमणश्चूल्बर्भक्रियाणां ।

तत्तत्स्थानोक्तबुद्धय निजनिजहृदयोद्भूतस्त्वं निरूप्य,

कर्तव्यत्वोपदेशो यद्बुधिवचनाख्यानमुक्तं जिनेन ॥ ९०२ ॥

ॐ ह्रीं चरणानुयोगवेदस्वरूपप्रकाशक जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-मुनि संयम व्रत आचरण, गृही धर्म आचार । कर्महरणविवि सब कहे, चरणनुयोग विचार ।

षट्द्रव्यस्वत्वस्वरूपाणवथ नयघटता तत्प्रमाणस्वरूपं,

नामस्थापादिकृत्यं तदधिकरणभिसूतत्वं संस्थापनावि ।

मेयामेधव्यवस्था यद्वबधिसमिता यत्र षड्भङ्गवाणी,

द्रव्याख्यानं निरूप्य प्रथममभिमहितं मोक्षमार्गं जिनेन ॥ ९०३ ॥

ॐ ह्रीं द्रव्यानुयोगवेदस्वरूपप्रकाशकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-नय प्रमाण निक्षेपसे, द्रव्य छद्मोंको साध तत्त्व सप्त शुद्धात्म कथ, द्रव्यानुयोग अबाध ॥

श्रीमत्सम्बद्धक्तिभारयम्बिनतशिरसः केचिद्विच्छंति मुक्ति,

ते मद्यः साधुदीक्षाप्रणयनपटवस्तत्प्रसादावलंब्यात् ।

केचिद्व्युच्छंति धर्मं गृहपतिनिरुत रुद्रसार्गोषरुदं,

स्वामिन् हस्तावलंबं कुरु शरणगमनान् रक्ष रक्षेशनाथ ॥ ९०४ ॥

ॐ ह्रीं मुनिश्रावकधर्मोपदेशकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-तब प्रसाद भवि लक्ष्म हैं, मुनि दीक्षा अविकार । प्रतिमा ग्यारा भवि धरें, तुम्हीं उतारन पार ॥

इसप्रकार धर्मोपदेश होजाय तब सब कहें-श्री सत्य आप्त वृषभ जिनेन्द्रकी जयरे । फिर मात्र इन्द्र उठता है और सब बैठ रहते हैं ।

स्तुति ।

चौपाई-धर्म्य धन्य जिनराज प्रबाणा, धर्मं वृष्टिकारी भगवाना ।

सत्य मार्गं दरशावन हारे, सरल शुद्ध मग चालन हारे ॥ १ ॥

आपीसे आपी आरहन्ता, पूज्य भार त्रैलोक महन्ता ।

स्वपर भेद विज्ञान बताया, आत्म तत्त्व पृथक् दरशाया ॥ २ ॥

स्वानुभूतिमय ध्यान जनाया, कर्मकाष्ठ पालन समझाया ।

धर्म अहिंसामय दिखलाया, प्रेम करन हितकरन बताया ॥ ३ ॥

वस्तु अनेक धर्मघरतारा, स्याद्वाद परकाशन हारा ।

मत विवादको भेटनहाया, मत्स्य वस्तु झलकावन हारा ॥ ४ ॥

धन तीर्थकर तेरी बाणी, तीर्थ धर्म सुखकारण मानी ।

कारहु विहार नाथ बहु देशां कारहु प्रचार तत्त्व उपदेशा ॥ ५ ॥

(१०) भगव नका विहार-इतना कहते ही इन्द्र देवोंको भेजता है कि विहारका प्रबन्ध करो। बाहर सब तय्यारी रहती है, रथ तय्यारारहता है। सब इन्द्र भगवानको मतकपर विाजमान करता है। तब समय सर्व खड़े होजाते है। आचार्य नीचके श्लोक पढ़कर भगवानके आगे अर्घ्य उढाता है।

काश्यां काशमीरदेशे कुरुषु च सगधे कौशले कामरूपे,
कच्छे काले कलिंगे जगपदमहिते जांगलाति कुरावौ ।

किङ्किने मल्लदेशे सुकृतिजनमनस्तोवदे धर्मश्रुष्टि,
कुर्ध्व शास्ता जिनेन्द्रो विहरति नियतं तं यजेऽहं त्रिकाल ॥ १०७ ॥

पांचाले केरले वाऽमृतपदमिहिरोमन्द्रचेदीदशार्ण-

वंगांगंधोलिकोशीनरमलयबिदभेषु गौडे सुसखे ।

शीतांशुरहिमजालादमृगपिव ससां धर्मपीथूषधारां,

सिचन् योगाभिरामा परिणमयति च स्वांतशुद्धिं जगानां ॥ १०८ ॥

पुनाटचौलबिषयेऽपि च मौड्रदेशे सौराष्ट्रमध्यमकलिदकिरातकावौ ।

सुयोग्ये सुदेशमहिते सुबिहृत्य धर्मचक्रेण मोहविजयं कुनवान् जनानां ॥ १०९ ॥

दोहा—काशी कुरु काशमीरमें, सगध सुकोशल काल । कच्छ कलिंग रकालमें, कुरुजांगल शुष धाम ॥

किङ्किना पांचालमें, मलय सुकेरल मन्द्र । चेदि दशार्ण सुधंगमें, अंग उलिक शुचि अन्ध ॥

गौड बिदर्भ उलीनरे, सख चौल पुनाट । मौड्र सौराष्ट्र किरातमें, मध्य कलिद विराट् ॥

इत्यादिक बहु देशमें, धर्मदेशनाकार । धंधहु पूजहुं प्रेमसे, करहु कर्त्त निरवार ॥

ॐ ह्रीं नमोऽहंते भगवते विहारवस्थाप्राप्ताय देशे धर्मोपदेशोद्धर्ते जिनाय वर्धं निर्धयमीति श्वाहा ।

फिर बाले बजने लगे, जगजयकार शब्द हो । भगवानपर पुष्पोकी वर्षा हो । इन्द्र श्री जिनेन्द्रको लेजाकर रथपर विराजमान करे, बौध्म इन्द्र स्वाधीपर बैठे, ईशान इन्द्र रथ चढावे, वानकुमार महेन्द्र दोनों तरफ चमर ढारें । रथपर चार भाइयोंके शिष्य और कोई न हो । रास्तेमें जय जय होते हुए नंगे पैर भक्तिमें भीजे सब चले, कमसे कम चार जगह आने जानेके मार्गमें धामियाणा हो वहां शांतिसे सब श्रोता बैठ जावें, भगवान्का रथ आगे खड़ा हो । पहले एक भजन बालेके साथमें ५ मिनटमें होजावे फिर उपदेश हो । चार स्थानमें भिन २ विषयपर अच्छे विद्वान् भिन २ उपदेश करें । २० मिनटमें भाषण धारणमित कदा जाय-यह बताया जाय कि श्री जिनेन्द्र विहार करते हुए उपदेश कर रहे हैं । नीचे क्लिबे विषयमेंसे क्लिबे जावें—

(१) निश्चय व्यवहार धर्म, (२) वस तस्थ, (३) चार वेद प्रथमानुयोगादि, (४) मुनिधर्म, (५) श्रावकधर्म, (६) कर्मवध, (७) आत्मधरूप, (८) स्याद्वादका मद्दत्त, (९) आत्मानदका उपाय, (१०) मोक्षस्वरूप, (११) एकांत खंडन, अनेकांत मंडन, (१२) अहिंसा धर्म, (१३) दशकृष्णधर्म, (१४) आत्मध्यान, (१५) बारह भावना, (१६) जगत अनादि, जैनधर्म अनादि ।

शक्यतुष्टार रास्तेमें ठहरा जावे । अर्ध्याके पहले २ लौट आया जावे । जब उधर श्रीजीका विहार हो इधर आचार्य अन्य प्रति-
माओंपर तिलकदान, श्रीमुखोद्घाटन, नयनोन्मीलन, सूरिमंत्र प्रदान इन क्रियाओंको प्रक्षोसे करके पुष्पोंको क्षेपण कर ज्ञानकल्याणकका आरोपण करे ।

(११) धर्मोपदेशकी सभा—रात्रिको टिकटोंद्वारा सभा लगे । भगवानकी गधकुटीको शे भनीक बनाया जावे, आगे रेशनी इतनी हो कि भगवान्का दर्शन सबको दूरसे होसके । ठीक समय परदा खुले । पहले इन्द्रादि देव भगवान्की आगतां १५ मिनिट तक करें । बड़े मनोहर शब्दोंमें पढ़ें । फिर सब यथास्थान बैठ जावें । जो विद्वान् व्याख्याता नियत किये गए हों वे उपदेश देवें । उपदेश बहुत समतारूप शांतिका प्रचार मात्र जिनधर्म सम्बन्धी विषयोंपर हो । एक उपदेशके पीछे एक भजन हो । उपदेश दो घंटे होजावे फिर आष घटा इच्छिये दिया जावे कि जिष किधीको जो नियम लेना हो वह अपने स्थानपर खड़े होकर हाथ जोड़कर कहे कि मैं श्री जिनैन्द्रके भक्तधारणमें यह नियम लेता हू । फिर आष घटा समय वास्ते दर्शन करने व भटारमें देनेके लिये नियत किया जावे । भटारमें डालनेको थाल एक ओर चतुरेपर रक्खा हो । पहले क्रमसे ५ नर ५ नारी आवे जावें । भंडारमें कुछ डाल नमस्कार करके चलते जावें । १० टिकटोंसे काम लिया जावे । भटारमें जो रुपया आवे प्रतिष्ठाके कार्यमें लगे ।

नोट—यदि ज्ञानकल्याणककी विधि करते हुए समय विहारका न रहे तथा मार्ग दूरका हो तो विहार दूबरे दिन किया जावे । तब रात्रिको धर्मोपदेश सभा हो । दूबरे दिन सबरे पहले दिनके समान नियमके समान पूजा होम हो । पीछे एक घटा सबरे धर्मोपदेश भगवान्का हो । फिर सबनने खा पीछे तब १ बजेसे विहार प्रारंभ किया जावे तब इष रात्रिको भी धर्मोपदेश हो, नियमादि हो । रात्रिको धर्मोपदेशके पीछे तुल्य भजनादि भी कायदेके साथ किये जा सकते हैं । ऐसी दशामें मोक्षकल्याणक तीचरे दिन होगा । यदि विहार ज्ञान कल्याणकके दिन होजावे तो सबके दूबरे दिन बड़े सबरे मोक्षकल्याणक किया जावे ।

अध्याय आठवां ।

मोक्षकल्याणक ।

दूधरे दिन बरे ही पहले दिनके समान आचार्य न्हवणपूजा व होम कर चुके तब मोक्षकल्याणक किया जावे । मंडप उचीताह नरनारियोसे पूर्ण भरा हो । पहले ही दूधरे चतूतरेपर परदा आगे डालकर उधपर ऐषी रचना बनावे—एक ऊंची वेदी ऐषी हो जिधपर अर्धचन्द्राकार शीशेका व स्फटिकका सिंहासन हो या अन्य षातुका हो । यह अभी खाली रक्खा जावे । उसके कुछ नीचे कैलाशपर्वतके समान कोई पहाड या ऊंचा स्थान बनाके उधपर शिला स्थापन करे । तिधपर बाधिया बनाकर जिन प्रतिमाको विराजमान करे, यहाँ अष्ट प्रातिहार्थदिक कुछ न हों । भगवान् योग निरोध करके ध्यानमें मग्न हैं ऐषा दिखे तब परदा उठे । तब सूचक यह प्रगट करे कि भगवान् ऋषभदेव विहार बंद करके अब कैलाशगिरिपर स्थित हैं । यहापर आचार्य पहले सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति, चारित्र्यभक्ति तथा निर्वाणभक्ति तथा शांतिभक्ति पढ़े । व आगे पुष्प क्षेपे । फिर नीचेका छंद पढके अर्घ चढावे—

त्रिमंगी छन्द—जय जय वृषभेशा ध्वादि जिनेशा हो परभेशा हो परभेशा नमहुं तुम्हें,
प्रभु वेश विहारे धर्म प्रचारे भवि उद्धारे नमहुं तुम्हें ।

कैलाश पधारे आत्म विधारे योग मगन जिनराज भए,
सूक्ष्मक्रिय शुंक्रु धार स्वधं निज मोक्ष तभी निकटात भए ॥

ॐ ह्रीं श्रीं वृषभदेव जिनेन्द्राय तृतीयशुक्लध्यानारूढाय भव निर्वपामीति स्वाहा ।
यहा सूचक कहे कि भगवान् तीर्थे शुक्लध्यानमें है, योगीका अति सूक्ष्म चलन हो रहा है । फिर—

जय जय तीर्थंकर, धर्म प्रभाकर, शिवसुख रजन नाथ भए,
व्युपरतक्रिय ध्यानं शुंक्रु महानं धारत ध्वात्म विशाल भए ।

औदारिक तेजस कार्मण वपुते नाथ रहित अब होवेंगे,
हम पूजें ध्यावें मंगल गावें शिष्यपथगामी होवेंगे ॥

ॐ ह्रीं श्रीं वृषभनाथजिनेन्द्राय चतुर्थशुक्लध्यानारूढाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यहाँ सूचक कहे कि भगवान्की आर्थमें अ इ उ ऋ ल इन पाच अक्षरोको उच्चारने मात्र काल शेष है । प्रभु चौदहवें गुणस्थानमें चढ़कर चौथे शुक्लध्यानको ध्या रहे हैं । फिर झटसे परदा बंद तरफ गिर जावे तत्र आचार्य प्रतिमाजीको यहासे उठाकर अर्द्धचन्द्राकार सिंहासनपर बाधिया करके विराजमान करादे । परदा उठे । उध समय बब कहे—निर्वाणकल्याणककी जय, सिद्धपरमेष्ठीकी जय ।

तत्काल ही इन्द्रादि देव आर्षे, बायमें अग्निकुमारका इन्द्र भी आर्षे । जय वृषभदेवकी जय, जय मोक्षकल्याणककी जय इत्यादि जय जय शब्द कारके आर्षे और आकर नमस्कार करें । फिर सब बैठ जायें । इन्द्र और आचार्य सामने पाथिया करके उद्यपर चन्द्रग अगर कपूर व सूखा धूप चुने तथा एरु रक्षावीमें रखलो हुई लौंगोको नख केशके भावसे बीचमें डालदे । तत्र अग्निकुमार जाति भवनयासी देवोका इन्द्र नमस्कार करे और लेटी हुई दशामें जला हुआ कपूर अपने मस्तकके मुकुटके पाषाणे उग चितापर ढालके अग्नि जलावे उष प्रमय आचार्य यह श्लोक व मन पठे—

उभ्रह्यायि जिणे पणमामि मया । असलो विरजो वरकल्पतरू ॥

सज कामदुहा मम रखख मया । पुरुचिज्जुणी पुरुचिज्जुणी ॥

ॐ ॐ ॐ र र र र स्वाहा । फिर वष कहे—निर्वाण-व्यग-की जय, वमित्र अग्नीकी जय । फिर नीचे लिखा श्लोक पढकर अर्घ चढावे—

तीर्थेश्वरस्यान्त्यमहोत्सवेयं, ऋदत्या नताश्रीन्द्रकिरीट जातम् ।

आनञ्चुरिन्द्राः अकलास्तमेनं यजे जलाचैरिह गार्हापत्यम् ॥

ॐ ही गार्हपत्यप्रणीतामये अर्घ निर्धामीति स्वाहा ।

फिर इन्द्र नीचे लिखी स्तुति पठे । और भी सामिठ हो सकते हैं । इन्द्र और आचार्य खड़े रहें, शेष सब बैठ जायें । स्तुति ।

पदरी छन्द—जय ऋषभदेव गुणनिधि अवार । पदुचे शिबको निज शक्ति द्वार ॥

बन्दू श्री सिद्ध महंत आज । सुधरें जामें मम सर्व काज ॥ १ ॥

निर्वाण धान यह पूज्य धाम । यह अग्नि पुज्य ऐ रमणराज ॥

मन बच तन बन्दू बार बार । जिन फसं धंश डारुं उजाड़ ॥ २ ॥

कैलाश महा तीरथ पुनीत । जंघं मुक्ति लही मय फसं जीत ॥

नहिं तैजस तन नहिं कारमाण । नहिं औदारिक कोई प्रमाण ॥ ३ ॥

है पुरुषाकार सु ध्यान रूप । जिन तनमें था तिम है स्वरूप ॥

तनु वातबलयमें क्षेत्र जान । पीबत स्वातम रस अपमाण ॥ ४ ॥

हो शुद्ध चिदात्म सुख निधान । हो पल अनन्त धारी सुमान ।

बन्दू मैं तुमको बार बार । सबसागर पार लङ्कें अवार ॥ ५ ॥

अग्नि बराबर जलती रहे कपर् चन्दन ढाला जाया करे । फिर धौहीनी भस्मको बिकरके लेवे । आचार्य और इन्द्र पहले उप
भस्मको नीचेका दोहा पढ़कर नमस्कार करें और उसे अपने माथेपर दोनों भुजाओंपर, गलेमें और छातीपर ऐसे पांच जगह लगावें ।

दोहा—बन्दूं पावन भस्मको, कर्म भस्म कर्तार । अंग लगे पावन करे, धर्म बड़े अधिकार ॥

फिर एक रकाबीमें भस्म लेकर भीतर चवूतरोपर जो हों उनको दी जावे । वे सब अगुलीसे लेकर नमनकर पांचो जगह लगावें । एक रकाबीमें भस्म पुरुषोंको व एक स्त्रियोंको भेज दी जावे । तब सूचक कहे—यह श्री तीर्थकरके निर्वाणकी भस्म महा पवित्र है इसको नमनकर पद कोई माथे, दोनों भुजा, कंठ तथा छातीपर लगावें । इतनेमें परदा पड़ जावे, भीतर भस्मको ठठा लिया जावे कि जब कोई मागे तब उसे दी जा सके और मांडला एक च कौपर बनाया हुआ भगवान्के घापने लाया आवे । यह मांडला पड़ेसे बना तैयार हो बीचमें आठ दलका कमल हो उसके मध्यमें घायिया लिखा हो, घायियेके ऊपर अर्द्धचन्द्राकार लिखकर उपपर विद्रु हो, आठ बत्तोंपर अपनी बाई तरफसे दाहनी ओर नीचे प्रमाण बिंदुके आठ पुज हों वा फूल हों या नाम लिखे हों ।

(१) धर्म्यक, (२) ज्ञान, (३) दर्शन, (४) वीर्य, (५) सूक्ष्मत्व, (६) अवगाहनस्त्व, (७) अगुरुदुःख, (८) अव्यानावाध । इन कमरके चारों ओर २४ कोठोंमें २४ पुष्प हों या पुज हों या २४ तीर्थकरके नाम हों ऐसा सुन्दर मांडला एक चौकीपर बना हुआ रखा जाय । बगलमें भामिनी हो तब परदा सठ जावे । इन्द्र व आचार्य नीचे प्रमाण पूजा करें—

स्थापना ।

**बाषाभ्यन्तरहेतुजातसुहशः पूर्वश्रुतैरादिमा-च्छुक्लुध्यानयुगादित्य दुरित लब्धवा सयोगिश्रियम् ।
प्राप्यायोगिपदं परेण सकलं निजित्य कर्मोत्करं, शुक्लुध्यानयुगेन सिद्धसुगुणान्सिद्धान्स्माराशये ॥**

ॐ ह्रीं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र एहि एहि सर्वोषट् । ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम चनिहितो भव भव वषट् ।

गंगादितित्थप्यहस्यएहिं सगंध्या गिम्मलपएहिं । अचेमि णिचं परमट्टसिद्धे सब्वट्टसम्पादयसव्वसिद्धे ॥

ॐ ह्रीं श्रीं नमः सिद्धधिपतये जलं ॥ १ ॥

**गन्धेहिं धाणाण सुहस्यएहि, समवेघाणंपि सुहस्यएहिं ॥ अचेमि० ॥ गन्धं ॥ २ ॥
पेरंतडोणीस्यकारणेहि, धरक्खएहि सियकारणेहिं ॥ अचेमि० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥
पुब्बेहि दिव्वेहिं सुवणणएहिं कव्वे कज्जसेहिं सुवणणएहिं ॥ अचेमि० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥
बन्धेहिं पाणासुरस्यएहिं, भव्वान पाणाइरस्यएहिं ॥ अचेमि० ॥ वरुं ॥ ५ ॥**

दृढिबमाणस्पशदीवएहिं, संजगआणं सिरिदीवएहिं ॥ अचेमि० ॥ दीपं ॥ ६ ॥
 कालाअरुं भूयसुहृवएहिं, जीयाण पावाण सुहृवएहिं ॥ अचेमि० ॥ धूपं ॥ ७ ॥
 अणगघभूएहिं फलव्यएहिं, भव्वस्स संदिणणफलव्वएहिं । अचेमि० ॥ फलं ॥ ८ ॥

णयेण णाणेण य दंमणेण, तदेण उट्टेण य संजमेण ।
 सिद्धे निकालेसु विसुद्धबुद्धे, समग्नयामो सयलेयि सिद्धे ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

प्रत्येक अर्घं ।

जानाति थोथो यदनुग्रहेण, द्रव्याणि सर्वाणि सपर्ययाणि ।
 तुराग्रहत्यक्तनिजात्मरूपं, तं सिद्धवम्यक्तयगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धवम्यकगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जानाति नित्य युगपरस्वतोन्म्य, सर्वार्थिसामान्यविशेषपूर्वम् ।
 निबोधक स्पष्टतर च वस्तं, सिद्धात्मंविज्ञानगुण यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धात्मविज्ञानगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वात्मस्थसामान्यविशेषसर्वं, साक्षात्कारोत्थेव सम सदा यः ।
 सुनिश्चितासंभवबाधकं तं, सिद्धात्मनो हृष्टिगुण यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनन्तविज्ञानमन्तहृष्टिं, द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु ।
 इयापारायन्तं हृतसंकरादिसिद्धात्मवीर्याख्यगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अबाधकं मानमबाध्यमेव, निरपीतसर्वार्थिसंसंगसगम् ।
 सर्वज्ञवेद्यं तदवाच्यमेव, सिद्धात्मसूक्ष्माख्यगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसूक्ष्मगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

एकत्र सिद्धात्मनि चान्यसिद्धा, वसंयसंभाषमनंतसंख्याः ।
यस्य प्रभाषात्सुनयस्थितं तं, सिद्धावगाहाख्यगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धावगाहगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अधो न पातोस्ति यथा शिलादेर्न, तूलबद्धायुक्तेरणं च ।
सिद्धात्मनां तेन सुयुक्तिसिद्धं, गुणं यजामोऽगुरुलक्षवभिरुच्यम् ॥

ॐ ह्रीं सिद्धागुरुलक्षगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भवाग्निशांत्यै विहितश्रमोऽव्यावाधात्प्रनायं परिणाममेति ।
स्वात्मोत्थनोत्थैकनिबन्धनत, सिद्धात्मनिर्बाधगुणयजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धव्यावाधगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ! फिर नीचे लिखे अनादि सिद्ध मन्त्रको २१ बार जपे—
ॐ णमो सिद्धा ' सिद्धा मंगलं, सिद्धा लोयुत्तमा, सिद्धे सरणं पव्वजामि ह्रीं शांतिं कुरु कुरु स्वाहा ।

इत्थं समभ्यर्चिन्तसिद्धनाथसम्यक्त्वसुखाब्जगुणास्तदीया ।
सर्वाचिन्ताः लब्धजनार्चनीयाः, स्वात्मोपलब्ध्ये सम सन्तु तेऽमी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धगर्भेष्टने पूर्णांघं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रतिमासं सिद्धोक्ते आठ गुण नीचे प्रमाण करे ।

जानाति बोधो यदनुग्रहेण, इव्याणि सर्षाणि सपर्ययाणि ।
दुराग्रहत्यक्तनिजात्मरूप, सिद्धेव सम्यक्त्वगुणं न्यसामि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं परमावगाढव्यक्तगुणभूषिताय नमः । ऐसा कह आचार्य प्रतिमापर पुष्प क्षेपे ।

जानाति नित्यं युगपत्स्वतोन्वत्सर्षार्थसामान्यविशोबसर्वम् ।
निर्बाधकं स्पष्टतरं च यत्, सिद्धेत्र विज्ञानगुणं न्यसामि ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

स्वात्मस्थसामान्यविशोबसर्वं साक्षात्करोत्येव समं सदा यः ।
सुनिश्चितासंभववाधकत, सिद्धेत्र हृदयाख्यगुणं न्यसामि ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अनन्तविशानमन्तदृष्टिं, द्रव्येषु सर्वेषु च पर्येषु ।

व्यापारयन्तं हतसकरादिं, सिद्धेन वीर्यख्यगुणं न्यसामि ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अषाढकं मानमवाध्यमेव, निरपीतसर्वार्थमसङ्गसङ्गम् ।

सर्वज्ञवेद्य तदवाच्यमेव, सिद्धेन सुदमाख्यगुणं न्यसामि ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

एकत्र सिद्धात्प्रति चान्यसिद्धा, वसन्त्यसंवाधमन्तसंस्थाः ।

यस्य प्रभावात्सुनयस्थितं तं, सिद्धेनगहाख्यगुणं न्यसामि ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अथगाहनगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अधोनुपातोऽस्ति यथा शिलादेर्न तूलबद्धयुक्तैरणं च ।

सिद्धात्प्रभातेन सुयुक्तिसिद्धं, गुणं न्यसामोऽगुरुलक्षवभिख्यम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलक्षगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

भवाभिशान्त्यै विहितश्रमोव्यावाधात्मना यं परिणाममेति ।

स्वात्मोत्थसौख्यैकनिबन्धनं तं, सिद्धेन निर्वाधगुणं न्यसामि ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अव्यावाधगुणभूषिताय नमः । (प्रतिमापर पुष्प क्षेपे) (अत्र २४ कोठोंकी पूजा करे)

विभगी—जय जय तीर्थकर मुक्तिधधूवर भवसागर उद्धार करे,

जय जय परमात्म शुद्ध विदात्म कर्मकलंक निवारकरं ।

जय जय गुणसागर सुखरसाकर आत्ममगनता सार लरं,

जय जय निर्वाण पाय सुज्ञान पूज्य पग संसार हरं ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थकुरेभ्यो पुष्पाजलि क्षिपेत् ।

वसन्ततिलका छन्द—पानी महान भरि शीतल शुद्ध लाजं । जन्मादि रोग हर कारण भाव ध्याजं ॥

पूजं सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं । पाजं महान शिवमंगल नाश कालं ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो नमः जल ।

केशर सुमिश्रित सुगन्धित बन्दनार्दी । आताप सर्व भव नाशन मोह आवी ॥ पूंजूं सदा० ॥ बन्दनं ॥
 बन्दा समान बहु अक्षत धार थाली । अक्षय स्वभाव पाऊं गुण रत्नशाली ॥ पूंजूं सदा० ॥ अक्षतं ॥
 बम्पा गुलाब मरुवा बहु पुष्प लाऊं । दुख टार काम हरके निज भाव पाऊं ॥ पूंजूं सदा० ॥ पुष्पं ॥
 ताले महान पकवान बनाय धारे । बाधा मिटाय शुभ्ररोग स्वयं सम्हारे ॥ पूंजूं सदा० ॥ नैवेद्यं ॥
 दीपावली जगमगाय अंधेर घाती । मोहादि तम विघ्न जाय भव प्रतापी ॥ पूंजूं सदा० ॥ दीपं ॥
 बन्दन कपूर अगरादि सुगन्ध धूपं । बाह्यं तु अष्ट कर्म हो सिद्ध भूपं ॥ पूंजूं सदा० ॥ धूपं ॥
 मीठे रसाल बादास पवित्र लाए । जासे महान फल मोक्ष सु आप पाए ॥ पूंजूं सदा० ॥ फलं ॥
 आठों सुद्रव्य ले हाथ अरघ बनाऊं । संसार वास हरके निज सुख पाऊं ॥ पूंजूं सदा० ॥ अर्घं ॥

प्रत्येक अर्घ ।

गीता-चौदस वदी शुभ माघकी, कैलाशगिरि निज ध्यायके । बृषभेश सिद्ध हुवे शचीपति, पूजते हित पायके ॥
 हम वार अर्घ महान पूजा, करे गुण मन लायके । सब राग दोष मिटायके, शुद्धात्स मनमें भायके ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

शुभ चैत सुदि पांचम दिना, सग्मेदगिरि निज ध्यायके ।

अजितेश सिद्ध हुवे भविकगण, पूजते हित पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लापचम्यां श्रीअजितनाथाय जिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

शुभ माघ सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

सम्भव निजातम केलि करते, सिद्ध पदवी पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लाषण्ठ्यां श्रीरंभवनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

वैशाख सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

अभिनन्दनं शिव धाम पहुँचे, शुद्ध निज गुण पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाषण्ठ्यां श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

शुभ चैत सुदि एकादशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री सुमतिजिन शिव धाम पायो, आठ कर्म नशायके ॥ हम० ॥

- ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लाएकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (५)
- शुभ कृष्ण फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्री पद्मप्रभु निर्वाण हुवे, स्वात्म अनुभव पायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णाष्टम्यां श्री पद्मप्रभुजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६)
- शुभ कृष्ण फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्री जिन सुपार्श्व स्वस्थान लीयो, स्वकृत आनन्द पायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णाष्टम्यां श्री सुपार्श्वजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (७)
- शुभ शुक्ल फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीचन्द्रप्रभु निर्वाण पहुंचे, शुद्ध ज्योति जगायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्ला षष्ठ्यां श्री चन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (८)
- शुभ भाद्र शुक्ला अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीपुष्पदंत स्वधाम पायो, स्वात्म गुण झलकायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाअष्टम्यां श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (९)
- दिन अष्टमी शुभ द्वार सुद, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीनाथ शीतल शोक्ष पाए, गुण अनन्त लखायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं भाद्रिनिशुक्लाअष्टम्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)
- दिन पूर्णमासी श्रावणी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
जिन श्रेयनाथ स्वधाम पहुंचे, ज्ञात्म लक्ष्मी पायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं श्रावणपूर्णमास्यां श्री श्रेयनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (११)
- शुभ भाद्र सुद चौदश दिना, मंदारगिरि निज ध्यायके ।
श्रीवासुपूज्य स्वधान ली हो, कर्म आठ जलायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाचतुर्दश्यां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)
- आपाठ चद्र शुभ अष्टमी, मम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीविमल निर्मल घाम लानो, गुण पवित्र बनायके ॥ ह्रमं ॥

ॐ ह्रीं भाषाढकृष्णाभष्टया विमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

अमनाथसी वद वैश्रकी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

स्वामी अनन्त स्वधाम वायो, गुण अन्नत लवायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअभावया श्री अनतनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

शुभ ज्येष्ठ शुक्ला चौथ दिन सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्रीधर्मनाथ स्वधर्म नायक, अप्प निज गुण पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाचतुर्था श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

शुभ ज्येष्ठ कृष्णा चौदसा सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्रीशांनन थ स्वधाम धुंत्ते, परम मार्ग बतायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्था श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)

वैशाख शुक्ला प्रतिपदा, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्रीकुन्थुनाथ स्वधाम लानो परम पद झलकायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदा श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)

अमनाथसी वद चैतका, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री अरुहनाथ स्वथान लानो, अमर लक्ष्मी पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअभावया श्री अरुहनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)

शुभ शुक्ल फाल्गुण पंचमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री बल्लनाथ स्वथान धुंत्ते परम पदवी पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुशुक्लपंचमी श्री बल्लनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)

फाल्गुण वदा शुभ द्वादशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

जिननाथ मुनिसुव १ पधारे, मोक्ष धानन्त्र पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाद्वादशा श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)

वैशाख कृष्णा चौदशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

नमिनाथ मुक्ति विशाल पाई, सकल कर्म नशायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदा श्री नमिनाथमुक्तिविशालपाईसकलकर्मनशायके ॥ ह्रम० ॥ (२१)

ॐ ही वैशाखकृष्णाष्टतुदश्यां श्री नमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)

आषाढ शुक्ला सप्तमी, गिरिनार गिरि निज ध्यायके ।

श्री नैमिनाथ स्वधाम पहुँचे, अष्ट गुण झलकायके ॥ हम० ॥

ॐ ही आषाढशुक्लाष्टम्यां श्री नैमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)

शुभ आश्वणी सुद ऋतमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री पार्श्वनाथ स्वधाम पहुँचे, सिद्धि अतुपम पायके ॥ हम० ॥

ॐ ही आश्वणशुक्लाष्टम्यां श्री पार्श्वजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)

अस्माधस्मी षड् कार्तिकी, पाषापुरी निज ध्यायके ।

श्री वर्द्धमान स्वधाम लोनो, कर्म वंश जलायके ॥ हम० ॥

ॐ ही कार्तिककृष्णा अमावास्यां श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

मुजंतप्रयात छद-नमस्ते नमस्ते जिनन्दा । तुम्हीं सिद्ध रूपी हरे कर्म फंदा ॥

तुम्हीं ज्ञान सूरज भक्तिक नीरजोको । तुम्हीं ध्येय वायू हरो सब रजोको ॥ १ ॥

तुम्हीं निवकलंकं चिदाकार चिन्मय । तुम्हीं अक्षजोतं निजाराय तन्मय ॥

तुम्हीं लोक ज्ञाता तुम्हीं लोक पालं । तुम्हीं सर्वदर्शी हता मान कालं ॥ २ ॥

तुम्हीं क्षेमकारी तुम्हीं योगिराजं । तुम्हीं शांत ईश्वर कियो आप काजं ॥

तुम्हीं निर्भय निमल वीतमोहं । तुम्हीं साम्य अमृत पियो वीतद्रोहं ॥ ३ ॥

तुम्हीं सब उदधि पारकतो जिनेशं । तुम्हीं मोह तमके निवारक दिनेश ॥

तुम्हीं ज्ञानवीरं भरे क्षीर सागर । तुम्हीं रत्न गुणके सु गम्भीर आकर ॥ ४ ॥

तुम्हीं बन्दरमा निज सुधाके प्रचारक । तुम्हीं योगियोंके परम प्रेम धारक ॥

तुम्हीं ध्यान गोचर सु तीर्थकरोंके । तुम्हीं पूज्य स्वामी परम गणधरोंके ॥ ५ ॥

तुम्हीं हो अनादी नहीं जन्म तेग । तुम्हीं हो मदा सत् नहीं अंत तेरा ॥

तुम्हीं सर्वव्यापी परम बोध द्वारा । तुम्हीं आरमन्व्यापी चिदानन्द धारा ॥ ६ ॥

तुम्हीं हो अन्तर्धं स्व परिणाम द्वारा । तुम्हीं हो अभेदं अमिदं द्रव्य द्वारा ॥
 तुम्हीं भेदरूपं गुणानन्त द्वारा । तुम्हीं नास्तिरूपं परानन्त द्वारा ॥ ७ ॥
 तुम्हीं निर्विकारं अमूर्त अखेदं । तुम्हीं निष्कषायं तुम्हीं जीव वेदं ॥
 तुम्हीं हो चिदाकार साकार शुद्धं । तुम्हीं हो गुणस्थान दूरं प्रबुद्धं ॥ ८ ॥
 तुम्हीं हो समयसार निजमें प्रकाशी । तुम्हीं हो स्वचारित्र आत्म बिकाशी ॥
 तुम्हीं हो निरास्त्र निराहार ज्ञानी । तुम्हीं निर्जरा विन परम सुख निधानी ॥ ९ ॥
 तुम्हीं हो अवन्धं तुम्हीं हो अमोक्ष । तुम्हीं कल्पनातीत हो नित्यं मोक्षं ॥
 तुम्हीं हो अवाच्यं तुम्हीं हो अचित्य । तुम्हीं हो सुवाच्य सु गणराज नित्यं ॥ १० ॥
 तुम्हीं सिद्धराजं तुम्हीं मोक्षराजं । तुम्हीं तीन सूके सु ऊरुध विराजं ॥
 तुम्हीं वीतरागं तदपि काजं सारं । तुम्हीं भक्तजन भावना मल निवार ॥ ११ ॥
 करं मोक्ष कल्याणकं भक्त भीने । कुरै भाव शुद्धं यही भाव कीने ॥
 नमे हैं जजे हैं सु आनन्द धारें । शरण भंगलोत्तम तुम्हींको विचारें ॥ १२ ॥
 दोहा-परम सिद्ध चौबीस जिन, वर्तमान सुखकार । पूजत भजत सु भावसे होय विघ्न निरवार ।
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिवर्तमानजिनेन्द्रेभ्यो मे क्षमत्याणकेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-विम्बप्रतिष्ठा हो सफल, नरनारी अथ हार । वीतराग विज्ञानमय, धर्म बढो अधिकार ॥

इत्याशीर्वादः । पुष्प क्षेपे ।

फिर आधारणतया पूजा विभर्जन करे, पादा पड़े । कवेरे यह कार्य हो जावे तब नरनारी भोजनादि करें । ऊपर आचार्य शेष प्रतिमाओंपर पुष्प द्वारा कल्याणककी स्थापना करे । अस्मिन्बिम्बे निर्वाणकल्याणक आरोपयामि स्वाहा । विद्वद्युगानि न्ययामि स्वाहा ।

अध्याय नौवां ।

अन्तिम होम. अभिषेक व शांति

तीर्थे पहर करीव १ बजे फिर मंडप टिकटोंके द्वारा भरा जावे । होमकी सामग्री इतनी तैयार की जावे जिबसे १२००० के करीव आहुति हो सके । अभिषेकके लिये १०८ कलश हों तो ठीक है । यदि न हो सके तो ५४, २७, ९ भी हो सकते हैं । इनमें जन्मकल्याणकक समान दूबसे मिला जल जो सफेद दीले भरा जावे व एक बड़ा कलश केशरादि सुगन्ध द्रव्योंसे भरा हुआ हो व चार कलश दोनोंके हों । पहले आचार्य व इन्द्र मन्त्र स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन पदोंके समान अंग शुद्ध करें फिर एक बिंदू पूजा कारके तीनों कुण्डोंमें होम करें । तब समय बह सब विधि करें जो यागमण्डलकी पूजाके प्रारम्भमें की थी (होम विधि अध्याय दूसरा पृष्ठ २१ परसे बिद्वार्चि बन्धन्वी पीठिका मंत्रोंसे होम करे । “ ॐ सत्य जाताप नमः ” आदिसे ऐवी ११२ आहुतियां देवे । फिर जिब मन्त्रकी एक कास जाप्य की थी तब मन्त्रको १००० आहुति तीनों कुण्डोंमें देवे । अर्थात् कुल ३००० इई । एक ही वाप एक मन्त्र पढ़ा जावे व तीनों कुण्डोंमें दो दो इन्द्र आहुति देवे—“ ॐ हां हीं हूं हों हः ।

इसप्रकार होम हो चुके तब महा अभिषेक प्रारम्भ किया जावे । पहले आचार्य और इन्द्र कायोह्वर्ग कारके बिंदोंका ध्यान करें फिर बिंदुभक्ति, चारित्रभक्ति तथा समाधिभक्ति पढ़ें । फिर पूजन करें ।

(१) जिनयज्ञ विधानम् ।

आहुता भक्षनामरैः सुगता य सर्वदेवास्तथा, तस्थौ यस्त्रिजगत्संभारमथापोठाग्रप्रतिहासने ।
यं हृद्यं हृदि सन्निधाप्य मन्तं, ध्यायंति योगीश्वराः, त देव जिनमर्चितं कृतधियाभावागाननाद्यैर्भजे ॥

ॐ हां हीं हूं हीं हः अथि आ त वाईर्न् एदि २ योषट् । ॐ हां हीं हूं हीं हः अथि आ त वा अर्हन् तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ हां हीं हूं हीं हः अथिआतवा अर्हत् मम अनिहितो भय भव वषट् । पुष्पाजलि क्षेपे ।

ध्यापना ।

यत्रागाधविशालनिमलगुणे लोकत्रय सर्वदा । सालोकं प्रतिबिधितं प्रविशतां नित्यासुतानन्दनम् ।

सर्वोब्जानिभिवाश्यदं स्मृतिगन्तं पापापह धीमताम् । अर्हतीर्थमपूर्वमश्रयमिदं बाधोरया धारये ॥ १ ॥

ॐ हीं परमप्रसूणे अनन्तानन्तज्ञानशक्तये जल निर्वगामीति स्वाहा ।

गन्धअन्दनगन्धबन्धुरतरो यद्विद्वददेशोद्भूतो, गन्धबीज्यमरस्तुतो विजयते गन्धांतरं सर्वतः ।

गन्धादीनिखिलान्वैति विशदं गन्धादिस्तुतोऽपि यः, तं गन्धाद्यघग्घमानहतये गर्धेन सम्पूजये ॥

ॐ ह्रीं भवाताप विनाशनाय षट्दनम् ।

ॐ ह्रीं अक्षयफलप्राप्तये अक्षय निर्वपामीति स्वाहा ।

यस्य द्वादशयोजने स्रद्धसि सद्गन्धादिभिः श्वोपया । नप्यर्थीन्सुमनोगणान्सुमनसो बर्षन्ति विद्वत्कसदा ।
यः सिद्धिं सुधनः सुखं सुमनसां स्वं ध्यायताम्नावष्टे-सं देवं सुमनोमुलैश्च सुमनोभेदैः समभ्यर्चये ॥

ॐ ह्रीं कामनाय विध्वशनाय पुण्यम् ।

यद्बुध्याबाधविवर्जितं निरूपमं स्वात्मोत्थमस्त्यूजितम् । नित्यानन्दसुखेन तेन लभते यस्तृप्तिमात्यन्तिकीम् ।
यं चाराध्य सुधाशिनो ननु सुधास्वादं लभंते चिरम् । तस्योद्यद्ब्रह्मचरुणैव बरुणा ओपाद्दमाराराधये ॥

ॐ ह्रीं सुगम-सुखप्रदाय नैवेद्यम् । नर्वपामीति स्वाहा ।

स्वस्यान्पस्य ऊ हृत्प्रकाशनविधौ दीपोपमोप्यन्वहम्, यः सर्वं उचलयन्नंतंकिरणैर्खलोक्यदीपोऽस्यतः ।
येनोद्दीपितघर्मतीर्थमभरसरयं विभो स्वरस्य स-दीप्त्या दीपितदिङ्मुखस्य षरणौ दीपैः समुद्दीपये ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।

येनेदं मुक्चनत्रयं चिरमभ्यूहूपितं सोप्यहो मोहो येन सुधूपितो निजमहाधयानाग्निना निर्दयम् ।
यस्यास्थानपदस्थधूपघटजैर्धूमैर्जगदूपितम् । धूपैस्तस्य जगद्दशीकरणमदूपैः पदं धूपये ॥

ॐ ह्रीं वशीकृतत्रिकोकनायाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

यद्भक्त्या फलदायि पुण्यसुद्धितं पुण्यं नधं वध्यते । पाप नैव फलप्रदं किमपि नो पापं नधं प्राप्यते ।
आर्हन्स्यं फलमदुसुं शिवसुखं नित्यं फलं लभ्यते । पादौ तस्य फलोत्तमादिसुफलैः श्रेयः फलायाव्यते ॥

ॐ ह्रीं कभीष्टफलप्राप्तये फल निर्वपामति स्वाहा ।

धार्गंधतंदुल्ललतांतह्विःप्रदीपै-धूपैः फलैः कनकपात्रगतंजिनाग्रे ।
नयादिबर्तदधिस्वस्तिकदर्भदूर्वा-सिद्धार्थकैश्च कृतमहर्धर्मिहोद्गरामः ॥

ॐ ह्रीं विनष्टाष्टकर्मणे अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्तुतिः ।

तुभ्यं नमो दशगुणोजितदिव्यगात्र । कोटिप्रभाकरनिशाकरजैत्रतेजः ।
तुभ्यं नमोऽतिचिरबुर्जयघातिजात- । घातोपजातदशशरगुणाभिराम ॥ १ ॥

तुभ्यं नमः सुरनिकायकृतेविंशारे । दिव्यैश्चतुर्दशविधातिशयैरुपेत ॥
 तुभ्यं नमस्त्रिभुवनधिपतित्वलक्ष्म-श्रीप्रातिहार्याष्टकलक्षितार्हन् ॥ २ ॥
 तुभ्यं नमो निरुपमान भनन्तवीर्यं । तुभ्यं नमो निजनिर्जननित्यसौर्य ॥
 तुभ्यं नमः परमकेवलबोधवार्धे । तुभ्यं नमः समसमस्तपदाबलोक ॥ ३ ॥
 तुभ्यं नमः सकलमंगलवस्तुमुख्य । तुभ्यं नमः शिबसुखप्रद पापहारिन् ।
 तुभ्यं नमस्त्रिजगदुत्तमलोकपूज्य । तुभ्यं नमः शरणभृत्रय रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥
 तुभ्यं नमोस्तु नवकेवलपूर्वलब्धे । तुभ्यं नमोस्तु परमैश्वर्योपलब्धे ।
 तुभ्यं नमोऽस्तु सुनिकुंजरयूथनाथ । तुभ्यं नमोस्तु सुवनत्रितयैकनाथ ॥ ५ ॥

(२) सिद्ध पूजा ।

आहूता इव सिद्धशुक्तिवनितां मुक्तान्यसंगा ययुः । तिष्ठत्यष्टमभूमिमौघशिखरे मानननसौर्याः सदा ॥
 साक्षात्कूर्वत एव सर्वमनिशं सालोकलोकं सम । तानद्वेष्ट्विद्युदसिद्धनिकरानावाहनाद्यर्भजे ॥

ॐ ह्रीं गमो विद्वाण विद्वपरमेष्ठिन् अत्र एहिरे प्रबोषट् । ॐ ह्रीं गमो विद्वाण विद्वपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ ठः ठः ॥
 ॐ ह्रीं गमो विद्वाण विद्वपरमेष्ठिन् अत्र मम प्रनिहितो भव भव वषट् ।

गंगादितितपस्पयवषट्पण्डिं सरगंधदाणिमलदापण्डिं । अच्चेमि णिचं परमदृसिद्धे सवष्टुसम्पादय सव्वसिद्धे ।

ॐ ह्रीं श्रीं नम विद्वाधिपतये जल निर्वणामीति स्थाहा ।

गन्धेहिं धाणाण सुष्टप्यएहिं, समच्चयाणं पि सुष्टप्यएहिं । अच्चेमि० ॥ गन्धं ॥ २ ॥
 परंत छोणासिय कारणेहिं, वारवदएहिं सियकारणेहिं ॥ अच्चेमि० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥
 पुष्केहिं दिव्धेहिं सुवणणएहिं, कन्धे कऊसेहिं सुवणणएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥
 बन्धेहिं गाणासुरसप्यएहिं, भव्वाणाणाणायिरसप्यएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ बरु ॥ ५ ॥
 देदियमाणप्यहदीकएहिं । मंऊयआणं मिरिदिवएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ दीपम् ॥ ६ ॥
 काळाअरुअयसुह्ववएहिं । जोयाण पावाण सुह्ववएहिम् ॥ अच्चेमि० ॥ धूपं ॥ ७ ॥

अणयधभूरिं फळव्यएहि । एववस्म संदिणफळव्यएहिम् ॥ अवेमि० ॥ फलं । ८ ॥

गणेण णाणेण य दसणेण तवेण उट्टेण य संजसेण ॥
सिद्धे तिराले तुविसुद्धबुद्धे । समग्घयामो सयले वि सिद्धे ॥

ॐ ह्रीं ह्रीं श्री सिद्धाधिपतये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्तुति ।

नमस्ते पुक्खार्थीनां, परां काष्ठासधिष्ठिन सिद्धभट्टारकस्तोम, निष्ठितार्थं निरञ्जन ॥ १ ॥
स्वःपदाय नमस्तुभ्यं अत्रलाय नमोस्तु ते । कक्षयाय नमस्तुभ्यं, अठ्ठायाघाय ते नमः ॥ २ ॥
नमस्तेऽनंतनिजानहृष्टार्थं तुखास्पद । नमो नीरजसे तुभ्यं निर्मलायास्तु ते नमः ॥ ३ ॥
अच्छेद्याय नमस्तुभ्यं, असेद्यय नमो नमः । अक्ष्णाय नमस्तुभ्यं, अवसेय नमोस्तु ते ॥ ४ ॥
नमोस्त्वणर्धवास्य, नमोऽगौरवलाघव ॥ अक्षोऽस्याय नमस्तुभ्यसविलीनाय ते नमः ॥ ५ ॥
नम एरमकाष्ठान्तयोगरूपत्वमीयुषे लोकाप्रवासिने तुभ्यं, नमोऽनंतगुणाश्रय ॥ ६ ॥
निःशेषपुक्खार्थीनां, निष्ठां सिद्धिसधिष्ठिन । सिद्धभट्टारकवात, भूयो भूयो नमोस्तु ते ॥ ७ ॥

विनिपदुरितशुद्धान्मर्वतत्रार्थबुद्धान् । परमसुखसष्टद्वान्युक्तिशास्त्राविरुद्धान् ॥
पद्भिधगुणवृद्धान्सर्वलोकपसिद्धान् । प्रमितसुनयसिद्धान्संस्तुवे सर्वसिद्धान् ॥ ८ ॥

(३) महर्षिपूजा ।

ये येऽनगारा ऋषयो यतीन्द्रा, सुनीश्वरा अव्यभःद्वयतीताः ।
तेषां समेषां पदपंरुजानि, सपूजयामो गुणशीलसिद्धय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अनादूर्गमज्ञानचारित्रपविप्रतरंगान्रचतुरशीतिलक्षगुणगुणधरचरणा आगच्छत २ स्वोषट्, ॐ ह्रीं अत्र तिष्ठ २ ठः ठः;
ॐ ह्रीं मम लक्षणयशुद्धि कुरुत २ वषट् ।

सुगंधिगीतलैः स्वच्छैः, स्यादुभिविर्मलैर्जलैः । साधद्वीपद्वयतीतभवद्भूव्ययतीग्यजे ।

ॐ ह्रीं गणधरचरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सारकर्पूरकाशमीरकलितश्चन्दनद्रवैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ गंधम् ॥ १ ॥
 अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षैस्क्षमन्त्रिभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ अक्षतम् ॥ ३ ॥
 पुष्पैः प्रसरदामोदाहृतपुष्पंधयावृत्तैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ पुष्पम् ॥ ४ ॥
 हृद्यैर्नवघृतापूपपायसैर्वर्धजानन्वितः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ चरु ॥ ५ ॥
 कर्पूरप्रभ्रवैर्दीपैर्दीप्या दीपितदिङ्मुखैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ दीपं ॥ ६ ॥
 दशांगधूपमद्भूमैदकाशापूर्णसौरभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ धूप ॥ ७ ॥
 चोचमोचाभ्रजंजीवीरफलपूरादिसत्फलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ फलं ॥ ८ ॥

गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैककथन्धुन् प्रकृतिनिजमार्गोऽव्यस्तमिध्यात्प्रमाणोन् ।

परिचिन्निजतत्त्वान्पालिताशेषसत्त्वान् । शमरमजितचन्द्रानर्धयामो मुनीद्रान् ॥ अर्धं ॥ ९ ॥

स्तुति ।

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेन्द्राः, सप्तर्षयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः ।
 तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, वचोमनोमूर्द्धसु धारयामः । १ ॥
 तपोबलाक्षीणरसौषपद्धिन्, विज्ञानक्वद्वीनर्पि विक्रियद्धिन्
 सप्तद्धियुक्तानखिलावृषीद्र न्मरामि वन्दे प्रणमामि नित्यम् २ ॥
 भवेषु तार्थेषु तदतरेषु, सप्तर्षयो ये महिता यन्तुः ।
 भवांबुधेः पारमिताः कुनार्थाः । भवन्तु नस्ते सुनय. प्रसिद्धाः ॥ ३ ॥
 ये केवलीद्राः श्रुतकेवलीद्रा, ये शिक्षकात्तूर्यतृतीययोधाः ।
 सविक्रिया ये वरवादिनश्च सप्तर्षिसजाहि तान्प्रवन्दे ॥ ४ ॥
 प्रमत्तसुख्येषु पदेषु सार्धद्वीपद्वये ये युगपद्भवन्ति ।
 उत्कृषंतस्नात्रककाटिसंख्यान्वदे त्रिसंख्यारहितान्मुनीद्रान् ॥ ५ ॥

(४) नीचेका स्वस्तिपाठ पढ़कर पुष्पांजलि क्षेपे ।

श्री पंचकल्याणमहार्हणार्हा, वागात्समाग्यातिशयैरुपेताः ।

तीर्थकारा केवलिनश्च शोषाः, स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥ १ ॥

ते शुद्धमूलोत्तारसद्गुणानामाद्याश्च भवादनगारसंज्ञाः निर्ग्रथत्रयो निरग्रथत्रयो ॥ स्वस्ति० ॥ २ ॥
 ये वाणिमाद्यष्टत्रयिक्रियाद्वयस्तथाक्षयाथासमहानमाश्च । राजपंयस्ते सुरराजपूज्याः स्वस्तिक्रियां० ॥ ३ ॥
 ये कोष्ठबुध्यादिचतुर्त्रयद्वीरवापुरासकोमुखीपधर्द्धीः । ब्रह्मर्षयो ब्रह्मण तत्परास्ते ॥ स्वस्ति० ॥ ४ ॥
 जलादिनानाविधचारणा ये, ये चारणाग्ध्यांवरचाराणाश्च । देवर्षयस्ते ननदेवद्वंदाः ॥ स्वस्ति० ॥ ५ ॥
 मालोकलोकोत्सृजलनेकतानं, प्रासाः परं ज्योतिरनेतंधोधम् । सर्वषिंधंश्च परमर्षयस्ते । स्वस्तिक्रियां० ॥ ६ ॥
 श्रेणीद्वयारोहणमावधानाः, कर्षोपशांतिक्षयणप्रवीणाः । एते समस्ता भतयो महान्तः ॥ स्वस्ति ॥ ७ ॥
 समग्रमध्यक्षमिताक्षदेशपत्यक्षसुखानुरक्ताः । मुनीश्वरास्ते जगदेकज्ञान्याः ॥ स्वस्ति० ॥ ८ ॥
 उग्रं च दीप्तं च तपोभित्तं, महच्च धारं च तगं चरन्तः । सपोथना निर्धुं तन्माथनांत्काः ॥ स्वस्ति० ॥ ९ ॥
 मनोवचःकाण्ठबलपकृष्टाः, स्पष्टकृताप्रांगमहानिमित्ता । क्षारासुतस्य विमुखा मुनीन्द्राः । स्वस्ति० ॥ १० ॥
 प्रत्येकबुद्धप्रमुखा मुनीन्द्रा शोपश्च ये ये त्रिविधद्विष्टुक्ताः । सर्वेऽपि ते भवजर्नानमुक्ता ॥ स्वस्ति० ॥ ११ ॥
 शापानुग्रहशक्तगद्यतिशयैरुच्चारचैरचिनाः । ये सर्वे परमर्षया भगवन्तं तेषां गुणान्ताद्यन्तः ॥
 एतत्स्वस्ययनादपैति सकल, सक्लेशभावः शुभो । भावस्यात्सुकृतं च तच्छुभादिधेगादाविदं श्रेयसे ॥ १२ ॥

फिर आचार्य नीचे लिखा मंत्र पढ़ भूमिशुद्धिके लिये जल छिड़के । “ ॐ ही श्री क्षीं भूः स्वाहा । ” फिर शुद्ध भूमिपर या बड़ी चौकीपर बाधिया कारके १०८ या ५४ या २७ या ९ कलश क्षीर जलसे भरे स्थापित करे, या रक्खे हों तो यह मंत्र पढ़ उनपर पुष्प क्षेपे—“ ॐ ही स्वस्तये कलशस्थापन करोमि स्वाहा । ” तथा जिस उच्च स्थानपर न्द्वन करना हो उसके चारों कोनोंपर ४ कलश शुद्ध जलके भरे स्थापित करे तब भी ऊपर लिखा मंत्र पढ़े । इसके ऊपर एषा पात्र विराजमान करे जिसके दोनों ओर पानी बहनेकी नाली हो जिससे न्द्वनका जल दोनों तरफ गिरकर नीचे रक्खे हुए तबलोंमें पड़े । भूमिपर दो तबले ऐसे दोनों तरफ रख दिये जावे जिससे कुल कलशोका न्द्वन जल उनमें आ सके । फिर जिस पीठ या चौकीपर भगवानको विराजमान करना हो उसे उच्च पात्रके ऊपर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर रक्खे—“ ॐ हीं अई क्ष्म ठः ठः स्वाहा । ” फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ उच्च पीठको धोवे—

ॐ हां हीं हूं हौं हं नमो अर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन श्रीपीठाक्षालन करोमि स्वाहा । फिर नीचेका मंत्र पढ़ तब पीठपर श्री लिखे— ' ॐ हीं श्रीं अर्हं श्रीं श्रोत्रेभ्यन नमोमि स्वाहा । ' फिर नीचे लिख मंत्र पढ़ इन्द्र जिन प्रतिमाको जिष्की प्रतिष्ठा हो चुकी है स्पर्श करे । " ॐ हीं वाजे गण्टु प्रतिपार्ष्णीन्म् । " फिर बीच प्रतिमाका बड़ी विनयसे इन्द्र कोवे और पीठपर विराजमान करे तब आचार्य नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़े—

नीत्वा सूरिविभूतिः भुग्निरि, श्रीं पांडुक्ताग्रामने । पूर्वाभ्य चिन्वेदय ते सुरधराः, सस्तापयंति स्म यम् ॥
तं देवं स्तानार्थं प्रहृष्टपत्निम्, नीत्वा निभूत्या स्वमं । पांठेन श्रुनवीजभासुरतले, पूर्वाननं स्थापये ॥

ॐ हीं अर्हं श्रीं वर्मानार्थं धनाय भगवन्निह पाण्डु-शिश्रपठे तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा ।

फिर नीचे लिख. मंत्र पढ़ प्रतिमाके चरणोंको इन्द्र स्पर्श—

ॐ उग्रहाय त्रिभुवदेहाय इज्ज जादाय मरुत्त गाय अणनचरुडुगाय परमसुहृष्टुगाय गिम्भलाय पयभुवे अजामरपरमदपत्ताय वउमुहृपरमे ठुणे शरदनाय त्रिदोषणाणाय त्रिदोषपूत्राय अठुद्विज्वदेहाय देवत्रयपूजिताय परमदाय मम यय भन्निदिदाय स्वाहा ।

फिर दोनों ओर वीरुम ईशान १०८ कलकमेंसे एक कलकमेंसे एक कलक नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़े । इसके पहले यदि भाषा मगळ पढ़ना हो तो दूसरा मगळ पढ़ले

मेरोसूर्धनि सृष्टिन यस्य पयसां, धारां पयोश्चारिवेः सौधर्मः प्रथमं जयेति परया, भक्त्या समापातयत् ॥

ईशानादिसुरेश्वराग्नदत्तुं, सस्तापयानंकिरे तं देवं न्जयंपकपाननकृते, संस्तापयामो जिनम् ॥ १ ॥

यदज्ञानादिसद्वयनिजिनमहत्वाकाकश्रेत्यां वना । व्याजातन्वभिविचितीह, जिनमित्याविष्कृताशंककैः ॥

सच्छ.च्छैपि यीनलेः सुप्रथुरैर्नार्थीयर्नातेजलेः । शांण्यापादितवारिमुनिमनघं, देवं जिनं स्तापये ॥ २ ॥

ॐ हीं श्रीं ह्रीं ऐं अर्हं व म हृ ष त प व न हृ इ ष त त प प ह्रीं ह्रीं क्षीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्राक्षय द्रावय नमोर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिवेचयामि स्वाहा ।

आचार्य ऊपर के मंत्रको पढ़ना रहे, १०८ कलकशेसे दोनों इन्द्र अभिपेक करते रहे, दोनों तर्फ कतावच दूसरे इन्द्र खड़े हो जावे और कलकोंको देखे रहे । खाली कलकोंको पहलेके इन्द्र केकर रखते रहे । इवनके समय बाहर वजे चजते रहे, स्त्रियां मंगळगीत गावे, जय जय शब्द हो फिर उदक चन्दनादि वलनर अर्घ्य चढावे । फिर केशरादि मिश्रित गाढे जलके कलकशेसे स्नान हो तब यह श्लोक व मंत्र पढ़ा जाये—

कर्मोक्षी चिषय विलसद्रुच्यूर्णैरमीभिर्देवस्यासुष्य चूर्णीकृतदुग्धगिरैरंगमुद्दलयामः ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं सुगन्धजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा । फिर अर्घ चढावे । फिर चार कोनोंके कलशोंको दो दो कलश एक साथ एक एक इन्द्र लेकर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़कर स्नान करावे ।

**चत्वारः सारतोयांबुधय उत घना पुष्करावतकाद्याः ।
निर्यद्दुग्धाः स्तना वा क्रिबु, सुरसुरभेरित्यमाशंक्वमानैः ।**

अच्छाच्छस्वाद्दहीव्यगपरिमलविलसत्तार्थवारिप्रवाहैः ।
कुम्भेभिश्चतुर्भ्युत्पदभिववं, कुर्महे भव्यग्रन्धोः ॥

ॐ ह्रीं पवित्रतरचतुःकोणकुम्भपरिपूर्णजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा । फिर अर्घ चढावे । फिर नचे लिखा श्लोक व मंत्र पढ़कर कुल चन्दन मिले हुए जलसे अभिषेक करे ।

**सकलसुवन्नार्थं त जितेन्द्रं सुरेन्द्रभिवन्नत्रिभिमाप्तं स्नातकं स्त्रापयामः ।
यदभिवषणञ्चारां विन्दुरेकोऽपि नृणां, प्रभवति हि त्रिधातु भुक्तमन्सुकिलक्ष्मीः ॥**

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ऐं अई व म ह ष त प व व म म ह ह स ष त त प प श श इीं इीं इीं क्षीं डा द्रा द्रीं इीं क्षीं ह ष ः श व षः षः नमोहते भगवते श्रीमते । ॐ ह्रीं क्रौं मम पाप खण्ड खण्ड इह दह हन हन पच पच पाचय पाचय हं श इवीं इवीं ह षः श व षः षः हः क्षां क्षीं क्षू क्षे क्षै क्षौ क्षौ क्षः क्षीं क्षा ह्रीं ह्रू ह्रै ह्रौं ह्रौं इं ह्रं ह्रं ह्रीं द्रा द्रीं द्रावय द्रावय नमोहते श्रीमते ठठ मम श्रीस्तु विद्विस्तु पुष्टिस्तु । शान्तिस्तु । कल्याणमस्तु । स्वाहा ।

फिर अर्घ चढावे । फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़के आशीर्वादसूचक पुण्य क्षेत्र—
घानिवातविधातजातविपुलश्रीकेवलज्योतिषो । देवस्यास्य पवित्रगात्रकलनात्पूतं द्रितं मङ्गलम् ॥

कुर्वाङ्ग्यभवातिदाशशमनं स्वर्गेश्वरक्षमीफलप्रोद्यद्बर्भलताभिवर्धनमिदं मङ्गलगन्धोदकम् ॥

फिर भगवानको पौछकर तथा पठको भी पौछकर भगवानको विराजमान करे । फिर श्री आदिनाथ भगवानकी या जिप तीर्थकरकी प्रतिमा हो उसकी पूजा करे फिर शान्तिधारा देवे तब यह पढ़े—

ॐ अईद्भ्यो नमः सिद्धेभ्यो नमः सूरिभ्यो नमः पाठकैभ्यो नमः सर्वेषांभ्यो नमः । अतीतान, गतवर्तमानत्रिकालगोचरानस्तद्व्यगुणपर्यायामकृतपुत्रिच्छेदकस्मयदर्शनस्मयज्ञानचारित्र्याद्यनेकगुणगणधारपचपरमैष्टुभ्यो नमः । ॐ पुण्यार्ह ३ प्रीयता ३ शृषभदेवाय महति महावीर वर्धमानपर्यन्तपरमतीर्थकरदेवानः तत्रमयपालिन्योऽपनिहृतचक्रचक्रेश्वरीप्रभृतिचतुर्भितिशान्तिशासनदेवताः गोमुखयक्षप्रभृति

चतुर्विंशतियक्षा आदित्यचन्द्रमंगलबुधशुक्रशनिराहुकेतुप्रभृत्यष्टाशीतिप्रहाः वासुकिशंखपालककौटपशकुलिकानततक्षकमहापद्मवज्र
विजयनागाः देवनागयक्षगर्भजह्राराक्षभभूतव्यतरप्रभृतिभूताश्च वैश्वेते जिनशासनवरवल्का ऋष्यार्थिकाश्रवकश्राविकाथष्टयाजकराजमन्त्रि
पुरोहितपामतारक्षिकप्रभृतिपमस्तलोकप्रभृत्स्य शातिवृद्धिपुष्टितुष्टिक्षेमकल्याणस्वायुरोगप्रपदा भवन्तु । सर्वसौख्यप्रदाश्च सन्तु । देशे राज्यपुरे
च सर्वदेव चौारिभारीतिदुर्भिक्षावप्रहविघ्नौघदुष्टप्रहभूतशाकिनीप्रभृत्यशेषानि प्रलयप्रतीति, राजा विजयी भवतु ब्रजाप्रौढ्य भवतु, राज-
प्रभृतिपमस्तलोकाः एतत् जिनधर्मवत्त्वला, पूजादानत्रनशीलमहाहोषधप्रभृतिषूयता भवतु त्रिकाल नन्दन्तु । यत्र स्थिता भव्यप्राणिनः,
एवमारणार लीलये चौयन्तुपम सिद्धिबौद्धमन्तकाळमनुभवति तच्चाशेषमणिगणेशरणभूत जिनशासन नदत्तिविति स्वाहा ।
फिर न चेके श्लोक पढे व इन्द्रादि हाय जोड़े व पुष्प क्षेपण करते रहे ।

ये सामग्रीविशेषद्विपभरहवात्क्षिसतुर्भारैरि-

त्रातप्रेष्यत्पताकासततपरिवितज्ञानसाम्राड्यलीलाः ।

क्षिसास मन्यमाना जगदतिपुनते ते जिनाः पांतु विश्वम् ॥ ४ ॥

रसूज्जच्छलद्युदचिर्भरमसितदशासाकृतैन पतंगानाः,

व्योम्नोविश्वैकथाशः कृततिलरुचः प्रष्टमात्मंभराणां,
व्यंजन्तः स्थं खदान्यजिनसमयजुषाः सन्तुसिद्धाः शिवाय ॥ ५ ॥

श्रुतधृतिवल्सिद्धाः पञ्चधाचारसुचैः, शिवसुखमनसो ये चारयन्तश्चरन्ति ।

शमरसमरसंविद्भूरयः सूरयस्ते, विदधतु जिनधर्मराधनाशिष्टसिद्धिम् ॥ ६ ॥

येऽगपविष्टबहिरंगजिनामब्धिपारंगमा, निरतिचारचरिभ्रमाराः ।

धर्मं यथावदनुशासति शिष्यवर्गान्, पुष्पन्तु पाठकवृषा जगतां नमस्ते ॥ ७ ॥

तुद्ध्वा ध्यानात्परमपुरुषं तत्त्वत अद्धधानाः, ये विद्वांसःस्वयमुपरतप्रत्यनीकप्रतापम् ।

एकीकुर्वन्त्युद्यानन्दनिष्पीतचित्तास्ते, भव्यानां दुरितमनिशं साधव संहारन्तु ॥ ८ ॥

ये मंगललोकोत्तमशरणारत्मानं समृद्धमहिमानं, पांतु जयंत्यहत्सिद्धसाधुकेचन्युषश्चधर्मास्ते ॥ ९ ॥

सृते भेदाभेदरत्नत्रयात्मानाद्यंताद्यंताथोदितौ सुक्लिशुक्ती ।

सोस्मिन् राजामात्यपौरादिलोकान्, धर्मस्तन्वन् शर्म पायादपायात् ॥ १० ॥
शांतिः स तनुतां समस्तजगति संगतवतां धार्मिकं, श्रेय श्री परिषद्भूतां नयधुराधुर्यो धारित्रीपतिः ।
सद्विद्यारसमुद्भिन्तु कवयो नामाप्यथ स्यान्तु मा, प्रार्थय वा क्रियदेक एव शिष्यकृद्धर्मो जयत्वर्हताम् ॥ २० ॥

फिर नोचेके श्लोक पठकर आचार्य इन्द्रादिके मस्तकपर पुष्प क्षेपे ।

आयुस्तन्वन्तु तुष्टि विदधतु विधुनंस्वापदो ब्रंतु विज्ञान्,
कुर्वन्वारोग्यसुवीषलयचिलासितां कीर्तिवल्लीं सृजन्तु ।
धर्मं संवर्धयन्तु श्रियमभिरमयत्वर्पयंत्विषष्टकामान्,
कैवल्यश्रीकृटाक्षानपि जिनचरणाः संजयन्तु सदा वै ॥ २५ ॥
आज्ञैश्वर्यमकायकार्थविचयेः सन्तानवृद्धिजयः, सौभाग्य धनधान्यवृद्धिरभयं निःक्षेपशत्रुक्षयः ।
पांडित्य कविना परार्थपरता कार्तिज्ञमोजस्थिता, मानित्व विनयो जयश्च भवतादर्हप्रत्सादेन वः ॥ २६ ॥
कांताः कांतिकलानुरागमधुराः पुण्यास्त्रिवर्गोद्धुरा,

भृत्याः स्वाम्यनुरक्तिशक्तिरुचिरा इच्योतन्मदाः कुञ्जरा ।

बाहस्तजिनशकसूर्यतुरगाः शौर्योद्धृताः पतयो,
भूयासुर्भवतां जिनेन्द्रचरणां भोजप्रसादात्सदा ॥ २७ ॥
गां भार्थमौदार्यमजर्थमार्थशौर्यं सशौंडीर्यमवार्थवीवीर्यम्,
धैर्यं विपद्याज्वमार्थमक्तिः संवद्यतां श्रीजिनपूजनाद्गः ॥ २८ ॥

भवतु भवतामर्हद्भक्त्या सदा मुदितं मनो, ग्रहसुपचिता चौरौचित्यं प्रदासेन परस्माः ।
प्रणयविधशः स्वेसंबौसौइयागयमाहितं, स्थितिरपि चित्ते प्रज्ञापराधपराहतिः ॥ २९ ॥
दृक्संशुद्धिरतोन्यतोस्तु भवतामर्हत्प्रतिष्ठाविधे, जातु कृष्टि कथंचिदीषदपि मा शीलं व्रतं म्लायतु ।
दूरादेव शिरस्यधीरमरयो बध्नंतु देवांजलिं, प्रेम्णा सद्गुणसंपदा च सुहृदः श्लिष्यंतु पुष्णंतु च ॥ ३० ॥
यष्टृणां याजकानां प्रतिनृत्तिकृतामभ्यनुज्ञायकानां, भूयस्यांतः पुरस्य क्षितिपतनुभुवां मंत्रिसेनापतीनाम् ।
सामंतानां पुरोधः पुरविषयवनादिस्थवर्णाश्रमाणां, सर्वेषामस्तु शांत्यै सततमयमिह । थापितो विश्वनाथः ॥ ३१ ॥

विचित्रैः खैर्द्रव्यं प्रतिसमयमुद्यद्विपदिपि, स्वरूपादुल्लोलैर्जलमिव मनागप्यविचलम् ।
अनेहो माहात्म्याहितनवनवीभावमखिलं, प्रणिष्ठाः स्पष्टं युगपदिह ते पांतु जिनपाः ॥ ३२ ॥
संभुज्यार्थिभिः संविभज्य च यथाविधेयमवाथवा, निर्विण्णास्तुगवद्विसुज्य कमलां खं स्व स्वयं केऽपि ये ।
संवेद्यामलकेवलाचलच्चिदानदे अदवाभते ते सिद्धाः पथयतु व प्रति शिवश्रीमद्विलासान् ॥ ३३ ॥

जात्वा श्रद्धाय तत्त्वं भजति समरमारवादमानान्यनीहा,-

वृत्त्या घ्राण नुसर्पन्मरुतनु च कवानष्टमे ब्रह्मरध्रे ।

भृशशत्यह्वाय मोहौ मृतिमयति मनः केवलं चापि भाया -

रहून्यध्यानेन येषां प्रयद परमिसे योगिनस्तन्वतां वः ॥ ३४ ॥

नार्पन्त्यान् विरमयांतर्हितपतनरुजौ दत्तज्ञंपान्वितन्वन्,

निःश्रेणीकृत्य भोगं धलयितपृथुतःसूलमाद्रोहिनांघ्रि ।

श्रीकुंडरुगगुह्यावनितरुचि खरा यौवर्तोणः स्वर्षण,-

व्यासंग संगमस्य व्यधितवहुमहाः वीरनाथः स बोधयात् ॥ ३५ ॥

फिर आचार्य व इन्द्र आदि मायोर्भर्ग वरे, ९ दफे णमोकार मत्र पढे । फिर नीचे लिखी स्तुति शर्व पात्र मिलकर पढे । फिर पभा खडी होजावे तब पुण भवको वाट दिये जावे और यागमंडल बहिन वेदीकी अथवा फेरीका स्थान न हो तो मध्यभरकी तीन प्रदक्षिणा देवे । पहले आचार्य फिर इन्द्र फिर पात्र फ' पुरुष फिर लिया रहे । शक्तिपाठ पढ़न रहे । शक्तिपाठ होजावे तो दूसरे पाठ पढते रहे । फिर आका कायोर्भर्ग करे । तथा १ व २ भजन पढे जावे । फिर विघर्जन की जावे । इस समय बड़ा आनंद मनाया जावे । जो गणबर्गदि याचक हो उनको दान दिया जावे । व बहार भूखोको अनादि वाटा जावे । प्रतिमाको मूल वेदीपर विराजमान किया जावे, यह प्रतिष्ठविधि पूर्ण हो ।

स्तुति ।

त्रिभगी छन्द-जय जय अरहंता मिद्ध महंता, आचारज उच्चशाय वरं,

जय साधु ब्रह्मानं सम्पगजानं, सम्भक्चारित पालकर ।

है भंगलकारी भव हगतारी, पाप प्रहारी पूज्यवरं,

दीनन निस्तारन सुख विस्तारन, करुणाधारी ज्ञानवरं ॥ १ ॥

हम अबसर पाए पूज रचाए करी प्रतिष्ठा बिम्ब महा,
 बहु गुण्य उपाए पाप धुवाए सुख उपजाये सार महा ।
 जिन गुण कथ पाए भाव बढ़ाए दोष हटाये यश लीना,
 तन सफल कराया आत्म सखाया दुर्गतिकारण हर लीना ॥ २ ॥

निज मति अनुसारं बल अनुसारं यज्ञविधान बनाया है,
 सब भूल चूक प्रभु क्षमा करो अथ यह अरदास सुनाया है ।

हम दास तिहारे नाम लेत हैं इतना भाव बढ़ाया है,
 सब याहासे सब काल पूर्ण हों यह श्रद्धान जमाया है ॥ ३ ॥

तुम गुणका चिन्तन होय निरन्तर जावत मोक्ष न पद पावें,
 तुमरी पदपूजा करै निरन्तर जावत उच्च न हो जावें ।

हम पढन तत्त्व अभ्यास रहे नित जावत बोध न सर्व लहें,
 शुभ सामायिक अर ध्यान आत्मका करत रहें निज तत्त्व गहें ॥ ४ ॥

जय जय तीर्थकर गुण रत्नाकर सम्यक्ज्ञान दिवाकर हो,
 जय जय गुण पूरण औगुण चूर्ण संशय तिमिर हरणकर हो ।

जय जय भवसागर तारण कारण तुम ही भवि आलम्बन हो,
 जय जय कुतकृत्यं नमै तुम्हें नित तुम सब संकट टारन हो ॥ ५ ॥

अध्याय दशवाँ ।

आचार्यादि प्रतिविम्ब प्रतिष्ठाविधि ।

सिद्ध प्रतिविम्ब—अर्हत और बिद्धके विम्बमें इतना अन्तर होता है कि अर्हतके आठ प्रतिधार्य होते हैं जब कि बिद्धके नहीं होते । हमारी रायमें आर्हन्त और बिद्धकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठामें ऊँई अन्तर नहीं है, क्योंकि आर्हन्तके विम्बमें दस पाँचों कल्याणसौका आरोप कर देते हैं । अन्य आचार्यादिकी प्रतिष्ठामें अन्तर होना ही चाहिये क्योंकि इनके कल्याणक नहीं होते हैं ।

(१) आचार्य प्रतिविम्ब प्रतिष्ठाविधि—पीछी रूपडठके बिद्ध रहित आचार्याकी मूर्ति होती है । आपन पचासत या सट्ठासत ही मूल्य है, नमना होती है, आचार्यकी प्रतिष्ठामें १००० मन्त्रकी जाप देवें । जैसे तीर्थंकरकी मूर्तिमें १ लाखकी टी गी, मन्त्र वही है । पहले मउप बनाकर यागमडलका मांडला बनावे तबमें पहले अध्यागके अनुचार मन्त्रमें ऊँ लिखे तबके चारों तरफ १७ मानेका बलय करे, फिर दूसरा बलय ३६ कोठोंका हो चित्रमें आचार्यक छत्तीस गुण लिखे जाय । फिर तीसरा बलय १८ कोठोंका हो जिनमें ऋद्धिये लिखी जाय । इस तरह तीन बलयका मडल बनाकर जो पूजा दूधरे अन्धायमें लिखा उपसक्तो उवा विधिमें इन्द्र व आचार्य करे । अँगशुद्धि, न्यास व मऊलीकरण विधि पहलेके अनुचार जो जाय । फिर पूजामें अर्घ १७+३६+१८=१०१ इतने चढ़े श्लोक व इन्द्र वे ही हैं । पूजाके पहले पूज्य प्रतिमा अर्हतना अभियेक करे फिर तीन कुण्डोंमें इ म किया जाये । होममें पत्यानाय नम आदि मंत्रोंके विषय १०८ आर्हति उषी मन्त्रकी देवें जो वहाँ लिखा है । फिर श्रुति पढी जाय व मडलकी पूजा का जाये । पूजाके पछे आचार्यभक्ति, अर्हतभक्ति, सिद्धभक्ति व चारित्रभक्ति पढ़ें । फिर दूधरे दिन या उषी दिन मडलमें पढली विधिके अनुचार अँगशुद्धि, अभियेक निलपूना व होम करके आचार्यके विम्बकी प्रतिष्ठाका प्रारम्भ करे । यदि उषी दिन प्रतिष्ठा करना हो तो फिर होम करनेकी जरूरत नहीं है । आचार्यके विम्बको अभियेक करनेकी पीठार विराजमान करे । फिर इन्द्र शुद्ध जलसे स्नान करावे । पीछे पाँच आचारके रूपमें पाँच कळशोंसे जिनमें केशरादि द्रव्य बहुत मिला हो सर्वविधिके रूपमें उतसे स्नान करावे । फिर प्रतिमाको पीछकर पाँचवें अध्यायमें ऊँडे प्रमाण मातृकासत्रको १०८ बार जपकर प्रतिमाके अँगपर घोमकी बजाईये लिखकर ३८ न० तक लिखा जाये फिर महवि उपासना की जाय ।

ये येऽथगारा ऋषयो घनीन्द्रा, मुनीश्वरा भव्यभवदुर्बतीताः ।

तेषां मसेयां पदपंकजानि, सम्पूजयामो गुणशीलसिद्धये ॥ १ ॥

ऊँ हीं वम्यदशैमज्ञानचारित्रपवित्रतरगात्रचतुर्शीलिकक्षगुणगणधराचराणा आगच्छत २ वजीवट् । ऊँ हीं वम्यगुं अत्र तिष्ठत २
ठः ठः । ऊँ हीं वम्यगुं मम रत्नत्रयशुद्धि कुंठत २ अत्र मम पविहितता भवत २ वषट् । अयाष्टकम् ।

सुगन्धिधीतलैः स्वच्छैः स्वादुभिर्विमलैः सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्यतीत्यजे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं गणवाचरणेभ्यो जलं निर्वगामिति रगाहा ।

सारकर्पूरकादमीरकलितैश्चन्द्रनद्वैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं गन्धम् ॥
 अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षैकक्षसंनिभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं अक्षतान् ॥
 पुष्पैः प्रसरदामोदाहनपुष्पंधयावृत्तैः । स्वाधद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं पुष्पाणि ॥
 हृदयैर्नवघृतापूपपायसयंजनान्वितैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं चक्रं ॥
 कर्पूरप्रभवदीपैर्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं दीपम् ॥
 दशांगधूपसदूधूमैर्दशाशार्चुणसौरभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं धूपम् ॥
 चोचमोचचाञ्जमवीरफलपुंगुगादिसरफलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं फलम् ॥
 गुणमणिगणसिधून्भवयलोकैकवन्धून् । प्रकटितनिजमार्गन्धस्तमिथ्यात्वमार्गान् ।
 परिचितनिजत्वान्पालिनाशेषसत्वान् । शमरसजितचन्द्रानर्धयामो सुनीन्द्रान् ॥ ॐ ह्रीं अर्घं ॥

स्तुति ।

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेन्द्राः, समर्द्धयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः ।
 तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, बचोमनोमूर्धसु धारयाम् ॥ १ ॥
 तपोबलाक्षीणरसौषधर्द्दीन्, विज्ञानकृद्धीनपि विक्रियर्द्दीन्
 समर्द्धियुक्तानखिलानृषन्द्वान्स्मरामि वन्दे प्रणममि नित्यम् ॥ २ ॥
 सर्वेषु तीर्थेषु तदन्तरेषु, समर्षयो ये महिता बभूवुः ।
 भवांबुधे पारजिताः कृतायो, भवन्तु नस्ते सुनयः प्रसन्नः ॥ ३ ॥
 ये केवलीन्द्राः श्रुतकेवलीन्द्रा, ये शिक्षकास्तुर्थतृतीयबोध्याः ।
 सविक्रिया ये वरयादिनश्च, समर्षिसंज्ञानिह तान्प्रवन्दे ॥ ४ ॥
 प्रमत्तमुख्येषु पदेषु सार्ध, दीपद्वये ये युगपद्भवन्ति ।
 उत्कर्षतस्मान्नवकोटिसंख्यान्वन्दे, त्रिसंख्यारहितान्मुनीन्द्रान् ॥ ५ ॥

किं प्रातमाको र्षयो कारके पुण्याजलं देवे और पत्र आचार प्रतिमामें स्थापित करे । नीचे प्रमाण मन्त्र पदकर प्रतिमापर पुष्प क्षेत्रे-

ॐ हूं दर्शनाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं शानाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं चारित्राचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं तपाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं वीर्याचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः ।

फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर प्रतिमापर पुष्प क्षेये—

ॐ हूं णमो आश्रियाण आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र एहि ब्रह्मिण्डे, ॐ हूं णमो आश्रियाण आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ हूं णमो आश्रियाण मम च्छिन्हितो भव भव वषट् । फिर १०८ दफे नीचे लिखा मन्त्र पढ़े—

ॐ णमो आश्रियाण धर्माचार्याधिपतये नमः । फिर सुगंधित केशसे चोनेकी बल्वाईसे नाभिमैं हूं लिखे । यह तिलकदान विधि हुई । फिर अधिवासनाविधिमैं नीचे प्रमाण अष्टद्वय चढ़ावे । ॐ हूं णमो आश्रियाण आचार्यपरमेष्ठिन् जलं प्रहाण २ नमः । इसी तरह जलके स्थानमें चन्दनादि चढ़ावे । फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ मुखपर वल ठकें व परदा काढ़ें । ॐ हूं मुखबलं दधामि स्वाहा । फिर आचार्य नम्र होकर चारित्रमक्ति पढ़कर नीचे लिखा मन्त्र १०८ दफे पढ़कर मुखसे कपडा अलग करे ।

ॐ हूं आचार्यमुखबल अपनयामि स्वाहा । फिर १०८ दफे नीचे लिखा मन्त्र पढ़ चोनेकी बल्वाई आखोंमें फेरे ।

“ ॐ हूं आचार्यपबुद्धस्वध्यातृजनमनांसि पुतीहि २ स्वाहा । ” तब परदा हट जावे और सब कहें—श्री आचार्यपरमेष्ठीकी जय । फिर आचार्यकी पूजा नीचे प्रमाण की जावे—

गीता छन्द-सुनिराज आचारज बड़े, शिव मांगको दर्शावते, जो पालते आचारको, अर अन्यको पलवावते । जो जैन आगम तत्र जाने, स्व पर भेद लखावते, निज आत्ममें रमते सदा, निज स्थान सम्यक् भावते ॥

ॐ हूं श्री आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र अवतर २ आदि स्थापना ।

स्थापना-अष्टक ।

वाली छन्द-भर सलिल महा शुचि क्षारी, है तीन धार हितकारी ।

पद आचारज सुखकारी, पूजत त्रय रोग निवारी ॥ जलम् ॥

चन्दन घस केसर लाऊँ, मनमें बहु चाष धराऊ ।

आचारज हैं गुणदाई, पूजत भव ताप मिटाई ॥ चन्दनम् ॥

अक्षत ले कीर्ध आरुण्डे, उज्ज्वल शशि ममदुति मण्डे ।

गुरु पाद जजो मन लाई, अक्षयपद हो सुखदाई ॥ अक्षतम् ॥

ले फूल सुवर्ण सुहाई, बहु गंध गुनं सुखदाई ।

गुरु पूज काम सुखदाई, भयभीत होय नश जाई ॥ पुरुषम् ॥

ताजे यकबान बनाऊँ, आदर युत गुरु दिग लाऊँ ।

पूजत क्षुद्र रोग शमाऊँ, अमृत निज ले सुख पाऊँ ॥ नैवेद्यम् ॥

ले दीपक तम हर तारा, बहु ज्योति प्रगट करतारा ।

गुरु पाद पूज सुख पाऊँ भ्रम तम सब तुलै नशाऊँ ॥ दीपम् ॥

बहु धूप सुगंधित लाऊँ धूपायन माहिं खिवाऊँ ।

आचारन जज हितकारी, जल जांय कर्म दुखकारी ॥ धूपं ॥

बहु दाख बढाम छुहारा पिस्ता अखरोट समहारा ।

गुरु पाद जजे हित पाधे, शिव वनिताको परणावे ॥ फलम् ॥

शुचि द्रव्य जु आठ मिलौं, करि अर्घं महा सुख पाऊं ।

गुरु चरणन शीश नवाऊँ, जासे सब दोष मिटाऊँ ॥ अर्घम् ॥

जयमाल ।

उन्द सुविनी—जय कृपाकन्द आनन्दरूपी सदा । आत्म गुण वेदते हैं न तृष्णा कदा ।

धन्य आचाय है साधु रक्षा करे । बोध दे वण्ड दे तत्त्व शिक्षा करे ॥ १ ॥

सात तत्त्वार्थको श्रद्धते भावसे । तत्त्व शुद्धात्मको चाहते चावसे ॥

दर्शनाचारमें लीन सुख पावते । अन्यको बोध दे दर्श झलकावते ॥ २ ॥

शास्त्रको जानते ज्ञान उपजावते । सप्तभङ्गी सुनय तत्त्वको सावते ॥

मोह मिध्यात्वके हेतुको टालते । बोध दे ज्ञानको लोक विस्तारते ॥ ३ ॥

अन महा पालते गुप्ति उर धारते पंच समितीनको ध्यानसे पालते ॥

आत्ममें लान हो ध्यान हठ धारते । सब आचारको लोक विस्तारसे ॥ ४ ॥

तप महा द्वादशं पालते भावसे । अनशन आदिको धारते चावसे ॥

सेव कर साधुजन मानको टालते । भव्यको मार्ग तपमें सदा लावते ॥ ५ ॥

वीर्यको गुप्त रखते नहीं हैं यती । कार्य उत्साहसे श्रुक्ते नहीं रती ॥

आत्मशक्तिको दिन दिन अधिक पावते । अन्यको बोध दे वीर्य वीस्तारते ॥ ६ ॥

पंच आचार ये पालते भावसे । अन्य साधूनको बोधते चावसे ।

निश्चयं आत्प्रसन्न पीवते प्रेससे । धन्य आचार्यं ह्ये चालते नेमसे ॥ ७ ॥ महार्घं ० ॥
दोहा-जो पूजे आचार्यको, मन एकाग्र कराय । सौ पावे निज निधि सही, भव-सागर तर जाय ॥

॥ इत्याशीवदि ॥

फिर आचार्यभक्ति या चारित्र्यभक्ति पढके नीचेका श्लोक पढ़कर चहुँओर पुष्प क्षेपें ।

प्राड्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां, जायतां दीर्घमायु-

र्भूयाद्भूयांश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तात्सदा रोग्यमश्रयम् ।

कीर्तिव्यसाखिलामा, प्रभवतु भवतान्निःप्रतीप प्रतापः,

क्षिप्रं स्वर्गोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां, धर्मसुरप्रसादात् ।

फिर शांतिपाठ विपर्जन करके आचार्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा पूर्ण की जाय ।

(२) उपाध्याय विभवप्रतिष्ठाविधि—उपाध्यायका निम्न भी मुनिके समान पीछी कमण्डल बहित हो तथा हाथमें या अग्रभागमें शास्त्र चिह्न भी हो सकता है । इसकी भी सब विधि आचार्यविम्बकी प्रतिष्ठा विधिके समान है । अन्तर नीचे प्रमाण है—

- (१) मण्डलमें १७ कोठेका पड़ला वलय फिर २५ कोठोंका फिर ४८ कोठोंका हों ।
- (२) उपाध्यायके विम्बको पांच कलशोंके स्थानमें प्रथमानुयोग आदि ४ अनुयोगके रूपमें चार कलशोंसे अभिवेक करे ।
- (३) पंच आचारके स्थानमें चार अनुयोग प्रतिमामें नीचेके मंत्रोंसे स्थापित करे—ॐ हौं प्रथमानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः । ॐ हौं काणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः । ॐ हौं चरणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः । ॐ हौं द्रव्यानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः ।

(४) तिलकदानमें आह्वानन मंत्र नीचे प्रमाण पढ़े—ॐ हौं गमो उवञ्ज्मायाण उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र एहि २ ष्वीषट् । ॐ हौं गमो अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ॐ हौं गमो० ममननिहितो भव २ वषट् । तथा जाप १०८ दफे नीचे लिखे मंत्रकी देवे—ॐ हौं गमो उवञ्ज्मायाण पाठकाय नमः । तथा नामिमें हौं लिखे ।

- (५) अधिवाचनाविधिमें नीचेके मन्त्रसे आठ द्रव्य चढ़ावे । ॐ हौं गमो उवञ्ज्मायाण उपाध्यायपरमेष्ठिन् जल गुहाण २ नमः इत्यादि ।
- (६) मुखको ढकनेका नीचेका मन्त्र पढ़े—ॐ हौं मुखवत्त दवामि स्वाहा ।
- (७) मुखके उद्घाटनमें यह मन्त्र पढ़े—ॐ हौं उपाध्यायमुखवत्त अपनयामि स्वाहा ।
- (८) नयनोन्मीलन मन्त्र यह पढ़े—ॐ हौं उपाध्यायप्रसुद्धस्व ध्यातुजनमनाधि पुनीहि २ स्वाहा ।
- (९) पूजा नीचे प्रमाण की जावे—

सुनिराज पाठक तत्त्वज्ञानी, तत्त्व शिक्षा देते हैं । बहु शिष्य पढ़न जिनागमं, अज्ञान तिनहर लेते हैं ॥ अनुयोग चारों जानते, अध्यात्म विद्या नाथ हैं । चारित्र साधु सुपालते बहु, साधु रहते साथ हैं ॥

ॐ हीं उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र अवतर २ अर्थ निर्वाणमोति साहा ।

छन्द मालिनी—सम रस सम चोखा लाय पानी सुमारं । सुवरण झारी ले अब गढ़ सर्व दारं ॥

कार शुचि मन पूजूं, पाठकं तत्त्व धारी । नमत सब कुबोध, होय आनंद भारी ॥ जलं ॥
बहु सुरभि धराई, बन्दनं लाय नीके । अब नाप बुझाई, असृतं ज्ञान पीके ।

कार शुचि मन पूजूं, पाठकं तत्त्वधारी । नशत लय कुबोधं, होय आनन्द भारी ॥ चन्दनं ॥
कारमें अक्षत ले, दीर्घ अति श्वेतधर्ण । अखय गुण प्रचारी, सर्व बन्देह हर्ष ॥ कर शुचि मन ॥ अक्षतं ॥
सुमन सुगन्धित ले, पंचधा वर्णधारी । दुख काम मिटावे, शील धर्म पचारी ॥ कर शुचि ॥ पुरुषं ॥
चक्र कारके ताजे, शुद्ध सुनि अश धारुं । शुद्ध रोग नशाऊं, तुमता गुण सम्पारुं । कर शुचि ॥ चक्रं ॥
कार दीप संजोऊं, धान्यकार नशाई । सम सोहनिमिर लष, एक क्षणमें पलाई ॥ कर शुचि ॥ दीपं ॥
बहु सुरभि धराई, धूष अग्नि जलाई । मन आठ करम लष, अस्म हों साधु ध्याई ॥ कर शुचि ॥ धूपं ॥
ले शुचि फल नीके, दाख चाढाम पिस्ना । जासे शिवफल हो, नाश संसार रस्ता ॥ कर शुचि ॥ फलं ॥
ले ले अठ द्रव्यं, शुद्ध अर्थ वनाऊं । अठ कर्म नशाके, अष्ट गुण सार पाऊं ॥ कर शुचि ॥ अर्थं ॥

जयमाल ।

सुजगप्रयात छन्द—गुणानन्दधारी उपाध्याय प्यारे, सु साधु चरित्रं धरे निर्विकारे ।

परम साम्य धारी सभी दोष दारी, रतनत्रय समारी निजातम विचारी ॥१॥
इकादश सु अंगं पढ़े तत्व जाने, चतुर्दश सु पूरव लखें सत् पिछाने ।

सकल श्रुत विचारें परम ज्ञान धारी, लखे आत्मको निश्चयं निर्विकारी ॥२॥
चतुर्विंश तीर्थकरोंके चरित्रं, सुचकी सु बलदेव जीवन पवित्रं ।

हरी प्रतिहरी वृत्तको जानते हैं, सु अनुयोग प्रथमं जु पहचानते हैं ॥३॥

त्रिलोकं लखें सर्व रचना पिछाने, गुणस्थान मार्गण करम भेद जाने ।
करण सूत्रसे सर्व गिनती लखाने, सु अनुयोग करणं भलीभांति माने ॥४॥

यतीका सु आचार सष भेद पाया, गृही भेद चारित् इकावश बताया ।
क्रिया-कांड व्यवहारको जानते हैं, सु चरणानुयोग सकल मानते हैं ॥५॥

पदारथ नवम तत्व शुभ सात ज्ञानी, छहों द्रव्य पचास्तिकाया पिछानी ।
भलीभांति आतम परम तत्व माने, सु द्रव्यानुयोग सकल भेद जाने ॥६॥
अनेकांत वस्तु सु स्याद्वाद ठाने, तिसे ज्ञान समता हृदय माहि आने ।

नहीं है विरोध नहीं कोई खेदं, परम तत्व जाने लखें सर्व भेदं ॥ ७ ॥
दयासागरं पाठकं भक्ति भरनी, पढ़ावैं यती मीख संसार तरणी ।

नमूं पाद सुखदायक उबझायजीके, लहूं ज्ञान सुन्दर करूं कर्म फीके ।
सु छाया गुरूकी परम रक्षिका है, जजू मन लगाई परम दक्षिका है । ९॥ महार्थ ॥
सोरठा—पाठक पूजूं पाय, पाठ पठन पटुना करै । गुण गाऊं नित गाय, मगल हो अथ सब भगी ॥

(१०) फिर चारित्रभक्ति पढ़के नीचेका श्लोक पढ़े ।

माज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुनरां जायतां दीर्घमायु-
र्भूयाद्भूयांश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तारसदारोग्यमग्रम् ॥

कीर्तिव्याप्त्याखिलाशा ममवतु भवतादित्यतीपः प्रतापः ।

क्षिप्रं स्वसौख्यलक्ष्मीर्भवतुतनुभृतां पाठकेन्द्रप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विवर्जन करके उपाध्याय विम्बकी प्रतिष्ठा पूर्ण करे ।

(३) साधुविम्बप्रतिष्ठाविधि—पीली कमदल बहित ध्यानमय बाधुकी विम्ब बनावे । इसकी प्रतिष्ठाविधि भी पहलेके समान है । विशेष यह है—

(१) मण्डलमें १७ कोठिका पड़वा फिर २८ कोठिका फिर ४८ कोठोंका हो । (२) बाधुके विम्बको रत्नत्रयमई तीन कुम्भोंसे अभिषेक किया जावे । (३) तीन रत्न नीचेके मन्त्रीसे प्रतिमामें स्थापित करे । ॐ हः वम्यददर्शनभूषिताय बाषवे नमः । ॐ हः वम्यद्वामभूषिताय बाषवे नमः । ॐ हः वम्यचारित्रभूषिताय बाषवे नमः । (४) तिलकदानमें जाहानन मन्त्र नीचे प्रमाण पढ़े ।

ॐ हः णमो लोए षव्रषाडूण षाधुणमेष्टिन् अत्र एहि२ षवौषट् इत्यादि तथा जाप १०८ दफे नीचेके मन्त्रसे देखे । ॐ हः णमो लोए षव्रषाडूण षाधवे नमः तथा नामिर्म हः लिखे । (५) अधिवाचना विधिमें नीचेके मन्त्रसे आठ द्रव्य चढाये । ॐ हः णमो लोए षव्रषाडूण षाधुणमेष्टिन् जल गुहाण २ स्वाहा इत्यादि । (६) मुखके ढकनेका नीचे लिखा मन्त्र पढे—ॐ हः मुखवक्त्र षषामि स्वाहा (७) मुखके तद्घाटनेमें यह मन्त्र पढे—ॐ हः षाधुणमेष्टिन् मुखवक्त्र अपन्यामि स्वाहा । (८) नयनोन्मीलन मन्त्र यह पढे—ॐ हः षाधु प्रमुदस्व-ध्यातृजननाधि पुनीहि २ स्वाहा । (९) पूजा नीचे प्रमाण करे—

स्थापना ।

ॐ गीता-मुनिराज हैं गुणधाम जगमें मोक्षमारग साधते,

त्रय इत्यधारी निज विचारी ज्ञान आसन मांडते ।

तप करत द्वादश भेद अनुपम सहत हैं उपसर्गको,

जिनचरण पूजूं थाप उरमें लहूं मैं अपवर्गको ॥

ॐ हः श्री षाधुपरमेष्टिन् अत्र०

अष्टक ।

वपन्तलिका छन्द-पानी महान अति शीतल कुम्भ धारा । धारा सुदेत मृत जन्म जरा निधारा ॥

पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीर्ते । पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने ॥ जलं ॥

केशर मिलाय शुभ चन्दन अन्न धारुं । आताप भव शमन थाय स्वगुण सम्हारुं ॥ पूजूं ॥ चंदनं ॥

चन्दा समान अति श्वेत सुगन्ध अक्षत । धारुं सुधाल पाऊं गुण सार अक्षत ॥ पूजूं ॥ अक्षतं ॥

नीरज गुलाब वेल चम्पा सुहाई । बहु पुष्प धार निज काम व्यथा नशाई ॥ पूजूं ॥ पुष्पं ॥

ताजे पवित्र पकवान सु लाय थारी । जासे मिटाय शुद रोग स्वकाज हारी ॥ पूजूं ॥ नवेद्यं ॥

दीपक जराय घृत सार कपूर लाऊ । मन मोह सर्व अधियार तुरत मिटाऊं ॥ पूजूं ॥ दीपं ॥

धूपदि खेप शुचि अग्नि धुआं प्रतारा । आठों महान मल कर्म जलाय हारा ॥ पूजूं ॥ धूपं ॥

पिस्ता बदाम अक्षरोट सुफल धराए । जासे सुमोक्ष फल आप नजोक आए ॥ पूजूं ॥ फलं ॥

जल चन्दनादि वसु द्रव्य मिलाय थारी । संसार पार झट होय स्वगुण विचारी ॥ पूजूं ॥ अर्घं ॥

जयमाल ।

त्रोटकलन्द-जय साधु सदा गुण धाम नमो, धनगर सु सत्य सुवास नमो ।

भवमागर तारण पोट नमो, निजमें धारत निज जोत नमो ॥ १ ॥

जय सप्त, तन्त्र रुचिकार नमो, आपा पर भेद विचार नमो ।

निज आत्म सु श्रद्धाकार नमो, सम्यग्दर्शन अधिकार नमो ॥ २ ॥

जय जिन आगम बुध धार नमो, जाघक निश्चय व्यवहार नमो ।

निज आत्म पदारथ ज्ञान नमो, धारें निज सम्यग्ज्ञान नमो ॥ ३ ॥

जय पंच मन्नात्रत धार नमो, समिती गुप्तो प्रतिपाल नमो ।

निज साम्यभाष झलकाय नमो, सम्यक्चारित उर ध्याय नमो ॥ ४ ॥

जय आत्म समाधि प्रकाश नमो, सप इंद्रिय आश निराश नमो ।

चहुं दुष्ट कषाय विनाश नमो, निज शांत भाव हुलास नमो ॥ ५ ॥

जय साधु सु साधत आत्म बली, जय साधु सु अनुभव सार रली ।

जय साधु परम उपकारी हैं, भंयम सामायिक धारी हैं ॥ ६ ॥ महार्घ ॥

दोहा—बन्दत साधु महन्तको, पूजत गुण अविकार ।

निजानन्व पावे सुधी, खुलजावे शिबद्वार ॥ इत्याशीर्वादः ॥

(१०) फिर चारित्रिक पदके नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

प्राड्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां, जायतां दीर्घमायु-

भूयान्मूयांश्च भोगैः स्वजनपरिजनैस्तात्मदा रोग्यमग्र्यम् ।

कीर्तिर्घोषाखिलाया प्रभवतु भवतास्त्रिपतीपः प्रतापः,

क्षिप्रं स्वमोक्षलक्ष्मीर्भवतु तन्भुतां सर्वसाधुपसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विभर्जन करके पाधुत्रिपतीकी प्रतिष्ठा पूर्ण करे ।

(४) श्रुतस्कंध प्रतिष्ठाविधि—द्वादशागवणीका एक पद धातुका बनवाया जाता है जैसा नहुना दक्षिणमें भिळता है व बिझात-
मवन-आरामें विद्यमान है । उषकी प्रतिष्ठाकी विधि नीचे प्रकार है—

- (१) इषमें भी यागमंडलकी पूजा की जाय । बीचमें ॐ बनाकर पहला वलय १७ कोठोंका बनावे फिर ११ अंग-१४ पूर्व अर्थात् २५ कोठोंका बनावे और पहलेकी भांति पूजा करे । जो विधि आचार्यके विनकी प्रतिष्ठामें है वो करे ।
 (२) इष जिनवाणीकी मूर्तिको चार अनुयोगरूप चार कलशोंमें स्नान करावे तब कहे—

“ॐ ह्रीं शुनदेव्याः कलशरत्नग्न करोमि इति स्वाहा ।”

(३) फिर नीचेकी खुति पढ़े और मूर्तिपर पुष्प क्षेपे—

निर्मूलमोहतिमिरक्षणैकदक्षं, न्यक्षेण सर्वजगदुज्ज्वलनैकतानम् ।
 सोषेख चिन्मयमहो जिनवाणि नूनं, प्राचीमतो जयसि देवि तदल्पसूतिम् ॥
 आभवादपि दुरामदमेव आयसं, सुखमनन्तमचित्यम् ।

जयतेषु सुलभं खलु पुंसां, त्वत्पसादात् इहांव नमस्ते ॥

चेतश्चमत्कारकरा जनानां, महोदयाश्चाभ्युदयाः समस्ता ।

हस्ते कृताः शस्तजनैः प्रसादात्, तवैष लोकांब नमोस्तु तुभ्यम् ॥
 सकलयुवतिष्टेरंबचूडामणिस्त्व, त्वमसि गुणसुष्टुर्धर्मसुष्टुश्च मूलम् ।
 त्वमसि च जिनवाणि स्वेष्टसुकृत्यंगमुख्या, तदिह तव पदाब्जं भूरिभक्त्या नमामः ॥

(४) फिर नीचे लिखी खुति पढ़े—

वारह अंगंगिज्जा दंसर्णातलया चरित्तवत्पहरा । चोद्दसपुब्बवाहरणा ठावे दठवाय सुयवेवी ॥ १ ॥
 आचारशिरसं सूत्रकृतवक्त्रां सुकण्ठिकाम् । स्थानेन समवायांगव्याख्याप्रज्ञसिदोल्लताम् ॥ २ ॥
 वाग्देवतां ज्ञातृकथोपासकाध्ययनस्तनीम् । अन्तकृद्दशसन्नाभिमस्तुत्तरदशांगतः ॥ ३ ॥
 सुतितां सुजघनां प्रश्रव्याकरणश्रुतात् । विपाकसूत्रहृत्वाद्दशरणां चरणांबराम् ॥ ४ ॥
 सम्पदत्वतिलकां पूर्वचतुर्दशविभूषणाम् । नावत्प्रकीर्णकोदीर्णा-षारुप्रस्रांक्रुरभ्रियम् ॥ ५ ॥
 आसहृष्टपवाहौशद्रव्यभावाधिदेवताम् । पत्ररूपयाहसां स्यादुक्ति सुक्तिमुक्तिवाम् ॥ ६ ॥
 सर्वदर्शनपाल्पणद्वैतयत्नगाचिताम् । जगन्मातरमुद्धतुं जगदप्रायनारयेत् ॥ ७ ॥

(५) फिर नीचे लिखे मंत्रको १०८ बार पढ़कर प्रतिमाको स्पर्श करे ।

ॐ अर्हंमुखकमलवासिनी पापांश्चकारक्षयकारिणी श्रुतउवाचान्नामहृद्गुणव्यवहिते चरन्मति मम पाप हन स्त्री क्षी क्षी क्षी क्षी
 बबळे अमूनसंभवे व व म इ स्वाहा ।

(६) फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर प्रतिभार पुण्य क्षेपे ।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकाम्बध्याधिनी पापापकारक्षयकारिणी श्रुतशालाबाहसप्रखचिते वरस्वति अन्न एहि २ वसोषट् । ॐ ह्रीं अर्हन्मुख०
अन्न तिष्ठ २ ठः ठ । ॐ ह्रीं अर्हन्मुख० मम प्रविहिता भव भव वषट् ।

(७) फिर १०८ दफे नीचे का मन्त्र पढ़े—ॐ ह्रीं वरस्वतीदेव्यै नमः । तथा तत्र विम्बके मध्यमें ह्रीं लिखे । यह तिलकदान विधि हुई ।

(८) फिर अविवाधना विधिर्म नीचे क मन्त्रोंसे आठ द्रव्य चढाये—
ॐ ह्रीं श्रीं वद वद वाग्धादिनि भगवति वरस्वति जल गृह्णाण २ स्वाहा । इत्यादि ।

(९) फिर नीचे का मन्त्र पढ़ वक्रसे दके व परदा करे । ॐ ह्रीं मुखवक्र द्वाभामि स्वाहा । (१०) फिर आचार्य मन्त्र हो श्रुतभक्ति पढ़े व नीचे लिखा मन्त्र १०८ दफे पढ़ मुखसे कपडा अलग करे । ॐ ह्रीं भगवति वरस्वति मुखवक्र अग्नयामि स्वाहा, फिर नीचे लिखा मन्त्र १०८ बार पढ़कर घोनेकी छलाई तब विम्बपर फेरे यह नयनाम्बुखन क्रिया है । ॐ ह्रीं श्रुतदेवि प्रबुद्धस ध्यात् नन मनसि पुनीहि २ स्वाहा । तब परदा इटे व जगन्नाथकार शब्द हो । (११) फिर पूजा नाचे प्रकार का जाये—

स्थापना ।

गीता—श्री जिन विनिर्गत यागो, अनुपम परम प्रकाशनी ।

सिधयात मल घोकर सु भविजन चित्त उज्वल कारिणी ॥

संसार ताप प्रशान्त कारण, चन्द्र कर सुखदायनी ।

आनन्द अमृत वाय वाणी, पूजहुं भव नाशनी ॥

ॐ ह्रीं वाग्धादिनी भगवती वरस्वती अन्न भवतर २ इत्यादि ।

अष्टक ।

छन्द नाराच—महान गन्ध धार नीर लाहये सु प्रेमसों । अनादि जन्म व्याधि सेट दीजिये सु नेमसों ॥

सरस्वती महान देवि पूजिये सु भावसे । इटे कुबोध तम अपार ज्ञान होय चावसे ॥ अहं ॥

परम सुगन्ध बन्दनं मिलाय शुद्ध केशर । मिटाय ताप संसृती सुपाय शानता बरं ॥ सरस्वती० ॥ चन्दनं ॥

छरे अखण्ड अक्षतं सफेद शुद्ध धालमें । करे प्रकाश अक्षतं गुण निजात्म हालमें ॥ सरस्वती० ॥ अक्षतं ॥

गुलाब कुंज चम्पकं सुवर्ण फूल लाहये । महा कठोर काम बाण टाल शील पाहये ॥ सरस्वती० ॥ पुष्पं ॥

बनाय शुद्ध अन्न तुतं मिष्टता मिलायके । क्षुधा कुरोग नाश होय भावना सु भायके ॥ सरस्वती० ॥ चरुं ॥

करूको जलाय स्वर्ण दीपदान मैं धरूं । मिठाय मोह अन्धकार ज्ञान दीप प्रज्वलूं ॥ सरस्वती० ॥ दीप ॥
 मंगाय धूप गंधकार धूपदान मैं दिया । निजाठ कम काठ जाल धूमको उड़ा दिया ॥ सरस्वती० ॥ धूप ॥
 सुगंध मिष्ट आन्न आदि फल महान धारके । महान मोक्ष लाभ काज भावको सम्हारके ॥ सर० ॥ फल ॥
 सुधार गंध अक्षतं सुषुष्य चारु चक्रु लिये सु दीप धूप फल मंगाय अर्घ्य शुद्ध यों किये ॥ सरस्वती० ॥ अर्घ्य ॥

जयमाल ।

छन्द मुक्तामाल—नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु हमेश, श्री जिनवाणी स्वत स्वदेश ।

श्री सर्वज्ञ विगत सब दोष, कहें परकाश भविक जन तोष ॥ १ ॥

तिसे धारें गणधर मुनिराज, सु बारह अङ्ग रचें भवि काज ।

पढ़े आधारज शिष्य समाज, रचें बहु ग्रन्थ सु आतम काज ॥ २ ॥

यही श्रुतज्ञान हरे अज्ञान, दिखावे तत्त्व स्वर पर पहचान ।

लखावे वस्तु स्वरूप अपार, मिटे संशय संमोह असार ॥ ३ ॥

जुई स्याद्वाद परम हिनकार, विरोध मिटाय जु ऐक्य प्रचार ।

यही दर्पण सम तत्त्व प्रसार, यही समता प्रगटावन हार ॥ ४ ॥

सही जिनधर्म सु आतम रूप, यही रतनत्रय ध्यान स्वरूप ।

यही भवसागर तारण सेतु, यही सुखसागर वर्द्धन हेतु ॥ ५ ॥

इसे समझावे यह जिनवाणी, मिटावे दोष परम गुण दानी ।

सरस्वती मात नसूं मैं तोहि, करहु किरपा जो आनन्द होहि ॥ ६ ॥ मशार्थ ॥

दोहा—श्री जिन मात प्रसादसे, सुधरे हम सब कार्य । बन्धु पुन पुन मातको, दीजे हमें स्वराज ॥

॥ इत्याशीवदिः ॥

फिर श्रुतभक्ति पढ़े और नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

प्राड्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां जायतां दीर्घमायु-

र्ध्याद्भूयान्श्च भोगः स्वजनपरिजनेस्तात्सदारोग्यमग्रयम् ॥

क्षिप्रं स्वर्माश्लक्ष्मीर्भवतु तनुभुतां पाठकेन्द्रप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विषजन किया जावे ।

(१) श्री चरणपादुका प्रतिष्ठाविधि—जहां २ तीर्थंकरोंके कल्याणरू होते हैं वहां २ चरणचिह्न स्थापित किये जाते हैं, इनकी प्रतिष्ठा विधिमें इन्द्र अगशुद्धि आदि काके पूर्ववत् १७ कोठीकी पूजा प्रथम वलय अनुचार व नित्य पूजा तथा एक या तीन कुण्डमें होम करे, मण्डल बनावे या योही करे । फिर जिस तीर्थंकरकी चरणपादुका हो उनका पूजन किया जावे । पूजनके पहले चरण-पादुकाका अभिषेक करे । फिर नीचे लिखे मन्त्रको १०८ बार जपे—ॐ ह्रीं अस्मिन् क्षेत्रे जन्मस्थानस्थापना करोमि स्वाहा या तपस्थान ॥ या ज्ञानस्थान या निर्वाणस्थान स्थापना करोमि स्वाहा । फिर चरणचिह्नमें ॐ इं लिखे । यह तिलकदान विधि है । पश्चात् सिद्धमक्ति, निर्वाणमक्ति, आचार्य मक्ति आदि मक्तिययायोग्य पढ़े, स्तुति पाठ पढ़े, शांति विषर्जन करे । यदि आचार्य उपाध्याय या ब्राह्मणकी पादुका हो तो उसके प्रतिष्ठा उनहीके अनुचार करे, जैसा पहले कह चुके हैं ।

अध्याय ग्यारहवाँ ।

मंदिर या वेदीप्रतिष्ठा विधि ।

मंदिर व वेदी निर्माण होनेपर उसके प्रतिष्ठा या शुद्धि नीचेमकार कानी योग्य है—शुभ मुहूर्तमें अलग मण्डप बनाकर टाई हीप व २४ तीर्थंकर व समवशाणका कोई पाठ किया जावे । मण्डल बना लिया जावे । यदि बहूष बक्षेा करना हो तो बिना मण्डल बनाए २४ तीर्थंकरकी या पामेष्ठीकी पूजा की जावे । मंदिर या वेदीप्रतिष्ठाके दिन जलयात्रा की जावे तथा शुद्धिविधान करके प्रतिमा बिराजमान वी जावे । कमसेकम ८००० जप उसी मंत्रसे व उसी विधिसे जैसा विष्णुप्रतिष्ठाके चतुर्वर्षमें पहले अभ्यासमें कह चुके हैं, करे उसी प्रमाण जैसा पहले अध्याय (न० ९) में मण्डपप्राक्काविधिमें कहा गया है ।

स्तुर्णिकागामरसंघ एष, आगत्य यज्ञे विधिना नियोगं ।

स्वीकृत्य भक्त्या छि गयाईदेशे, सुस्था भवंत्बाह्विकल्पनायां ॥ ३२२ ॥

आयात मारुतसुराः पवनोद्गटाशा, सघसलमितिर्निलतांतरीक्षाः ।

वात्प्रादिदोषपरिभूतवसुन्धरायां, पर्युहकर्मनिखिल परिमार्जयन्तु ॥ ३२३ ॥

आयात वास्तुविधिषूद्रसंनिवेशा, योग्यांशभागपारपुष्टव्युः नदंशाः ।
 अस्मिन् मखे रुचिरसुस्थितमूर्षणांके, सुस्था यथाहंविधिना जिनभक्तिभाजः ॥ ३२४ ॥
 आयात निर्मलनमः कृतसंनिवेशा, मेधासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।
 * अस्मिन्मखे कृतविक्रयया निताते, सुस्था भवन्तु जिनभक्तिमुदाहरन्तु ॥ ३२५ ॥
 आयात पावकसुराः सुरराजपूज्य, संस्थापनाविधिषु संस्कृतविक्रियार्हाः ।
 स्थाने यथोचितकृते परिषदकक्षाः, सन्तु श्रियं लभत पुण्यसमाजभाजां ॥ ३२६ ॥
 नागाः समाविशतभूतलसन्निवेशाः, स्वां भक्तिमुल्लसिनगात्रया प्रकाश्य ।
 आशीविषादिकृतविघ्नविनाशहेतोः, स्वस्था भवन्तु निजयोग्यमहासनेषु ॥ ३२७ ॥

पुरुषुतद्विशिस्थितिमेहि करोद्भूतकांचनदंडगखण्डरुचे ।
 विधिना कुसुरेश्वरसव्यशद्ये धृतपंकजशंकिताकरणके ॥ ३२८ ॥
 वामनाशुभमदिग्भिभागतः स्थानमेहि जिनयज्ञरुर्मणि ।
 भक्तिभारकृतदुष्टनिग्रह पूतशासनकृतामबंध्यकः ॥ ३२९ ॥
 वस्त्रिमासु विततासु हरितसु भूरिभक्तिभरभूकृतपीठाः ।
 अंजनस्वद्वितकाम्ययाऽध्वरे तिष्ठ विघ्नविलयं प्रणिण्येहि ॥ ३३० ॥
 पूषपदन्तभवनासुरमध्ये सत्कृतोऽसि यत् इत्थमबोधयाम् ।
 उत्तरत्र मणिदण्डकराग्रस्तित्त विघ्नविनिष्टुत्तिलि... ॥ ३३१ ॥

करकृतकुसुमानामंजलिं सवितीर्थं धनदमणिमुगरत्नानीशपूजार्थसार्थे ।
 विकिर विकिर शीघ्र भक्तिमुद्भावयित्वा निगदतु परमांके मंडपोधर्वाबकाशे ॥ ३३२ ॥

जलयात्रामें गाजेबाजेके पाप इन्द्र य जाचाये किन्नी नदी या बरोत्र या कूपर या जल भाने जावें । बायमें कलश १०८ या ५४ या २७ या २१ या ९ या ५ जितने भंभव हों उतने, जो नारियलसे दके हो, ऊपर केपरसे रंगा छना हो, कलशोंके कंठमें फलमाळाए सुशोभित हों, उनको शुद्ध केशरिया बल पहले हुए कुलीन स्त्रियां मत्तकार रखके लेजावें, बाप्री पाय जावै । मार्गमें इन्द्र जब चके उष षमयसे लेकर पहुंचने तक मार्गमें जाते आते नीचे लिले मंत्रसे मंत्रितकर जाँ और परबों बलेरता जाय जिबमें कोई विघ्न न हो व शांति रहे ।

मन्त्र-ॐ हूँ क्षू फट् किरिटि घातय २ परविघ्नान्स्फोटय २ षडक्षलडान्कुरु २ परमुद्रा छिद्र २ परमन्त्रात् भिद्र २ क्षः हूँ फट्स्वाहा ।

जलस्थान पर जाकर किसी ऐसे तीर्थकी पूजा करे जो नदी व शरोवर तटपर हो । जैसे चिद्वरकूट, पाशापुरी, अथवा निर्वाणक्षेत्र पूजा या बिद्वपूजा करे फिर छानकर कलशोंसे जल भरे । लवग चूरा या चन्दन मिखावे । वे ही खियां मन्त्रकर परखे हुए मडपमें छावे, यदि कहीं खिया न जाबके तो इन्द्र ही अधिक करने और वे ही कलश छावें, उनको विराजमान किया जावे । फिर इसी जलसे मंदिर या] वेदीको धोकर शुद्ध किया जावे तब यह मन्त्र पढ़ा जावे । ॐ नीरजसे मम । फिा जिन्न वेदीमें श्रीजीकी विराजमान करना हो उसीके आगे एक उच्च पीठपर जिन्न भूर्तिको वेदीपर विराजमान करना हो छाकर स्थापित करे । उसीके आगे १७ कोटोंका बलययुत याग मण्डल बनाया जावे । यदि न नने तौ भी पूजा हो सकती है । आगे एक चौखुटा कुण्ड या तीनो होमकुण्ड बनाए जावे । प्रतिमाजीको छानेके पहले जहाँपर रखे हो पूजन करे वहा डामका आसन दर्पमथनाय नमः पढ़कर बिछावे “ सील्यघाय नमः ” यह मंत्र पढ़कर प्राशुक्-जलसे छटे । विमलाय नम यह मन्त्र पढ़कर पुष्प चढ़ावे, “ अक्षताय नमः ” यह पढ़कर अक्षत चढ़ावे, “ श्रुतधूपाय नमः ” यह पढ़कर धूप देखे, “ ज्ञानोद्याताय नमः ” यह पढ़कर दीप चढ़ावे, “ परमविद्याय नमः ” यह पढ़कर नैवेद्य चढ़ावे, प्रतिमाको विराजमान करे, अभियेक उची जलसे करे जो लाया गया है । अभियेककी विधि पहले कही जाचुकी है । जो विधि अभियेककी व होमकी दूबरे अथायमें यागमण्डलकी पूजामे कही है उसी तरह करे । नित्यनियम व विद्वपूजा करके शरत्कालाय नमः आदि पीठिकामन्त्रोंसे होम करे । पश्चात् १०८ आहुति उची मन्त्रसे देवे जो दूबरे अथायमें लिखी है । फिर स्तुति आदि पढे ।

ध्वजा व कलश भी चढाना होता है वे भी इसी समय प्रतिमाजीके पास स्थापित रहे । वेदीके ऊपर व मंदिरके शिखारके ऊपर कलश व ध्वजा चढती है । पूजाके समय विनायक यंत्रको भी स्थापित करे । यदि न हो तैयार कराले या थालपर खींचले । मध्यमें ॐ लिखके पांच कोठेका बलय करना, उषमें अ घि आ उ षा लिखे । फिर १२ कोठेका बलय करके अरहन्त मंगल आदि लिखना । उषको हीं कौं से श्रेष्ठत करे । फिर इन्द्र सिद्धभक्ति पढ़े । फिर कायोःवर्ग कर ९ दफे मन्त्र पढे । फिा पढे—

ॐ जय जय जय, निरसही, निरसही, निरसही, बर्धस्व, बर्धस्व, बर्धस्व, स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति, जिनशासनं । णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आशरीयाणं, णमो उवब्झायाणं, णमोलोए सब्बसाहूणं । चत्तारि मंगलं, अरहतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहुमगल, केवलियणत्तो घम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलियणत्तो घम्मो लोगुत्तमा चत्तारि सरणं पवब्जामि, अरहन्तसरणं पवब्जामि, सिद्धसरणं पवब्जामि, साहुसरणं पवब्जामि, केवलियणत्तो घम्मो सरणं पवब्जामि ।

फिा आचार्यभक्ति तथा श्रुतभक्ति पढे और कहें—

ॐ अथ वेदीमण्डपप्रतिष्ठायां, तत्शुद्धयर्थं भावशुद्धये पूर्वं आचार्यभक्तिपूर्व कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

फिर यत्रकी पूजा करे ।

अथ यंत्रपूजा

परमेष्ठिन् । मंगलादित्रय विघ्नविनाशने । समागच्छ तिष्ठ तिष्ठ मम सन्निहितो भव ॥ २६३ ॥

ॐ अहत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपरमेष्ठिन् ! मंगल लोकोत्तम ॥ शरणभूत ॥ अत्रावतर अवतर संबौषट् (आह्वाननं), अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं), अत्र मम सन्निहितो भव भव षषट् । (सन्निधिकरणं) स्वच्छैर्जलैस्तीर्थभवेर्जरापमृत्युग्रोरोगापनुदे पुरस्तात् ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मंगलिकान् यजेऽहं ॥२६४॥
ॐ ह्रीं अथ विवप्रतिष्ठोत्सवे वेदिकाशुद्धिविधाने अहंलिखद्वाचार्योपाध्यायसर्वसाधुमण्डलोकोत्तमशरणेभ्यो जल निर्घंपामीति स्वाहा ।

संबंदनैर्गंधद्वतालियुद्धचितैर्हिमांशुपसरावदातैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मंगलिकान् यजेऽहं ॥बंदनं॥
सदक्षतैर्मौक्तिककांतिपाटच्चरैः सितैर्मौनसनेत्रमित्रैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मंगलिकान् यजेऽहं ॥अक्षतं॥
पुष्पैरनेकैरसवर्णगन्धप्रभासुरैर्बोसितदिवितानैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मंगलिकान् यजेऽहं ॥ पुष्पं ॥
नैवेद्यपिंडैर्घृतशर्कराक्तहविष्यभागैः सुरसाभिरामैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मंगलिकान् यजेऽहं ॥ नैवेद्यं ॥
आरार्तिकैरत्नसुवर्णरुक्मपात्रापित्तैर्ज्ञानविकाशहेतोः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मंगलिकान् यजेऽहं ॥ दीपं ॥
आशासु यद्भूमवितानमृद्धं तैर्धूपमृद्धैर्हहनोपसर्पैः ।

अहंमुखान् पञ्चपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मंगलिकान् यजेऽहं ॥ धूपं ॥
फलैरसालैर्धरदाडिमार्थैर्दूषाणहार्यैरमलैरुदारैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मंगलिकान् यजेऽहं ॥ फलं ॥ २७१ ॥

द्रव्याणि सर्वाणि विधाय पात्रे, ह्यनर्घमर्घवितरामि भक्त्या ।

भवे भवे भक्तिरुदारभावाद्येषां सुखायास्तु निरन्तराया ॥ अर्घ ॥ २७२ ॥
अनादिसन्तानमवान् जिनेन्द्रानर्हत्प्रेष्ठानुपदिष्टधर्मान् ।

द्वेषा श्रिया लिंगितपादपदमान्, यजामि वेदीप्रकृतिप्रसस्यै ॥ २७३ ॥
ॐ ह्रीं वद्विनानतन्नागभस्निषट्ठलोका लोकानुभावात् मोक्षमार्गप्रकाशानानतचिद्धूविलाषान् अर्हत्प्रेमेष्ठिनः सपूजयामि स्वाहा अर्घ ।
कर्मोष्ठनाशाच्छयुतभावकर्मोद्भूतीन् निजात्मस्वविलाससम्पान् ।

सिद्धाननंतांस्त्रिककालमध्ये, गीतान् यजामीष्टविधिप्रशक्त्यै ॥ २७४ ॥
ॐ ह्रीं द्विविषकर्मताडवापनोदविलपरस्त्राकारचिद्धूविलाषवृत्तीन् निजाष्टगुणमणोद्घुणान् प्रगुणीभूतानतमाहाल्यान् लोकप्रशिक्षाराव-
साधिनः चिद्धपरमेष्ठिनेऽर्चयामि स्वाहा ॥ अर्घ ॥

ये पचवाचारपरायणानामग्रेसरा दीक्षणाशिक्षिकासु ।

प्रमाणनिर्णीतपदार्थसार्थानाचार्यवर्यान् परिपूजयामि ॥ २७५ ॥
ॐ ह्रीं व्यवहाराधाराचारवत्प्रशानेकगुणमणिभूवितोरस्कात् सव्यप्रतिपायैवाहनाचार्यवर्यान् परिपूजयामि स्वाहा ॥ अर्घ ॥

अर्थश्रुतं सत्यविबोधनेन, द्रव्यश्रुतं ग्रन्थविदर्भनेन ।

येऽध्यापयन्ति प्रवरानुभावास्तेऽध्यापका मेऽर्हणया दुहन्तु ॥ २७६ ॥
ॐ ह्रीं द्वादशांगश्रुतानुविधारगतान् परिभासपदार्थस्वरूपान् तपाध्यायपरमेष्ठिन पूजयामि स्वाहा ॥ अर्घ ॥

द्विधा तपोभावनया प्रवीणान्, स्वकर्मभूतिश्रविलण्डनेषु ।

विविक्तशययामनहर्म्यपीठस्थितान् तपस्विपवरान् यजामि ॥ २७७ ॥
ॐ ह्रीं घोरतपश्चरणोद्युक्तप्रयासमाचमानान् स्वकारुण्यगुणप्रपुण्यागणपण्यरन्नाल्लुक्तपादान् बाधुपरमेष्ठिन पूजयामि स्वाहा ॥ अर्घ ॥
अर्हन्मङ्गलमर्धं सुरनरविद्याधैरैकपूजयदं । तोयप्रभृतिभिरधैर्विनीतसूध्नी शिवाप्तये नित्यं ॥ २७८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलाय अर्घम् ।

श्रीहयोत्पाद्विनाशरूपाखिलवस्तुजानानार्थकरं । सिद्धिमंगलमितिवा मत्सार्धं चाष्टविधवस्तुभिः ॥ २७९ ॥

ॐ ह्रीं चिद्धमङ्गलायार्घं ।

यदर्शनकृतविमवाद् रोगोपद्रवगणा मृगा इव मृगैर्द्रात् । दूरं भजन्ति देशं साधुभ्रेयोऽर्च्यन्ते विधिना ॥ २८० ॥

ॐ ह्रीं बाधुमंगलाय ।

केवलिसुखावगतया वाण्या निर्दिष्टभेदधर्मगणं । मत्वा भवसिधुतरीं प्रयजे तन्मंगलं शुद्धय ॥ २८१ ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसिधर्ममङ्गलायार्धे ।

लोकोत्तममय जिनराट् पद्मान्जसेधनमित्तदोषविलयाय । शक्तं मत्वा धृतये जलगंधैरीडितुं प्रभवे ॥

ॐ ह्रीं अरहंतलोकोत्तमायार्धे ।

सिद्धाश्च्युत दोषमला लोकाग्र्यं प्राप्य शिवसुखं व्रजिताः । उत्तमपयगा लोके तानर्धे वसुविधार्चनया ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्धे ।

इंद्रनेंद्रसुरैर्द्रैर्यिततपसां व्रतैषिणां सुधियां । उत्तमपंथानमस्र विचेंदंश्च सलिलगंधमुखैः ॥२८४॥

ॐ ह्रीं पाधुलोकोत्तमेभ्यः अर्धे ।

रागपिशाचधिसर्दनमत्र भवे धर्मधारिणाममनुलम् । उत्तममवातिकामो वृषमर्धे शुचितरं कुसुमैः ॥२८५॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसिधर्मोप लोकोत्तमायार्धे ।

अर्ह्वरणमथार्धेऽनंतजनुष्पि न जातु संप्राप्तं । नर्तनगानादिविधिसुद्दिश्याष्टकर्मणां शार्यै ॥२८६॥

ॐ ह्रीं अरहत्शरणायार्धे ।

निन्द्याबाधशुणादिक प्राग्र्यं शरणं समेतच्चिदन्तं । सिद्धानाममृतानां भृत्यै पूजेयमशुभहान्यर्थम् ॥२८७॥

ॐ ह्रीं सिद्धशरणायार्धे ।

श्विदचिद्भेदं शरणं लौकिकमाप्यं प्रयोजनातीतं । त्यक्त्वा साधुजनानां शरणं भृत्यै यजामि परमार्थम् ॥

ॐ ह्रीं पाधुशरणायार्धे ।

केवलिनाथसुखोद्गतधर्मः प्राणिसुखसहितार्थशुद्धिष्टः । तत्प्राप्त्यै तद्यजनं कुर्वे मखविघ्ननाशाय ॥ २८९ ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसिधर्मशरणायार्धे ।

औषधीरसबलद्धिं तपःस्थ्या क्षेप्रबुद्धिकलिताः क्रिययाह्याः ।

विक्रपधिमहिनाः प्रणिधानप्राप्तसस्तुतितटा मुनिपूज्याः ॥ २९० ॥

केवलावधिमनः प्रसरांगाः बीजकोष्ठमतिभाजनशुद्धाः ।

वीतरागमदमत्सरभावा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९१ ॥

यद्बुधचोऽमृतमहानन्दमग्ना जन्मदाहपरितापमपास्य ।

निर्धनुः सुखसमाजतटेषु बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९२ ॥

श्रोत्रभिन्नमतयः पदपंथाः हृष्टसंस्तुतपदार्थविभाषाः ।

तत्रसंकलितधर्म्यसुशुक्लाः बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९३ ॥

स्पर्शनश्रवणलोकनबुद्ध्याः घ्राणस्थरसनोपकृता ये ।

दूरतोऽप्यनुभवं समाप्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९४ ॥

छिन्नसर्व्यविधिना चतुर्दश दिग्बुद्धपूर्वमतिना निमित्तगाः ।

वादिबुद्धकृतिनो मतिश्रमा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९५ ॥

अष्टधोक्तदशधाभिदया ये बुद्धिवृद्धिमहिता शिष्यवत्ना ।

विषमलादिगदहापनदेहा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९६ ॥

हृष्टिवक्त्रमनसां विषभक्ति प्रीणिता श्रुतस्मरितपतिपुष्टा ।

लोकमगलिषु सन्धसिता ये बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९७ ॥

वाक्यमानसबलेन समप्राः उग्रदीप्तपसस्त्रिकगुप्ताः ।

योरव्यर्थगुणभावितचित्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९८ ॥

दुग्धमध्वसृतभोजनकृत्याः सर्पिषाश्रववचोऽभिनियुक्ताः ।

अणवलाघवशित्त्वविदर्भा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९९ ॥

कामरूपगुरुताप्रतिसर्पावर्द्धहीनवसतिगृहयुक्ताः ।

चारणा जलफलाशिसूत्रा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ ३०० ॥

आत्मशक्तिभवागतसर्वपौद्गलीष समताहच्युतवस्त्राः ।

सत्परीषहभटार्दनदास्ते बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ ३०१ ॥

ॐ ह्रीं अष्टप्रकारकलहृद्दिवासेभ्यो मुनिभ्योऽर्धम् ।

द्येसितुष्टुषभसेनपुरस्सरा ये, सिंहादिसेनपुरतोऽजिततीर्थभर्तुः ।

श्रीसम्भवस्य किल चारुविसेनमुख्यास्तुर्यस्य बज्रधरमुख्यगणाधिराजाः ॥ ३०२ ॥

कोकध्वजस्य चमराधिपूर्वगाः स्युः, पद्मप्रभस्य कुलिशादिपुरस्थिताश्च ।

श्रीसप्तमस्य बलमुख्यकृताः पुराणे, चन्द्रप्रभस्य शमिनः खलु दत्तमुख्याः ॥ ३०३ ॥

सकरांकितो गणभृतश्च विद्भसुख्याः, श्रीसीतलस्य गणया अनगारगण्याः ।
 श्रेयो जिनस्य निकटे ध्वनि कुन्धपूर्वा, धर्मादयो गणधरा बसुपुज्यसूनोः ॥ ३०४ ॥
 मेर्षादयश्च विमलेशितुरुद्धबुद्धया, जग्यार्यनामभरणाश्चतुर्दशस्य ।
 धर्मस्य भांति शामिनः सदरिष्टमूलाश्चक्रायुधप्रभृतयः खलु शांतिभर्तुः ॥ ३०५ ॥
 कुन्धुप्रभोधंमभृतः कथिताः स्वयंभूवर्योः पुनन्त्वरविभोः स्मृतकुम्भमान्याः ।
 मल्लेर्विशाखमुनयो मुनिसुव्रतस्य, मल्लिप्रवेकगणता नमिभर्तुरिष्टाः ॥ ३०६ ॥
 ससद्धिपूजितपदा सुप्रभाससुख्या, नेमिश्वरस्य बरदत्तसुखा गणेशाः ।
 याश्वप्रभो स्वयमितः सुभवोतनाज्ञा, धीरस्य गौतमसुनीन्द्रसुखाः पुनन्तु ॥ ३०७ ॥
 एभ्योऽर्घ्यपाद्यमिह यज्ञधरावनार्थं, दत्तं मया विलसतां शुचिवेदिकायां ।
 पुष्पांजलिप्रकरतुंदिलमाज्यपात्र, सुत्तारयामि मुनिमान्यचरित्रभवत्या ॥ ३०८ ॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितैर्यंकरणवरभ्यस्त्रिपञ्चाशत्सहित चतुर्दशशतबहुयेभ्यश्चरुपात्रमग्रे कृवाऽर्घ्यमुत्तारयामि स्थाहा ।

इन्द्रभृतिरिशिभृति, वांयुभृतिः सुधर्मकः । मौर्यमौल्यी पुत्रमित्रावकम्पनसुनामधृक् ॥ ३०९ ॥
 ॐ ह्रीं गौतमादि एकादशसुनिभ्योऽर्घ्यं ।

अन्धवेलः प्रभासश्च, रुद्रसंख्यानं सुनीन् यजे । गौतमं च सुधर्मं च, जम्बूस्वामिनमूर्ध्वगम् ॥ ३१० ॥
 ॐ ह्रीं अर्यकेवलित्रयायार्घ्यं ।

श्रुतकेवलिनोऽन्यांश्च, विष्णुनन्द्यपरजितान् । गोवर्धनं भद्रबाहुं, दशपूर्वधरं यजे ॥ ३११ ॥
 ॐ ह्रीं श्रुतकेवलिनोऽर्घ्यं ।

विशाखमोष्ठिलनक्षत्र, जयनागपुरसरान् । सिद्धार्थधृतिषेणाहो, विजय बुद्धिबलं तथा ॥ ३१२ ॥
 गंगदेवं धर्मसेनमेकादश तु सुश्रुतान् । नक्षत्रं जयपालाख्यं, पांडुं च ध्रुवसेनकम् ॥ ३१३ ॥

ॐ ह्रीं कर्तिकेवलिनोऽर्घ्यं ।

कामाचार्यं पुरोगीयजातारं प्रयजेन्महं । सुभद्रं च यशोभद्रं, भद्रबाहुं सुनीश्वरम् ॥ ३१४ ॥
 लोहाचार्यं पुरा पूर्वज्ञानचक्रधरं नमः । अर्हद्बलि भूतबलिं, माघनन्दिनसुत्तमम् ॥ ३१५ ॥
 धरसेनं सुनीद्रं च, पुष्पदन्तसमाह्वय । जिनचन्द्रं कुन्दकुन्दसुमारशास्त्रामिनमर्थये ॥ ३१६ ॥

ॐ ही ऐदुगीनदीक्षावाणधुरधरनिर्प्रयाचार्यवर्यान् वेदीप्रतिष्ठाने प्रस्थाप्याष्टविधार्चन करोमि स्वाहा ।
निर्ग्रथान् बहुशान् पुलककुशलान्, किंशीलनिर्ग्रथकान् ।

मूलस्वोत्तरमद्गुणावधृतान् ॥
बन्दित्रा जिनकल्पसूत्रितपदान्, प्रध्वस्वपापोदयान् ।

वेदीशुद्धिविधिं ददन्तु मुनयो, ह्यर्घेण संपूजिताः ॥ ३१७ ॥

ॐ हीं पुलाकवकुशकुशीलनिर्प्रयात्प्रनातकपदधरत्रिकर्यूनेनककोटिवह्यमुनिवरेभ्योऽर्थ ।

फिर ९ दफे णमोकार मन्त्र पढकर कलश व ध्वजाके ऊपर पुण्य डालना । फिर १०८ दफे णमोकार मन्त्र जपकर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ वेदी तथा मंदिरके शिखरपर कलश व ध्वजा चढावे ।

ॐ णमो आहृताण स्वरिन भद्र भवतु पर्वलोकस्य शांतिर्भवतु स्वाहा ।

मन्दिरके ऊपरकी ध्वजा—१२ अंगुल लम्बी व ८ अंगुल चौड़ी हो, कपड़ा लाल व पीला हो । उषमें, चन्द्रमा, माला, नक्षत्र, आदिका चिह्न हो । तथा कलश, पातिया, दीपदण्ड, छत्र, चमर, घर्मेचक्र लिखकर ध्वजाके ऊपर जिनविम्ब हो । ऊपर छत्र हो । ध्वजामें अशोक आदि वृक्षका चिह्न भी हो । जो ध्वजा मन्दिरकी शिखरपर चढाई जावे उषका दड मन्दिरकी ऊँचाईसे चौथाई हो तो ठीक हो अथवा शीमाके अनुसार हो । ध्वजा चढाते समय वाले बजें व जयजयकार शब्द हो । फिर वेदीपर मातृकायन्त्रको केपरसे लिखे । यह मन्त्र छठे अध्यायमें नं० (२) में दिया हुआ है तथा मन्त्र भी वहीं लिखा है उषको १०८ बार जपे । वेदी उष समय चमर छत्रादिके सुशोभित की जावे, बाजे बजते रहें । तथा जयजयकार शब्दके बीचमें प्रतिमाजीको वेदीपर विराजमान करे । वेदीकी भीतर केशाके बाधिये पहलेसे किये जावे । यदि मातृकायन्त्र नहीं लिख सके तो श्री लिखले व १०८ दफे णमोकार मन्त्र जपले । फिर मूलनायक तोर्थ सारकी पूजा बड़ी भक्तिसे की जावे । पूजाके पीछे आचार्य यह प्रबन्ध करा दे कि मन्दिर या वेदीका जीर्णोद्धार किस तरह होगा व नित्य पूजापाठमें अन्तर न पड़े । मुख्य प्रतिष्ठा करानेवालेको पूजा आदिका यथाबन्ध नियम दिवावे तथा चार दान करनेके लिए कहे व अन्य माइयोंको भी दानके लिए कहे । इस समय भजनान्दि हों व याचकोंको दान दिया जावे । गरीबोंको भोजन कराया जावे तथा यदि सामर्थ्य हो तो भ्रष्टका भोजनकरकार किया जावे ।

(२) किन्ती भी नए कार्यमें जैसे गृह प्रवेश या विवाहादि-उषमें यथायोग्य विधिके साथ यन्त्र या प्रतिभाका अभिषेक काके समयत्राताय नम आदिसे होम करके वही १७ बख्यबली पूजा जो वेदीप्रतिष्ठामें लिखी है की जावे । यह मंगलीक पूजा है, हर माल कार्यमें काने योग्य है ।

(३) जब कोई नया मन्थ तैयार हो व लिखा जावे तो उषकी विशेष पूजा नेठ सुदी ५ या श्रुतपञ्चमीकेदिन कीजावे।श्रुतमफिक पढ़कर श्रुनपूजा हो । फिर शाल पढ़कर सुनाया जावे ।

अध्याय बारहवाँ ।

भक्तियां आदि ।

अथ सिद्धभक्तिः ।

असरीरा जीवधना उबलुता, दंसणेय गाणेय । सायारमणायारा, लखणमेयंतु सिद्धाणं ॥ १ ॥
 मूलोत्तरपयडीणं बन्धोदयमत्तकम्मउम्मुक्का । मंगलभूदा सिद्धा, अट्टगुणा तीदसंसारा ॥ २ ॥
 अट्टवियकर्भविघडा सोदीभूता गिरंजणा णिच्चा । अट्टगुणा क्किविकिच्चा, लोयगणिवसिणो सिद्धा ॥ ३ ॥
 सिद्धा णट्टमला विसुद्धबुद्धो घ लद्धिमवभावा । तिहुअणसिरिसेहरया, पसियन्तु भड्डारया सब्बे ॥ ४ ॥
 गमगागमणविमुक्के, विहडियकम्मपयडिसंधारा । सामहसुहसंपत्ते ते, सिद्धा वंदियो णिच्चं ॥ ५ ॥
 जयमगलभूदाणं विमलाणं, गाणदसणमयाणं । तहलोहसेहराणं, णमो सदा सब्बसिद्धाणं ॥ ६ ॥
 समत्तणाणदंसणवीरियसुहुमं, तहेव अवरगहणं । अगुरुल्लु अवावाहं, अट्टगुणा होंति सिद्धाणं ॥ ७ ॥
 तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे, चरित्तसिद्धे य । गाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे, सिरसा णमरसामि ॥ ८ ॥

इच्छामि भंते सिद्धमत्ति काओमगो कओ तरसालोचेओ, सम्मणाणमदंसणसम्मचरित्तजुताणं,
 अट्टविहकम्ममुक्काणं अट्टगुणसम्पणणाणं, उड्डहलोयमच्छयम्मि, पयड्डुड्डियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं, सजम-
 सिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं, सम्मणाणममदंसणसम्मचरित्तसिद्धाणं, तीदाणागदवहमाणकालत्तयसिद्धाणं
 सब्बसिद्धाणं वन्दामि, णमरसामि दुक्कलक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगहगमणं समाहिरणं जिण-
 गुणसम्पत्तिहोउमब्बं ।

इति पूर्वार्चानुक्रमेण भावपूजास्तवसमेतं कायोत्सर्गं करोमि ।

अथ श्रुतभक्तिः ।

अर्हदुक्खत्रपसूतं गणधारचित्तं, द्वादशांगं विशालं, चित्र बहर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्धोरितं बुद्धिमद्भिः ।
 मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं, ज्ञेयभाषपदीपं, भक्त्या नित्यं प्रबन्धे, श्रुतमहमखिलं सर्वलोकैकसारम् ॥१॥
 जिनेन्द्रवक्त्रप्रविनिर्गतं वचो, यतीन्द्रभूतिप्रमुखैर्गणाधिपैः ।

श्रुतं धृतं तश्चै पुनः प्रकाशितं, द्विषट्प्रकारं प्रणसाम्यहं श्रुतं ॥ २ ॥

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिर्यधिकानि चैव ।

पंचाशदष्टौ च, सहस्रसंख्यमेतच्छतं पंच पदं नमामि ॥ ३ ॥

अंगबाणश्रुतोद्भूतान्यक्षराण्यक्षराश्रये । पंचसप्तैकमष्टौ च दशाशीतिं समर्चये ॥ ४ ॥

अरहतभासियस्यं गणहरदेवेहि गंधिय समम । पणमामि भन्तिजुत्तो सुदणानमहोवहि सिरसा ॥ ५ ॥

इच्छामि भन्ते सुदभसि काओसगो कओ तस्सालोचेओ अंगोवगपङ्गणघणुडपरियममुत्तपह-
मासिओय पुब्बगघचूलिया चैव सुत्तथयत्थुइधम्मकहाइयं सुद णिवकालं अंचेमि पूजेमि बन्दामि णमस्सामि
दुक्खखओ कम्मखओ वोहिळाओ सुगइगमण सममं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ चारित्रभक्ति ।

समारव्यसनाहतिप्रचलिता, नित्योदयप्रार्थिनः । प्रत्यासन्नविस्तृत्यः सुमतयः शान्तनैलः प्राणिनः ।

मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं सोपानमुच्चैस्तरा-मारोहंतु चरित्रमुत्तममिदं, जनैर्द्रमोजस्विनः ॥ १ ॥

तिलोए मन्वजीवाणं ह्यय. धम्मोवदेसणं । वड्डमाणं महाधीर, बन्दिता सव्ववेदिनं ॥ २ ॥

घाइकम्मविघातस्यं, घाइकम्मविणाभिणा । भासियं भव्वजीवाणं, चारित्तं पंचभेददो ॥ ३ ॥

सामायिय तु चारित्तं, छेदोवड्डावणं तथा । त परिहारविसुद्धिं च, सयमं सुहम पुणो ॥ ४ ॥

जहाखायं तु चारित्तं तथाखायं तु त पुणे । किवाइ पंचहाचार, मङ्गल मलसोहणं ॥ ५ ॥

अहिंसादीणि वुत्तानि, महव्वयाणि पञ्च य । समिदीओ तदो पञ्च, पञ्चेन्द्रियणिगगहो ॥ ६ ॥

छब्भेयावासभूसिद्धा, अण्हाणत्तमचेल्दा । लोयत्त ठिद्धिसुत्ति च, अदन्तवणमेव च ॥ ७ ॥

एयभत्तेण संजुत्तां, रिसिसूलगुणा तहो । दसधममा तिगुत्तीओ, सीलाणि सयलाणि य ॥ ८ ॥

सव्वे वि य परीसहा, वुत्तत्तरगुणा तथा । अण्णे वि भासिया सन्ता, तेसिहाणीमयेकया ॥ ९ ॥

जइ रागेण दोसेण, मोहेण णदरेण वा । बन्दिता सव्वसिद्धाणं, सजुशा सामुसुक्खुण ॥ १० ॥ (१)

संजडेण भए समम, मव्वसजमभाविणा । सव्वसंजमसिद्धीओ, लब्भदे सुत्तिज सुहं ॥ ११ ॥

धम्मो मंगलसुक्किट्ट अहिंसासजमो तओ । देवा चि तरस पणमंति, जस्स धम्मे सया मणो ॥ १२ ॥

इच्छामि भन्ते चारित्तभन्ति काओसगो कओ तस्सालोचेओ सम्मणणजोयरस सम्मत्ताहिद्वियस्य

सकथप्रज्ञानस्य विद्वन्मनस्यमगशा रीत्रवसत कश्चयजिह्वरसकस्य ससाधरस्य पञ्चसहस्रवयरोपणस्य तिसृस्त्रि-
 मूर्त्तस्य पञ्चस्यसिद्धिद्वयस्य ज्ञानप्रज्ञानासाक्षणादयं समयावस्येमासस्य सप्तम्यक्षरितस्य सप्तदशिन्यवशालं अथेति
 पूजेति ब्रह्माग्नि पादेषामग्निं त्वृणन्वाह्यतो कश्चरत्ततो भोविश्वतो सुगह्यमस्यं समाधिपदं विणमय सस्यसि
 षोऽत्र मज्झे ।

अथ भाष्यार्थवार्त्ता ।

वेसकालताम्रपुत्रा निरुद्धमनामनासाधरोजसा । तुमहे पापपयोमहमिह महलन्वि मे जिह्वम् ॥ १ ॥
 समवसरागमस्त्रिपुत्रं आभसद्देहं चानि जागिस्ता । सुसगन्ता विणमयणे विणमयुक्तान्पुत्र्येण ॥ २ ॥
 वात्स्यमहृद्दशैरे गिह्याण्येरेमन्मणरोजसा । आशानमनाम्वयणे त्वृणोके चानि जागिस्ता ॥ ३ ॥
 मयाग्निद्विगुज्ज्वला मुस्त्रिवष्टे तावसा पुणो अणो । अज्ज्ञानमयमणाजिह्वा साहृमणेनाग्नि रंजिता ॥ ४ ॥
 उरस्यमाभ्राहृत्वा वयणाभाषेण अकञ्जकशरिमा । प्रजिगामाहृद्वणादी अगणा माह अरंसाधो ॥ ५ ॥
 याणमिय निवसलेभ्य आहृत्वा सायसहस्रं पुनियसह्य । परिमगुणजिह्वाणं यम यणमाग्निं पुत्रयणो ॥ ६ ॥
 रंसावसाणो पुन मममममाणेदिं नन्वतोरेदिं । विद्वानस्य तु ममो ह्यतो तुमहे पसाएण ॥ ७ ॥
 अन्विपुत्रलेभ्यारभया गिराजलेमिदिं वरिणावा पुत्रा । मधुहृते पुनचरता यमो योमे य रंजुसा ॥ ८ ॥
 जोऽवमर्द्धानावापारुणगुणास्यमग्निं रंजिता । सुसह्यत्वान्मणाए भाविममाणेदिं मन्त्राग्नि ॥ ९ ॥
 तुमहे यणमणरोऽदिं अणमणरोणेण वो मए पुसा । दिप मय बोदिहृत्पुत्रं मरुभस्त्रिजुवृत्तयतो जिह्वं ॥ १० ॥

इत्यादि शब्दे आभस्त्रियर्थात् काजोगस्यो कर्त्तौ ममगद्योवेजो ममणानससगदंरणासम्यक्चरित-
 ज्ञुत्ताणं पंचविश्वाराथं आयस्त्रिगणं आयासादिपुत्रव्याणोवदेतायाणं त्वज्ज्ञायाणं तिस्रमगुणपालनसयाणं
 सात्त्वसायुणं जिह्वतांशं अग्निं पूजेति ब्रह्माग्निं नामस्याग्निं त्वृणन्वाह्यतो कश्चरत्ततो भोविश्वतो सुगह्यमस्यं
 समाधिपदं विणमयसंरंजति षोऽत्र मज्झे ।

अथ योगवर्त्ता ।

धोसाग्निं यणधराणं अणमाराणो मणेदिं मधेदिं । अंजुक्तिमडुक्तिगहस्यो अक्षिब्रह्मस्तो यन्विभयेण ॥ १ ॥
 मस्यं श्रेव य भाते विज्ज्ञासाधे तष्ट्रे व योज्ज्वला । यारुण विज्ज्ञासाधे सप्तधाग्नि उभक्षिरे मज्जे ॥ २ ॥
 दोदोसन्विणगुणे विद्वणश्चमिरये तिसहस्रपरिस्त्रे । त्रिणिमयाभरक्षिणं तिस्रणपुत्रेण नामससाग्नि ॥ ३ ॥

षडविहकसायमहणे षडगहसंसारगमणशयनीए । पञ्चासवपडिविरे पंचेन्द्रियजिन्दे वन्दे ॥ १ ॥
 छज्जीवदयावर्णे छहायदणविबल्लिये समिदभावे । सत्तभयविप्पसुक्के सत्ताणभयंकरे वन्दे ॥ ५ ॥
 णद्वदमघट्टाणे पणद्वकम्मदण्डसंसारे । परमद्वणिद्विमट्टे अट्टगुणट्टीसरे वन्दे ॥ ६ ॥
 णववंभवेरुत्त णवणयसठभावजाणगे वन्दे । दसविह्वममट्टाई दससंजमसंजुदे वन्दे ॥ ७ ॥
 एयारसगसुदसायपरारगे वारसंगसुदणि उणे । वारसविह्वतवणिरदे तेरसकिरयापडे वन्दे ॥ ८ ॥
 भूदेसु दयावर्णे षडदस षडदस सुगन्धपरिसुद्धे । षडदसपुव्वपगन्धे षडदसमलवज्जिदे वन्दे ॥ ९ ॥
 वन्दे चउत्थभत्तादिजावळममासखवणिपडिपुण्णे । धंदे आदावन्ते सूरस य अहिमुहट्टिदे सूरे ॥ १० ॥
 बहुविह्वपडिमट्टाई णसेज्जवीरासणोवञ्जावासीयं । अणिट्टु अकुम्भदीये चतदेहे य णवससामि ॥ ११ ॥
 ठाणियमोगयदीए अबभोवासी य सखत्तलीय । धुदकेसमंसु लोसे णिप्पडियममे य वन्दामि ॥ १२ ॥
 जल्लमल्लितगतते वन्दे कम्ममलकल्लमपरिसुद्धे । दोहणहणमंसु लोये तवनिरिअरिए णवससामि ॥ १३ ॥
 णाणोदयाहिसित्ते लीलुणविह्वसिये तवसुगन्धे । ववगयरायसुदट्टे सिवगह्वपहणायगे वन्दे ॥ १४ ॥
 उरगतवे द्वित्तलवे सहातवे य घोरतवे । वन्दामि तवमहंते तवसंजमह्विद्विमपत्ते ॥ १५ ॥
 आमोसह्विएखेलोसह्विएजल्लोसह्विय तवसिद्धे । विप्पोसह्विए क्कञ्जासह्विए वन्दामि तिविह्वेण ॥ १६ ॥
 अभयसुह्वीरलथी सव्वथी अक्खोण सहाणसे वन्दे । मणवत्तिवंचवलिक्कायवणिणगी य वंदामि तिविह्वेण ॥
 वरकुट्टवीयसुद्धी पयाणुमारीयलमिणणसोयारे । उरगह्वईहसमत्थे सुत्तथ्यविसारे वन्दे ॥ १८ ॥
 आभिणिवोहियसुद्धे ओह्णिणामणणाणि सव्ववणाणाय । वन्दे जगप्पदीवे पच्चक्खपरोक्खणाणीय ॥ १९ ॥
 आयासत्तजुल्लसेह्विचारणे जंवचारणे वन्दे । विउव्वणह्विद्धिणे विज्जाहरपणमणे य ॥ २० ॥
 गह्वउरंगुलगमणे तहेव फलफुल्लचारणे वन्दे । अल्लुवमतयमहंते देवासुरवन्दिद्वे वन्दे ॥ २१ ॥
 जियभगजियउवमणे जियहंदिपपरिमहे जियकसाये । जियरायदोसमोहे जियसुह्वुक्खे णमससामि ॥
 एवमए अभित्थुआ अणयारा रायदोसपरिसुद्धा । संघरस वरसमाहिं मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु ॥ २२ ॥

रच्छामि भन्ते जोगमत्ति काओवगणे कओ तस्वालोचेओ अट्टारजजीवदोपसुद्धेसु पणारपणम्मभूमोसु आदावणहक्खेपूल अब्भो-
 वापठणमोणवीरापचेक्कवापकुक्कडावणव उरयपरकावळणादिजोगजुत्तण वरवणहूण णिवत्तल्ल अचेमि पूजेमि वन्दामि णमससामि दुक्खक्खय
 कम्मसखय वोहिल्लोई सुगह्वगमण वम्म वमाह्विमण जियगुगववत्ति हाउ मज्झ ॥ २५ ॥

अट्टावयम्मि उसहो वमगाए थासुपुज्ज जिणणाहो । उज्जन्ते पेम्मिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥ १ ॥
 वीसं तु जिणयरिदा अमरासुरवन्दिता बुद्धकिलेसा । सममेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ २ ॥
 वरदत्तो य वरङ्गो सायरदत्तो य तारवरणयरे । आहुट्टयकोडोओ णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ ३ ॥
 पेम्मिसामि पज्जणो संबुक्कुमारो तहेव अणिकद्धो । वाहत्तरकोडोओ उज्जन्ते अत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥
 रामसुवा वेणिण जणा लाङ्गणरिदाण पचकोडोओ । पावागिरियरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ ५ ॥
 पंडुसुआ तिणिणजणा दब्बिडणरिदाण अट्टकोडोओ । सेतुंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ ६ ॥
 सन्ते जे बलभहा जटुषणरिदाण अट्टकोडोओ । गजपथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ ७ ॥
 रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णोलमहाणोलो । णवणवदीकोडोओ तुङ्गो गिरिणिव्वुदे वन्दे ॥ ८ ॥
 णंगाणणकुमारा कोडोपंचद्धसुणिवरा सहिया । सुवणागिरिवरिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ ९ ॥
 वरसुहरायस्स सुवा कोडोपंचद्धसुणिवरा सहिया । रेवाउहयतड्ढग्गे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १० ॥
 रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरक्कुडे । दो चक्को दह कप्पे जाहुट्टयकोडिणिव्वुदे वन्दे ॥ ११ ॥
 बड्ढवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे । इंदजीदक्खुअथणो णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १२ ॥
 पावागिरिवरसिहरे सुषण्णमहाइसुणिवरा चउरो । चलणाणईतड्ढग्गे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १३ ॥
 फलहोडोवरगामे पश्चिमभायम्मि दोगगिरिसिहरे । गुरुदत्ताइसुणिदा णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १४ ॥
 णायकुमारसुणिदो वालि महावाली चेव अज्जेया । अट्टावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १५ ॥
 अबलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे । आहुट्टयकोडोओ णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १६ ॥
 वंसत्थलवरणियरे पच्छिमभायम्मि कुन्थुगिरिसिहरे । कुलदेसबूत्तणुणा णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १७ ॥
 जसरहरायस्स सुधा पंचासयाइं कलिंगदेम्मि । कोडिसिलाकोडिसुणी णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १८ ॥
 पासस्स अमवसरणे सहिया वरदत्तसुणिवरा पंच । रिंसिदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १९ ॥

इच्छामि मंते परिणिव्वाणभत्ति काओषग्गो कओ तत्सालोवेओ इमम्मि अवन्नणिणीए चउत्थप्रमयस्स पच्छिमे भागे आहुट्टयमावहीणे
 वापचउक्कम्मि सेवकालम्मि पावाए णयरए कत्तियमावस्स किण्हउइएरि एत्तोए पादीए णसत्ते पच्चूसे मयवटोमहदि महावीरो वड्डमाणो
 णिद्धिगदो तीसुवि लोएसु भक्षणवासियवाणवितरजोइविह कपवाशिय चि चउत्तियहा देवा वपरिवारा दिव्वेण गधेण दिव्वेण पुण्फेण दिव्वेण

ध्रुवेण दिव्येण जुषणेण वासेण दिव्येण गृहणेण गिञ्चकालं अञ्चति पुञ्जति वदति गमयति परिणिञ्चाणमहाकछाणपुञ्ज करंति महमपि इह्यतो तस्य वताइ गिञ्चकाल अचेमि पूजेमि वदामि गमंस्यामि परिणिञ्वाण महाकछाणपुञ्ज करेमि दुक्खकखओ कम्मखओ बोहिलाओ सुगरामण वग्ग वमाहिरण णिणगुणवप्पत्ति होउ मग्ग ।

अथ तीर्थकरमक्तिः ।

चउधीसं तीरथयरे उसहाईवीरपच्छिमे वन्दे । सव्वेसिं सुणिगणहरसिद्धे सिरसा गमंसामि ॥ १ ॥
 ये लोकैष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयाणोवांतगता । ये सम्यग् मज्जालहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोधिकाः ॥
 ये माध्विन्द्रसुरागमरोगणशतैर्गीतप्रणृत्यार्चिताः । तान्देवान्धृषमादिवीरचरमानभक्तया नमस्याम्यहम् ॥ २ ॥
 नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपं । सर्वज्ञं सममवाख्यं मुनिगणशृषभ नन्दनं देवदेवम् ॥
 कर्मरिद्धेनं सुबुद्धिं वारकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगन्धं । क्षातं दातं सुपाश्वं सकलशक्तिनिभं चंद्रनामानमीडे ॥ ३ ॥
 विख्यातं पुष्टपदन्तं अथभयमथन शीतलं लोकनाथं । श्रेयांसं शीलकोशं मवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ॥
 मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमलसृषिपतिं सिंहसैन्यं सुनीदं ।

धर्मं सद्धर्मभेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शांतिं शरणयम् ॥ ४ ॥

कुञ्चु सिद्धालयसं श्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषुचकम् ।

मल्लिं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं मोल्यराशिसम् ॥

शैवेन्द्रार्च्यं नमीश हरिकुलतिलक नेमिचन्द्रं सवांतम् ।

पार्श्वं नागेन्द्रबन्ध शरणमहमितो बद्धमानं च भक्त्या ॥ ५ ॥

इच्छामि भते चन्वीरपतिःपयामक्तिकातस्वर्गो कञ्जो तस्वालाःचेउ । पचगहाकछाणवग्गणाण, अट्टमहापाडिहेरवहियाण, वउतीव-
 अतिपयविसेवसुत्ताण, वत्तीवदेविदमणिमउडमयमहियाण, बलदेववासुदेवचक्रहरिचिमुणिअइ अणगारोवग्गुटाण, थुरवयवहस्सणिल्लयाणं,
 उपहाईवीरपच्छिमगळमहापुरिवाण गिञ्चकाल अचेमि, पुजेमि, वदामि, गमवामि, दुक्खकखओ, कम्मखओ, बोहिलाओ, सुगरमण,
 वमाहिरण, जिणगुणवप्पत्ति होउ मग्ग ।

अथ शांतिमक्तिपाठः ।

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्पाठद्वयं ते प्रजाः । हेतुस्तत्र विचित्रदुःखनिचयः संसारघोराणोवः ॥
 अरण्यन्तस्तुरदुमरदिमनिकारव्याकीर्णोन्मण्डलो । ग्रैहमः कारयतीन्नुपादसल्लिहच्छायानुरागं रधिः ॥ १ ॥

कदाशीबिषदष्टदुर्जयविषडबालावलीविक्रमो । विद्याभेषजमन्त्रतोषहवनैर्योति प्रशान्तिं यथा ॥
तद्वृत्ते चरणारुणांबुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणाम् । विद्वनाः कायविनायकाश्च सहसा शास्त्रंयद्यहो विश्रमयः ॥२॥
संतप्तोत्तमकांबनश्चिन्तिबिभ्रश्रीस्वच्छिगौरद्युते । पुंसां त्वस्वरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयान्ति क्षयं ॥
उद्यद्भास्करविस्फुरत्करशातड्याघानिष्कासिता । नानादेहिबिलोचनद्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ॥ ३ ॥
त्रैलोक्येश्वरमंगलञ्चविजयादर्थतरौद्रात्मकान् । नानाजन्मशार्तांतरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ॥
को वा प्रस्वलतीह केन विधिना कालोद्गदावानला । स्र स्याच्चैतव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ॥ ४ ॥
लोकालोकनिरन्तरप्रविततज्ञानैकसूर्ते विभो ! नानारसनपिनद्धदण्डरुचिरश्वेतातपत्रत्रय ॥

त्वत्पादद्वयपूतगीतरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः । दर्पाधमातमृगेन्द्रभीमनीनदाङ्गन्या यथा कुँजराः ॥ ५ ॥
दिडयस्त्रीनयनाभिरामबिपुलश्रीमेरुचूडामणे । भास्वदालदिवाकरद्युतिहर प्राणीष्टभाममंडलम् ॥
अव्याबाधमचित्यसारमतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम् । सौख्यं त्वस्वरणारविंदयुगलस्तुत्येव संभाष्यते ॥ ६ ॥
यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करो भासयं-स्तावद्धारयतीह पंकजवनं निद्रातिभाश्रमम् ॥
यावत्स्वरणद्वयस्य भगवन्न स्यात्प्रसादोदय-स्तावज्जीवनिकाय एव वहति प्रायेण पापं महत् ॥ ७ ॥

शान्ति शान्तिजिनेन्द्र शान्तमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात् ।

संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहव शान्त्यर्थिनः प्राणिनः ॥

कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो हृष्टिं प्रसन्नां कुरु ।

त्वत्पादद्वय दैवतस्य गदतः शाल्यष्टकं भक्तितः ॥ ८ ॥

शान्तिजिनं शशिनर्मलवक्त्र, शीलगुणव्रतसंयमपात्रं ।

अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममवुजनेत्रम् ॥

पंचमसीपिस्रतचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणेश्च ।

शान्तिकर गणशान्तिमभीष्टुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ ९ ॥

दिडयतरुः सुरपुण्यसुष्टुष्टिदुःखभिरासनयोजनघोषो ।

आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥

तं जगद्विंशतिशांतिजिनेन्द्र, शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।

सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं, मन्त्रमरं पठते परमां च ॥ १० ॥

येभ्यश्चिंता मुकुटकुण्डलहाररत्नेः । शक्रादिभिः सुरगणः स्तुतपदपद्माः ॥

ते मे जिनाः प्रथवंशजगत्प्रदीपाः । तीर्थकराः संततशांतिकरा भवन्तु ॥ ११ ॥

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतींद्रसांभान्यतपोधनानां ।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य रांज्ञ, करोतु शांति भगवान् जिनेंद्रः ॥

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः ।

काले काले च सम्यग्बर्षतु मघवा, व्याघ्रयो यांतु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां, मासभ्रूज्जीवलोकै ।

जैनेन्द्रं धर्मबक्रं प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि ॥ १२ ॥

तदद्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः । सन्तन्यता प्रतपतां सततं स कालः ॥

भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण । रत्नत्रय प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गै ॥ १३ ॥

इच्छामि मन्ते शांतिभक्तिकावस्वर्गो कञ्चो तरसालोचेठ । पचमहाकक्षाणम्पण्णो, अठुमहापाण्डिरेषदियाण, चरतीवातिसय-
विसेबबजुत्ताण, वसीबदेवेदमणिमवठमथयमदियाण, बलदेववासुदेवचक्ररिसिमुणिजदिअणगारोवगूढाण, शुद्वयवइस्पणिलयाण, उवहाइ-
वीरपण्डिमङ्गलमहापुरिषाण णिच्चकालं अचेमि, पूजेमि, वदामि, णमवामि, दुक्कवओ, कम्मकवओ वोड्डिओ, सुगद्दगण, पमादिसरण,
जिणगुणवग्गत्ति होठ मज्झ ।

अथ समाधिभक्तिः ।

स्वात्माभिमुख सन्नित्तिलक्षणं श्रुतचक्षुषा । पश्यन्पद्यामि देवत्वां केवलज्ञानचक्षुषा ॥ १ ॥

शास्त्राभ्यासो जिनपत्तिस्तुतिः संगतिः सर्वदायैः । सद्बुत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ॥

सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावनाचात्मतत्त्वे । संपद्यंतां मम अबभवे यावदेतेऽपवर्गं ॥ २ ॥

जैनमार्गैरुच्चिरन्यमार्गनिर्भेगता जिनगुणस्तुतौ मतिः ।

निष्कलंकाधिमलौकिकाशनाः स भवन्तु मम जन्मजन्मनि ॥ ३ ॥

गुरुसूले यतिनिचिते वैश्यसिद्धांतवादिंसद्बोधे । मम अबतु जन्मजन्मनि सन्यसनसमन्वितं मरणम् ॥ ४ ॥

जन्मजन्मकृतं पापं जन्मकोटिसमाजितम् । जन्ममृत्युजरासूलं इत्यते जिनवन्दनात् ॥ ५ ॥
 आवाल्याजिनदेश्च अथतः श्रीपादयो सेवया । सेवासक्तविनेयकल्पलतया कालोद्ययावद्गतः ॥ ६ ॥
 तव पादौ मम हृदये मम हृदये तव परद्वये लाभम् । तिष्ठतु जिनैन्द्र तावद्याद्यन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ ७ ॥
 एकापि समयेयं जिनभक्तिर्दुर्गति निवारयितुम् । पुण्याभि च पूरयितुं दातुं मुक्तिश्रिय कृत्स्निः ॥ ८ ॥
 पचसुख दीवणामे पचस्मिप्रय मायरे जिणे वन्दे । पंच जल्योयरणामे पचस्मिप्रय मन्दरे वन्दे ॥ ९ ॥
 रयणत्तर्यं च वन्दे चञ्चयीसजिणे न मन्वबद्धा वन्दे । पचशुरूणं वन्दे चारणचरणं सदा वन्दे ॥ १० ॥
 अहंमित्यक्षरब्रह्म वाचकं परमेष्ठिनः । स्त्रिद्वचकस्य सर्वदीजं सर्वतः प्रणिदधमहे ॥
 कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादि गुणोपेतं स्त्रिद्वचकं नमाम्यहम् ॥ ११ ॥
 आकृष्टिं सुरसम्पदां विदधते मुक्तिश्रियो वश्यतां । उच्चाट विपदां चतुर्गतिशुभां विद्वेषभ्रातृमैतसाम् ॥
 स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनम् । पायात्पंचनमस्त्रिक्रियाक्षरमयी साराधना देवता ॥ १३ ॥
 अनन्तानन्तसंसारसन्ततिच्छेदकारणम् । जिनराजपदाः भोजसमरणं चरणं मम ॥ १४ ॥
 अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम । तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ १५ ॥
 नहि ज्ञाता नहि ज्ञाता नहि ज्ञाता जगन्नये । वीतरागात्पश्यो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ १६ ॥
 जिने भक्तिजिने भक्तिजिने भक्तिदिने दिने । सदा मेस्तु सदा मेस्तु सदा मेस्तु भवे ॥ १७ ॥
 याचेहं याचेहं जिन तव चरणारविदयोर्भक्तिम् । याचेहं याचेहं पुनरपि तामेव तामेव ॥ १८ ॥
 इच्छामि भंते समाहिमात्तिकाउरसग्नौ कथो तस्सालोचेडं । रयणत्तपपरुवपरमप्यज्ञाणलक्षणं
 समाहिमत्तीये निबकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, गर्मंशामि, दुक्खकखओ, कम्मकखओ, वोहिलाओ,
 सुगणगणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।



प्रशस्ति ।

दोहा-मंगल श्री अरहंत हैं, मंगल सिद्ध महान । मंगल आचारज सुधी, पाठक मुनि गुण-खान ॥ १ ॥
 अबध सुलक्ष्मणपुर जनम, अग्रवाल शुभ वंश । मंगलसेन सुवर पिता, आत्म जानन हंश ॥ २ ॥
 पिता जु मक्खनलाल हैं, गृह प्रबन्धमें लीन । तृतीय पुत्र यह दास है, नाम जु "शीतल" दीन ॥ ३ ॥
 विक्रम उन्निस पैतिसे, जन्म सुकातिक मास । बत्तिस वय घर तज करो, श्रावकव्रत अभ्यास ॥ ४ ॥
 सम्बत् उन्निस असी चउ, वर्षाकाल मंझार । नगर खंडवा वास किया, ममताभाव सम्हार ॥ ५ ॥
 पोड़वाड़ पंवास घर, जण्डेलवाल जु वीश । धर्म दिग्गम्बर साधते, नमैं चरण जिन ईश ॥ ६ ॥
 मन्दिर एक सुहावना, विद्याशाला एक । औषधिशाला एक है, शाला धर्म जु एक ॥ ७ ॥
 सेठ पोमडू साह हैं, चम्पालाल धनेश । धन्नालाल सु सेठ हैं, रामा माह सुवेश ॥ ८ ॥
 बुन्नीलाल सु चौधरी, पन्नालाल बखान । दशरथ मन्नालाल सा, श्री घनश्याम सुजान ॥ ९ ॥
 भागचन्द सा चुन्नी सा, और हजारीलाल । मूलचन्दजी सुरजमल, सुधी कन्हैयालाल ॥ १० ॥
 इत्यादिक धर्मीनकी, संगति शुभ सुखदाय । सेठ जु सुन्दरलालकी, बाग सु आश्रय दाप ॥ ११ ॥
 बार बार विनती करी, अजितप्रसाद वकील । करहु प्रतिष्ठा मग सुगम, धर्म सुजलमय झील ॥ १२ ॥
 जैनी जन दुखिया अती, रीति न जाने भेद । तांनैं हम उद्यम किया, मदद परम गुरु वेद ॥ १३ ॥
 देख प्रतिष्ठा पाठ त्रय, श्री जयसेन मुनीश । पंडित आशाधर जु कृत, नेमचन्द वुत्र ईश ॥ १४ ॥
 श्री जिनसेन मुनीश कृत, आदिपुराण विचार । आदि पुरुष जीवनचरित, पंचकल्याणक सार ॥ १५ ॥
 तदनुसार रचना करी, अल्पबुद्धि परमाण । धर्म प्रभावना हेतु ही सब जनका हित मान ॥ १६ ॥
 ज्ञान बुद्धि अति अल्प है, साहस बहुत कराय । कार्य कठिन पूरा हुआ, भीजिन चरण सहाय ॥ १७ ॥
 आश्विन कृष्ण नवमिको, सोमवार शुभ बार । ग्रन्थ सभापत यह भया, हो शुचि मंगलकार ॥ १८ ॥

नित्यनियम पूजा ।

देवशास्त्ररूपूजा ।

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु । नमो अरहताण, नमो सिद्धाण, नमो आयरीयाणं, नमो उक्तायाणं, नमो लोए
 वववाहूण । ॐ अनादिमूलमत्रेभ्यो नमः । (यहाँ पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिये)
 चत्वारि मंगलं-अरहन्तमंगलं सिद्धमंगलं, साहुमंगलं, केवलपणणतो धम्मो मंगलं । चत्वारि लोयुत्तमा, अरहन्तलोयुत्तमा, सिद्धलोयुत्तमा, साहुलोयुत्तमा, केवलपणणतो धम्मो लोयुत्तमा । चत्वारि-
 मरण पव्वज्जामि-अरहन्तसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलपणणतो धम्मो सरण पव्वज्जामि ।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा । पुष्पाञ्जलि ।
 अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोपि वा । ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥
 अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्परमात्मानं, स पाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥ २ ॥
 अपराजितमन्त्रोऽयं, सर्वविघ्नविनाशनः । मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥
 एषो पंषणमोयारो, सब्बपावपणासणो । मंगलाणं च सब्बेहिं, पहमं होह मंगलं ॥ ४ ॥
 अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचक परमेष्ठिनः । सिद्धवक्रस्य सदुद्योज सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥
 कमोष्टकविनिमुक्तं, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादियुगोपेत, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥

(यदि अवकाश हो, तो यहार बहस्रनाम पढकर दश अर्घ देना चाहिये, अथवा नीचेका श्लोक पढ एक अर्घ चढ़ाना चाहिए)
 उदकचन्दनतनुलपुष्पकैश्वरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः । धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृह जिननाथमहं यजे ॥७॥
 पुष्पाञ्जलि ।

ॐ ह्रीं श्रीमगवज्जिनबहस्रनामेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्प्रदेशं, स्याद्वादनयकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।
 आमूलसंघसुहृशां सुकृतैकहेतु-जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यवाधि ॥ ८ ॥
 स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय, स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।
 स्वस्ति प्रकाशासहजोज्जितहृदयाय, स्वस्ति प्रमञ्जललिताद्भुतवैभवाय ॥ ९ ॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधासुहाय, स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय ।
 स्वस्ति त्रिलोकवितैतकचिदुद्गमाय, स्वति त्रिकालसकलायतवितुताय ॥ १० ॥
 द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ।
 आलम्बनानि विविधान्यबलस्य बलगन्, भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥ ११ ॥
 अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि, वस्तुन्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।
 अस्मिन् उवलद्विमलकेवलबोधवहो, पुण्यं समयमहमेकवना जुहोमि ॥ १२ ॥

(पुष्पाञ्जलि क्षेपण काना)

श्रीधृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः । श्रीसुमतिः
 स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः । श्रीसुपार्थ्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचंद्रप्रभः । श्रीपुण्ड्रदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः ।
 श्रीश्रेयांस्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपुत्र्यः । श्रीविमलः स्वस्ति, स्वति श्रीअनंतः । श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वति श्रीशांतिः ।
 श्रीकुन्धुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः । श्रीमल्लिः स्वति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रत । श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति
 श्रीनेमिनाथः । श्रीपार्थ्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रावर्द्धमानः ।

(पुष्पाञ्जलि क्षेपण काना)

(बागे प्रत्येक श्लोकके अन्तमें पुष्पाञ्जलि क्षेपण काना चाहिये ।)

नित्याप्रकम्पाद्भुवनकेवलौघाः, स्फुरन्मनःपर्थ्ययशुद्धबोधाः ।

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं, संभिन्नं श्रोतृपदानुसारि ।
 स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १ ॥

चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः ॥ २ ॥
 संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघाणविलोकनानि ।

दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्ब्रह्मन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ३ ॥
 प्रज्ञापधानाः श्रमणाः समृद्धा, परयेकबुद्ध्या दशसर्षुर्धैः ।

प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तबिज्ञा स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ४ ॥

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः । तपःप्राप्तपतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महारमनः ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय पर्वपाधुपमूह ! अत्र अवतर एवौषट् । ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ
ठः ठः । ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूह ! अत्र मम बन्निहितो भव भव वषट् ।

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रबन्धान्, शुभमत्पदान् शोभितसारवर्णान् ।

दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलोर्ध्वैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं पात्ररूपेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हैश्वर्यमेष्टिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं बन्धदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूहो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

तामग्रत्त्रिलोकोदरमध्यस्थतिंसमस्तसत्त्वाऽहितहारिवाक्यान् ।

श्रीचन्द्रनैर्गन्धविलुब्धभृंगैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं पात्ररूपेऽन्तनन्तानज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हैश्वर्यमेष्टिने सगतापविनाशनाय चन्दन नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतम्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय सगतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं बन्धदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूहो सगतापविनाशनाय चन्दनं निर्वधं०

अपारसंसारमहासमुद्रमोक्षारणे प्राड्यतरीन् सुभक्त्या ।

कीर्घोक्षनगैर्घषलाक्षतौर्घजिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं पात्ररूपेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हैश्वर्यमेष्टिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं बन्धदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूहो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्योन्वयान् सुचटयो कथनैकधुर्योन् ।

कुन्दारचिन्वप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं पात्ररूपेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हैश्वर्यमेष्टिने कामत्राणविध्वंशनाय पुष्पं नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय कामत्राणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं बन्धदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूहो कामत्राणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

कुदूर्पकन्दर्पविसर्पसस्यनिर्णोषान्धैनेतेयान् ।

प्राड्यजयस्यैश्चरुमी रसाढ्य जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ५ ॥

- ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने क्षुबारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सम्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यः क्षुबारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

धरतोद्यमाग्धीकृतविश्वबिम्बमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।

दीपैः कनत्कांचनभाजनस्यैजिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ६ ॥

- ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोहावकारविनाशनाय दीप नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोहावकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सम्यदर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यग्चारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यो मोहावकार विनाशनाय दीपं नि० ।

दुष्टाष्टकर्मन्धनपुष्टजालसंधूपने आसुरधूमकेतून् ।

धूपैर्विधूतान्यसुगन्धगन्धैजिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ७ ॥

- ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपाम् ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सम्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान्, कुवादिवादाऽस्खलितप्रभान् ।

फलैरलं मोक्षफलाभिसारैजिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ८ ॥

- ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सम्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्धारिगन्धाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूपधूपत्रैः ।

फलैर्विचित्रैर्धनपुण्ययोगान्, जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ९ ॥

- ॐ ह्रीं परब्रह्मणेनंतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सम्यदर्शनचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ये पूर्वां लिखनाथशास्त्रयमिनां भक्त्या मदा कुर्वते.

त्रैसन्ध्यं सुविचित्रकाव्यरचनावानुधारणन्तो नगाः ।
पुण्योढ्या मुनिराजकीर्तिमहिता भूत्वा तयोःसूयणा-

स्तै भव्याः सकलाभयोर्वहचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम् ॥ १० ॥

रत्याशीर्वादः (पुण्य क्षेत्रेण नाना)

श्रुयमोऽजितनामा च, सम्भवश्चाभिनन्दनः । सुमतिः पद्मवासश्च, सुपान्थो जिनसत्तमः ॥ १ ॥
चन्द्राभः पुद्गलश्च, शीतलो भगवान्मुनिः । श्रेयाश्च वासुपुत्रश्च, विमलो विमलभृतिः ॥ २ ॥
अनन्तो धर्मनामा च, गांतिः कुन्दुर्जिनोत्तमः । अश्व मल्लिनाथश्च, सुव्रतो नमिनीधरश्च ॥ ३ ॥
हरिवशासमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः । दशतोपमगोद्वैतपरिः, पाठत्रो नागेन्द्रपूजितः ॥ ४ ॥
कर्मभान्तकृन्महाबीरः, सिद्धार्थकुलम्भवः । जते सुरासुरोन्नेण, पूजिता विमलत्वियः ॥ ५ ॥
पूजिता भरताथेश्च, भूपेन्द्रेर्भूरिचूतियिः । चतुर्विंशत्य संवत्स्य शान्तिं, कुर्वन्तु शान्धनीम् ॥ ६ ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः मदाऽस्तु मे । चतुर्विंशत्य संवत्स्य शान्तिं, कुर्वन्तु शान्धनीम् ॥ ७ ॥
श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः मदाऽस्तु मे । मज्जानमेव संसारपारणं मोक्षकारणम् ॥ ८ ॥ (पुण्यां०)
गुरो भक्तिगुरो भक्तिगुरो भक्तिः मदाऽस्तु मे । चारिश्चमेव संसारपारणं मोक्षकारणम् ॥ ९ ॥ (पुण्यां०)

अथ देवत्वयमात्रा माला ।

वत्ताण्डाणे जगवणुद्गणे, पदपोमिड तुष्ट स्रतचक्र ।

तुष्ट चरणबिहाणे केवल्लगाण, तुष्ट परमपद परमरु ॥ १ ॥

जय मिरह रिंसीसर णमिययाय, जय अजिय जियंगमरोसराय ।

जय सम्भव सम्भवकयबिओय, जय अत्रिणंक्षुण णंदिम यओय ॥ २ ॥

जय सुमङ्ग सुमङ्ग सम्मपययास, जय पडमपपङ्क पडमपिवासा ।

जय जयदि सुपाम सुपामगस, जय चन्दपङ्क चन्द्याइयस ॥ ३ ॥

जय पुण्यन्त दन्तंतरण, जय सीयल सीयलवयणवग ।

जय सेय सेयकिरणोइसुज, जय वासुपुञ्ज पुज्जाणपुञ्ज ॥ ४ ॥

जय विमल विगलगुणसेहिठाण, जय जयहि अणताणंतणाण ।
 जय कुन्थुं कुन्थुं पडुअंगिसदय, जय अर अर माहर विहियसमय ।
 जय नछि मछिआदामगन्ध, जय पुणिसुव्वय सुव्वयणिवन्ध ॥ ५ ॥
 जय णमि णमियामरणियरसामि, जय णोमि धम्मरहक्कणेमि ।
 जय पास पाल्लिदणकिवाण, जय बड्डमाण जस बड्डमाण ॥ ७ ॥

इह जाणिय णामहिं, दुरियविरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावलिहिं ।
 अणहणहि अणाइहि, समियकुवाइहि, पणविमि अरहन्तावलिहिं ॥ १ ॥

ॐ हौं वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो महावै निर्वामीति स्वाहा ।
 अथ शास्त्रजयमाला प्राकृत ।

सम्पद सुहकारण, कम्मविधारण, भवसमुद्दतारणतरणं ।
 जिणंदमुहाओ चिणिगगतार, गण्ढिविगुम्फिय गन्धपयार ।
 अवग्गहईहअबायजुएहि, सुधारणभेयहि तिणिसएहि ॥ १ ॥
 सुदं पुण दोणिण अपेयपयार, सुबारहमेय जगत्तयसार ।
 मई छत्तीस बहुणमुहाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ २ ॥

सुरिदणरिंदससुच्चिओ जाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ३ ॥
 जिणिदगणिदणरिंदह रिद्धि, पयासह पुणपुआकिउलद्धि ।
 णिउगु पहिल्लउ एहु वियाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ४ ॥

जु लोयअलोयह जुत्ति जणेह, जु तिणिवि कालसरूथ भणेह ।
 चउग्गहलक्खण दुल्लउ जाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ५ ॥
 सुउग्गहलक्खण दुल्लउ जाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ६ ॥

जिणिदचरितविचित्त मुणेह, सुसावधम्मस ज़ुत्ति जणेह ।
णिउग्गुवित्तिउ इत्थु वियाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ७ ॥

सुजीवअजीवह तवह चक्खु, सुपुण विपाव विबन्ध विमुक्खु ।
चउत्थुणिउग्गु विभासिय णाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ८ ॥
तिभेयहिं ओहि विणाण विचित्तु, चउत्थु रिजोविउलं सयउत्तु ।

सुखाइय केवलाणाण वियाण, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ९ ॥
जिणिदह णाणु जगत्तयभाणु, महात्तमणासिय सुक्खणिहाणु ।

पयक्खु भन्निआरेण वियाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ १० ॥
पयाणि सुआरहकोडिसयेण, सुलक्खनिरासिय जुत्ति भरेण ।

महसअट्टावण पंचवियाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ११ ॥
इक्कावण कोडिउ लक्ख अठेव, महस बुलसीदिसया छक्केव ।

सदाइगवीसह गंधपयाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ १२ ॥
वत्ता ।

इह जिणवरवाणि विसुद्धमई, जो भवियण णियमण धरई ।
सो सुरणरिदंभपय लइई, केवलणाण वि उत्तरई ॥ १३ ॥

ॐ हीं जिनमुखोद्भूतभ्याद्वादयगमितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अर्घं निर्वयामीति स्वाहा ॥

अथ गुरुजयमाला प्राकृत ।

भवियह भवतारण, सोलह कारण, अज्जवि तिरथयरत्तणहं ।
तव कम्म असंगह दयधम्मंगह पालवि पंच महठवयहं ॥ १ ॥
बन्दांमि महारिसि सीलवन्त, पंचेदियसंजम जोगजुत्त ।
जे ग्यारह अंगह अणुसरंति, जे चउदहपुव्वह सुणि युंणंति ॥ २ ॥
पादाणुसारवर कुट्टबुद्धि, उप्पणज्जाह आयासरिद्धि ।
जे प्राणहारी तोरणीय, जेरक्खवमूल आतावणीय ॥ ३ ॥

जे मोणिधाय बन्दाहणीय, जे जयत्यवणि निवासणीय ।
 जे बद्धहि देह विरत्तचित्त, जे समिदियुत्तिपालणहि वीर ॥ ४ ॥
 जे जल्ल मल्लगण लिप्त गत्त, आरम्भ परिग्गह जे विरत्त ।
 जे इक्क गास दुइ गास लिति, जे णीरसभोयण रह करंति ॥ ५ ॥
 बारह विह संजम जे धरंति, जे चारिउ विकहा परिहरंति ।
 बाबीस परोसह जे सइंति, संसोरमइणणउ ते तरंति ॥ ६ ॥
 जे धम्ममुद्ध महियलि शुणंति, जे काउस्सग्गो णिस गमंति ।
 गोदूहण जे वीरासणीय, जे घणुह सेज ब्लासणीय ।
 जे सत्तुमित्त समभावचित्त, ते सुणिवर बंदुँ दिहचरित्त ॥ ७ ॥
 जे सुञ्झाणिज्झा एकचित्त, बन्दाभि महारिसि मोकलपत्त ।
 रयणत्तयरंजिय सुद्ध भाव, ते सुणिवर बंदुँ डिहिसहाव ॥ ८ ॥
 जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धबधूअणुराईया ।
 रयणत्तयरंजिय, कम्मह गंजिय, ते रिसिबर मह झाईया ॥ ९ ॥
 अं ही बन्परदर्शनाचारिआदियुणविराजमानाचार्योपाध्यायवर्षाद्युभ्यो महावं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ सिद्धपूजा ।

ऊर्ध्वाधोरयुतं सचिन्दुसपरं, ब्रह्मशरावेष्टितं, वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं, तत्संधितस्वान्वितं ।
अंतःपत्रतटेष्वनाहयुतं, हींकारसंवेष्टितं, देव ध्यायति यः स सुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर । स्वौषट् । ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ २
ठः ठः । ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम पत्निहितो भव भव कषट् ।

निरस्तकर्मसम्बन्धं, सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् । बदेऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥१॥ सिद्धयन्त्रकी स्थापना ।

सिद्धोनिवासमनुग परमात्मगम्यं, होनादिभावरहितं भवतीतकायम् ।

रेवापगावरसरो-यसुनोद्भवानां, नीर्येजे कलशगैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

आनन्दकन्दजनकं घनकर्मसुक्तं, सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननातिवीतम् ।

सौरभ्यवासितसुखं हरिचन्दनानां, गन्धैर्यजे परिमलेर्वरसिद्धचक्रम् ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने सघारतापविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं, सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम् ।
सौगन्ध्यशालिबनशालिवराक्षतानां, पुंजैर्यजे शशिनभैर्वरसिद्धचक्रं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयप्रदासये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
नित्यं स्वदेशपरिमाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानपेक्षमयुतं मरणाद्यतीतम् ।

मन्दारकुन्दकमलादिवनस्पतीनां, पुष्पैर्यजे शुभतभैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविधिवचनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।
ऊर्ध्वरेखभाषगमनं सुमनोव्यपेतं, ब्रह्मादिवीजसहितं गगनावभासम् ।

क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णैर्गर्भै-नित्यं यजे चरुवैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने शुभरोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।
आतकशोकभंयरोगमहमशांतं, निर्दुन्दुभाषघरणं महिमामिवेशम् ।

कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातै-रीर्यैर्यजे रुचिबैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्घकारविनाशनाय दीप निर्वापामीति स्वाहा ।

पश्यन्सप्तसप्तसुत्रं युगपन्नितांतं, त्रैकात्पयस्तुविषये निविद्धप्रदीपम् ।

सद्बुद्धप्रगन्धघनसारविमिश्रितानां, धूपैर्यजे परिमलैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकमेदहनाय धूप निर्वापामीति स्वाहा ।

सिद्धासुरादिपतिघक्षनरेन्द्रचक्रैर्धैर्यं शिवं सकलभव्यजनैः सुबन्धम् ।

नारिं गृह्यं कदलीफलनारिकेलैः, सोऽहं यजे वरफलैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वापामीति स्वाहा ।

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः, संगं वरं चन्दनं, पुष्पौघं विमलं सदक्षतव्यं, रम्यं वरुं व्रीपकं ।

धूपं गन्धयुतं ददामि विविध, श्रेष्ठं फलं लब्धये, सिद्धानां शुभपत्क्रमाय विमलं, सेनोत्तरं बांछितम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्य निर्वापामीति स्वाहा ।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं, सूक्ष्मस्वभावपरमं यद्वन्तवीर्यम् ।

कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं, वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वापामीति स्वाहा ।

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयवराणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं, यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थकराः ।
सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणैर्धुक्तास्तानिह तोष्टुबीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ ११

पुष्पांजलि ।

अथ जयमाला ।

चिराग सनातन शांत निरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस ।

विदूरितसंस्तुतभाष निरंग, समानृतपुरित देव विसङ्ग ।

सुधाम विबोधनिधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १ ॥

निवारितदुष्कृतकर्मविपाश, सदामलकेवलकेलिनिवास ।

अबन्ध कषायविहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ २ ॥

भवोदधिपारग शांत विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ३ ॥

अनन्तसुखान्मृतसागर धीर, कलङ्करजोमलमूरिसमीर ।

विखण्डितकाम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ४ ॥

विकारविषवर्जित तज्जितशोक, विषोषसुनेत्रविलोकितलोक ।

विहार विराय विरङ्ग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥

रजोमलखेदविमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखान्मृतपात्र ।

सुदर्शनराजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ६ ॥

नरामरवन्दित निर्मलभाव, अनन्तमुनीश्वरपूज्य विहाव ।

सदोदय विश्वमहेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ७ ॥

विदम्भ वितृष्ण विदोष चिन्दि, परापरशङ्कर सार वितन्द ।

विकोप विरूप विशङ्क विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ८ ॥

जरामरणोद्धत धातविहार, विचिन्तित निर्मल निरङ्कार ।

अचिन्त्यचरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ९ ॥

विषर्ण विगन्धविमान विलोभ, विमाय विक्राय विशब्द विशोभ ।

अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १० ॥

पता-असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं, परपरणतिमुक्तं पद्मानन्दोद्भवन्धम् ।

निखिलगुणनिकेतं सिद्धवक्तं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं विद्मपरमेष्ठिन्यो महाधर्मं निर्वपामीति स्थावा ।

अडिल्लुब्ध-अविनाशी अविहार परमरसधाम हा, समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ।

शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो, जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥ १ ॥

ध्यानअगनिकर कर्म कलंक सबे दहे, नित्य निरङ्गनरैव सरूपी है रहे ।

ज्ञायकके आकार समस्तनिवारिके, सो परमात्मम सिद्ध नमू सिर नायके ॥ २ ॥

दोहा-अत्रिचलज्ञानमकाशते, गुण अनन्तकी खान । ध्यान धरे सौ पाइए, परमसिद्ध भगवाव ॥ ३ ॥

इत्याशीर्वादिः (गुण्याजलि)

अथ शान्तिपाठः ।

(शान्तिपाठ बोधते समय दोनो हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते रहना चाहिये ।)

दोषकवृत्तम् ।

शान्तिजिनं शशिनिसर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।

अष्टशताक्षितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥

पंचमसीपिसतचक्रशरणां, पूजितमिन्द्रनरेंद्रगणैश्च ।

शान्तिकर गणशान्तिमभीष्टुः, षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥

दिव्यतकः सुरपुष्पवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।

आतापवारणबामरयुग्मे, यस्य विश्रान्ति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥

ते जगद्विंशतिशान्तिजिनेन्द्रं, शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।

सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं, मलयकरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

वसन्ततिलका-येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः, शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ।

ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थकराः सततशान्तिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥

इन्द्रवज्रा-संपूजकानां प्रतिबालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥

स्रग्वरावृत्तम्-क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्, धार्मिको भूमिपालः ।

काले काले च सम्यग्वर्धतु मघवा, व्याघयो यांतु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां, मास्मभृज्जीवलोके । जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सतत, सर्वसौख्यप्रदायि ॥७॥

अनुष्टुप्-प्रध्वस्तघातिकर्माणः, केवलज्ञानभास्कराः । कुर्वन्तु जगतः शान्तिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्टप्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिव्रुतिः संगतिः सर्वदार्ढ्यैः, सद्ब्रुतानां गुणगणकथा दोषघाते च मौनम् ।

सर्वस्यापि प्रियद्विधितवचो भावना चात्मतपश्चे, सम्पद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ ९ ॥

धन्य मात शिव-पथ अनुगामी, मोक्ष नगरकी है अधिकारी ।

पूर्व द्रव्य आठ शुभ लैके, मिटग कालिमा कर्म अपारी ॥

ॐ हौं कार्तिक शुक्ल पण्ड्यां श्रीने मजिनं गम धारिकाय त्रिवादेव्यै भव निर्णामीति साक्षा । (२२)

बालीछंद-त्रैशाख बर्दा तुज जाना, श्रीपार्श्वनाथ भगवाना । वामादेवी डर आप, पूजत हम थाब लगाए ॥

ॐ हौं वैष्णव कृष्णा द्वितीयायां श्रीगार्ध्वजिन गर्भ धारिकाय वामादेव्यै अर्धं निर्णामीति साक्षा । (२३)

छंदमालती-मास अषाढ सुदी छठिके दिन, श्री जिन वीर प्रभु गुणधारी ।

त्रिशला माता गर्भ पधारे, सफल लोडको मंगलकारी ॥

मोक्षमहलकी है अधिकारी, ज्ञान सुयाकी भोगनहारी ।

जजूं मानके चरण युगलको, डरूं विघ्न होऊं अधिकारी ॥

ॐ हौं वापाढ शुक्ल पध्यां श्री गौ प्रभु गर्भ धारिकाय श्री त्रिवलादेव्यै अत्र निर्णामीति साक्षा । (२४)

जयमाल ।

छंद श्रिंगरी-धन्य हैं धन्य हैं मात जिननायकी, इन्द्र देवी करैं शक्ति भारवां यकी ।

पूजि हों द्रव्य ले विघ्न लारे टरूं, गर्भ कल्याण पूजन सकल अघ दलें ॥ १

रूपकी खान हैं शीलकी खान हैं, धर्मकी खान हैं ज्ञानकी खान हैं ।

पुण्यकी खान हैं, सुखकी खान हैं, तीर्थजजनी महा शानिकी खान हैं ॥ २ ॥

मेइ विज्ञानसे आप पर जानतीं, जैन सिद्धांतका मर्म पद्वषानती ।

आत्म-विज्ञानसे मोहको हानतीं, सत्य चारित्रसे सोझ पथ मानतीं ॥ ३ ॥

होग आहार नीहार नहिं धारतीं, धीर्धं असुपम महा देह विस्तारती ।

गर्भ तारण किये दुःख सब दालतीं, रूपको ज्ञानको वृद्धि कर डालतीं ॥ ४ ॥

मात चौधिस महामोक्ष अधिकारिणां, पुत्र जननीं जिनें मोक्षमें धारिणा ।

गर्भ कल्याणमें पूजते आपको, हो सकल यज्ञ यह छाड़ सन्नापको ॥ ५ ॥

बना त्रिपंगीछन्द-जय मंगलकारी मात हवारी बाधाहारो कर्धे हरो,

तुम गुण शुचिधारी हो अधिकारी, सम हम यम निज मांदि बरो ।

इस पूजे ष्यांघं संगल पाँघं, शक्ति बड़ाँघं दृष पाके,

जिन यज्ञ मनोहर शॉल सुधाकर, सफल करें तब गुण गाके ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विधति जिन मातृभ्यः अर्घं निर्गमाभीति स्वाहा ।

फिर इन्द्र व अन्य जो गन्धके पात्र नहां हों माना पिना घब खड़े हो विद्वमक्ति, चात्रिमक्ति व शातिभक्ति करें (जो पाठके अन्तमें हैं) और कायोर्वर्ग रूपमें १०८ देफे णमोकारमन्त्र जपकर मन्त्रापर पुष्प क्षेण करें तथा अन्य प्रतिमाओंपर जो प्रतिष्ठिके लिये हों पुष्प क्षेण करे-विषर्जन पठ इव सम्यकी पूजा समाप्त करें ।

(८) देवियोंका माताकी सेवा व प्रशोत्तर करना—तीनरे पहर या रात्रिको जब तबपरा हो तब फिर मण्डप नरनारियोंसे भरा जावे । परदेके भीतर दूधरे चबूतरेपर इन भाति दर्शनीय रचना रची जावे-एक विद्यामनपर माता बैठो हा, मन्त्रा वल्लसे बकी पाममें विराजित हो । आठ कुमारिभा देविमें तरुद २ सेग कर रही हों, आठ मंगल द्रव्य ए-५ और रखे हों, एक देवी तलपार लिये पंछे खड़ी हों, दा देविया दोनों गार चमक कर रही हों एक देवी पञ्जा लिये घारे २ पत्ता का रही हो, ए-५ अनादात्र लिये हो, एक झूलोका गुल्दत्ता, एक पनीकी शारो, एक माताके चरण दाबनो हो । ऐसी दशामें परदा लठे । पढ़ले ही सूत्रक पात्र यद्द वभालो कहि कि विष्णुमारिया माताकी सेवा कर रही हैं तथा तरुद २ के अक्षत करके माताको प्रणम कर रही हैं । जा पादा उठ जावे तय दो मिनट पछे दा चमर १ तलपार व २ पखेयाली इन चारो लोडकर शेष बार देविगो बापने द्वायकी वस्तु एक ओर रखकर बैठ जावे और नमनगार या कपनार मानासे प्रशोत्तर करे ।

प्रश्न १-दाहा-अरल उच छाया स्वस्थित, दृश नात्र कथा होय । कौन मनोहर अत्र मध, एक हाण्डर कथा होय ॥
उत्तर-माता-भालकामन-मर्थात् दोहा-बाल दृक्ष यत्र और सुन, केश मन्त्रिष सुख अंग ।

भालकामन वाक्यसे, उचय अर्पका अंग ॥

प्रश्न (२)-कः सुपिजरेखें रंछे, कः निष्ठुरा बाणि । कः आघार जीनका, कः अत्रा सुत जाणि ॥

इय देहे मा-पूरा कीजिये ।

मावा उ०-सुकुः सुपिजरेखें रंछे, काक निष्ठुरा बाणि । कः अन्वार जीवका, सुोक अस्तर सुग जाणि त
प्रश्न (२)-कौन गर्भमें आपके, कौन नहीं तुह पात्र । कौन हते सूत्रा मनुष उतरको अरात्रा ॥

उ० माता-तुक् अर्थात् पुत्र, सुक् अर्थात् शोक; रुक् अर्थात् रोग । दोहा-पुत्र द्वेषि सम गर्भमें, शोक नहीं सुप्त पात्र ।

रोग, हते सूत्रा मनुष, यही बात है खात्र ॥

प्रश्न (४)-दचिकर भोजन कौन है, गहराको जल पात्र । कौन नाथ है आपका, उतर कीजे जान ॥

उत्तर-रूप, भूप, अर्थात्-कृत्रिक भोजन बाल है, गहरा रूप बखान । भू न नाथ मेरा सही, देवी उत्तर जान ॥
 प्रश्न (५)-नाम जिनेंद्र बखानिये, हाथी लक्षण और । एक बाक्यमें अर्थ दो, कह दोजे बुधि खोल ॥
 उत्तर-सुखद अर्थात्-देवों को बर देत है प्रसु सुखरव बखान । सुन्दर शब्द सुखानको, धारक नाग प्रमाण ॥

- प्रश्न (६)-तुमसी त्रिया कौन जग आन । उता-माता-तीर्थकर सुन जने सखान ।
 प्रश्न (७)-जगमें सुभट कौनसे माय । उता-जे नर जीते-विषय कषाय ।
 प्रश्न (८)-कौन कहावे कायर हीन । उता-इन्द्रीमद मेहन बल हीन ।
 प्रश्न (९)-कौन भतपुरुष नर भय धार । उत्तर-जो मांघ पुरुषारथ धार ।
 प्रश्न (१०)-कौन कापुरुष कहिये मम । उता-जो जठ माघ न जाने धर्म ।
 प्रश्न (११)-धिक कौनकी कश्चिय मर्धग उत्तर-जे नर करें प्रतिष्ठा भङ्ग ।
 प्रश्न (१२)-कहे कौन नर नित्य पबित । उता-ब्रह्मवर्ध धरो दिड विस ।
 प्रश्न (१३)-कौन पशु मानुष आकार । उत्तर-जिनके हिरदे नाहि बिचार ।
 प्रश्न (१४)-यधिर कौनसे उत्तर देह । उता-जैन सिद्धान्त सुनै नहिं जेह ।
 प्रश्न (१५)-मूढ नाम नर कैसे लहे । उता-जा द्वित सांघ बचन नहिं कहे ।
 प्रश्न (१६)-लम्बी सुना कौन कर हीन । उता-जिन पूजा सुनि दान न कीन ।
 प्रश्न (१७)-कौन पांगले पाष समेन । उता-जे भीरथ परसे न भयेन ।
 प्रश्न (१८)-कौन कुरूप जनन कहु पृह । उत्तर-शाल शिंगार विना नर जेह ।
 प्रश्न (१९)-वेग कहा करिये बड़ राग । उता-दिशा प्रहण जगतको रपाग ।
 प्रश्न (२०)-जियको कौन शरण है माय । उता-पंच परम शुभ सखा सहाय ।
 प्रश्न (२१)-कौन तपस्वी भव-दुःख भरे । उता-आत्म अनुभव बिन तप करे ।
 प्रश्न (२२)-जगमें कौन रतन है सार । उता-सम्पददर्शन रतन अपार ।
 प्रश्न (२३)-को बिन नर यह पशु समान । उता-बिधा बिन नर पशु समान ।
 प्रश्न (२४)-उता-कौन हते त्रय जग बश होय । उता-मोह हते त्रय जग बश होय ।
 प्रश्न (२५)-क्या बिन गृहधारी दुख पाय । उता-पैसे बिन नित ही दुख पाय ।

- प्रश्न (२६)-नाम पुरुष कैसे सफलप्राय । उत्तर-जो पुरुषप्राय करे धनप्राय ।
 प्रश्न (२७)-कौन पुत्र है सुनक समान । उत्तर-विद्या विनय हीन सुत जान ।
 प्रश्न (२८)-काफी व्यक्ति करे सुख होय । उत्तर-श्री जिनराज भक्ति सुख होय ।
 प्रश्न (२९)-कासे नर जग उन्नति करे । उत्तर-धृया समय नहिं खोबे करे ।
 प्रश्न (३०)-प्रातः प्रथम क्या करिये माय । उत्तर-सामायिक शुभ ध्यान लगाय ।
 प्रश्न (३१)-कन्या कैसे स्मर गनाय । उत्तर-जो विद्या पढ़ विनय कराय ।
 प्रश्न (३२)-कौन समय कन्या घर जोग । उत्तर-जब युवति दृढ़ हो सुत जोग ।
 प्रश्न (३३)-कौन घर कन्या घर जोग । उत्तर-उद्योगी युवान दृढ़ योग ।
 प्रश्न (३४)-कौन नर ग्रह सुमति पढ़ाय । उत्तर-मिष्ट बचन भावी सुखदाय ।
 प्रश्न (३५)-कौन काज उत्तम है माय । उत्तर-आत्म ध्यान परम सुखदाय ।
 प्रश्न (३६)-कौन कथासे पाप नशाय । उत्तर-धर्म कथासे पाप नशाय ।
 प्रश्न (३७)-को व्यवहार धर्म सुखदाय । उत्तर-धर्म अहिंसा जग सुखदाय ।
 प्रश्न (३८)-कौन धनी जगमें सुख प्राय । उत्तर-मन्तोषी दानी सुखदाय ।
 प्रश्न (३९)-कौन माय जगको बश करे । उत्तर-हितमिष्ट मिष्ट बचन उच्चरे ।
 प्रश्न (४०)-कौन उपाये मन बदलाय । उत्तर-हितमिष्ट धर्म उपदेश सुनाय ।
 प्रश्न (४१)-कौन भांति प्रय लोक जिताय । उत्तर-शुद्धध्यान जो धरै स्वभाय ।
 प्रश्न (४२)-कौन करे अचिरतिका नाश । उत्तर-सम दम सहित समय अभ्यास ।
 प्रश्न (४३)-कौन उत्तरे कर्मन भार । उत्तर-जो द्वादश तप करै लम्भार ।
 प्रश्न (४४)-कौन ग्रही मनमें सुख प्राय । उत्तर-न्याय मार्गें धन जो कमाय ।
 प्रश्न (४५)-मात कौन रोगी नई होय । उत्तर-जो विवेकसे भोगो होय ।
 प्रश्न (४६)-संकट समय कौन सहकार । उत्तर-धैर्य धर्म मत तत्पर विचार ।
 प्रश्न (४७)-मरण समय क्या करिये काम । उत्तर-समना भाव शान्त परिणाम ।
 प्रश्न (४८)-मित्र कौन है जग हितकार । उत्तर-जो कुमार्गसे लेय निकार ।

प्रथम (४९)-कष्टु कौन है मात बताय । उत्तर-वर्ष छुड़ाय कुपथ ले जाय ।

प्रथम (५०)-शरण कौनकी है सुखकार । उत्तर-आत्म निज तीर्थकर मार ।

इसी तरह और भी उपयोगी प्रश्न का हो सकते हैं । पंछे पत्थिवाली जोरसे पत्था करे, पुण्यवाली कृष्ण सुवावे, अत्तावाली अत्तर सुवावे, व कपड़ोंमें लगावे, चक्कीवाली जोरसे चमा करे । इतनमें जाने बाहर बनें । इधर जगसे पहण्डेकी ताह रतनकी बयां हो । यदि रतन या धितारे या चांदी सोनेके कृष्ण रूप हो तो रगे हुए पंछे चावठ बायमें पिठाळे । दो मिन्ट नक नुव शर्वां हो तब पर लोम जयजयकार करे । पश्च त् देवियां माताके घामने बड़ी हो सुति पढ़े—

चौथाई-जय मात परम अतिकारी, देखत शमको सुख है भारी

तुम सेवार्ते पुण्य कमाया, अपना सुर भव सफल कराया ॥ १ ॥

घन तीर्थकर तीर्थे प्रचारे, मिथयदृष्टी जीव उबारें ।

आप तरें औनको तारे, धर्म जहाज जगन विस्तार ॥ २ ॥

निराको जनने हाना माना, यार्ते जग उद्वारी प्राणा ।

नीन लोक निरताजा माया, नमन करत तोरुं जगमाता ॥ ३ ॥

तू है श्री जिन गृष्ठ सुखकारी, जिन तीर्थकर उरमें भारी ।

यार्ते परम पूज्य सुखदाई, नमन करन पुन पुन हे माई ॥ ४ ॥

तुम शिवगामी उचन नारी, औलासूपण उत्तम भारी ।

श्री जिनमात कृपा अय करिये, सेतकके सव पात्रक हरिये ॥ ५ ॥

इस तरह देवियां गाती र्हे, पादा गिर जावे । यहितक गर्भ-लगण रुकी विधि पूर्ण हुई ।



अध्याय चौथा ।

जन्मबृहत्याणकम् ।

गर्भकल्याणकसे दूबरे दिन भवेरे जन्मकल्याणककी क्रिया करानी उचित है ।

(१) प्रसुता जन्म होना व इन्द्रका ज्ञाना—बड़े सवेर ही सब लगेको आम्रण किया जावे, टिकटों द्वारा मंडपमें बैठें । प्रतिष्ठाके पात्र रात्र ही बैठेके निकट आवे । खास कर आचार्य व इन्द्र तथा पिता आक्षर गर्भकल्याणकमें कही हुई विधिक अनुष्ठान जैसा न० (५) में कहा है अगबुद्धि, व एकलीकरण करे, अमरक्षा करे व अभियेक करके नित्यपूजा व सिद्धपूजा करे । फिर उन्नी प्रमाण तीनों कुण्डोंमें होम उषी तगह कहे हुए प्रमाण हो जावे । यह सब काम हो चुकनेपर फिर अगेकी क्रिया बताते हैं ।

अति प्रातःकालसे यह काम शुरू हूा क्योंकि जबतक जन्मकल्याणक पूर्ण न हो तबतक सब पात्रोंको व दर्शकोंको यथाशक्ति भोजन न करना योग्य है । तब सब इन्द्र इन्द्राणी बहासे चले जावें, आचार्य व माता पिता आदि रहें । आगे पादा पड़ जावे । परदेके भीतर सिद्धासनपर माता बंठी हो, पासमें प्रतिमा बह्मित मजूबा विराजमान हो व आठ मंगलद्रव्य रखे हो व आठो देविषा सेवामें हाजिर हो । ऐसा प्रबन्ध किया जावे कि बाहर खूब बाजे बजे, घण्टा बडियालमें नजनेका प्रबन्ध हो तथा बाहर इन्द्र अपनी सेना तैयार करे । भवनवासीके दृष्ट, अन्तरके आठ, कल्पयासीके बाहर व ज्योतिषीके एक ऐसे कुल इन्द्र ३१ है । ३१ सब इन्द्र जखर बने जो शुद्ध घोती दुपहा पीछा पहने हों, मुकुट लगाए हों । यदि ३१ प्रत्येन्द्र और हो सके तो वे भी वन जावें । २७ इन्द्रोंके व प्रत्येन्द्रोंके मुकुटोंपर सबके जातिवाचक नाम अंकित हो सके तो बराए जावें । इनका प्रयोजन ऐसा कि दर्शकोंका शोभनिक विदित हो । वे नाम ऐसे रहें—(१) असुरेन्द्र (२) नागेन्द्र (३) विद्युतेन्द्र (४) सुपर्णेन्द्र (५) अग्नेन्द्र (६) वातेन्द्र (७) स्तनितेन्द्र (८) उदधीन्द्र (९) द्वीपेन्द्र (१०) दिगिन्द्र (११) किजरेन्द्र (१२) कि पुरुषेन्द्र (१३) महारगेन्द्र (१४) गन्वर्णेन्द्र (१५) यक्षेन्द्र (१६) राक्षसेन्द्र (१७) सूर्येन्द्र (१८) पिशाचेन्द्र (१९) चन्द्रेन्द्र (२०) सौवर्णेन्द्र (२१) ईशानेन्द्र (२२) शान्तिकुमारेन्द्र (२३) माहेन्द्रेन्द्र (२४) ब्रह्मेन्द्र (२५) ज्ञान्तिकेन्द्र (२६) शुक्रेन्द्र (२७) शनारेन्द्र (२८) आलतेन्द्र (२९) प्राणतेन्द्र (३०) आरणेन्द्र (३१) अच्युतेन्द्र । यदि प्रत्येन्द्र बने ता इन्द्रके स्थानमें इसके आगे प्रत्येन्द्र जोड़ा जावे जैसे असुर प्रत्येन्द्र, चन्द्रका प्रत्येन्द्र स्वर्य है ।

ऐरावत हाथीके समान हाथीपर इद्राणी बह्मित सौधर्म, ईशान, सनतकुमार, माहेन्द्र ये चार इन्द्र बैठे हों । अन्य इन्द्र दूबरे बाहनोपर बैठ सकते हैं, जैसे घोड़े बैल आदि पर सब सजे हुए हों । इन्द्रकी सेना ७ प्रकारकी होती है—हाथी, घोड़े, रथ, गंधर्व, नृत्य-कारिणी, अम्भराण, गंधर्व और वृषभ । यथासमय ये सामान एकत्र किया जाय । मण्डपकी कुल दूरीसे यह सुलभ निकल चुके व बाजे गालेके साथ मण्डपकी तरफ आ रहा हो, साथमें नरनागी भी हो, इधर मण्डपमें दूबरे चकूतरे पर नित्य पूजा व होमके पछे जत्र परदेके भीतर सब सामान एकत्र हो जावे और बाजे बजते हों, घण्टा बडियाल बजते हों और ध्वज पात्र अपने २ हाथोंमें पुष्प ले लेवे, तथा भगवानके विराजमान करनेका एक भद्रासन ऊँचा विराजमान हो जहासे भगवान सबको दीख सकें । इध आसनको नीचे लिखा

मन्त्र पढ़ पवित्र करें। “ॐ हा हीं ह्रूं हः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रजकेन श्री पंठप्रक्षालन इरोमि स्वाहा” जल्के छोटि देखे। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ तत्र पर श्री लिखे—“ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं श्लेखन करोमि स्वाहा” अब परदा उठावा जावे तत्र यकायक आचार्य कायोविधि ध्यान कर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ प्रतिमाकी भद्रापन पर विराजमान करे।

“ॐ ह्रीं त्रलोकयोद्धरणधीर जिनेन्द्र मद्रापने उववेशयामि स्वाहा।” इह समय षट् नरनारी चारों तरफ जय जय नद नद शब्द कहें व खुस बाजे बजें। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुष्प प्रतिमा पर क्षेपे। “ॐ हां हीं ह्रूं ह्रीं श्रीं विद्वचक्राधिपत्ये अष्टगुणसुधाय फट् स्वाहा” तथा यदि और प्रतिमा प्रतिष्ठाकी हों तो उनपर भी क्षेपण करें। फिर आचार्य नीचेके श्लोक पढ़ें—
देव त्वरय्य जाते त्रिभुवनमखिलं नाथ जातं सनाथं।

जातो सूर्तीय धर्मः कुञ्जतबहुतमो ध्वस्तमयेव जातम् ॥
स्वर्भक्षिद्वाः कृपाटं फुटमिह निगृहं नाथ पुण्याहमाशी।

जातं लोकप्रचक्षुर्ध्रैय जय भगवत्जीव गर्धस्थ नंद ॥ ७ ॥
तथा भाषामें स्तुति पढ़ें।

चौपाई-धन्य नाथ तुम आज प्रकाशे। तीन भवन जन अब हुआसे ॥
धर्म तीर्थ मानो उपजाया। कुमति मार्गीका ध्वंश कराया ॥
भोक्ष द्वार पट अब उघड़ाए। जीबो बघोरि नाथ स्वमाए ॥

इतना पढ़ फिर मूल प्रतिमापर व अन्य पर पुष्प क्षेपे। इधर मगल पाठ पढ़ा जाता हो कि इन्द्रकी सेना आकर पहुँचे तथा मण्डपकी तीन प्रदक्षिणा देखे। सर्व चमाल बाहर खड़ा हो—(जो इन्द्र बने हों उनको विशेष टिकट दिया जावे) बिना टिकट कोई भीतर प्रवेश न कर सके। तब इन्द्र इन्द्राणी हाथीसे उतरे और इन्द्र इन्द्राणीसे कहे—

दोहा-देवी जाहु मसूति घर, लायो तीर्थ कुमार। माता कष्ट न होय कछु, राखो यही विचार।
मात्र इन्द्राणी भीतर चबूतरेपर आवे, इन्द्र बाहर रहे। प्रतिमाजीके पाप उच समय माता हो व देविया हों व आचार्य हो तथा और कोई न हो। इन्द्राणी विनय प्रहित जाकर पहले कुल देर तीर्थकर व माताका दर्शन करे फिर तीर्थकारकी मूर्तिकी व माताकी तीन प्रदक्षिणा देकर पहले मूर्तिको नमस्कार करे फिर बायने खड़ी होकर स्तुति पढ़े।

चौपाई-धन धन मात परम सुखकारी, तीन लोक जननी हितकारी।

मंगलकारी पुण्यवती तू, पुत्रवती शुचि ज्ञानमनी तू ॥

तब दर्शनते हम सुख पाए, हर्ष हृदयमें नाहिं समाए ।

घन्य जन्म माता हम जाना, देख तुझे अर श्री भगवाना ॥

रुति कारनेके पीछे कुछ देर विनयसे खड़ी रहे । इतनेमें माताको नींदशी आजानि तज एक चारियलको फपड़ेसे ढका हुआ जो बधा रक्खा है पहलेसे ही उभको उब भद्रासनपर रखकर और भगवानको दोनों हाथोंसे उठाके और नार २ देखतार प्रपन्न हो और अपना मस्तक नमावे, तब आठौं देविया आठ मंगल द्रव्य हाथमें लेकर आगे २ चले—(मंगल द्रव्य—छत्र, धनजा, कलश, चमर, ठोथा (सुप्रतिष्ठ), भारी, दर्पण, पखा (ताड़का) । माता बड़ी विनयसे भगवानको ले जा रही हैं, जब नमारी खड़े हो जाते हैं और चादी मोनेके पुष्प या रंगे हुए चावलकी वृष्टि प्रभुपर करते हैं जो नगरियोंको अपने पाँच पहलेस रखने चाहिये । मण्डपके बाहर प्रभु इन्द्रोके आगे बीवर्षे इन्द्र राह देख रहा है । इन्द्राणी जाकर इन्द्रके दोनों हाथोंकी हथेलीपर भगवानको विगामान कर देती है, तब इन्द्र बड़े भावसे भगवा-नका स्वरूप देखता है । जिन समय इन्द्राणी प्रतिभाजीको ले जावे उब समय धाचार्य अन्य प्रतिष्ठायोग्य मतिथीपर भी पुष्प क्षेपण करे । फिर इन्द्र नीचे प्रकार रतुति पठता है, बब समाज रुप है । मण्डपसे नरनारी भी धीरे २ आ जाते हैं और जलधर्म शरीक होजाते हैं ।

पद्मही छन्द—तुम जगग ज्योति तुष जगत ईश, तुम जगत गुरु जग जगत शीस ॥

तुम केवलज्ञान प्रकाशकार, तुम ही सूरज तप्त मोहरार ।

तुम देखे मन्थ कमल कुन्दाय, अब अमर तुरत तर्से पलाय ॥ १ ॥

जय महा गुरु जय विश्वज्ञान, जय गुणसमुद्र करुणालिधाज ॥ २ ॥

जो चरण कमल माथे धराय, बह मन्थ तुरत सद्ज्ञान पाय ।

हे नाथ ! मुक्ति लक्ष्मी आधार, तुझको देखत है प्रेम धार ॥ ३ ॥

कुलकुन्ध भए हम दर्श पाय, हम हर्ष नहीं चित्तमें सभाय ।

हम जन्म सफल मानो आधार, तुमको परशो हे अब उचार ॥ ४ ॥

इस तरह श्रुति पढ़के मस्तक नमावे तब गर्भ इन्द्रादिक देव जय जय शब्द करे थ मस्तक नमावे, तब इन्द्र उच्च स्वरसे आह्ला करे, हाथ ऊँचा कर कहे—“हे देवगणों ! श्री तीर्थंकर महाराजकी भक्तिमें आनन्द मनाते हुए, जय जयकार शब्द कहते हुए, मंगल गीत गाते हुए, भगवानके गुणोंमें अट्टरागी होते हुए, भाव क्रम व नियमसे चलते हुए शीघ्र ही सुमेरु पर्वतपर पधारो और क्षीरसागरके पवित्र जलसे प्रभुका पाण्डुक शिलापर अभिषेक करके अपने जन्मको सुचारो ।” इतना कह इन्द्र इन्द्राणी ऐरावत हाथीपर चढ़ जाते हैं । भगवान् बीवर्षे इन्द्रकी गोदमें हैं, ईशान इन्द्र पीछे बैठे छत्र धरफेद किये हुए हैं । जनतकुमार और माहेन्द्र इन्द्र दोनों ओर खड़े होकर चमर ढार रहे हैं । इध तर्ह जलधर्म नियमके साथ १ घण्टेके भीतर सुमेरु पर्वतपर पहुच जावे ।

(२) सुमेरु पर्वतकी, क्षीर समुद्रकी तथा मंडपकी रचना—सुहृद मंडपसे उत्तरदिशाकी ओर किसी एकान्त स्थानमें जो पवित्र हो, सुमेरु पर्वत बनाया जावे। जो तीन कटनीदार सुन्दर हो उसको सुवर्णमई पीतरगसे पोता जावे। ऊपर जानेके लिये दो तरफ सीढियाँ हों। ऊपर बीचमें ऐसा एक गड्ढा किया जावे कि भगवानके नद्वयनका जल भीतरसे जाकर जमीनके भीतर ही चला जावे, ऊपरसे गिरकर वहे नहीं कि पैरोंमें आवे। सबके ऊपर पाहृक्कशिखा अर्धचन्द्राकार बनाई जावे जो षफेद रगसे पुती हो, स्फटिकके समान चमकती हो। इसके ऊपर कमलाकार विहासन बने जो पीतरगका हो। उसके इधर उधर इन्द्रोंके तबड़े होनेके दो कुल लुचे आपन हो जो विहासनसे नीचे हों। सीढियोंको छोड़कर कटनीके षड तरफ छोटे २ वृक्षोंके नादे सुन्दरनाके लिये रखे जायें ३ १६ मदिरीके स्थानमें १६ मदिरीके आकार ४ नीचे भूमिपर चारों ओर, चार चार चारों ओर तीन कटनीके वहा बना दिये जायें। यह त्रिविन् रगोंसे पुते हुए हों जिससे प्रगट हो कि मेरुके चारों बनोंमें १६ मदिरे हैं। इध पर्वतसे इतनी दूर पितनी दूर दो पत्तियोंसे इन्द्र या देव खड़े होकर हाथोहाथ कलश लावके, एक नहर क्षीरमुद्रके स्थापनमें बनाई जावे, जिसमें नद्वयन होनेके पहले शुद्ध दूधसे मित्रा हुआ पानी भर दिया जावे जिसमें लहरे आती हों ३ पानों दूध समान तीखे। धूर्णके बचाव आदिके निमित्त मण्डप ऊपर छा दिया जावे ताकि षड समूह मण्डपके भीतर आजावे। पर्वत भी उसीके नीचे रहे। १०८ कलश १ १ कलश गन्धोदकका ऐसे १०९, गुर्ण, चारी या अन्य वातुके एकसे तैयार रहें। यदि वातुके न हों तो मिट्टीके ही लिये जावें। ये षड षडश सोत्तर उभ नहरके दो तरफ ५४, ५४ रख दिये जावें, उनमें धायिया किया जावे, ढकनेको कलका पुष्प हो या कोई पत्ता हो या नारियल हो या सुन्दर रत्नवादी। कलशोंके स्थापनके समय “ॐ ह्रीं सरय्ये कलशस्थापन करोमि स्वाहा।” यह मंत्र पढ़े। गन्धोदकके कलशमें चन्दन, केसर, अगर आदि सुगन्धित द्रव्योंसे मित्रा हुआ जल भरा जावे। ये १०८ कलश खाली रखे रहें। सामप्रो तैयार की जावे तथा एक संज्ञो को हां या तल-तपर २४ कोठोंका मण्डल तैयार किया जावे। भगवानके पहुचनेके पहले ही आचार्य ‘नीरजसे नम’ इध मंत्रसे षड भूमिको शुद्ध कर आवे। यहापर दर्शकोंके बैठनेका स्थान नियत किया जावे। पूजा ३ अभिषेकका स्थान अलग २ किया जावे। पर्वतसे नहर तरफका मार्ग जानेका बाफ रक्खा जावे। बैठनेवाले इधसे हटकर बैठे। चारों तरफ पर्वतके कुल भूमि छोड़कर दर्शक बैठें।

(३) तीर्थकर भगवानका अभिषेक—अभिषेकके समय आठ दिक्पाठ—अग्नि, यम, नैऋत्य, वरुण, पवन, रुवेर, ईशान और धरणेद्र आठ दिशाओंमें सुन्दर लड़ी लिये हुए मण्डपमें खड़े रहें, इन पर भी मुकुट हो। ऐगद्यत हाथी चढित सर्व समूह पहले इध पर्वतकी तीन प्रदक्षिणा देखे। जिव विहासन पर भगवान विराजमान होंगे तबको नाचे लिये मंत्रसे जलके छंटे देकर पवित्र करे।

“ॐ ह्रीं ह्रीं ह्र ह्रीं ह्र नमोह्रते भगवते श्रीमते पवित्रजलेन पीठप्रच्छालन करोमि स्वाहा।” फिर तबपर नाचे लिसा मंत्र पठ श्री लिखें। “ॐ ह्रीं श्रीं अहं श्रीलेखन करोमि स्वाहा।” तीन प्रदक्षिणा देनेके पीछे श्री भगवानको हाथीसे उतार कर इद्र नीचे लिखा मन्त्र पठ कर विहासन पर विराजमान करे, षड जय जय शब्द कहें।

“ॐ ह्रीं ह्र श्रीं बर्मतीर्थाविनायभगवन्निहपांडुकुशिलापंठे तिष्ठ तित्थिति स्वाहा।” फिर नाचे लिखा मन्त्र पढ़ प्रतिमाको स्पर्श करे।

ॐ उग्रहाय दिव्यदेहाय सज्जोजादाय महत्पण्णाय अणतचतुष्टयाय परमसुहृदैष्ट्याय णिमलाय प्रयमुषि अजरामरपरमपदपत्ताय परमपदाय मम इत्यवि षण्णिदिदाय स्वाहा । फिर शीघ्रमे व ईशान इन्द्र प्रतिमाके दोनों तरफ खड़े हो जाँव और ऊपर कोई न रहे, आचार्य भी नीचे आ जावे । क्षीर समुद्र तक दोनों ओर पक्तित्रन्ध सीढीसे लेकर इन्द्रगण एक एक इतनेर दूर खड़े हों कि कलशको हाथोहाथ दे सके । नहरके पाच ५४-५४ कलश रखे हों, एक एक कलश भरके व टकके एकर दूधरेको देता जावे । कलश दोनों इन्द्रोंके हाथमें थावे तब मगलीक मनोहर वाचे नजने लें, लिया मगल पढ़ने लगे । जय जय शब्द होवे । ऊँचा द्वाय करके शीघ्रमे व ईशान इन्द्र न्हयन करे । न्हयनका जल नीचे न थावे, पिरापनसे नीचे जाकर मेरुके भीतर चला जावे । एक दो वर्तन पात्र रख दिये जावे । जो भरते जाँव । न्हयन शुरू करनेके पहले आचार्य नीचे खड़े हुए यह मन्त्र पढ़े—

“ॐ क्षीरसमुद्रारिपुरितेन मणिमयमगलऋजोऽन भगवदहर्त्त प्रतिकृति स्थापयामः ॐ श्री ह्रीं ह्र व म ह्र स त प ह्रीं ह्रीं ह्र वः नमोर्हिते स्वाहा ।” यह मन्त्र बराबर पढ़ना रहे जब तक १०८ कलशका न्हयन न हो जावे । दोनों इन्द्र बराबर न्हयन कराके एक एक भाई नीचेकी कटनीपर दोनों ओर खडा रहे जो खाली कलशोंको इन्द्रोंके हाथसे लेकर न चले रखाता जावे । उधीको वर नारिगल व टकना भी इन्द्र न्हयन वरनेके पहले दे दे-जितने इन्द्र पक्ति बाधकर नहर तक खड़े हों । जब वहाँके सन कलश उठाकर एक एक ही हारएन्के हाथमें रह जावे तब शीघ्रमे ईशान इन्द्र नाचे आ जावें और नारी वारीसे एकर इन्द्र चढकर स्नान करावे और नीचे आ जावे । इस तरह १०८ कलशका स्नान पूर्ण हो जावे । जिन समय बड़े धूमायनमें वृष भो खेरे जाती हो जिनकी सुगन्ध सन और फैले । फिर शीघ्रमे इन्द्र ऊपर जाता है और गन्दोदकके कलशसे अभिषेक करता है । उद्य समय आचार्य वही मन्त्र पढ़ते है परन्तु “क्षीरत्समुद्रवारिपरिपूरितेन” के स्थानमें गन्धोदकपुरितेन इतना बदल देते है । फिर इन्द्र भगवानके ऊपर खच्छ स्नानकी धारा डालता है तब गतिपाठ सब इन्द्र पढ़ते है—

दोषकृत्सन्-शान्तिजिनं श्रुतिनिर्भलसक्त्वं श्रीलशुणव्रत्संघमपात्रम् । अष्टशताच्चिन्मलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तमस्तु जनेत्रम् ॥

पञ्चमशीर्षितचक्रपराणां पुजितसिन्द्रनरेन्द्रगणेश्व । शान्तिकं गणशान्तिवसुभीषुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥

दिव्यतरुः सुप्रपुष्पदृष्टिदुर्भुमिगहनशो जनघोषी । आलापनारणचाभयुग्मे यस्य विभ्रति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥

ते जगद्विचिन्थान्विजिनेन्द्र शान्तिकं शिरसा प्रणमामि । सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं सन्नमं पठते परमां च ॥४॥

नसन्तलिका—येऽभ्यन्विता मुकुटकुण्डलहारस्तैः, यत्क्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्मभिः ।

ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपारतीयैः रुपाः सततशान्तिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥

ऋद्रवजा-संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यरूपोधनानाम् ।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥

तारावृत्तम्—क्षेमं सर्वप्रजाणां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः ।

काले काले च सम्यग्दर्पतु अथवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां, मासभ्रूलीषलोकै ।

जेनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप—प्रध्वस्तवातिरुर्जाणः केवलज्ञानभारकराः कुर्वन्तु जगत्: शान्तिं धृषमायाः त्रिनेश्वराः ॥ ८ ॥

किं नीचे त्रिडा श्लोक आचार्य पढ़े ।

“यो नैर्मत्पयुगादिभृषिगन्तुर्दीप्त्या मलेनोर्जना । युक्तश्चालपत्रयकायुगनिर्गं मन्त्रश्च सुक्तिश्रिया ॥

नार्यसास्य जगत्प्रभो स्वामतः किं त्वापुमेवानुगुणा । निन्द्राद्यंभिमिक्त एव भगवान्पात्रदपागालिभः ।

शान्तिं च शान्तिं विजयं विवृतिं तुष्टिं च पुष्टिं -दलस्य जन्तो ।

दीर्घायुर्गन्धमनीष्टसिद्धिं कुयाञ्जिनस्तानजलप्रपातः ।

यह मंत्र पढ़कर मस्तकपर लगाने ।

निर्मलं निर्मलं तरणं पापनं पापनाशनं, जिनगन्धोदकं वन्दे, अष्टकर्मविनाशान्म् ॥

अथवा नीचेका श्लोक पढ गन्धोदक लगावे ।

वातिनामविधा, त्वा विपुलश्रीः वयस्योनिषो । देवस्यास्य पवित्रगामकलनाहसूलं शिबिं अगलं ।

कुर्वाद् अथ अर्धादिवाचनसं ह्रसोश्चन्द्रसोफर- प्रोषद्वर्मलक्षामिधर्मनमिडं तद्गुण्यगन्धोदकम् ॥ ७ ॥

किं २ वडे ग्वाश्रीं गन्धोदक लगा जाय । दो रथाप प्राशुक जडसे धरे हो । एक गन्धोदक थ एक पानीका ग्याय क्रियोमें किती अन्धा द्वारा व ? गन्धोदक व ? गनीका ग्वाव पुठयोमें किती पुठय द्वारा येना जावे । ऊपरसे योदावा गन्धोदक लेकर नीचे आचार्य श्रादि हव इन्द्र पूजाके पात्र लगाकर जन्म भक्त करे । इन्द्र नीचे आचार्य और इन्द्राणी जाकर पण्डे मगधानके अगमें देशर चन्दनका लेय करे, मस्तकमे मुकुट धारे, निळक लगवे, कणौम तुगडड, गलेमें शार, मुजामे मालूमव, हाथोंमें मंडे, जपामे मन्वनी, कर्णोंमें मृदुल, शुद्ध सुन्दर वती व कण्ठे पढ़नावे । पढेह ही एत देवी इन वलाभूर्गोको द्विये रूप इन्द्राणोने पाए पढेवे । अन्य हव इन्द्रादि क्त नावे । इन्द्राणी भी नीचे आचार्यमें-वैठ जावे, मात्र चौवर्म इन्द्र वड़े होकरा नीचेकी म्बुनि पढ़े—

स्तुति ।

स्वं देव ! शीतरागोऽसि नार्थः स्ताननिवृत्ते । तथापि अस्तिवशागः सग्रीमि कनिचिरपदैः ॥ ७७४ ॥

मङ्गलं शरण लोकोत्तमीऽहं जिनराज जिनः । सिद्ध आचार्यनमस्सुख्यः साधुः साधुनितामहः ॥ ७७५ ॥

पाश्र्वः पापहरोऽधीशो निःकषाधो गुणाग्रणी । पावनं परमं उच्योतिः परमेष्टी सनातनः ॥ ७७६ ॥
 अन्वक्तो वद्यक्तमूर्तिसमस्यलक्षयो लक्षणातिगः । सुलक्ष्म्यो लक्षणज्ञेय पापशत्रुकदारधीः ॥ ७७७ ॥
 प्रणोनाथः प्रमाणात्मा सुनयो नयतन्वचित् । प्रणधिः प्रणयो नाथो ज्ञानदर्शननायकः ॥ ७७८ ॥
 पुराणपुरुषोऽहायरूपो रूपान्तिगो सहान् । कासहा कसनो कान्धः काशगामी क्लान्निधिः ॥ ७७९ ॥
 अन्नः काशयित्वा कान्तः कान्तनातीलकासुकः । कालुष्यहंता कामारि कोपावेशहरो हरः ॥ ७८० ॥
 म्बधंश्रुर्विचिरुस्साहधौरः सुकृतभावनः । स्रष्टा भूतपतिः त्वाक्षी त्रैलोक्यपरमेश्वरः ॥ ७८१ ॥
 प्रभृष्टुणरधिदेवान्ता विश्वराड् विश्वतोमुखः । विश्वयोनिर्जिष्णुरीशः संचदः पुण्यनायकः ॥ ७८२ ॥
 धर्मोद्युवासे धर्मज्ञो वेदविद् वदगोवर । भव्यमानुसंख्येष्टस्यं ति ब्रह्मपदेश्वरः ॥ ७८३ ॥
 भृष्टुः स्थिरतरः रथाणुमचलो विमलो विभुः । महीमान् जातिस्त्रकारः कृतकृत्यो भरस्पतिः ॥ ७८४ ॥
 धारमी पाचस्पतिः प्राज्ञो गुणरत्नाकरो निधिः । शास्ता सर्वज्ञ ईशानः आशः सर्वत्रलोचनः ॥ ७८५ ॥
 कूटस्थो निर्विकारोऽस्तिनास्त्रबाह्यगिरांपतिः । स्याद्वादनयको नेता मोक्षमर्गोपदेशकः ॥ ७८६ ॥
 निरीहः सुगतो भास्वान् लोकालोकविभाषसुः । अनन्तगुणरंपुत्रयो नित्यमज्ञोऽसि विश्वराड् ॥ ७८७ ॥
 एवमष्टोत्तरशां नाम्नां पालु मां अबलम्बनात् । मोचय स्यात्समसंभृतिं देहि देहि महेश्वर ॥ ७८८ ॥

फिर भाषामें स्तुति पढ़े—

पदरी छन्द—जग वीतराग हत राग दोष, राषत दर्शन क्षाधिक अदोष ।

तुम पाप हरण हो निःकषाध, पावन परमेष्टी गुण निकाय ॥ १ ॥

तुम नय प्रमाण ज्ञाता अज्ञोष, श्रुतज्ञान सकल जानो विशेष ।

तुम अयधिज्ञान धारी विशाल, मति ज्ञान धरण सुखकर कृपाल ॥ २ ॥

तुम काम रहित हो काम जील, तुम विद्यानिधि हो कर्म जीत ।

तुम शांत स्यभाधी स्वयं बुद्ध, तुम कृष्णानिधि धर्मी अक्रुद्ध ॥ ३ ॥

तुम बदतांश्वर कृतकृत ईश, बाह्यस्पति गुणनिधि गिरा ईश ।

तुम मोक्षमार्गी उपदेशकार, महिमा तुमरी को लहे पार ॥ ४ ॥

देहा—नाम लिये श्रुतिके किये, पातक सर्व पलाय । मंगल होवे लोकमें, स्यात्समभृति प्रगटाय ॥

फिा इन्द्र मण्डलकी पूजा करे । पहले नीचे प्रमाण करे—

यस्योदारदयस्य जन्महरतो, जन्माभिवेकोत्सवं । चारी मेरुमहीधरस्य शिखरे दुर्गवैस्तुदुग्धोदवेः ॥
 चक्रे शक्रगणो महागुणनिधेः श्रीपादपद्मद्वयं । तस्यैकादशधा महेन महतसाराधयमाराराधये ॥८॥
 ॐ ह्रीं श्रीरिषमजिनेन्द्र अत्रावतर २ स्रवौषट् आह्वानम् । अत्र तिष्ठ २ ठः ०. स्थापनम् । अत्र मम बन्दिहो ममभव यषट् बन्दिधिकरणम् ।
 यत्रगाधविशालनिर्मलगुणे लोकत्रयं सर्वदा । सालोकं प्रतिविवितां प्रविशतां हिस्यमृतानन्दनम् ॥
 सर्वाब्जानिमिषारसपद्मं स्तुतिगतं तापापहं धीमता-महत्तीर्थमपूर्वमक्षयस्त्रिहं पार्धारथा धारये ॥ १ ॥
 ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तानन्तब्रह्मणश्चक्रे जलं निर्वापीति स्वाहा ॥

गन्धश्चन्दगन्धश्च-धुरतरो यद्विषयेतोद्भवो, गन्धर्वाद्यमरसुतो विजयते गन्धातरं दर्शनम् ।
 गन्धादीनिखिलानवैति पिजलं गन्धादिसुक्तोऽपि य-सं गन्धाद्यगन्धसाम्राज्यहृतये गन्धेन संपूजये ॥
 ॐ ह्रीं परमपद्मजमौगन्धयन्धुगय गन्धं निर्वापीति स्वाहा ।

इन्द्राहीन्द्रमसचितैरुपमैर्हृद्वैर्बलक्षय्यतैः, यस्य श्री पदसन्नखेन्दुपविधे गङ्गाजालाधितम् ।
 ज्ञानं यस्य राजस्रसक्षतमश्रुद्धीर्थं सुखं दर्शनम्, चाभ्यङ्ग्यक्षममरुपदे जिनमिभं सूक्ष्माक्षतैरक्षतैः ॥

यस्य हृदययोजने सदसि जद्गन्धाभिः स्वोपमा-नप्यर्पान्मुपनोगणान्मुपनसो वपति विश्ववसदा ।
 यः सिद्धिं सुमनः सुखं सुमनसा सं ध्यायतामावाह-सं देवं सुमनोऽखैश्च सुमनोभेदः समभ्यर्चये ॥
 ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे समनःसुखमदाय पुण्यं निर्वापीति स्वाहा ।

यद्वाधाधविचजित निरुपसं स्याद्योऽन्यस्युचितं, नित्यानन्दसुखेन तेन लभते यस्तुसिमात्यंतिकीम् ।
 यं चाराधय सुभाशिनो ननु सुधास्वाहं लभंते चिरम्, तस्योद्यद्मत्वारुणैश्च बहणा श्रीपादसाराधये ॥
 ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तानन्तसुखंस्वताप चक्रे निर्वापीति स्वाहा ।

स्वस्थान्यस्य सहस्रकाशान्विधौ दीपोपयोऽप्यनन्वहं, यः सर्वं उबलघनन्तकिरणैस्त्रैलोक्यदीपोस्त्यतः ।
 येनोद्दीपितधर्मतीर्थमद्यत्सत्यं विभोस्तस्य स्व-दीप्यादीपितदिडसुखस्य चरणौ दीपैः समुदीपये ॥
 ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तदर्शनाय दीपं निर्वापीति स्वाहा ।

येनेदं सुवनत्रयं चिरमश्रुदुद्रूपित सोप्यहो, मोहो येन सुधूपितो निजमहोध्यानाग्निना निर्दयम् ।

पदं धूपये ॥

यस्यास्थानपदस्थधूपघटजैधूमज्जगद्धूपितम्, धूपैस्तस्य जगद्धशीकरणसद्रूपैः पदं धूपये ॥
 ॐ ह्रीं पामत्राणो वसोक्तत्रलोकनाथाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

यत्प्रत्यया फलदायि पुण्यसुखित पुण्यं न चं यध्यते, पापं नैव फलप्रदं किमपि नो पापं न चं प्राप्यते ॥
 यदुत्तयं फलप्रदसुखं शिवसुखं नित्यं फलं लभ्यते, पादौ तस्य फलोत्तमादिमुफलैः अयः पदाघार्चये ॥

आहुतयं फलप्रदसुखं शिवसुखं नित्यं फलं लभ्यते, पादौ तस्य फलोत्तमादिमुफलैः साधुभिः ।
 ॐ ह्रीं धामत्राणो अशोष्टफलादाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

संगं लाति मलं च गालयति यन्मुख्यं ततो संगलं, देवोऽहंभृवमंगलोऽभिखिन्तुस्तैर्धनैः साधुभिः ।
 चञ्चचाभरगालघृन्तसुकुरैर्मुख्येनरैर्मंगल-सुखं मङ्गलमिच्छसुगुणान्स्वप्नाप्तुमारारुध्यते ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ऐं अं नमोऽहंभृवमंगलप्रदव्याजं गुणोऽहंभृवमंगलैः नमः परम मंगलैः स्वाहा ।
 यद्वा मालद्वयोर्मैसे किञ्चोको लेकर उतारे व रक्खे ।

इत्यलितमङ्गलोलोकलोकोत्तरश्री-कलितललितसूतं कीर्तितेन्द्रैर्जनीन्द्रैः ।
 जिनवर्ष तथ पादोपांततः पातयामः, शयद्वयशमनार्थमर्थतः शांतिघाम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं ह्रीं ऐं अं आहंत इदं शातिघामा गुणोऽहंभृवमंगलैः नमः भद्र भवतु जगता शातिघारां नि पातयामि शातिक्रम्यः स्वाहा ।
 यद्वा जलकी तीन घाग देवे ।

पुष्पेबोरिषदो वर्यं पुनरिद्ध पुष्पेषु निःशेषकम्, निष्पीतानि अयुत्रनैवैशमिदं निष्पापसंसेवितम् ॥
 इत्यालोच्य नमस्कृत्यास्य सद्भिरयाशाश्रयनीकते, निष्पीतगखिलतत्त्वपादकमले पुष्पाणि निःपापये ॥

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ऐं अं आहंत इदं पुष्पाजलिगर्चनं गुणोऽहंभृवमंगलैः नमोऽहंभृवमंगलैः नमः भद्र भवतु जगता शातिघारां नि पातयामि शातिक्रम्यः स्वाहा ।
 यद्वा पुष्पोंकी अजली देवे । फि/ मण्डलमें स्थापित २ ४ जन तिथियोंओ स्मरण कर २ ४ तीर्थजाकी पूजा करे ।

जिन नाथ चौविस्व चाण पूजा करत हस उभगाय, जग जन्म लेके जग उधारी जके इम चित लाय ।
 तिन जन्म फलखाणक सु उतरसब इन्द्र लाय सुकीन, हस हू सुमर ता अमयको पूजत धिये शुचि कीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीं शत्रभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थकता, जन्मस्वखाणकप्राप्ता, अत्र अमतर २ धवीषट् आह्वानम् । अत्र तिष्ठ
 तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम वनिहितो मत्र म वषट् वनिधीकरणम् ।
 छन्द चाली-जल निर्मल धार कटोरो, पूजूं जिन निज करजोड़ी । पद पूजन कारहुं पनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ ह्रीं शत्रभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो जन्मजराशुशुविनाशनाय जले निर्वपामीति स्वाहा ।

षण्डन देशरसय लाऊं, भवकी आताप शमाऊं । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तरजाई ॥

ॐ हौं कषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकृप्राप्तेभ्यो सप्तागतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ हौं शबभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकृप्राप्तेभ्यो अक्षय गुणको झलकाऊ । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

सुन्दर पुष्पनि चुनि लाऊं, निज काम वगधा हटवाऊं । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं शबभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकृप्राप्तेभ्यो कामवाणविध्वशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पकवान मधुर शुचि लाऊ, हनि रोग क्षुधा सुख पाऊ । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं शबभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकृप्राप्तेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय चरु निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक करके उजियारा, निज मोल निमिर निरवारा । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं शबभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकृप्राप्तेभ्यो माहाऽधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपायन धूप खिवाऊं, निज अष्ट करस जलवाऊं । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं कषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकृप्राप्तेभ्यो ऽष्टर्मदहनय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

फाल उरस उरस लाऊं, शिवफल जासे उपजाऊं । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं कषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकृप्राप्तेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुख आठौं द्रव्य मिलाऊं, मैं आठौं गुण झलकाऊं । पद पूजन करहुं बनार्है, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ हौं शबभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतित्तिर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकृप्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येकके २४ अर्थ ।

बदि बैन नथनि सुख भाई, अकरेवि जने हरापाई । श्री रिषभनाथ युग आदी । पूजूं भय सेट अनादी ॥

ॐ हौं चैत्रकृष्ण नवम्यां श्री बृषभनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकृप्राप्तय अर्थं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

सलथी सुख बाघ बदीकी, पिजया माग जिजलीकी । उपजे श्री अजिन जिनेशा, पूजूं मेढो सय क्लेशा ।

ॐ हौं माघवर्गनी दशम्यां श्री अजितनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकृप्राप्तय अर्थं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

मानिक छदि पूरणमागी, माता सुसन हुलासी । श्री लभभवनाथ प्रकाशे, पूजत आपा पर भाशे ॥

ॐ हौं कार्तिकशुक्ला पूर्णमास्या श्री वभवनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकृप्राप्तय अर्थं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

सुभ चौदस बाघ सुदीकी, अभिनन्दननाथ विवेकी । उपजे सिद्धार्थी माता, पूजूं पाऊं सुख साता ॥

- ॐ ह्रीं माघशुक्ला चतुर्दश्यां श्री अश्विभद्रनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (४)
 ग्यारस है चैत सुदीकी, मंगला माता जिनजीकी । भी सुमति जने सुखदाई, पूजूं मैं अर्घ्य बड़ाई ॥
- ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला एकादश्यां श्री सुपतिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (५)
 कातिक बदि तेरसि जानो, श्री पद्मप्रभू उपजानो । हे मात सुसीमा ताकी, पूजूं ले रुचि समताकी ॥
- ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्णा त्रयोदश्यां श्री पद्मप्रभूजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६)
 शुचि द्वादश जेठ सुदीकी, पृथवी माता जिनजीकी, जिननाथ सुपारस जाए, पूजूं हम मन हरबाए ॥
- ॐ ह्रीं ज्येष्ठ शुक्ला द्वादश्यां श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (७)
 शुभ पूस बदी ग्यारसको, हे जन्म चन्द्रप्रभु जिनको । धन्य मात सुलखनादेवी, पूजूं जिनको सुनिसेबी ॥
- ॐ ह्रीं पौष कृष्णा एकादश्यां श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (८)
 अगहन सुदि एक्रम जाना, जिन मात रमा सुख खाना । श्री पुष्पदंत उपजाए, पूजतहुं ध्यान लगाए ॥
- ॐ ह्रीं मगहनशुक्ला एक श्रीपुष्पदंत जिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (९)
 द्वादश बदि माघ सुहानी, नंदा माता सुखदानी । श्री शीतल जिन उपजाए, हम पूजत हीं विघ्न नशाए ॥
- ॐ ह्रीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा (१०)
 फागुन बदि ग्यारस नीकी, जननी विमला जिनजीकी । श्रेयांसनाथ उपजाए, हम पूजत हीं सुख पाए ॥
- ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णा दशम्यां श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (११)
 बदि फाल्गुन चौदसि जाना, विजया माता सुख खाना । श्री वासुपुत्र्य भगवाना, पूजूं पाऊं जिन ज्ञाना ॥
- ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा चतुर्दश्यां श्रीवाचस्पत्यजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)
 शुभ द्वादश माघ बदीकी, इधामा माता जिनजीकी । श्री विमलनाथ उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए ॥
- ॐ ह्रीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा (१३)
 द्वादशि बदि जेठ प्रमाणी, सुरजा माता सुखदानी । जिननाथ अनन्त सुजाए, पूजत हम नाहिं अघाए ॥
- ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा द्वादश्यां श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)
 तेरसि सुदि माघ महीना, श्रीधर्मनाथ अघ छीना । माया सुव्रता उपजाये, हम पूजत ज्ञान बढ़ाए ॥
- ॐ ह्रीं माघ शुक्ला त्रयोदश्यां श्रीबर्मानाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)
 बदि चौदस जेठ सुहानी, ऐरादेवी गुन खानी, श्रीशालि जने सुख पाए, हम पूजत प्रेम बढ़ाए ॥

ॐ ह्रीं ३ ८ कृष्णा चतुर्दश्या श्रीशक्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्तु (११०)
पट्टि-नाथ सुदीकी, लक्ष्मीमति माता नोकी । श्रीकृन्धनाथ उपजाए, पूजा उम अर्घ्य गहाए ॥

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल एक श्रीकृन्धुनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)
अगहन सुदि चौदस आनी, मित्रादेवी हरषानी । अरि तीक्ष्ण उपजाए, पूजे हम मन धन काए ॥

ॐ ह्रीं अगहन शुक्ल चतुर्दश्या श्रीभरतिर्यंकराय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)
अगहन सुदि ग्यारस आए, श्रीमल्लिनाथ उपजाए । है सात प्रजापति प्यारी, पूजत अघ बिनसौ भारी ॥

ॐ ह्रीं अगहन शुक्ल एकादश्या श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अघ निवपामीति स्वाहा । (१९)
दशमी वैसाख बदीका, इयामा माता जिनजीकी । मुनिमुन्नत जिन उपजाए, हम पूजत पाप नशाए ॥

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्णा दशम्या श्रीमुनिव्रतजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निवपामीति स्वाहा । (२०)
दशमी आषाढ बदीकी, विपुला माता जिनजीका । नमि तीर्थ उपजाए पूजत हम ध्यान लगाए ॥

ॐ ह्रीं आषाढ कृष्णा दशम्या श्रीनमिजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । २१)
आषण शुक्ला छठि जानो, उपजे जिननेमि प्रमाणो । जननी सु शिवा जिनजीकी, हम पूजत है थल शिवकी ॥

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ल षष्ठ्या श्रीनेमनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)
बदि पूष चतुर्दशि जानी, वामादेवी हरषानी । जिन पार्थ जने गुणखानी, पूजे हम नाग निशानी ॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा चतुर्दश्या श्रीपार्थजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)
शुभ चैत्र प्रयोदश शुक्ला, माता गुणखानी प्रशला । श्रीपद्धमान जिन जाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ल त्रयोदश्या श्रीपद्धमानजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

जयमाल ।

जुगप्रयात—नमो जै नमो जै नमो जै जिनेशा, तुम्हीं ज्ञान सूरज तुम्हीं शिव पवेशा ।
 तुम्हें दर्ग करके महामोह भाजे, तुम्हें पर्य करके सकल ताप भाजे ॥ १ ॥
 तुम्हें ध्यानमें धारते जो गिराई, परम आत्म अनुभव छटा सार पाई ।
 तुम्हें पूजते नित्य हन्नादि सेवा, लई पुण्य अद्भुत परम ज्ञान सेवा ॥ २ ॥
 तुम्हारी जनम तीन भू दुख निबारी, महामोह मिथ्यात दियसे निकारी ।

तुम्हो तीन बोध धरे, जन्महीसे, तुम्हें दर्शनं क्षायिकं जन्महीसे ॥ ३ ॥
 तुम्हें आत्मदर्शन रहे, जन्महीसे, तुम्हें तत्र बोधं रहे जन्महीसे ।
 तुम्हारा महारुण्य आश्चर्यकारी, सु महिमा तुम्हारी सदा पापहारी ॥ ४ ॥
 तुम्हारा महारुण्य आश्चर्यकारी, सु महिमा कालिमा पापकी अंग परसे ।
 करा शुभ न्द्वयन क्षीरसागर सु जलसे, मिठी कालिमा इसी हेतु सेवा ॥ ५ ॥
 हुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहं पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ।
 हुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहं पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ।

दुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहं पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ।
 हुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहं पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ।

दोहा—भोजिन चौबीस जन्मकी, महिमा उरमें धार । पूज करत पालक दुलें, बड़े ज्ञान अचिकार ।
 अं ही चतुर्विंशतिनेम्यो जन्मऋणकप्रसिन्धो महाअर्घं निर्वपाभीति स्वाहा । फिर इन्द्र ऊर जाता है और भगवानका नाम व

चिह्न प्रगट करता है । चरणको स्पर्शकर यह मंत्र पढ़कर पुन भगवानपर क्षेपण करता है—
 अं ही इशकुले नाभिमूर्पतेर्मरुदेव्यामुपनस्रयादिदेवुरुषस्य ऋषभदेवस्वामिनोऽन्नविन्धे वृषमाकित्वात् तद्गुणस्थानं तेजोमयं

करोमि स्वाहा । अं अय महातुभावः परमेश्वरो वृषभेश्वरो भवतु ।
 फिर नीचे क्लिष्टे मंत्रको पढते हुए इन्द्र अग स्पर्श व पुण्य प्रसुर डाले । (मंत्रको आचार्य पढ़ सकता है नीचेसे ।)
 अं ऋषभादिव्यदेहाय बधोजाताय महाप्रज्ञाय अनन्तचतुष्टयाय परमबुद्ध पतिष्ठिताय निर्मलाय स्वयमुद्भे अजरामरपदप्राप्ताय

चतुर्मुखपामेष्ठिनेऽईते त्रैलोक्यनाथाय त्रलोक्यपूज्याय अष्टदिव्यनागप्रपूजिताय देवाधिदेवाय परमार्थब्रह्मिहोऽधि स्वाहा । (३) अं
 (१) अं अस्मिन्विन्धे निःस्वेदस्वगुणो विलषतु स्वाहा । (२) अं अस्मिन्विन्धे मलरहितस्वगुणो विलषतु स्वाहा । (५) अं अस्मिन्-

विन्धे वप्रवृषभनाराचगुणो विलषतु स्वाहा । (६) अं अस्मिन्विन्धे अदुसुतरूपगुणो विलषतु स्वाहा । (७) अं अस्मिन्विन्धे यतुल-

यरीरगुणो विलषतु स्वाहा । (८) अं अस्मिन्विन्धे अष्टोत्तराश्वत्थशृग्व्यजस्वगुणो विलषतु स्वाहा ।
 वीर्यस्वगुणो विलषतु स्वाहा । (१०) अं अस्मिन्विन्धे हितमितप्रियवचनस्वगुणो विलषतु स्वाहा ।

यहां आचार्य सबको कहे कि नाम व चिह्न यह प्रगट किया गया व दश अतिशय जन्म सम्बन्धी ब्रह्माये व कहे कि इनका स्थापन
 इषमें विव किया गया । फिर आचार्य नीचेके मंत्रको पढता जावे । इन्द्र अग स्पर्श व पुण्य मूर्तिपर क्षेपे ।

(१) अं अईदूभ्यो नमः, (२) अं नयकेवल्लब्धिभ्यो नमः, (३) अं क्षीरस्वादुल्लब्धिभ्यो नमः, (४) अं मरुत्स्वादुल्लब्धिभ्यो नमः;
 (५) अं सभिनश्रातुभ्यो नमः, (६) अं पादानुवारिभ्यो नमः, (७) अं काष्ठबुद्धेभ्यो नमः, (८) अं वोजबुद्धिभ्यो नमः, (९) अं

वर्षावधिभ्यो नमः, (१०) अं परमावधिभ्यो नमः, (११) अं हौं वरगुणानुवित्गुणश्रवणे (१२) अं ऋषयादियधेमानासिभ्यो वषट्पवट्ट
 स्वाहा । (१३) अं णमोभयवदो बहुमाणस्व रिषहरस्व चक्र जलत गच्छई आयाच पायाळ लोयाण भूयाणं जए वा विवादे वा रगयणे

वा णामणे वा महणे वा बव्वजीवत्ताण अपराजितो भवदुक्खवसस्व स्वाहा ।

॥१०७॥

॥१०७॥

॥१०७॥

॥१०७॥

ऊपर क्लिप्त बद्धमान मन्त्र कहा जाता है। इन्धप्रकार आकारशुद्धि करे। व नीचे प्रकार श्लोक पढ़कर विषर्जन करे।
 ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि, शास्त्रोक्तं न ह्यतं मया। तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु, त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥
 आह्वानं नैव जानामि, नैव जानामि पूजनम्। बिसर्जनं न जानामि, क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
 मन्त्रहीनं क्रियाहीनं, द्रव्यहीन तथैव च। तत्सर्वं क्षम्यतां देव, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥
 आह्वाना ये पूरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम्। ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥४॥

फिर आज्ञा करे—हे इन्द्रादिदेवो! जिततरह श्री तीर्थंकर महाराजको जाए ये उषी तरह लेजाकर मातापिताकी गोदमें अर्पण कर व उन्हें भक्तिद्वारा प्रपन्नकर हम उनके पुण्य क्रमाना योग्य है। आज्ञा करनेके पीछे आचार्य व इन्द्रादि पूजा समयके पात्र मेरुकी तीन प्रदक्षिणा कीई स्तुति पढ़ते हुए देवें। फिर भगवानको इन्द्र उठाये। पूर्वके जमान ऐरावत हाथीपर इन्द्रादि बैठें और जय जय शब्द हों और जाने नें। जुलूस १ घंटेके भीतर भीतर मंडपमें आजावें।

(४) राज्यांगणमें भगवानका पधारना और मात पिताको अर्पण व नृत्य—मंडपमें बैठनेका प्रथम टिकटोद्वारा रहे। जुलूस पट्टवनेपर इन्द्र इन्द्राणी घोसे और इन्द्रो व देवोंके साथ मंडपमें आवें। इसके पहले ही दूरे चनूतेपर महाराज नाभिराज एक सिंहासनपर बैठें हों। दूरे एक सिंहासनपर माता मरुदेवी निद्रित दशामें बहारेसे बैठी हो, पाठमें वज्रसे लिपटा नारियल रक्सा हो, कुछ वभाबद भी हो तथा माता पिताके बीचमें ऊंचा सिंहासन भगवानके बैठनेका हो, परदा उठे। इन्द्र गोदमें तीर्थंकर भगवानको लिये हुए आवे और सिंहासनपर विराजमान करे तब यह मन्त्र पढ़ें—

ॐ नमोऽर्हते केवलित्ने परमयोगिने अनतविशुद्धपरिणामपरिपुरश्छुद्धानामिनिर्दंगवकर्मवीजाय प्राप्तानंतचतुष्टयाय बौमाग्यशांताय मगलाय वरदाय अष्टादशदोषरहिताय स्वाहा।

तब वन बैठ जावें। इन्द्राणी उठकर माताके पाठ आवे और हाथ फेरदे, मायामयी निद्रा हटावे, उब नारियलको उठाके। तब माता आश्चर्यमें बठ खड़ी हो। माता पिता दोनों खड़े हो तीर्थंकरकी छविकी देव देखकर प्रपन्न हों और फिर बैठ जावें। तब इन्द्र उठे और माता पिताके आगे वज्राभूषणकी भेंट रखे। दो थाल उब समय आजावें। एक थाल माताके व १ पिताके आगे रखे और पुण्योकी सुगंधित माळा पिताके गलेमें पहारावे और उबकी स्तुति करे—

चौपाई—धन्य धन्य तुम लोक संक्षारा, तुमरो सफल जन्म संसारा।

तीन जगत गुरु तुम उपजाये, यातें जगत पूज्य ठहराए ॥ १ ॥

तुम उदयाचल पर्वत मानो, पूर्वदिशा देवी मरु जानो।

भानू समान प्रभु प्रगटाए, मोह ध्वांत हर लोक मिटाए ॥ २ ॥

ग्रह तुमरा जिनमंदिर सारा, पूज्यनीय त्रिसुवन सुखकारा ।
तुम दोनों हो शिव अधिकारी, यातें पूजनीय हरबारी ॥ ३ ॥

ऐसी स्तुति करके इन्द्र भगवानको उठाकर माताकी गोदमें देता है, माता उठकर लेती है और विनय बहित बैठ जाती है और बारबार प्रसुको निरखती है । उबर प्रतिष्ठाचार्य अन्य प्रतिमाओंको थोड़े जलसे अभिषेक कर पोलकर केशर चन्दनका लेप करके यह कहते जाते हैं—“ अस्मिन् बिम्बे जन्मकल्याणक आरोपयामि स्वाहा ” और हरएकको ब्रह्माभूषणोंसे बलिजित करते हैं । हरएक मूर्तिके लिये अलग२ ब्रह्माभूषण होने चाहिये और फिर “ दश अतिशयाकार शुद्धि नाम (यहाँ जो नामका चिह्न हो वह लेकर) आदिकाम् आरोपयामि स्वाहा ” ऐसा कहकर हरएक मूर्तिपर पुण्य डाले । और नमस्कार करे । इषर इन्द्र फिर उठे और किञ्च तरह मेरुपर नहवन हुआ था उसे कहे तथा भगवानके पूर्वजन्मके ९ भवोंका रक्षेपसे वर्णन करे वो तुरतिरूप गानके साथ बड़े भावसे कहे—

चौपाई—इम देवन सह मेठ पधारे, पांडुकवनमें आन सिधारे ।

पांडुक शिला महा शुचि रूपा, थाप्यो प्रसुको आनन्द रूपा ॥ १ ॥

क्षीरोदधिसे कलश मंगाए, स्वर्णमई जल भर सुर लाए ।

श्रीजिनेन्द्र अभिषेक सु कीना, जन्म सफल हमने कर लीना ॥ २ ॥

शची ब्रह्म आभूषण धारे, पूज प्रभूको यहाँ पधारे ।

धन्य जीव श्रीआदि जिनेशा, सुक्तिनाथ तीर्थकर भेषा ॥ ३ ॥

यह संसार महान अपारा, आदि अन्त विन रहत करारा ।

यामें जीव कर्मवश घूर्में, विन सम्यक्त स्वधर्म न चूर्में ॥ ४ ॥

भव अनंत यह जीव धरे है, अमृत अमृत नहिं अंत करे है ।

जीव नाथका अमण करे था, पुण्य उदयसे दुःख हरे था ॥ ५ ॥

इक भय लिया विदेह मंझारा, विद्याधर नृप पुत्र दुलारा ।

नाम महाबल राज्य सु कीना, जैनधर्ममें हृद चित दीना ॥ ६ ॥

अंत समाधि धार तन त्यागा, द्वितिय स्वर्ग उपजा शुभ भागा ।

देव नाम ललितांग सुपाया, स्वयंप्रभादेवी मन भाया ॥ ७ ॥

तहंते चय विदेह उपजाया, वज्रजंघ नृप हो सुख पाया ।

स्वयंप्रभा भी तहं उपजाई, नारि श्रीमती नृपके भाई ॥ ८ ॥

दोनोंने मुनि बान सु दीना, उत्तम भोगभूमि सुख लीना ।
 तहं चारन मुनि आ उपदेशा, धर्म जिनेश्वर हत रति द्वेषा ॥ ९ ॥
 सुनत ग्रहण दोनोंने कीना, सम्यग्दृष्टी हुए प्रवीणा ।
 द्वितीय स्वर्गमें श्रीधर देवा, द्वितीय स्वर्गमम अकसुत देवा ॥ १० ॥
 श्रीधर धर्मध्यान तहं कीना, चयकर जन्म विदेह सु लीना ।
 राजपुत्र हो सुविधि दयाला, श्राद्धक ग्यारह प्रतिमा पाला ॥ ११ ॥
 अंतिम साशु महाव्रत धारे, और समाधिमरण सुखकारे ।
 प्राणत्याग सोलस दिवि आए, अच्युतेंद्र होकर सुख पाए ॥ १२ ॥
 तहंसे चय विदेह उपजाये, वज्रनाभि सम्राट सुष्ठाए ।
 षड्वर्ति साधे छः खंडा, राज्य कियो सु न्याय दृष मंडा ॥ १३ ॥
 धारे सुनिव्रत तप यहू कीना, आतम ध्यान कर्म कृष कीना ।
 सोलहकारण भाव सुध्याए, तीर्थंकर शुभ कर्म बंधाए ॥ १४ ॥
 उपशमश्रेणीसे तन त्यागा, चौथे गुणथानकमें लागा ।
 सवौरयसिद्धी उपजाए, तेतिस सागर आयू पाए ॥ १५ ॥
 तहं भी धर्म भाव चित लाए, पुण्य उदय या नगरी आए ।
 धन श्री रिषभ दृषभ शुभ अंका, तुम टालत भव भ्रम आतंका ॥ १६ ॥
 हम दर्शनसे जो सुख पाया, वचन अगोवर जात न गाया ।
 धन्य पिताश्री नामि सुराजा, मखेवी माता हित काजा ॥ १७ ॥
 देव जनम हम अब सफलाया, तुम सेवन कर पाप हटाया ।
 चिर जीवो श्री आदि कुमारा, धर्मतीर्थका करहु प्रचारा ॥ १८ ॥

इषतराह श्रुति पढ़े । यदि इन्द्र तुल्य जानता हो तो करे अन्यथा ब्रह्ममें कोई इन्द्र प्रमान तुल्य व भजन १५ मिनटके लिये करे,
 जब ब्रह्मा मुने, इन्द्र भी बैठ जावे । फिर इन्द्र बैठे । उनी समय कमसे कम पांच देव मुकुटबारी छोटी वयके नाकक ८-९ आवें ।

इन्द्र भगवानके अगूठेमें अमृत बमान दूध लगावे और यह मंत्र पढ़े “ ॐ ह्रीं श्री तीर्थकारगुण्डे अमृतं स्थापयामि स्वाहा ” और तब पांच देवोंको आज्ञा करे—‘ हे देवों ! तुम तीर्थकारकी ग्लोभाति सेवा करना और पुण्य’ कमाकर जन्म सफल करना । तब वे देव कहें—हम आपकी आपकी आज्ञा बजा लाएंगे, प्रभुको सेवाकर पुण्य कमाएंगे । फिर इन्द्र भगवानको उठाता है तब सब ब्रह्मा खड़ी हो जाती है, माता पिता भी खड़े हो जाते हैं और सब कोई पुष्पोंकी व चांदो सोनेके फूलोंकी वर्षा प्रभुके ऊपर करते हैं । पहले चबूतरेके बाहर जो परदा पड़ा था वह उठता है, इधर उधरके परदे उठ जाते हैं तथा मूलवेदीके बगलमें जो राव्यमहल बना था वहां बिहावनपर प्रभुको विराजमान कर देता है । उस समय इन्द्र पहले लिखा मंत्र पढ़ता है—“ ॐ नमः ईते अष्टादशदोषरहिताय स्वाहा ” नमस्कार करता है और लौटने लगता है, इतनेमें बाहरका परदा गिरता है । जन्मकल्याणकोरश्मि पूर्ण होता है, सब अपने-२ स्थानपर जाते हैं, आहार पान करते हैं । यहाँतक क्रिया पूर्ण करके ही भोजन करना उचित है । इस सब क्रियाको लगातार ही करना चाहिये । पबरेसे दो बजे दोपहर तक हो सकती है ।



अध्याय पांचवां ।

गृही जीवन ।

(१) दीलनारूप स्त्रीड़ाका उत्सव—रात्रिको मध्यमें दोलन क्रीड़ा की जावे । दूबरे चबूतरेपर झूला सुन्दर लगाया जावे उसमें हिंदोला बजोया जावे, उसपर प्रभुको वस्त्राभूषण सहित, मुकुट सहित विराजमान किया जावे । आठ देवियां हाजिर हों आठ दिशाओंमें खड़ी हों । उनमेंसे पंछेके कोनेकी दो दोनों तरफ चमर धारे । पांच कुमारदेवोंको जिाको इन्द्रने नियत किया था हिंदोलेके पीछे खड़ा कर दिया जावे । माता खड़ी २ भगवानको झुलानी ले, वामने एक टेबुलपर रुपयोंकी भेटके लिये बड़ा थाल रखा हो, कोनेमें एक भाई दातारोंके नाम लिखनेवाला बैठा हो । सब सामान बज जावे तथा परदा उठया जावे । उस समय जयजयकार शब्द हो । प्रथम ही इन्द्राणी कई देवियोंके साथ दो थालोंमें ब्रह्माभूषणादि बजाकर लावे व हाथमें अक्षरफली व रुपया लावे और ब्रह्ममें आकर वे दोनों थाल भेटरूप बगलमें रखे तथा प्रणाम करके स्तुति पढ़ें—

चौपाई—जय जय नाथ दरश तुम पाए, तुम बहिसा धरणी नहिं जाए ।

तुम अपार सुन्दरता धारी, काम जीत जगजन मनहारी ॥ १ ॥

तुम त्रिमानधारी परमेशा, देखत तुम्ह मिटे सब क्लेशा ।

हम आतुर बहंगति संसारा, तुमहिं दुःख भेटन अविकारा ॥ २ ॥

तु नग मोड़ तिमिर निर्धारी, सम सम यमसे सब अघ टारी ।

अन्य भान तुझ पुण्य अपारा, तीर्थकर सुत तब जगधारा ॥ ३ ॥

ऐसी स्तुतिकर मोहर या रुपया रत्न मेटरूप थालमें डारकर हिंडोला हिलावे और फिर नमस्कार कर विनय सहित देवियोंके प्राय लौट जावे ॥ नोट—इस समय जो आमदनी थालमें आवे वह सब प्रतिष्ठामें खर्चमें लगाई जावे ।

फिर नर नारियां आकर भगवानको सुलावे । इसका प्रबन्ध ऐसा किया जावे कि १० टिकट खाए बनाए जावें । १ दफे पांच पुरुष नम्बरवार फिर पांच स्त्रियां नम्बरवार छोड़ी जावें । ये नम्बरवार जावें । रुपया आदि थालमें मेटकर प्रभुको सुलावें । नमस्कार कर लौट आवें । आधी मिनटसे अधिक कोई न सुलावे, जब पांच लौट आवे व टिकट वापिस आजावे तब फिर पांचको भेना जावे । इसतरह नम्बरवार स्त्री-पुरुष दोनों आते जाते रहें । मंडपमें बैठे लोग जय जय शब्द कहें तथा घामने भगवानके घामने भजन गान नृत्य मनोहर होता रहे । जब सब मेट देखुंके व अपना मनभर भगवानको सुला चुकें तब परदा डाल दिया जावे । भीतर भगवानको राज्यमहलकी धेदीपर वल सहित विराजमान किया जावे ।

(२) तीर्थंकरको राज्याभिषेक—जन्मकल्याणकके दूबरे दिन सबेरे आचार्य इन्द्र आदि सहित सबेरे ही मंडपमें जन्मकल्याणकके दिनकी भांति एकलीकरण, अभिषेक व निरघण्टा सिद्धयज्ञ तथा होम करे । फिर पहले चबूतरे पर परदा डाला जावे । दूबरे चबूतरे पर राजसभाकी रचना की जावे । बीचमें बैठनेका आसन हो । उसके पास ही नाभिराजाका आसन हो, कुल समापद कायदेसे बैठे हों । अभिषेक व पूजाका प्रबन्ध हो व भगवानको राजयोग वल व सङ्ग आदि शल देनेका प्रबन्ध हो । परदा ठेठे तब सब इन्द्र प्रत्येन्द्र व आचार्य आवें, आठ मगलद्वय स्थापित हों । इन्द्र महाराज नाभिको मस्तक झुकाकर नमन करे व स्तुति करे ।

दोहा—श्री तीर्थंकर राज्यपद, देनेका उत्साह । किया आपने नाभिजी, है यह उत्तम राह ।

प्रभु समर्थ पालन प्रजा, न्याय मार्गमें आज । राज्यार्पणकी सकल विधि, कराना है सुखसाज ।

तब नाभिराज कहते हैं—

दोहा—राज्यतिलक अर्पण विधि, कीजे हे दिविराज । होय सुखा सारी प्रजा, होय अटल यह राज ।

आज्ञा पाते ही इन्द्र भीतर जाकर प्रभुको राज्यमहलसे लाते हैं तब सब खड़े होते हैं, जयजयकार शब्द होते हैं, पुष्पोंकी वर्षा होती है । बीचमें गृह्यनका आसन विराजमान कर उपपर प्रभुको स्थापित करता है । बलाभूषण अलग उतारकर रखता है । इतनेहीमें दूबरे इन्द्र तथा आठ देवीकन्याए सुन्दर कलशोंको जलसे भरे हुए पुष्पमालासे शोभित व कमल या नारियलसे ढके हुए व केशरका प्राधिया बना हुआ अपने दोनों हाथोंपर धरे हुए लाते हैं । घामने गीत व नृत्य होता है । बाहर खूब बाजे बजते हैं । वे सब इन्द्र और देवियां एक साथ गाती हैं—

गीताल्हद—शचिनाथ हम जल शुद्ध लाए, क्षीरसागरसे भला ।

गंगा महा नद सिंधु आदी, कुंड गंगासे भला ॥

दुर्लभ होकर बन्धी जातिके सामान्य रूप में रहने लगता है।
 अधिकांशक कारण इसका यह है कि ये लोग अत्यन्त ही

अधिकांशक कारण इसका यह है कि ये लोग अत्यन्त ही
 अधिकांशक कारण इसका यह है कि ये लोग अत्यन्त ही
 अधिकांशक कारण इसका यह है कि ये लोग अत्यन्त ही
 अधिकांशक कारण इसका यह है कि ये लोग अत्यन्त ही
 अधिकांशक कारण इसका यह है कि ये लोग अत्यन्त ही
 अधिकांशक कारण इसका यह है कि ये लोग अत्यन्त ही

१-१-जय जय नौर्यकर अतिकारी । जय जय मुक्तिधर भारी ॥ देव ॥
 जय जय प्रजा न्याय विस्तारी । जय जय अतुषम बल अपिकारी ॥ अथ ॥
 जय जय शस्त्र शास्त्रगुण धारी । जय जय विद्या-निपुण अघारी ॥ अथ ॥
 जय जय पद्मद्वय मनु भारी । जय जय जगत धरन उद्धारि ॥ अथ ॥
 जय जय कर्मभूमि विस्तारी । जय जय धारि निमं भवतारी ॥ अथ ॥

आती करके फिर इन्द्र बल व शल सङ्ग आदिसे बलिज करे । कर्मपुण्य व राजपाठ आदि व अर आशुभ्यण धराने ।
 इतनेहीमें नाभिराज बरते हैं और इसीप्रकार कइकर अपना मुकुट उत्तारकर पथूके प्रस्तकार भाण्य करते हैं—

दोहा—सर्व राज महाराजके, पालक दीनदपाल । तुम ही हो जग प्रथम पशु, सुषभमेव जगपाल ॥

फिर इन्द्रने मस्तकपर पट्टबन्ध भी किया तब सब बैठ जाते हैं । अर्थात् पुराण मान १५ शिल्प तक होता है । तब इन्द्र व सैन्य
 विनय बलिज जाते हैं । अष्ट देवियां रह जाती हैं जो प्रथुके पीछे लकी रहती हैं ज्यों तो वेकियां अन्धो पिडाबन्धनपर पग धरें
 तबहीसे चमर कर रही हैं । अब अनेक राजालोग आकर पयुक्तो भेद पदांगर मगरकार कर अर्थात् बैठ जाते हैं पहले राजा बरि, फिर
 राजा ककम्पन, फिर काश्यप फिर सोमप्रम आते हैं । इनके पीछे अनेक राजा जिन्के शासनके नाम अर्थात् कहते जाते हैं और गेठ
 बरकर बमामें बैठते हैं । नोट—जो रूपया मेटमें आने को प्रतिष्ठाकार्थीं सार्थ हो । कुल नाम यथा विधे जाते हैं—

- (१) अंगदेश, (२) बगदेश, (३) कर्लमदेश, (४) तुल्यदेश, (५) कर्णिकदेश, (६) पाण्ड्यदेश, (७) तंजोरदेश, (८) त्रिपुरदेश,
- (९) कच्छदेश, (१०) गुजरातदेश, (११) महाराष्ट्रदेश, (१२) पंजाबदेश, (१३) मल्लप्रदेश, (१४) राजारजाना, (१५) गोपालदेश,
- (१६) मूलादेश, (१७) मध्यप्रदेश, (१८) सामदेश, (१९) नीगादेश, (२०) आजागदेश, (२१) मध्यदेश, (२२) सिन्धुदेश,

(२३) चीनदेश, (२४) श्याम, (२५) जापान, (२६) रूप, (२७) प्रोक्तदेश, (२८) समुद्र, (२९) क्षारक्षेत्र, (३०) अक्षदेश,
(३१) गोंडारदेश, (३२) मिश्रदेश। इत्यादि,

फिर सब जब बैठ जायें तब भगवानकी ओरसे राज्यनीतिका उपदेश आचार्य व राज्य कोई विद्वान् स्वयं प्रभाव पड़े
इस तरह कहें—

राजा हृदि ! (इतना कहनेपर राजा खड़ा होजाये) आपको भगवान् इरिवशका नायक स्थापित करते हैं। यह हाथ जोड़
सस्तक नमा बैठ जाता है।

राजा सोमप्रभ ! (यह भी ठठता है) आपको भगवान् कुरुवशका शिक्षामणि स्थापित करते हैं। उसी तरह यह भी नमन कर
बैठ जाता है।

राजा अंकपन ! (यह भी ठठता है) आपको भगवान् नायवशका अश्विपति नियत करते हैं। उसी तरह नमन कर बैठता है।
राजा काश्यप ! (यह भी ठठता है) आपको भगवान् उग्रवशका शिरोमणि नियत करते हैं। उसी तरह नमस्कार कर बैठता है।

आजसे भगवान् यह नियम करते हैं कि जो शत्रु बाराणकर अपने वाहुबलसे प्रजाकी रक्षा करनेको समर्थ है वे क्षत्रीयवशी व
क्षत्रियवर्णवारी कहलाएंगे। जो बल व बलद्वारा अनेक देशोंमें यात्रा करके व्यापार करनेयोग्य हैं वे वैश्यवशी या वैश्यवर्णवारी कहलाएंगे।
जो इन दोनों प्रकारकी योग्यता नहीं रखते हैं तथा सेवा आदि कारके य आज्ञा पालन करके आजीविका करनेयोग्य है उनको शूद्र कहा
जायगा। भगवान् आज तीन वर्णोंकी स्थापना करते हैं। भगवान् असिकर्मके द्वारा क्षत्रियोंके, मन्त्रि, कृषि, वाणिज्यद्वारा वैश्योंको व
शिल्प तथा विद्याकला द्वारा शूद्रोंको आजीविका करनेका अधिकार नियत करते हैं तथा यह भी नियम बनाते हैं कि हरएक वर्णवाले
अपनी २ आजीविका करें तथा विवाहका यह नियम करते हैं कि प्रत्येक वर्णवाले अपने वर्णमें विवाह करें, काम पड़े क्षत्रिय वैश्य
तथा शूद्रकी ओर वैश्य शूद्रकी कन्याको विवाह कर सकता है। भगवान् अपने आधीन राजाओंको यह आज्ञा करते हैं—

चौपाई—है कृतयुग यह तुम जानो। निज निज कुरूप करो सुख मानो ॥

आलसभाव न चितमें राखो। परिश्रमी मन सुख अभिलाखो ॥ १ ॥

सज्जन दुर्जन जन दो भेदा। सज्जन पालहु खल कर सेवा ॥

प्रजा कारहु रक्षा रुचि लाई। दुर्जनको नित दण्ड दिलाई ॥ २ ॥

सख धरण उद्देश यही है। प्रजा सुखी हो तस्य यही है ॥

दुष्टनका निग्रह जहं नाहीं। सुख सन्तोष होय तहं नाहीं ॥ ३ ॥

गृही नहीं करतव निज पाले । दुखी होय विपता बहु झाले ॥
 दया दुष्टजन नहिं अधिकारी । दण्ड बिना नहिं हों समधारी ॥ ४ ॥
 पृथ्वी यह बहु धान्य उपाधि । अनेक और उपजाये ॥
 गोधन कृषि कारण उपकारी । देय पोषन कर भारी ॥ ५ ॥
 धन कृणकी रक्षा करना है । सर्वदेश तिरपत रखना है ॥
 कर इतना ही लेन विचारो । प्रजा कभी दुखमें नहिं धारो ॥ ६ ॥
 प्रजा सुखी तह राज्य सुखी है । राज्य बही जह कोई न दुखी है ॥
 कर ग्रह विद्या करहु प्रभारा । विद्याधिन नर जन्म अलारा ॥ ७ ॥
 पुत्री पुत्र उभय अधिकारी । विद्या कला देहु अति भारी ॥
 करहु स्वाध्याय रक्षा जगजनकी । विद्या शोग नहिं बाधा तनकी ॥ ८ ॥
 प्रजा पुत्रसम पालहु ज्ञाता । दीन अनाथ करहु नित साता ।
 सदा ध्यान रखिये ब्रह्मा । प्रजा होय सुख शांति समजा ॥ ९ ॥
 शिल्प कलासे वस्तु बनाओ । देश देश भेजो घन लाओ ॥
 जहां वाणिज्य तहां घन आवे । घन जिल देश वही सुख पावे ॥ १० ॥
 जीवन सादा शुद्ध विनाओ । विषय मोहमें तन न गलाओ ॥
 इन्द्रियभोग न्यायसे कीजे । जासे बल तन दुति नहिं छीजे ॥ ११ ॥
 है सन्तोष परम सुखकारी । परधनकी हच्छा दुखकारी ॥
 निज तिय सम्पत्तिमें सुख जानो । पर तिय पर सम्पत्ति पर जानो ॥ १२ ॥
 समया वृथा कबहीं नहिं डालो । समय असूत्र जान तन पालो ॥
 होय सुखी नर नारि सदा ही । यह प्रबन्ध करिये गुणग्राही ॥ १३ ॥

फिर सब सहे होजाये (नाभिराजा तो राज्य देकर पड़े ही चके गए थे) और गति पड़े । परदा गिरे-
 छन्द-जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र नाथजी । धन्य यह समय मङ्गल सुख निधान साथजी ॥
 दीनबंधु हो दयालु जगत पाल कीजिये । दुःख क्लेश शोग सेट तृपत नाथ कीजिये ॥ १ ॥

राज्य यह महान आपका परम प्रकाश हो। यश अपार विस्तार अन्यायका विनाश हो ॥
 धन्य धन्य नाथ तुम्हीं ज्ञानमें प्रधान हो। राखिये कृपा जिनेन्द्र लोकमें महान हो ॥
 जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र नाथजी। धन्य यह समय महान सुखनिधान नाथजी ॥२॥
 आचार्य प्रतिमाको राज्यनहलमें विराजमान करते हैं तथा प्रतिमाओंको मुकुट व शल देकर " अस्मिन् क्विचे राज्यभिर्भेकं आरोपयामि स्वाहा " ऐसा कहकर पुण्य क्षेपण करते हैं। इन्हे १० वजे तक क्रिया होजावे।

अध्याय छठा।

तपकल्याणक।

(१) भगवान्को वैराग्य—इसी दिन जन सवेरे राज्यभिषेक क्रिया था, १ गजेसे तपकल्याणककी विधि करें। मण्डपसे कुछ दूर एक बन हूँद खेवें जहाँ बड़का वृक्ष हो उबीके नीचे कवचमदेवका तपकल्याणक करना। जिन तीर्थंकरकी प्रतिष्ठा करनी हो उष तीर्थंकरके उबी वृक्षको तलाश करे। यदि वैषा न मिले तो २४ मेंसे कोई भी वृक्षके तले यह कल्याणक होवे। २४ वृक्षोंके क्रमसे नाम ये हैं—
 १-वट या बर्गद, २-शतशुद्ध, ३-ताल, ४-घाल, ५-प्रियपु, ६-प्रियपु, ७-श्रीखण्ड, ८-नागवृक्ष, ९-घाल, १०-पलाश, ११-तीँद, १२-पाटक, १३-नन्दू, १४-पिपल, १५-दधिपर्ण, १६-दिदिवृक्ष, १७-तिरुक, १८-आम्र, १९-अशोक, २०-बध्वा, २१-मोडपरी, २२-बाँस, २३-बन, २४-घाल।

वनमें वृक्षके चारों ओर स्थान स्पष्ट हो। शुद्ध जलको छिड़क कर पवित्र करे वहाँ ही एक पाषाणकी शिला ऊची भगवान्को विराजमान करनेको नियत करे तथा अगे १ मडक बनावे जिसमें २४ कोठे हों, पूजाकी सब सामग्री तैयार की जावे, मण्डप भी छाया जावे जिसमें सुखसे सब बैठ सके। बटवृक्षको नियत कर आचार्य पहले सब देख आवे व प्रवंच कर आवे। उषर मंडपमें नरनारी टिकटों द्वारा बुलाए जावें। दूबरे चतुस्रेपर भगवान्की राज्य समा लगाई जावे। बशल भगवान् विराजमान हों। आगे तुल्य व भजन होता हो, ऐसी समा करके परदा खोला जावे। उष समय नीलाजना नामसे एक देवीको इन्द्र भेजे वह आकर सत्य करने लगे। कोई कन्या जो थोड़ाशा नृत्य जानती हो वो नाचते नाचते एतदप भूमिपर गिरकर अचेतनी होजावे। उषी समय आचार्य भगवान्की ओरसे नीचे प्रकार कहे—

दोहा—धिक धिक् या संसारमें, नित्य नहीं पर्योष। देखत देखत बिलय हो, बुधता कोन लहाय ॥ १ ॥
 मरणकाल आवे निकट, कोय न राखनहार कोटिक यस्त विचारिये, निर्फल हों हरबार ॥ २ ॥
 क्षण क्षण उम्र बिलात है, ज्यों ज्यों काल चिताय। मरण करत माँने सुखी, हम युवान वय आय ॥ ३ ॥
 जरा जु बाधन भयकरी, आगत है ततकाल। पकड़ तिसे निर्बल करे, इसे काल विकराल ॥ ४ ॥

या संसार अपारमें, चारों गति दुःखदाय । शारीरिक मनसा बहुत, क्लेश होंय भयदाय ॥ ५ ॥
 देव आदि भी ना सुखी, तृष्णावश दुःख पाय । देख जलत पर सम्पदा, इष्ट वियोग धराय ॥ ६ ॥
 जो जाने निज आपको, मरवै निज सुख सार । निजमें आपी मगन हो, सो सुखिया संसार ॥ ७ ॥
 मोह अंध जे जीवड़ा, धन कुटुम्बमें लीन । आकुलता नितपति लहै, दशा बनाई दीन ॥ ८ ॥
 द्रष्टव्य भिन्न हर जीवका, जब पलटे पर्याय । उपजै मरै जु एकला, कोई नहीं सहाय ॥ ९ ॥
 तीव्र क्लेश रोग शोकाका, आपी सुगते जाय । लाथी सगा न देखिये, भिन्न भिन्न है जीव ॥ १० ॥
 जब यह तन भी मम नहीं, साथ न जावै कोय । परिजन पुरजन धन कणा, किहू विधि साथी होय ॥ ११ ॥
 यह शरीर सुन्दर दिखे, भीतर मल समुदाय । खड़न गलन आक्षत वरै, तुरत मृतक होजाय ॥ १२ ॥
 तीन जगतमें अशुचि है, मानुष तन अधिकाय । बल्ल माल जलशुचि दरंभ, परशुधनुचि होजाय ॥ १३ ॥
 मिथ्या श्रद्धा धारकै, हिसादिक बहु पाप । करे कषायन वश रहे, हो प्रमाद सन्नाप ॥ १४ ॥
 मन बष काय न थिर रहे, योग भाव हिल जाय । कर्म वर्गणा पुंज तब, आवत तह अविकाय ॥ १५ ॥
 बध होय पिजरा बने, कार्मण तन दुखदाय । जब तक यह दूटे नहीं, मुक्ति न कोय लहाय ॥ १६ ॥
 संवर भाव विचरिये, सम्यग्दर्शन सार । संयम अर धैराग्यसे, रुकै कर्मकी धार ॥ १७ ॥
 आत्म ध्यान महा अगनि, जब निजमें मजलाय । कौटिक भव बाधे करम, तुरत भस्म होजाय ॥ १८ ॥
 तप समान इस जीवका, मित्र न को संसार । निश्चय तप निज आत्मसा, तारै भवदधि खार ॥ १९ ॥
 पुरुषाकार अकृत्रिमा, लोक अनादि अनन्त । ऊरध मध्य अधो बिषे, सिद्ध लोक सुखवन्त ॥ २० ॥
 दुर्लभ है इस लोकमें, नर तन दीरघ आयु । इन्द्रिय बलकी पूर्णता, डसै, न रोग कु वायु ॥ २१ ॥
 एक इन्द्रिय पर्यायते, सठन कठिन संसार । विरला नर तन पावता, जो सब तनमें सार ॥ २२ ॥
 या तन पाय न तप किया, लिखा न निजरस स्वाद । मूरख अवसर चूकता, छाड़ै ना परमाद ॥ २३ ॥
 धर्म मित्र या जीवका, जो शखे शिव बाहिं । दुर्गतिसे रक्षा करै, सुख देवै अधिकाहिं ॥ २४ ॥
 हा हा धिक् धिक् है मुझे, इतना काल गमाय । मोह राज्य पुत्रादिमें, कर निज सुख विसराय ॥ २५ ॥
 अब संयम धरना सही, जिन धारा बहु लोक । कर्म काट शिव थल बसे, पाया निज सुख थोक ॥ २६ ॥

कुछ खिलम्ब करना नहीं, सभ्य न पलटत जाय। क्षण क्षण आयु बिलात है, राखनको न लुपाय ॥२७॥
धम मित्रकी शरणमें, रहना ही सुखकार। जो तारे अब खिद्युते, पहुचावे शिव द्वार ॥२८॥

(२) लौकिक देवागम—इतनेमें आठ लौकिक देव बफेद घोती दुपधा पहने व बफेद ही मुकुट लगाए समामें विनय पहित जाते हैं और पुष्पोकी मजली मूर्तिके आगे चढ़ाकर नीचेप्रकार स्तुति करते हैं—

स्वामिस्य जगत्त्रये प्रसरतां सांगलयलाला यतः, सर्वेभ्यः सुकृतं भविष्यति अश्लीथीशुनां भोधरात् ।

घोरापञ्चलनापनोदनजितो मन्व्यात्मनां जायतां, वैराग्यावगमस्तवया वरिचितस्त्वस्मै नमस्ते पुनः ॥८२३॥

संसारदुःखयिनिवृत्तिपरायणः स्वय बुद्ध्या अवस्थितिमिमां स्वपरात्मनां शिवं ।

कर्तव्यसावभिप्रतस्वनियोगभावुकानस्मान् प्रपंचयति निःकर्मणोत्सयस्तव ॥८३४॥

के धा वयं त्वदुपदेशविधानदक्षाः स्वायंभवस्य सकलागमपूनहृष्टः ।

आत्मैव केवलमयो प्रतिबुद्धसार्गं नीतः स्वय ज खलु भव्यगणोऽपि तात ॥८५॥

अयं पितेयं जननी तथेति लोका सुधार्थं व्यवहारयन्ति ।

विश्वेशिता विश्वपितामहस्तं माताऽसि सर्वप्रतिपालनेच्छुः ॥८२६॥

अबाप्तसंसारतटः स्वलब्ध्या निमित्तमन्यत्समुपस्थितोऽसि ।

स्वयं प्रबुद्धः प्र भविष्णुरीशः कदापि नास्मत्स्तवनेन बुद्धः ॥८७॥

प्रकाशितं सूर्यसुदीक्ष्य दीपः स्वयं स्वदीपया किमु भाषयेत् ।

गंगा स्वयं शीतलतोपदाश्री किं पत्थलेन स्वतृषां भनक्ति ॥८२८॥

जय कल्याणपरम्पर मदनमयङ्कर निजशक्तिपते ।

जय शाश्वतसुखकर त्रिसुवनमहिधर जय जय जय गुणारत्नपते ॥८२९॥

भाषा—छन्द सुश्र्विनी—धन्य तू नाथ जो चित्त गहा धन्य हो नाथ वैराग्य उत्तम लहा ॥
तीर्थ धर्म महा वृष्टि हो लोकमें । मोह आपत्ति अगनां शर्मैं लोकमें ॥ १ ॥
ससृता दुःख मेहन तुम्ही बीर हो । कर्म सेना प्रहारन तुम्ही धीर हो ॥
बोध केवल प्रकाशन तुम्ही सूर्य हो, भव्य कमलनि विकासन तुम्हीं सूर्य हो ॥ २ ॥

हो स्वयंयुद्ध सम्यक्त गुण धारकं, ज्ञान वैराग्य जलमोहमल टारकं ।
शक्ति अनुपम धरो काम बल नाशकं, आपमें व्याप ही व्यापको भाशकं ॥ ३ ॥
नाथ अब देर कुछ भी नहीं काजिये, धार संयम कवच ध्यान असि लीजिये ।
चार घाती महा कर्म क्षय कीजिये, धर्म त्रय रत्नत्रय देव यश लीजिये ॥ ४ ॥
आपको बोधने बल धरें हम नहीं, मात्र भक्ति करें पाप आवें नहीं ।
सफल गात्रं यह नाथ भेदे तुम्हें, जन्म माना सफल नाथ देखे तुम्हें ॥ ५ ॥

इपरह बड़े भावसे स्तुति पढ़के पुष्पाञ्जलि प्रभु चरणोंपर क्षेपण करके व नमस्कार करके विनय बद्धित लोट जावें—

(३) इन्द्रागमन पालकी सहित—इतनेहीमें इन्द्रादिदेव एक दलश जलका लिये व वलाभूषणका भाल लिये तथा पाळकीको कंधेपर धरे वभामें बाते हैं । पाळकी आदिको यथायोग्य बरकर इन्द्रादि नमस्कार कर कहते हैं—

छन्द सृग्वनी—हे प्रभू मोक्ष नगरी विजय कारणे, आत्म सुख मार अनुभव अदा धारणे ।
शुक्ति लक्ष्मी मनोरु रजु वश कारणे, सिद्ध पद मारको नित्य संधारणे ॥ १ ॥
जो विपारा मनोरथ सफल हो मही, मोक्ष शत्रुपे तेरी विजय हो सही ।
कोष आदि कषाये क्षत्री नष्ट हों, ध्यान अग्नि जलें कर्म गण नष्ट हों ॥ २ ॥
ब्राधु पदवी धरो व्रत महा याचंगी, तीन गुप्ति लम्हालो स्वमिति उर धरो ।
हैं परम धर्म दश तोहि रक्षा करें, ह्यौय उपमर्ग संकट उन्हें जग करें ॥ ३ ॥
धन्य जिनराज पुरुषार्थ फीना विमल, नष्ट रागादि कर आत्म कीजे विमल ।
हम तो भक्ति करें और समरथ नहीं, ह्यौय पावन इसीसे न हों दुख कहीं ॥ ४ ॥

(४) भगवानका राज्य त्याग व पालकीपर चढ़ वन जाना—फिर आचार्य नोचेका श्लोक पढ प्रतिमापर पुष्पाञ्जलि क्षेपे ।
स्वक वभाको कहे कि भगवान् राज्यका त्याग कराते हैं और पुत्र भारतको राज्य देते हैं—

हृदाधैरैराग्य भगः श्वराज्यं पुत्राय वा भूपतिस्त्राक्षि हृत्या ।

यः क्षात्रधर्मं श्रितपंचभेदं दिदेश साक्षाच्च स एव विपः ॥

तब इन्द्र प्रतिमाजीको प्रताकर मत्तकण रमसे, वहीपर आचार्य एक नारियल रख दे य उपपर भगवानका मुकुट उतार कर रख दे । इससे यह सूचित करता है कि पुत्रको राज्यपट दिया । इन्द्र विम्बको स्नान करानेके लिये तब आपनपर विराजमान करे तब आचार्य यह मंत्र पढ़े—“ हा ई धर्मतीर्ण आदिगाथ भगवन् पांडुरुशिका पीठे तिष्ठ निष्ठ स्वाहा । ”

दीक्षोद्यमं मोक्षसुखैकसकं यं स्नापयच्चिकुरशेषशकाः ।

समेस्य संघः परया विभूत्या तं स्नापयाम्यष्टशतेन कुंभैः ॥

ॐ ह्रीं जय जय नय अर्हते भगवत शुद्धोदकेन स्नापयामि इति स्वाहा । फिर इन्द्र वक्रसे पौछकर, हलके चन्दनसे स्नान करे तब आचार्य यह श्लोक पढ़े—

इन्दो जिनेन्द्रस्नपनावसाने दिव्यांगरागेण यमालिलेय ।

कपूरकालागकुंकुमाढ्यश्रीचन्दनेनास्य समालभेऽगम् ॥

ॐ ह्रीं यहजबौगधगधुरांगस्यगवलेपनकरोमि स्वाहा ।

फिर इन्द्र पौछकर पाठमें नए लाए वक्र आभूषण पहनावे तब आचार्य नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

विभूषयामासं जगत्त्रयस्य विभूषणं दिव्यविभूषणाद्यैः ।

पुरदरोऽयं भगवज्जिनेन्द्रं स एव देवो जिनविष एषः ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनागं विविषवलाभाणेन विभूषयामि स्वाहा । फिर आचाय नीचे लिखा वर्द्धमान मंत्र बातवार पढ़कर प्रभुपर बातवार पुष्प क्षेपे—“ ॐ णमा भयदो बद्धमाणसश्च रिषहस्व नस्य चक्रे जलत गच्छइ । आयास पायाल लोयाण भूयाण यूये वा विवादे वा रणगणे वा रायंगणे छम्भणे वा मोहणे वा पञ्चजीवत्ताण अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा ।

फिर दीक्षा केते समय भगवानने दान किया तबकी स्थापनाके लिये आचार्य नीचेका श्लोक पढ़कर प्रतिमाके आगे पुष्प क्षेपे और कुञ्ज रुपये दानके लिये देदिये जावे उसे प्रबन्धकर्ता यथायोग्य देदेवे ।

दीक्षान्मुखस्तीर्थकरो जनेभ्यः किमिच्छकं दानमसो ददौ यः ।

दानं च मुक्तयंगमितीव वक्तु स एव देवो जिनविष एषः ॥ १ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़े पाळकीपर पुष्प ढाले

महीतलायांतदिनेशविषयंकावहादोपमणिप्रभाढ्या ।

जिनेन या श्रीशिविकाधिरूढा दिव्यात्र साक्षादियमस्तु सैव ॥ २ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक व मन्त्र आचार्य पढ़े । इन्द्र विनय रहित भगवानको ठठाकर पाळकीपर विराजमान करे तब जय जय शब्द हो पुष्पवृष्टि हो ।

आपुच्छय यंधुत्तुचित्तं महेच्छः किमिच्छकं दानविधि विधाय ।

निष्कामतिरमावसथाध्वनो यः स एव देवो जिनविष एषः ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीबर्मातीर्थविनाय भगवनिह शिबिकायां तिष्ठ त्ति स्नाहा ।

इस समय क्रमसे कम चार भूमिगोचरी राजा व चार विषाण तैयार रहे । ये ही पालकीको कक्षेपर रह सकेंगे—पंघमेंसे कौन बने इसके निर्णयके लिये अन्य स्थानपर बोला बोलकर पढ़के तय किया जावे । जो रुपया आवे प्रतिष्ठामें सर्व हो । जितनी दूर बन हो उत्र मर्यादाके आठ भाग किये जावें—१ भाग तक भूमिगोचरी भगवानकी पालकीको लेकर चलें, फिर एक भागतक विषाण राजा के चलें, फिर इन्द्रादिक देव के चलें । जिन समय चार भूमिगोचरी राजा पालकी ठठावें तब समय नीचेका श्लोक पढ़ आचार्य प्रतिमा पर पुण्य डालें—

यथाभितां श्रीशिबिकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ॥

जगसुः पृथिव्यां प्रथमं नरेन्द्राः स एव देवो जिनर्षिब एषः ॥ १ ॥

जब विषाण के चलें तब यह पढ़े—

यथाभितां श्रीशिबिकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ॥

जगसुः पृथिव्यामथ सेचरेन्द्राः स एव देवो जिनर्षिब एषः ॥ २ ॥

फिर जब इन्द्र के चलें तब यह श्लोक पढ़े और पुण्य क्षेपे—

यस्य प्रभोः श्रीशिबिकां प्रमोदात् स्कंधे समारोप्य वियत्पथेन ।

तपोवनं निन्युरथामरेंद्राः स एव देवो जिनर्षिब एषः ॥

दोनों तरफ इन्द्रादि चमर ढारते जावें, बाषमें मडियां हों, बाजे बजें, नृत्य होता हो, भजन होते हों, पर्व पंघ थाप जावे । आष घंटेके भीतर वनमें पहुंच जावे ।

(५) तप वनमें तप लेनेकी क्रिया—पहलेसे ही आचार्य जाकर तपोभूमिकी नीचे लिखा मंत्र पढ़ शुद्ध करे, पानी छिड़के—

“ ॐ नीरजसे नमः ” फिर बटवृक्षकी स्थापना नीचे लिखा मंत्र पढ़ करें, वृक्षपर पुण्य क्षेपे ।

ॐ ह्रीं गमो ब्राह्मताण धृषभजिनस्य कटाक्ष्य जिनदीक्षा वृक्ष अवतर २ ब्रवीषट् । फिर नीचेका श्लोक पढ़ दीक्षामंडपपर पुण्य क्षेपे—
एवं विनिष्कस्य यमाससात् पुण्याश्रमं तीर्थकरः प्रशान्तः ।

स एव वायं जिनमण्डपोस्तु श्रीमूलवेद्यां विहितप्रतीच्यां ॥

फिर आचार्य शिबिकाके स्थापनके लिये नीचे लिखा श्लोक पढ़ शिबणपर प्राथिया बनावे व पुण्य क्षेपे—

स्वचित्तकल्पे विपुले विशुद्धे शिलातले यत्र तु चन्द्रकान्ते ।

सुरेन्द्रकल्पे भगवान्निविष्टस्तदेष पीठं दृढमेतदस्तु ॥

फिर नीचेका श्लोक न मत्र पदा जाने तथा इन्द्र पालकीसे भगवानको उतारकर शिलापर पबरावे । मुस पूर्व या उत्तर हो—

उद्धतुसः पूर्वमुसोऽथवा यो निविष्टवायुतथिलोपरिष्ठात् ।

प्रतऽयथा निर्धृतिस्त्राशनोत्कः स एव देवो जिनर्षिष एषः ॥

ॐ हीं बर्मतीर्षाणिगध भगवनिह सुरेन्द्रविचित्रचन्द्रकान्तशिकातके तिष्ठ तिष्ठ स्वाहा ।

फिर नीचे लिखा श्लोक पठ आचार्य चारोंतरफ पुष्प क्षेपे—

तपोबन यत्तद्विशस्तु दीक्षावृक्षोऽपि सोयं न शिखापि सेयं ।

स पुण्यकालोऽव्ययमेव यद्यदीक्षोचितं तत्तद्विशस्तु सर्वं ॥

फिर आचार्यभक्ति और श्रुतभक्ति पठे । फिर नीचे लिखा श्लोक मत्र पद प्रतिमापर पुष्प क्षेपे न ब्रह्मभूषण उतारकर एक थालीमें रखे ।

यः सर्वसिद्धान्प्रणिपत्य केशानुरपाठ्य दिव्यांबरबाल्यभूषाः ।

तयक्त्वा प्रब्रतान्ज निजातल्लब्धै स एव देवो जिनर्षिष एषः ॥

ॐ नमो भगवतेऽह्ने षणः नामाधिकप्रपनाय ब्रह्मभूषणमपनयामि स्वाहा । फिर भगवानकी प्रतिमाके मस्तकमें गाढी केशर लगाकर तबपर लौंग केशोंके भाँडोंकी स्थापनामें चिपका दे । नमः सिद्धेभ्यः कहकर तत्र केशरूप लौंगोंको किची अन्य पेटी या थालीमें रखे अर्थात् केशलौंच करे । सूत्रक पात्र हरएक क्रियाको ब्रह्मज्ञाता जाये तब दर्शकगण जय जयकार करें । उन केशोंकी थालीको वेदीपर रखी रहने दी जाये । फिर आचार्य ऐसा कहे—“अहं इवं वायवाविरतोऽस्मि” फिर विद्वम्भकिका पाठ पठे ।

पश्चात् केशरसे चोनेकी महीन सुईद्वारा प्रतिमापर अंक न्यास करे—पहले आचार्य मातृका मंत्र १०८ बार पढ़कर भाँडोंके द्वारा अपने अगमें अक्षरोंको वेठा ले । इष्ट समय ब्रह्मजनोंका मत लगानेको या तो १२ तपका सपदेश हो वा वैरागी भजन हो—

मातृका मंत्र ।

ॐ नमोऽहं न आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ए ऐ ओ औ अ अः क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह । कीं हीं कौं स्वाहा ।

भागे जहाँ प्रतिमाके अगोंपर इन अक्षरोंको लिखना कहेंगे वही अपने अगोंपर भी ध्यानसे बैठा ले ।

(१) ओं नमः ऐसा कहकर अक्षरोंको ललाट या माथेपर लिखे । (२) ओं आं नमः ऐसा कहकर आ की मुखकी गोलाईपर लिखे अर्थात् मुखवृत्तपर लिखे । (३) ॐ इ नमः ऐसा कह इ को दाहने आलमें लिखे । (४) ॐ ई नमः ऐसा कह ई को बाईं आलमें लिखे । (५) ॐ उ नमः ऐसा कह उको दाहने कानमें लिखे । (६) ॐ ऊ नमः ऐसा कह ऊ को बाए कानमें लिखे ।

(७) ॐ ऋ नमः ऐषा क्व ऋ को दाहनी तरफके नाक छिद्रमें लिखे । (८) ॐ ऋ नमः ऐषा क्व ऋ को बाई तरफके नाक छिद्रमें लिखे । (९) ॐ लं नमः ऐषा क्व ल को दाहने (गण्डस्थ) गालपर लिखे । (१०) ॐ लृ नमः ऐषा क्व लृ को बाए गालपर लिखे । (११) ॐ ए नमः ऐषा क्व ए को ऊपरको ओठमें । (१२) ॐ ऐ नमः ऐषा क्व ऐ को नीचेके ओठमें । (१३) ॐ औ को नमः ऐषा को औ को ऊपर व नीचेके दातोंमें । (१४) ॐ अ अः इति नमः ऐषा क्व अ अः को चिह्नके ऊपर लिखे । (१५) ॐ क ख नमः ऐषा क्व क ख को दाहनी मुजापर । (१६) ॐ ग घ नमः ऐषा क्व ग घ को दाहने हाथकी अंगुलियोंमें । (१७) ॐ ङ नमः ऐषा क्व ङ को दाहने हाथके अप्रभागमें या हथेलीमें । (१८) ॐ च छ नमः ऐषा क्व च छ को बाई मुजापर । (१९) ॐ ज झ नमः ऐषा क्व ज झ हाथकी अंगुलियोंमें । (२०) ॐ ञ नमः ऐषा क्व ञ को बाए हाथके अप्रभागमें या बाई हथेलीपर । (२१) ॐ ट ठ नमः ऐषा क्व ट ठ को दाहने चरणके मूळमें । (२२) ॐ ड ढ नमः ऐषा क्व ड ढ को दाहने चरणकी गुल्फमें या टिकूर्यामें । (२३) ॐ ण नमः ऐषा क्व ण को दाहने चरणके अप्रभागमें या तलवमें । (२४) त थ नमः ऐषा क्व त थ को बाए चरणके मूळमें । (२५) ॐ द ध नमः ऐषा क्व द ध को बाए चरणकी गुल्फमें । (२६) ॐ नं नमः ऐषा क्व न को बाए चरणके अप्रभागमें । (२७) ॐ प फ नमः ऐषा क्व प फ को दाहने पगकी पीठपर । (२८) ॐ व भ नमः ऐषा क्व व भ को बाए पगकी पीठपर । (२९) ॐ म नमः ऐषा क्व म को उदरमें । (३०) ॐ य नमः ऐषा क्व य को हृदयमें । (३१) ॐ र नमः ऐषा क्व र को दाहने कंधेपर । (३२) ॐ ल नमः ऐषा क्व ल को गलेमें (ककुदि) । (३३) ॐ व नमः ऐषा क्व व को बाए कंधेपर । (३४) ॐ श नमः ऐषा क्व श को हृदयसे लेकर दाहने हाथ तक लिखे । (३५) ॐ षं नमः ऐषा क्व ष को हृदयसे लेकर बाए हाथ तक लिखे । (३६) ॐ षं नमः ऐषा क्व षं को हृदयसे लेकर दाहने पग तक लिखे । (३७) ॐ हं नमः ऐषा क्व ह को हृदयसे लेकर बाए पग तक लिखे । (३८) ॐ क्ष नमः ऐषा क्व क्ष को हृदयसे लेकर उदर तक लिखे ।

फिर आचार्य १०८ दफे नीचे लिखा अनादिबिद्म मंत्र जपे—“ॐ णमो अरहाताण, णमो सिद्धान, णमो आश्रीयाण णमो उव्वञ्जायाणं” णमो लोए उव्वञ्जाहूण । चत्तारिमगल, अरहतमगल, बिद्धमगल, षडूमगल, केवलपणत्तोम्ममोगल । चत्तारिलो गुत्तमा, अरहत लो गुत्तमा, बिद्धलो गुत्तमा, षडूलो गुत्तमा, केवलपणत्तोम्ममो लो गुत्तमा, चत्तारिषरण पव्वज्जामि, अरहतषरण पव्वज्जामि, बिद्धषरण पव्वज्जामि, षडूषरण पव्वज्जामि, केवलपणत्तोम्ममोषरण पव्वज्जामि । झौं झौं स्वाहा । १०८ लौंग लेकर जपे या मालासे जपे ।

फिर एक रकाबीमें लौंग या पुष्प लेकर प्रतिमापर नीचे लिखे मंत्रोंका संस्कार करे । अब उपदेश या भजन बन्द हो जावे । जैसे आचार्य मंत्र बोले तबीका भाव सूत्रक पात्र या कोई दर्शकोंको समझाता जाय—“जैसे जब कहा जाय बर्दशनसंस्कारः भवतु तब समझावे कि भगवानके विश्वमें सम्यग्दर्शनका संस्कार प्राप्त हो यह भावना की गई है । इत्यादि ।

(१) ॐ ह्रीं इह अर्हति बर्दशनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । इतना कह पुष्प या लौंग क्षेपे । इषी तरह पुष्प क्षेपता जाय । (२) ॐ

हीं इह अर्हति वज्रानुत्पत्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३) अं हीं इह अर्हति चारित्र्यस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४) अं हीं इह अर्हति सत्पः
 परकारः स्फुरतु स्वाहा । (५) अं हीं इह अर्हति (यथा दर्शन ज्ञान चारित्र्य व तपके वीर्ये प्रयोजन मालम्ब होता है) पदवीचतुष्टयस्कारः
 स्फुरतु स्वाहा । (६) अं हीं इह अर्हति अष्टप्रवचनमातृकास्कारः स्फुरतु स्वाहा । (पांच समिति तीन गुप्तिको अष्टप्रवचनमातृका कहते हैं)
 (७) अं हीं इह अर्हति शुद्धशुद्धकावलम्बस्कारः स्फुरतु स्वाहा (आठ शुद्धि-भाव शुद्धि, कायशुद्धि, विनयशुद्धि, ईर्ष्यापशुद्धि, भिक्षाशुद्धि,
 प्रतिष्ठापनशुद्धि, शयनासनशुद्धि तथा वाक्यशुद्धि)-(८) अं हीं अर्हति द्वाविंशतिपराषहजयस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (९) अं हीं इह अर्हति
 त्रियोगेन वयमाशुत्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१०) अं हीं इह अर्हति कुनकारितानुमोदनेरितिवारनिवृत्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (११) अं इह अर्हति शीलव्रतस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१२) अं हीं इह अर्हति दशव्यसोपरमस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (५ इन्द्रियव्यसम,
 ५ प्राणव्यसम या पांच प्रकार जीव रक्षण) । (१३) अं हीं इह अर्हति पञ्चेन्द्रियनिर्जयस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१४) अं हीं इह अर्हति
 वज्रानचतुष्टयनिर्वाहस्कारः स्फुरतु स्वाहा (यथा मतिज्ञानादि चार स्थिर रहे) । (१५) अं हीं इह अर्हति सत्तमक्षमादि दशविषयवर्मावर्णनस्कारः
 स्फुरतु स्वाहा । (१६) अं हीं इह अर्हति अष्टादशवह्नशीलपरिशौचनस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१७) अं हीं इह अर्हति चतुरशीतवह्नी-
 तारगुणवमाश्रयस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१८) अं हीं इह अर्हति अतिशयविशिष्टवर्मावर्णनस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१९) अं हीं इह अर्हति
 अप्रमत्तव्ययस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२०) अं हीं इह अर्हति सुदृढयुतनेजोवाप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२१) अं हीं इह अर्हति अप्रमत्त-
 पक्षपक्षेण्यारोहणस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२२) अं हीं इह अर्हति अनन्तगुणविशुद्धिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२३) अं हीं इह अर्हति
 अयाप्रमत्तकरण या अन्वःकरणप्राप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२४) अं हीं इह अर्हति पृथक्स्ववित्तकीचाराशुक्लध्यानस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (२५) अं हीं इह अर्हति अपूर्वकरणप्राप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२६) अं हीं इह अर्हति अनिवृत्तिकरणप्राप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (२७) अं हीं इह अर्हति वादरकवायचूर्णनस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२८) अं हीं इह अर्हति सूक्ष्मकवायचूर्णनस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (२९) अं हीं इह अर्हति सूक्ष्मवाग्म्यायचारित्र्यस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३०) अं हीं इह अर्हति प्रकीर्णमोहस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (३१) अं हीं इह अर्हति यथास्वयातचारित्र्यावाप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३२) अं हीं इह अर्हति एकस्ववित्तकीचाराशुक्लध्यानाव-
 लम्बनस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३३) अं हीं इह अर्हति धातिवातपमुद्भूतकैवल्यवागमस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३४) अं हीं इह अर्हति
 वर्मतीर्थवृत्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३५) अं हीं इह अर्हति सूक्ष्मक्रियाशुक्लध्यानपरिणत्वस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३६) अं हीं इह
 अर्हति शीलेशीकरणस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३७) अं हीं इह अर्हति परमवयस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (३८) अं हीं इह अर्हति योगचूर्णकृतिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३९) अं हीं इह अर्हति योगयुतिभास्वस्कारः स्फुरतु स्वाहा (अयोग्य
 गुणस्थान प्राप्ति) । (४०) अं हीं इह अर्हति पशुच्छनक्रियाशुक्लध्यानप्राप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४१) अं हीं इह अर्हति निर्जरायाः
 परमकाष्ठासूक्ष्मस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४२) अं हीं इह अर्हति पूर्वकर्मक्षयाप्तिस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४३) अं हीं इह अर्हति
 अनादिभवपरावर्तनविनाशस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४४) अं हीं इह अर्हति द्रव्यक्षेत्रकाळभवभाषयावर्तननिष्कृतिस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

(४५) ॐ ह इह अर्हति षट्पुर्गतिपरावृत्तिपरंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनतगुणषिद्धत्वप्राप्तिपरंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४७) ॐ ह्रीं इह अर्हति अदेहबहन्शनोप्रयोगचात्रिपरंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४८) ॐ ह्रीं अहं इहार्हतिविद्ये अदेहबहोत्वदर्शनोपयोगै-
श्र्यपर्यप्राप्तिपरंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । नोट-सूत्रकार या पंडित यह वमश्रावि कि इष विम्बमें यहगुण प्रकाशमान हों ऐसा स्थापन इष विम्बमें किया जाता है । अब पूजा की जाये । मंडलके आगे आकार्य पूजा करे इन्द्र भी शामिल हो ।

(६) तपकल्याणककी पूजा ।

अथासिधाराव्रतसद्धितीयं निर्वाणदीक्षाग्रहणं लघानम् । यमर्चयामासुरशेषशकास्तमर्चयामो जगदर्चनीयम् ॥

ऐसा कह पुष्पांजलि क्षेपे ।

सारशांतरसनिलजितात्मबन्धपदाश्रयति तेन वारिणा ॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥

ॐ ह्रीं श्री तीर्थकृन्मुनिलकाम जन्मनराश्रुधुविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

सद्गुणमणुनचदनेन ते कीर्तिवत्सकलतोषपोषिणा ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ चंदनं ॥ २ ॥

स्वन्मुखेन्दुभजनार्थमागतैर्भ्रतृजैरिव दलक्षकाक्षतैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् । अक्षतं ॥ ३ ॥

सुप्रसादसुकुमारताद्विभिस्रबद्धचोभिरिव नव्यपुरुषकैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ पुरुषं ॥ ४ ॥

आरुणाय चरुणासृतांशुबद्धयंजनैरपि तदंकरांकिभिः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ चरुं ॥ ५ ॥

धर्मदीपक न ते वयं समा, भवतुमित्थमितवत्पदीपकैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ दीपं ॥ ६ ॥

सेव्यवाद् नपयेद्भ्रमंगंबत्स्यान्मधुधूपधूमकैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ धूपं ॥ ७ ॥

नम्रमव्यसुकृतानुकारिभिः सारभूतसहकारकाङ्क्षिभिः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम् ॥ फलं ॥ ८ ॥

गुणमणिगणसिंघूर्णव्यलोकैकबंधून् । प्रकटितजिनसागारैश्चस्तमिथ्यात्वमार्गीन् ॥
परिचितनिजतत्त्वान्पालिताश्रोपसत्त्वान् । शम्भरसजितचंद्रानर्धयामो सुनीन्द्रान् ॥ अर्ध्यं ॥

श्रीभद्रबोधप्रयाह्य प्रबिम्बलचरितस्वात्मसद्दयाननिष्ठ ।

स्याद्वादांभोजमानो भिजगहुपकृतिव्यग्रयोगीश्वर त्वाम् ॥

अर्ध्यं चानर्धनानाविधिविहितं द्रव्यसुद्धार्यं वर्धं ।

प्रेक्षिष्योदारपुष्पांजलिअलिकलितं श्रुरिभक्तया नमामः ॥ अर्धार्घ्यं ॥ १० ॥

अब २४ भगवानकी तपकल्याणककी पूजा की जावे ।

गीता छन्द—श्री रिषभदेव सु आदि जिन श्रीवर्द्धमान तु अंत हैं ।

बन्दुहुं चरण वारिज तिन्होके जपत तिनको संत हैं ॥

करके तपस्या साधु त्रत ले मुक्तिके स्वामी अए ।

तिन तपकल्याणक यजनको द्रव्य आठों हैं तए ॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादि वर्द्धमानजिन भग्रावतरावतर बबौवट् अत्र तिष्ठ ठ ठ, अत्र मम बनिहितो भवर वषट् ।

छन्द वाढी—शुचि गंगाजल भर झारी, रुज जन्म मरण क्षयकारी ।

तपसी जिन चौविस गाए, हृद्य पूजत विघ्न नशाए ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि वर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो जल निर्वपामीति स्वाहा ।

शीतल चंदन घसि लाऊं, भयका आताप शमाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ चंदनं ॥
अक्षत ले शशि दुत्तिकारी, अक्षयगुणके करतारी । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ अक्षतं ॥
बहु फूल सुवर्ण चुनाऊं, निज काम व्यथा हटथाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ पुष्पं ॥
चरु ताजे स्वच्छ बनाऊं, निज रोग क्षुधा मिटवाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ चरुं ॥
दीपक ले तम हरतारा, निज ज्ञानप्रभा विस्तारा । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ दीपं ॥
धूयायन धूप खिवाऊं, निज आठों कर्म जलाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ धूपं ॥
फल सुन्दर ताजे लाऊं, शिबफल ले चाह मिटाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ फलं ॥
शुभ आठों द्रव्य मिलाऊ, करि अर्ध परमसुख पाऊ । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ अर्धं ॥

नीमी बदि चैत प्रमाणी, वृषमेश तपस्या ठानी । निजमें निज रूप पिछाना, हम पूजत पाप नशाना ॥

ॐ ही चैत्रकृष्णानवर्ष्या श्री ऋषभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

दशमी शुभ माघ बदीको, अजितेश लियो तप नीको । जगका सब मोह हटाया, हम पूजत पापभगाया ॥

ॐ ही माघकृष्णादशम्या श्री अजितनाथाय जिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

भगसिर सुदि पूरणमासी, संभव जिन होय उदासी । केशलौच महातप धारो, हम पूजत भय निरवारो ॥

ॐ ही अगहनशुक्लपूरणमास्या श्रीरुच्यनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

द्वादश शुभ माघ सुदीकी, अभिन्दन बन चलनेकी । चिन ठान परमतप लीना, हम पूजत हैं गुण चीन्हा ॥

ॐ ही माघशुक्लद्वादश्या श्री अभिनन्दनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

नीमी वैशाख सुदीमें, तप धारा जाकर बनमें । ओ सुमतिनाथ सुनिराई, पूजूं मैं ध्यान लगाई ॥

ॐ ही वैशाखशुक्लानवम्या श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (५)

कातिक बदि तेरसि गाई, पद्म प्रभु समता आई, बन जाय घोर तप कीना, पूजें हम सम सुख भीना ।

ॐ ही कार्तिकृष्णात्रयोदश्या श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

सुदि द्वादश जेठ सुहाई, धारा भावन प्रभु आई, तप लीना केश उपोड़े, पूजूं सुपाथ्य यति ठाड़े ॥

ॐ ही ज्येष्ठशुक्लद्वादश्या श्री सुपाथ्यजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

एकादश पौष बदीको, चन्द्रप्रभु धारा तपको । धनमें जिन ध्यान लगाया, हम पूजत ही सुख पाया ॥

ॐ ही पौष कृष्णाएकादश्या श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

अगहन सुदि एकन जाना, श्री पुष्पवत्त अगथाना । तप धार ध्याय निज कीना, पूजूं आतम गुण चीन्हा ॥

ॐ ही अगहनशुक्लएक श्री पुष्पवत्तजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

द्वादशि बदी माघ महीना, शीतल प्रभु ससता भीना । तप राखो योग सम्हारो, पूजें हम कर्म निवारो ॥

ॐ ही माघकृष्णा द्वादश्या श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय तप जन्मकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

बदि फाल्गुण ग्यारस गाई, श्रेयांसनाथ सुल्लदाई, हो तपही ध्यान एभाया, हम पूजत हैं जिनराया ॥

ॐ ही फाल्गुणकृष्णा एकादश्या श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

बदि फाल्गुण चौदसि स्वामी, श्रीवासुपुत्र शिवनामी । तपसो हो ससता खाधी, रूप पूजत धार समाधी ॥

ॐ ही फाल्गुणकृष्णा एकादश्या श्री वासुपुत्रजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)

वदि माघ चौथ हितकारी, श्री विमल सुदीक्षा धारी । निज परिणतिमें लय पाई, हम पूजत ध्यान लगाई ॥

ॐ ह्रीं माघ कृष्णाचतुर्थ्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

द्वादशि वदि जेठ सुहानी, बन आए जिन त्रय ज्ञानी । घर सामायिक तप साधा, हम पूजूं अनंत हरबाधा ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णाद्वादश्यां श्री अनतनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

तेरस सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ तप लीना । बनमें प्रसु ध्यान लगाया, हम पूजत मुनिपद धयाया ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

चौदस शुभ जेठ बदीमें, श्री शांति पधारे बनमें । तछे परिग्रह तज तप लीना, पूजूं आतमरस भीना ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)

करि दूर परिग्रह सारी, बैसाख सुदी पड़िबारी । श्री कुन्धु स्वात्मरस जाना, पूजनसे हो कल्याणा ॥

ॐ ह्रीं बैशाखशुक्लप्रतिपदाभ्यां श्री कुन्धुनाथजिनेन्द्राय जम्भकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)

अगहन सुदि दशमी गई, अरनाथ छोड़ गृह जाई । तप कीना होय दिगंबर, पूजें हम शुभ भावां कर ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लचतुर्दश्यां श्री अरनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय निर्वपामीति स्वाहा । (१८)

अगहन सुदि ग्यारम कीना, सिर केशलोच हित चीन्हा । आमछ्दि घती व्रतधारी, पूजें नित साम्य प्रचारी ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लएकादश्यां श्री मछिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)

बैसाख वदि दशमीको, मुनिसुव्रत धारा व्रतको । समता रसमें लौ लाए, हम पूजत हा सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं बैशाखकृष्णादशम्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)

दशमी आषाढ वदोकी, नमिनाथ हुए एकाकी । बनमें निज आतम धयाए, हम पूजत ही सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णादशम्यां श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)

छठि श्रावण शुक्ला आई, श्री नेमिनाथ बन जाई । करुणा धर पशु छुडाए, धारा तप पूजूं धयाए ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठ्यां श्री नेमनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)

छवि पौष ढ्कादशि श्यामा, श्री पार्श्वनाथ गुणधामा । तप ले बन आसन ठाना, हम पूजत शिवपद पाना ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाचतुर्दश्यां श्री पार्श्वजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)

अगहन वदि दशमी गई, बारा भावन शुभ भाई । श्री बर्द्धमान तप धारा, हम पूजत हों सब पारा ॥

ॐ ह्रीं अगहनकृष्णादशम्यां श्री बर्द्धमानजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

भुजगप्रयात छन्द—नमस्ते नमस्ते सुनिन्दा । निवारें भली भांतिसे कर्म फन्दा ॥
 संभारे सु द्वादश तपं बन मंझारी । सदा हम नमत हैं तिन्हें मन सम्हारी ॥ १ ॥
 त्रयोदश प्रकार सु चारित्र धारा । अहिंसा महा सत्य अस्तेय प्यारा ॥
 परम ब्रह्मवर्य परिग्रह तजाया । सु धारा महा संयमं मन लगाया ॥ २ ॥
 दया धार भूको निरखकर चलत हैं । सुभाषा महा शुद्ध मीठी बढत हैं ।
 करै शुद्ध भोजन सभी दोष टालें । दयाको धरे वस्तु लें मल निकाले ॥ ३ ॥
 बचन काय मन गुप्तिको नित्य धारें । धरम ध्यानसे आरम अपना विचारें ॥
 धरें सास्य आबं रहें लीन निजमें । सु चारित्र निश्चय धरें शुद्ध मनमें ॥ ४ ॥
 ऋषभ आदि श्री वीर चौबीस जिनेशा । बड़े वीर क्षत्री गुणी ज्ञान ईशा ।
 खड्ग ध्यान आतम कुशल मोह नाशा । जजें हम यतनसें स्वआतम प्रकाशा ॥ ५ ॥

दोहा—धन्य साधु सभ गुण धरें, सहें परीसह धीर । पूजत मंगल हों महा, टलें जगतजन वीर ॥

ॐ हीं श्री ऋषभादि वीरांत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो महार्घं निर्वयामीति स्वाहा ।

पूजाके पीछे फिर आचार्य नीचेका श्लोक पढ़ सामाधिक चारित्रिका स्थापन प्रतिमामें करके पुष्प प्रतिमापर क्षेपें ।

यः सर्वसावद्यनिवृत्तिरूपं, चारित्रनाथं विगतप्रमादं ।
 आसेद्विबान्सिद्धगुणानुरक्तः, स एव देवो जिनविम्ब एषः ॥

फिर चार बत्तीका दीपक जलाकर नीचे लिखा श्लोक पढ़ प्रतिमापर पुष्प क्षेपे । संघको सूचित करे कि भगवानको मनःपर्यय-ज्ञानकी प्राप्ति हुई है अर्थात् भगवान ४ ज्ञानचारी हैं ।

यदा तु सामयिकभाववृत्तं, तदा सन्नःपर्यययुयुवोर्धं ।
 अतश्चतुर्ज्ञानधिराजितो यः, स एव देवो जिनविम्ब एषः ॥

फिर इन्द्रादि प्रणाम करके शान्तिभक्ति पढ़े । फिर आचार्य भगवान्के केशोको पात्रमें स्थापकर नीचेका श्लोक पढ़कर भगवान्के आगे पुष्प ढाले—

यस्य प्रभोः केशकलापमिन्द्रः, सम्पुञ्ज निष्पन्न च रत्नपात्रम् ।
निक्षेपयामास पयः पयोधौ, स एव देवो जिमामिभ्य एवः ॥

फिर आचार्य इन्द्रको कहे “ इन पवित्र केशोंको क्षीरघमुद्रमें क्षेपो ”, इन्द्र के राजे वालेके बाय देवोंके बाय जाकर किर्वा नदी या कूपमें क्षेपे । फिर आचार्य सर्व उपस्थित मंडलीसे नियमादि व व्रतादि ऐनको कहे । कुछ देर पीछे विसर्जन करके जय बोले, सर्व प्रभु जाधि । आचार्य मूर्तियोंको कपड़ेमें ढककर मूल वेदीपर लाकर विराजमान करे तब अन्य प्रतिमाओंके वखादि उतारकर चन्दनसे छेपकर फिर पौछकर मूल प्रातमाके समान अक न्यास करे अर्थात् अक्षरोंको खिले फिर ४८ प्रकार पढके प्रवपरा पुष्प ढांछे और कहे— अस्मिन् विभवे तपकल्याणक आरोपयामि स्वाहा । फिर नमस्कार कर तपकल्याणककी क्रिया समाप्त करे ।

अध्याय सातवां । ज्ञानकल्याणक ।

(१) भगवानका प्रथम आहार—तपकल्याणकके दूधरे भरे आचार्य, इन्द्र आदि पात्र मंडपमें आवें और पढेके दिनकी भांति अग शुद्ध करके अभिषेक व पूजा तथा होम करलें । मंडपमें ही यह दृश्य दिखाया जावे । पढेले चवतूरे तक परदा पड़ा हो । दूधरे चवतूरे पर जहातक विधि एकत्र की जावे वहांतक परदा रहे । दूसरे चवतूरे पर राजा सोम व श्रेयांबके घरकी कल्पना की जावे । आहार देनेके लिये श्शुका रघु तैयार किया जावे व पूजनकी घामश्री हो । एक स्थान आहार देनेको व एक स्थान पढेले भगवानकी विराजमान कर पूजा करनेको रहे । कोई दो गुरुश्योंको राजा सोम व श्रेयांब स्थापित किया जावे । इसके लिए बोली बोल की जावे—जो अधिक रुमया प्रतिष्ठाके सर्वमें दे उन्हें ही बनाया जावे । यह पढेले ही किया जावे । जो बनें वे स्त्री बहित हों व न्यायमार्गी जिनधर्मके पक्के श्रद्धालु हों । राजा सोम व श्रेयाष शुद्ध धोती दुपट्टा पहनें, मस्तक ढके, दोनों स्त्रियां भी शुद्ध वल पहनें । चारों जने नारियलसे ढका पानीका कलश लेकर चवतूरेके आगे ही द्वाारापेक्षणके निमित्त खड़े हों । इतनेमें परदा उठे ।

आचार्य मूल प्रतिमाको लेकर मंडपके बाहरसे धारकर लीवे उच समय सर्व प्रभाजन जयजयकार शब्द कहे । अब चवतूरेके पाष प्रसु आजवें तब राजा सोम कहे—“ अत्र आहार पानी शुद्ध, तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ ” फिर आचार्य भगवानको उच्च आसनपर विराजमान करे तब दातार राजा सोम भगवानके चाणोंको शुद्ध जलसे धोवें, गन्धोदक लगावें फिर हाथ धो अष्टद्वयसे नीचे प्रकार पूजन करें । पूजन करके तीन प्रदक्षिणा दे नमस्कार करें फिर नौ दफे णमोकार मंत्र पढ़ें । भगवानको आचार्य उठाकर दूपरे उच्च आसनपर विराजमान करें तब राजा सोम श्शुकरकी धारा भगवानके हाथपर ढांछे तब हां ऊपरसे रत्नोंकी व पुष्पोंकी छुट्टि हो । मंडपके बाहर बाजे बजे,

भीतर घंटा घड़ियाल बजे, मन्द सुगन्धित पवन चबानेके लिये सुगन्धित धूप खेई जावि तथा लोग यह कहै-धन्य यह दान, धन्य यह पात्र । श्रीतीर्थकर ऋषभदेव, धन्य यह दातार ! चारौ तरफ खूब जयजयकार शब्द हो । फिर शुद्ध जलसे हाथोको धोकर कपड़ेसे पौछ दे । आचार्य प्रतिमाको दूसरे आसनपर विराजमान करे और आचार्य या सूचक पात्र या अन्य कोई पंडित दानका महान्य्य समझावै तथा उप समय राजा सोम व श्रेयास लो ब्रह्मि ह्राय जोड़े प्रमुक्त पन्मुख खेड़े रहे तथा चार दान व विधादानार्थ कुछ रकमकी घोषणा करावै तथा आचार्य अन्य लोगोंको भी दानकी प्रेरणा करे । यदि दानकी इच्छा हो तो मुखिया पट्टी लेकर धक्के पात्र घूम आवि । इधर आचार्य भगवानको लेकर मंडपसे बाहर ले जाकर मूल वेदीपर विराजमान करे, दूसरे चबूतरेपर भी परदा पड़ जावि परन्तु मंडपमें मजन होने लगें । जबतक दान न लिख जावि मंडपसे किसीको जाने न दिया जावि ।

पूजा जो आह रके समय पढ़ी जावे ।

पहले ही राजा सोम व श्रेयास मिलकर स्तुति पढ़े—

पढ़ी छन्द—जय जय तीर्थकर गुरु महान, हम देख हुए कृतकृत्य प्राण ।
 महिमा तुमरी बरणी न जाय, तुम शिव मारग साधत स्वभाव ॥ १ ॥
 जय धन्य धन्य ऋषभेश आज, तुम दर्शनसे सब पाप भाज ।
 हम हुए सु पावन गात्र आज, जय धन्य धन्य तप सार साज ॥ २ ॥
 तुम छोड़ परिग्रह भार नाथ, लीनो चारित तप ज्ञान साथ ।
 निज आत्म ध्यान प्रकाशकार, तुम कर्म जलावन वृत्ति धार ॥ ३ ॥
 जय सर्व जीव रक्षक कृपाल, जय धारत रत्नत्रय विशाल ।
 जय सौनी आत्म मननकार, जग जीव उद्धारण मार्ग धार ॥ ४ ॥
 हम गृह पवित्र तुम चरण पाय, हम मन पवित्र तुम ध्याय ध्याय ।
 हम भए कृतारथ आप पाय, तुम चरण सेवने चित बढ़ाय ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थकर पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् । यालमें पुष्प डाले ।

वपत तिलका—सुन्दर पवित्र गंगाजल लेय झारी, डारुं त्रिधार तुम चरणन अग्र भारी ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर सुनींद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्ताहा ।

श्री चन्दनादि शुभ केजार मिश्र लाये, अब ताप उपशम करण निज भाव ध्याए ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ चंदनं ॥
 शुभ श्वेत निर्मल सुअक्षत धार थाली, अक्षय गुणा प्रगट कारण शक्तिशाली ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ अक्षतं ॥
 चम्पा गुलाब इत्यादि सु पुण्य धारे, है काम शत्रु बलवान तिसे विदारे ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ पुष्पं ॥
 फेणी सुहाल बरफी पकवान लाए, क्षुद्ररोग नाशने कारण काल पाए ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ बहं ॥
 शुभ दीप रत्नत्रय लाय तमोपहारी, तम मोह नाश मम होय अपार भारी ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ दीपं ॥
 सुन्दर सुगन्धित सु पावन धूप खेऊं, अरु कर्म काटको बाल निजात्म बेऊं ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ धूपं ॥
 द्राक्षा बदाम फल सार मराय थाली, शिव लाभ होय सुखसे समता संभाली ॥
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ फलं ॥
 शुभ अष्ट द्रव्य मय उत्तम अर्घ लाया, संसार खार जल तारण हेतु आया ।
 श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा ॥ अर्घं ॥

जयमाल ।

छन्द सृष्टिनी-जय सुदारूप तेरे सदा दोष ना, ज्ञान श्रद्धान पूरित धरें शोक ना ।

राजको त्याग वैराग्य धारी भए, मुक्तिका राज लेने परम मुनि थये ॥ १ ॥

आत्मको जानके पापको भानके, तत्त्वको पायके ध्यान उर आनके ।

कोधको हानके मानको हानके, लोभको जीतके मोहको भानके ॥ २ ॥

धर्म सय होयके साधते मोक्षको, बाधते मोक्षको जीतते द्वेषको ।

शांतिता धारते साम्यता पालते, आप पूजन क्रिये सर्व अथ बालते ॥ ३ ॥

धन्य हैं आज हम दान सम्यक् करें, पात्र उत्तम महा पापके दुख दरे ।

पुण्य सम्पत्त अरें काज हमरे सरें, आप सम होयके जन्म सागर तरें ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर मुनीन्द्रिय महार्धे निर्वपामीति स्वाहा ।

(२) भगवानका क्षपकभेणीपर आरूढ़ होना—बड़े १० वजे तक आहारदानकी विधि हो जावे । दो घंटे छुट्टी रहे । १२ वजेसे मळपमें कार्य प्रारंभ किया जावे । १२॥ वजे सर्व षण्ण्ड टिकटों द्वारा एकत्र किया जावे । आज ज्ञानकल्याणक होकर शाम तक प्रभुका नगरमें विहार व उपदेश होजावे । रात्रिको मळपमें उपदेश हो । विहार करनेके लिये यथायोग्य जुलूस तैयार रहे । रथपर प्रभुका विहार हो जो २ घंटेके भीतर लौट आवे । रास्तेमें चार जगह बामियाना रहे । ऐसा रास्ता लिया जावे जो जाते हुए दूबरा हो व आते हुए दूबरा हो । जब विहार हवे जो बामियाना हो, वहा रथ ठहर जावे. वहा १ भजन व २० भिन्न घर्षोपदेश हो । मळपमें दूबरे चबूतरेपर एक वनकी शोभा तैयार की जावे, कुछ गमले रख दिये जावे व एक छायादार वृक्ष रहे जिष्के नीचे उच्च शिळापर भगवान् अकेले तप करते हुए बैठे हों ऐसी रचना उच्च वृक्षकी स्थापनाके लिये नीचेका श्लोक पठ उषपर पुष्प क्षेपे—

शाखाच्छायेन योसौ हरति खलु सतां कर्मधर्मांशुतापम् ।

यः सौख्योदारस्वारं फलति शुभफलं मोक्षनाकादिभेदम् ॥

सेधते यं तदर्थं विबुधजनखगा यस्य चैवं प्रभावः ।

संगज्जानो हि तस्य त्रिभुवनमहितः सोस्तु बोधिद्रुमोऽयम् ॥ १ ॥

जिष् शिळापर आचार्य विराजमान करे उषसे ऊपर मातृका यंत्र नीचे प्रमाण लिखे । फिर प्रतिमाजीको विराजमान करे ।

मातृका मंत्र ।

ॐ नमो	क ख ग घ ङ			च छ ज झ ञ
	अं अ.	अ आ	इ ई	
श ष स ह	ओ औ	हं	उ ऊ	ट ठ ड ढ ण
	ए ऐ	ल लळ	क ऋ	
य र ल व	प फ ब भ म			त थ द ध न

ह्रीं ह्रीं क्रीं स्वाहा ।

और इषी मन्त्रको १०८ बार पढ़कर आगे जलधारा देवे ।

मातृका मंत्र ।

ॐ नमोऽई अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ए ऐ ओ औ अ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह, ह्रीं ह्रीं क्रीं स्वाहा ।

फिर पादा ठठवि तत्र भव जयजगकार शब्द कहे । दूबरे चबूतेपर शिवाय आचार्यके और कोई न हो । सूचक पात्र एक कोनेमें खड़ा हुआ कहे कि भगवान् ध्यानमें मग्न हैं तपस्या कर रहे हैं । आचार्यके पात्र पूजनकी सामग्री हो ।

२-३ थिनट ठहरकर आचार्य वंठे और प्रतिमाजीको नमस्कार करता हुआ यह स्तुति पढे—

छन्द मुक्तादान—नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु सुनीश । परम तपके करतार रिषीश ॥

न मोह न भान न क्रोध न लोभ । न हास्य न खेद न द्रोह न क्षोभ ॥ १ ॥

ममन्व न राग पदारथ सर्वं । चिदात्म वेदत छांडत गर्भं ॥
 सु भेद विज्ञान जगो चित बीच । सु आत्म अनुभव लावत खींच ॥ २ ॥
 स्वतन्व रन्त करत निज काज । कषाय रिपु दलनेको आज ॥
 लियो सत ध्यान मई अति सार । नमूं तुमको जिन कर्म निधार ॥ ३ ॥

फिर नीचेका श्लोक पढकर अर्घ देवे ।

बाह्याभ्यन्तरभेदतो द्विचिद्यता तत्रापि षट्भेदकं, बाह्याचान्तरमेधितस्वधिविभवप्रत्यूहनिणोशनात् ।
 भक्ष्याभावात्तदूनतात्रतपरोसंख्यानषट्स्वादानामोहैकांतशशास्त्रनांगकदनान्येवं तु बाह्यं तपः ॥ ८४४ ॥
 ॐ ह्रीं अनशानावमोदर्यवृत्तिपरिषुख्यानरूपपरित्यागोकातशयपावनकायकेश षट्प्रकार बाह्यतपोधारकाय जिनाय अर्घ नि० स्वाहा ।
 अंत्ये दोषविसंगतो न भवति प्रायश्चित्तानां क्रमो, नो वा यत्र विनेयताव्युपरमादौपाधिकस्योद्भवः ।
 नान्यत्र स्थितिमस्तु साधुषु तथा चैयावृत्तेः प्रक्रमो, नो वा शास्त्रसुशोलेभं त्विति परपार्थेण बोधेन ॥८४५॥
 ध्युरसर्गं प्रतिवासरं प्रसरतो ध्यानं स्वमाध्यायत, आख्यामात्रमुपाचरत्प्रतिकृतेर्नांगप्रलं भावनात् ।
 गाढोत्कृष्टसुहंस्य जिनपश्यास्येति संरूढितः, कलसं तच्छुचि नाम तत्फलगणैः संपूजयाम्यादरात् ॥८४६॥

ॐ ह्रीं प्रायश्चितविनयेनाहुत्तरस्माद्यशुर्गंध्यान षट्प्रकारातरगतपोनिष्ठाय जिनाय अर्घ निर्वमामोति स्वाहा ।
 यहाँपर सूचक कहदे कि प्रसु १ २ तका बावन कर रहे हैं, धर्मध्यानमे मग्न है ।

दोहा—अप्रमत्त ध्यानक चढ़े, अवःकरणमें लीन । क्षपक श्रेणिका यत्न है, कर्म करे अति दीन ॥
 सम्यक्त बालक प्रकृति, सात नहीं प्रसु पास । देव नरक तिर्यश्चगति, नहीं तहाँ है वास ॥

ॐ ह्रीं अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती अवःकरणप्रवृत्ति मिथ्यात्वादि दशकर्मवृत्तारहित श्रोत्रिनाय अर्घ ।

यहाँ दो आचार्य या सूचकपात्र समाको समझा दे कि भगवान क्षाकश्रेणीपर चढ़नेका लयन कर रहे हैं । पातिसय अप्रमत्त गुण-
 स्थानमें अधःकरण लब्धिको प्रारम्भ किया है । एता भगवान्की कार्त्तामें १० प्रकृति नहीं है ।

दोहा—फिर अपूर्व ध्यानक चढ़े, शुद्ध ध्यान गड्डीन । मोह-शक्ति विध्वंसक, साव अपूरव कीन ।

ॐ ह्रीं अपूर्वगुणस्थानारूढ श्रोत्रिनाय अर्घ । एता समझाया जाय कि प्रसु क्षपकश्रेणीमें चढ़े, आठवें गुणस्थानमें जाकर मोहकी
 २१ प्रकृतियोंके बलको निर्वल कर रहे हैं । (६ अनन्तानुबन्धी विषय)—

दोहा—धानक अनिवृत्ती चढे, सुद्ध भाव असि धार । त्रिशत छः कर्मन प्रकृति, कीना प्रसु संहार ॥
नरकगति तिर्यच गति, और आनुपूर्वीय । इक वे ते चहुं जातिको, उद्योता तप लीय ॥
पावर सूक्ष्म साधारणे, खोटी निद्रा तीन । विंशति प्रकृति कषायकी, लोभ विना क्षय लीन ॥
ॐ हीं अनिवृत्तिगुणस्थानारूढबद्धत्रिशत्प्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।
यहा प्रकट किया जाय कि प्रभुने शुक्लध्यानकी अग्निसे ३६ कर्मोंका क्षय कर डाला ।

दोहा—सूक्ष्म कषाय सुधानमें, चढे नाथ अति धीर । लोभ प्रकृति नास्ती सकल, मोह हृत्यो जगवीर ॥
ॐ हीं सूक्ष्मकषायगुणस्थानारूढलेभप्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

यहा सूचना हो कि १० वें में लोभका नाश किया ।

दोहा—बारम क्षीण कषाय गुण, चढे प्रभू बलवान । द्विताय सुल्ल ध्यावत भये, एक भाव अमलान ॥
ॐ हीं क्षीणकषायगुणस्थानारूढएकत्ववितर्कवीचार शुक्लध्यानधारकाय श्रीजिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

(२) तिलकदान विधि—फिर आचार्य खड़े हो बहुत वितयसे चारित्रभक्ति पढ़े और नीचे लिखे मंत्र पढ़े । इषमय लग्य शुभ हो ।
ॐ हां हीं हूँ हौं हः अषि आ र वा एहि एवीषट् । ॐ हा हां हूँ हौं हः अषि आ र वा अत्र तिष्ठ ठ ठः ॐ हां हीं हूँ हौं हः
अषि आ र वा अत्र मम प्रच्छिदितो भव भव वषट् । फिर नीचे लिखे मंत्रका १०८ दफे जाप करे ।

ॐ हीं श्री अर्हं अषि आ र वा अप्रतिहत शक्तिर्भवतु हीं स्वाहा । यह जाप करके फिर सुगधित केशसे प्रतिमाके नाभिस्थानमें
धोनेकी बटाईसे हँ ऐवा लिखे—(४) अधिवासना विधि—फिर जल चन्दनादि चढावे—

सुगन्धिशीतलैः स्वच्छैः सायुभिविर्मलैर्जलैः, अनन्तज्ञानहृषीर्थं सुखरूपं जिनं यजे ।
ॐ हीं श्री नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा जल ।

काश्मीरचन्दनसेन विच्छन्वशुभ्रभत्सौम्यमतमधुपावलिङ्गकृतेन ।

पीठस्थलीं जिनपतेरधिपादपद्मं, संचर्षयामि मुनिभिः परितः पवित्राः ॥ ८५२ ॥

ॐ हीं अर्हते पूर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु चन्दन गुहाण गुहाण स्वाहा । चन्दन चढावे ।

मुक्ताफलच्छविपरालजितकामकांतिपोद्भूतमोहतिमिरैकफलोपहेतु ।

शाल्यक्षतार्थपरिपूणपवित्रपात्रसुतारयामि भवतो जिनपस्य पार्श्वे ॥ ८५३ ॥

ॐ हीं अर्हते पूर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु अक्षतान् गुहाण गुहाण स्वाहा । अक्षतं ।

सौरभ्यम्पांद्रमकारदमनोऽभिरामपुरुषैः सुवर्णहरिचन्दनपारिजातैः ।
श्रीमोक्षमानिवनितापरिलभनाय, मालश्रादिभिश्चरणधोरणिमुत्सृजामि ॥ ८५४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु पुष्पाणि गृहाण स्वाहा । पुष्प ।

षष्ठोपवासविधये नमस्सर्पिषाक्तनैवेद्यभाजनमिदं परिचर्ये स्म ।

चारं तदीयपरिहृत्यभिधाप्रसिद्धये संस्थापयेज्जिनवरात्रिमभूनधात्र्यां ॥ ८५३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु नैवेद्य गृहाण स्वाहा ।

रपूर्जमशूखविततिप्रहतांधकारं, दीपं घृतादिमणित्रिविधालशोभं ।

उद्दिन्नशुक्रयुगलांतिमभागभजो, देहद्यति द्विगुणकोटियुतां करोमि ॥ ८५७ ॥

ॐ ह्रीं प्रज्वल प्रज्वल अमिन्तेजसे दीप गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्पूरचन्दनपरागसुरम्यधूपक्षेपोऽतु मे सकलकर्महतिप्रधानः ।

इत्येद्य भावमभिधाय हसंतिकायाद्भुत्क्षेपयामि किल धूपससूहमेनं ॥ ८५८ ॥

ॐ ह्रीं प्रवर्तते दह दह तेजोऽधिपतये असूहभूताय धूपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्मोष्ठकापहरणं फलमस्ति सुख्यं, तत्प्राप्तिसमुखतया स्थितवानसि त्वं ।

यस्मादनेकगुणलास्यकलानिधानघाम्रास्तमस्थलमदभ्रफलैर्धजामि ॥ ८५९ ॥

ॐ ह्रीं आश्रितजनायामिमतफळानि ददातु ददातु स्वाहा ।

त्रैलोक्याभपदं त्रिकालपतिताशेषार्थपर्यायजानन्नानन्तविकल्पनस्तुटकरं संसारचकोत्तरं ।

ज्योतिः केवलनामकमवतो ध्यानावतानप्रभोर्योऽयं तुर्यविशंशनक्षणमहः कोप्येष जीयात्पुनः ॥ ८६० ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते द्वितीयशुक्लध्यानोपात्यसमयप्राप्ताय अर्घं ।

यस्याश्रयेण सकलाघतृणौघदाहशक्तिवमाप चरितं चरितं जनेन ।

तत्त्वारूपश्वतयरूपमपास्य चारमन्त्यं यथाख्यमगमत्परिपूर्णांगं ॥ ८६१ ॥

ॐ ह्रीं यथाख्यातचारित्रवारकाय जिनाय अर्घं यहाँतक अधिवासना विधि हुई—

(५) श्री मुखोद्घाटन क्रिया—

नूरुं निरावृत्तिचमस्कृतिकारि तेजो, नो शक्यमीक्षितवतामपि भावुकानां ।
हृद्येवमपिपानयानयनेन जंभोरग्रे सुखाग्रमदृशसुपाकरोमि ॥ ८५५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते ष्वं शरीरावस्थिताय चमदन फल मत् धाम्यथुत मुत्र वल ददामि स्वाहा ।

रतना कहे तब परदा पड़ जावे—सूचक कहे कि भगवान्को केवलज्ञान होनेवाला है । जवतक परदा न लठे आप पत्र मनमें णमोकार मत्रका जाप करें व बिद्ध परमात्माका ध्यान करें । आचार्य परदेके भीतर होजाय कोई तरफ दिखाव न हो । इष प्रमय यदि कोई मुनि महाराज हों या ऐलक या शुल्लक या चारित्रवान् प्रतिमावारी ब्रह्मचारी हों तो उनको आचार्य भीतर ले ले । यदि न हों तो कोई हजै नहीं है । एक शुद्ध बलमें बात प्रकार अनाज बावकर मुखपर ढककर कपेट दे । तथा आगे जौकी माला रख दे ।

फिर आचार्य नम्र होजावे व ऐलकादि भी नम्र होजावे । ॐ नमः सिद्धेभ्यः ऐषा मत्र पढ़ें । आचार्य इष मत्रको पढते हुए चारोंतरफ जलधारा दे बिद्धचक्र यत्रको पाव रखकर नीचे लिखी स्तुति पढे, हाथ दोनों जोड लड़े रहे ।

स्वस्तिश्रीऋषभो देवोऽजिनः स्वस्त्यास्तु संभवः । अग्निनंदननामा च स्वस्ति श्रीसुमति प्रभुः ॥ ८६१ ॥
पद्मपद्मः स्वस्ति देवः सुशार्ध्वः स्वस्ति जायतां । चंद्रपद्मः स्वस्ति नोऽस्तु पुष्यदंतश्च शीतलः ॥ ८६२ ॥
श्रेयान् स्वस्ति वासुण्डयो धिमलः स्वस्त्यनंतजित् । धर्मो जिनः सदा स्वस्ति शान्ति कुंशुश्च स्वस्तिपरः ८६३ ॥
मल्लिनाथः स्वस्ति मुनिसुव्रतः स्वस्ति चै नमिः । नेमिजिनः स्वस्ति पार्श्वो वीरः स्वस्ति जायतां ८६४ ॥
भूतभाविजिनाः ऋषे स्वस्ति श्रीसिद्धनायकाः । आचार्य स्वस्त्युपाध्यायः साधवः स्वस्ति संतु नः ॥ ८६५ ॥

यह पढकर पुण्याजलि देवे । फिर नीचेका श्लोक व मत्र पढकर मुखके ऊपरसे कपडेको हटा ले ।

अथाख्यातं प्रांतोदयधरणिधुन्मूर्द्धनि प्रकाशोच्छ्वासाभ्या युगपदुपयुंजं स्त्रिसुवनं ।

दधस्त्र्योतिः स्थायंभधमपगतावृत्यपपथो मुखोद्घाटं लक्ष्म्यां व्रजतु ययनीं दूरसुदयेत् ॥ ८६६ ॥

ॐ उपहादिवड्डमाणान पचमहाक्लणसपण्णान महइमहावीरवड्डमाणसामीण सिज्ज मे महइमहाविजा अट्टमहापाडिहेरचड्डियाण सयत्तकलाघराण भज्जाजादरूपाण च उतीवातिषयविसेवञ्जुतोण बत्तीवदेवीदमणिमत्तयमहियाण पयत्तलोयस्स स्वतिपुट्ट ठिकल्लेणानाउआरोग-
करण बल्लदेववासुदेवचक्कररिषिमुणिजदिअणमारोवगूढाण उद्वयलोयसुइफत्तराण शुइश्यवहस्सणिलयाण परापरपरमप्याण अणाद्धिणिहणाण
बल्लिवाड्डुबल्लिपदाण वीरे वीरे ॐ हा हा क्षा सेणवीरे बड्डमाणवीरे णहस्सजयतमाईए वल्लसेत्तयमगयाण अस्सदवमपइड्डियाण उपहादवीरमगल-
महापुरिषाण णिच्चकात्तइड्डियाण इत्थमणिहिया मे भवतु ठ ठ. क्ष क्ष स्वाहा । यह श्री मुखोद्घाटन क्रिया हुई—

(६) नयनोन्मीलन क्रिया—फिर रकावीमें कपूर जलाकर सुवर्णकी पत्ताईकी रक्खे और दाहने हाथमें लेकर सोह मंत्रको ध्याता हुआ तथा १०८ दफे 'ॐ ह्रीं श्रीं अहं नमः' पढ़े । फिर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़कर नेत्रमें पत्ताई फेरे—

येनावद्धनिरुढकर्मविकृतिपालंबिका निघृणिं, छिन्नात्सानमजं स्वयमुद्यमपूर्वीयं स्वयं भासवान् ।

सोऽयं मोक्षसामकटाक्षसरणिप्रिसारपदः आजिनः, लाक्षादन्न निरूपितः स खलु सां पायादपायात्सदा ॥८३७॥
 ॐ णमो अरहताण गाणदघणचकुमुमयाण अभिरघायणविमकतेयाण बति तुंठ पुट्टि वरदव्मपाठिठेण व झ अमिय वरवीण स्वाहा ।
 यह मंत्र जयसेन कृन पाठमें है । नेमचन्द कृन पाठमें यह मंत्र है—“ ॐ ह्रीं अहं नमो अरहताण अघि वा उ वा श्रीं ॐ ह्रीं ई ” त्रिकाळ त्रिलोकपूजित पूर्वज्ञप्रित रक्त नील काचन कृष्ण नेत्रोन्मीलनानतज्ञान अनतदर्शन, अनतवीर्य, अनतसुखात्मकाय नयनोन्मीलन विदधामि प्रबौषट् । फिर आचार्य और मुनि आदि जो हों सो मिलकर सूरिमंत्र पढ़े—

ॐ ह्रीं णमोअरहताण णमोसिद्धाण णमोथाइरीयाण णमोउव्वायाण णमो छोए व्वन्नाहूण, चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, बाहूमगल, केवल्लिपणतोषम्मोमगल । चत्तारिलोकोत्तमा—अरहतलोकोत्तमा सिद्धलोकोत्तमा बाहूलोकोत्तमा, केवल्लिपणतोषम्मोलोकोत्तमा । चत्तारिघरण पव्वज्जामि अरइतडरण पव्वज्जामि सिद्धघरण पव्वज्जामि बाहूघरण पव्वज्जामि केवल्लिपणतोषम्मघरणं पव्वज्जामि । क्री ह्रीं स्वाहा । दोनों कानोंमें पढ़कर पुष्प प्रतिनापर क्षेपे तथा सर्वज्ञपना प्रगट करे ।

नोट—सूरिमंत्रके देनेका वर्णन मात्र जयसेन पाठमें है, आशाधर व नेमचन्द कृनमें नहीं है । हमने सूरिमंत्र क्या है ऐसा प्रश्न दो उदाचोन प्रतिष्ठा करानेवालोंसे पूछा परन्तु उन्होंने भी बताया नहीं । जयसेन पृ० १३६ में “ अथ सूरिमंत्र ” ऐसा लिखके आगे जो मंत्र लिखा था सो हमने नकल कर दिया है । यदि और कोई मंत्र हो तो प्राचोन प्रतिष्ठा करानेवाले उसे हो पढ़े व इव पुस्तकमें सुधार देवें । किसी बातको लिपाके रखना उचित नहीं है । फिर नीचेकी गाथा पढ़कर यवकी मालाको हटाळे—

ॐ सुत्तक्खरगडभाणं अरहंताण णमोत्थि भावेण . जो कुणह अणणमणो सो गच्छह उत्तमं ठाण ॥

फिर नीचेका श्लोक पढ़ अर्घ्य देवे ।

शुक्कद्वयेन परिहृत्य तपोधितानमरामानमाशु परिकल्पय कृतावकाशं ।

ज्ञानावलोकनसमत्ययनाशमापन्मोहस्य पूर्वदलेन समस्तभावात् ॥ ८४८ ॥

ॐ ह्रीं मोहनीय ज्ञानदर्शनावरणान्तराय निर्नाशकाय जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

फिर नीचेको गाथा पढ़कर पुष्प प्रतिमापर डाले—

ॐ केवल्लणाणदिवायरकिरणकलावप्यासासिपणाणे णवकेवल्लदूर्ध्वगमसुअणियपरमपपववएसो ।
 असहायणाणइंसणमहिओ इदिकेवली होदि । जोयेण जुत्तो ति स जानिजिणो अणाहिणिहणारिसे वुत्तो ॥

इत्येवोऽईन् बाक्षादवतीर्णो विश्व पातु इति स्वाहा ।

तब बाहर नाने वजने लगे। आचार्य भगवानके आगे बहुतसा कपूर जलता हुआ रखे और परदा उठे तब सब जय जय कहे। तब आचार्य व सूत्रक कहै कि भगवान्को केवलज्ञानकी प्राप्ति होगई है। आचार्य परदा खोलनेके पहले ब्रह्म पहन ले। फिर आचार्य बहुत विनयसे नमस्कार करे और नीचे लिखी स्तुति पढे। स्तुतिके पीछे नमन करके यह सूचित करे कि भगवानने दूसरे ब्रह्मध्यानसे १६ प्रकृतियोंका नाश किया। ज्ञानावर्णीय ५, दर्शनावर्णीय ६, अन्तराय ५, -४७ पहले नाशो थीं इत्थं तरह ६३ प्रकृतियोंको नाशकर या चार घातिया कर्म नाशकर भगवानने केवलज्ञान प्राप्त किया है।

स्तुति।

पद्मरी छन्द—जय केवलज्ञान प्रकाश धरं । ज्ञान-वर्णाय विनाश करं ॥

जय केवल दर्शन नायक हो । दर्शन आवर्णी घायक हो ॥ १ ॥

जय वीर्य अनन्त प्रकाशक हो । जय अन्तराय अघ नाशक हो ॥

तुम मोह बली क्षय कारक हो । क्षायिक समकितके धारक हो ॥ २ ॥

क्षायिक चारित्र विशाल धरं । आनन्द अनन्त प्रकाश धर ॥

जग मांहि अपूरव सूरज हो । विकसन भवि जीवन नीरज हो ॥ ३ ॥

मिथ्यात्व महा तम टालन हो । शिव मग उत्तम दरशावन हो ॥

तुम तारण तरण तरंड धरं । सुखकारण रत्नकरण्ड धरं ॥ ४ ॥

५ मिनट तक भगवानका दर्शन सब करने २ यथा वैठे हुए कर चुके कि परदा गिर जावे। परदेके बाहर इन्द्र आता है, उसीके साथ कुबेरदेव भी आता है। इन्द्र सभीकी तरफ घकेत करके कहता है—

कुबेर ! अभी हां तीर्थनायक श्री ऋषभदेवको केवलज्ञानका प्रकाश हुआ है। तीर्थप्रचार करनेका अवसर उपस्थित हुआ है। तुम शीघ्र समवर्णकी रचना तैयार करो, हम सब इन्द्रादि देव आते हैं। प्रभुकी भक्तिर ब उत्तम धर्मावृत पीकर तुमिता पायगे और अपने भवभयके पापोंका पहार करेंगे। कुबेर नमन कर कहता है—“जो आज्ञा”-पहले कुबेर जाता है फिर इन्द्र भी जाते हैं।

(८) समवर्ण रचना व पूजा—परदेके भीतर समवर्णकी रचना तैयार की जाती है। वनकी रचना तुर्त हटानी चाहिये। गणकुटी विराजमान करके तीन छत्र रीं, दोनों तरफ दो इन्द्र चमर ढालते हों, बिहाबन हो, मामडल हो, आगे आठ मगलद्रव्य हों। गणकुटीके आगे २४ कीठोंका माडला एक छोटी चौकीपर रचा हुआ सुन्दर रक्खा जाय, आगे पूजा करनेका सामान हो, आगे चढ़ानेके लिये कुछ रक्खा जाय। इत्थंरह रचना बन जावे। वृक्ष जो पहले या वह गणकुटीके पीछे रहने दिया जावे। यदि समवर्णके नकशेका

परदा हो तो एक तरफ टांग दिया जावे। यदि तीन कटनीदार चबूतरा हो व उसपर गवकुटी रहे तो और भी ठीक है। पहली कटनीपर आठ मण्डद्वय हों व धर्मचक्र हों। दूसरी कटनीपर ध्वजाएं हों क्योंकि भगवान अन्तरीक्ष विराजते हैं इसलिये स्फटिक कमलाकार व शीशोका कमलाकार बिहासन हो तो और भी शोभा हो। इस तरह रचना होनेपर परदा उठे। उस समय “श्री वृषभदेवके समवशरणकी जय” ऐसे शब्द चारों ओरसे हों।

इतनेहीमें सौधर्म इन्द्र व अन्य इन्द्रदेवोंके साथ व इन्द्राणी कुछ अन्य देवियोंके साथ नाजा नजाते हुए जय जय शब्द कहते हुए मंडामें पधारों व पुष्पांजलि देकर नमस्कार करें। एक ओर इन्द्र तथा आचार्य पूजा करे, इधर उधर इन्द्राणी पूजा करे। इधर उधर सामान पूजाका रखा हो। सब बैठे हों। तब नीचे प्रमाण अर्घ चढावे—

सत्तानात्रग्राहकं दर्शनं च, तद्भेदानां ग्राहकं ज्ञानसुक्त ।

ताभ्यां स्वास्थं पूर्णसुक्तं सुखं तच्छक्तेर्व्यक्तिर्विधमन्नार्चयामि ॥ ८६९ ॥

ॐ हों नमोऽर्हते भगवतेऽन्तज्ञानदर्शनसुखवीर्यविभाजते जिनाय अर्घं निर्धपामीति स्वाहा ।

यहां आचार्य या सूचकपात्र चार चतुष्टयको १ मिनटके भीतर समझादे ।

सम्यक्त्वं चरितं सुबोधनहृशी वीर्यं ददिलोक्यो,

भोगोपादिसुजी हि यस्य नवकं लब्धैः सदा क्षायिक ।

सम्पन्नं खलु केवलोद्गमनतस्तं मांपतं ध्यायतो,

बिद्वानां निचयः प्रणाशनमियात्तसंस्मृतिपार्थनात् ॥ ८७० ॥

ॐ हों नमोऽर्हते भगवते नवकेवललब्धिभोगे अर्घं। यहां नव केवल लब्धियोंको समझा दिया जावे। (क्षाययिष्यक्त, क्षायिकचरित्, अनन्तज्ञान, अनन्तदशन, अनन्तवीर्य, अनन्तदान, अनन्तलाभ अनन्तभोग, अनन्तउपभोग ।)

सौमिक्ष्य सुकुरोपमक्षितिरथ। व्योमक्रमप्रक्रमः, प्राणघातखिनिर्गमश्च कबलाहारवधपायः परैः ।

अक्लेशोपचयश्चतुर्मुखहृशिविद्येश्वरतथ गानो-रच्छायत्त्वमकेशवृद्धिरिति वै दिक्सख्यकोः केवले ॥ ८७१ ॥

ॐ हों नमोऽर्हते भगवते दशकेवलातिशयेभ्युर्ध्वम्। (यहां १० अतिशय ब्रह्मशा दी जावें।) १ सुभिक्षपना, २ दर्पण समान पृथ्वी, ३ आकाशकी निर्मलता, ४ प्राणिवक्ता अभाव ५ कबलाहारका अभाव, ६ उपवर्गका अभाव, ७ चार मुख दीखना, ८ सर्व विद्या ईश्वरपना, ९ शरीरकी छाया न पडना, १० नखकेश न बढना ।

दिव्या वाग् जनसौहृदं प्रतिपदं सर्वाहोगोब्राह्मणा, भूरादर्शला सुदुःखसनसन्मोदौ तु भूः शालिनी ।
सौरभ्यांबुधरी सुवृष्टिरमला पादक्षयाधोलले, स्वच्छांश्रोहनिर्मितिः खमसलं दिग्संसदश्रककं ॥ ८७२ ॥
धर्माख्यां पुरतश्च अज्जनमनोमिथ्यात्वब्रंश्रेडनं, देवाह्वानपरस्पाधिकमुदा सन्मंगलाष्टाविति ।
दिव्यातीशायसंयुतो जिनपतिः शक्राज्ञया रैबुचा, वल्लरे श्रीसमवादिसंस्तृतिपदे ऋंतिप्रवांस्तान्मुदे ॥८७३॥

ॐ ह्रीं नमोऽहंते भगवते चतुर्दशदेवकृनातिशयस्यनाय जिनाय अर्घ । (यहा १४ देवकृन अतिशय बताई जावे ।) १ अर्द्धमागवी
दिव्यध्वनि, २ मेत्रीभाव प्रचार, ३ ध्वंश्रुके फल फल, ४ कटकरहित भूमि, ५ मंद सुगंध पवन, ६ पर्वधान्यमई क्षेत्र, ७ गन्धोदक वर्षा,
८ विहार समय सुनर्ण कमल रचना, ९ निर्मल आकाश, १० देवकृत परस्पर बुलाना, ११ धर्मचक्र, १२ आठ मंगल द्रव्य, १३
प्राणियोंमें मिथ्या भावका अभाव, १४ दिशाओंमें आनन्द ।

(नोट—अन्य ग्रन्थमें ऊपरके १० अतिशयोमें पलकें न लगना है, दर्पण समान पृथ्वी नहीं है ।)

मानस्तमसरः सपुष्पविपिनं सत्त्वातिका चाश्रितः, प्राकारादिसुनाट्यभूमिविपिने नाकालयक्षमारुहाः ।
स्तूपा स्मर्यततिर्ध्वजावलिसेभे सद्गंधेदिक्रमोऽ-शोकोर्वीरहसिंहयादनशसिस्थायी जिन पातु नः ॥८७४॥

ॐ ह्रीं नमोऽहंते भगवते समवशाणविभूतिष्यनाय जिनाय अर्घ । (यहा समवशाणका कुछ भाव बता दिया जावे)—

वनस्पतिस्वेऽपि गतप्रशोको, बभूवातिमदप्रसूनः ।

अनेकसंदर्शकशोकहारी, वृक्षो जिनेन्द्राश्रयणप्रभावात् ॥ ८७५ ॥

ॐ ह्रीं अशोकपातिहार्यस्यनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रेयस्तरुः फलति नोऽमरसौह्यमुच्चैर्षोस्तुक्त्यपरिलंभनसन्निषेण ।

दैर्घ्यैः कृना सुमनसां परिवृष्टिरेषां, मोदं वदातु भवदुःखजुषां जनानां ॥ ८७६ ॥

ॐ ह्रीं देवकृतपुष्पवृष्टिमातिहार्यस्यनाय जिनाय अर्घ । (यहा पुष्पोकी वर्षा की जावे)—

त्रैलोक्यवस्तुमनतस्सराणावबोधो, येन स्मर्यं श्रवणगोचरतां गतेन ।

संजायते मुखरदौष्टविघातशून्यो, भूयाद् ध्वनिर्भगदप्रसरातिहृत्तां ॥ ८७७ ॥

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिमातिहार्यस्यनाय जिनाय अर्घ ।

यक्षेशपाणिलतिकाङ्कुरसंगतानि, तुर्याधिषष्टिगणनान्यपि देवमद्याः ।
त्रीचिप्रमाणि भवतो द्विकपाश्वयोस्तौ, सच्चामराण्यघचय मम निर्दलंतु ॥ ८७८ ॥

ॐ ह्रीं वतुःषष्टिचामरातिहार्यपनाय जिनाय अर्घ ।

सिंहासने छदिरियं जिनदेवतायाः, केषां कनोवधुतपापहरी न वा स्यात् ।

स्याद्वादसंस्कृतपदार्थगुणप्रकाशोऽस्या मेस्तु निर्हंतमदाविलज्जातशक्तः ॥ ८७९ ॥

ॐ ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्यषपनाय जिनाय अर्घ ।

आमण्डलेऽष्यवपुष्टिञ्चि भागरद्विषकृत्से जनस्य वषसप्रकदर्शनेन ।

अद्धानमाप्तगुरुधर्मपररराणां, गाढं अवेत्तद्वितदेशपतिर्नमस्यः ॥ ८८० ॥

ॐ ह्रीं आमण्डलप्रातिहार्यषपनाय जिनाय अर्घ

देवस्य मोहविलयं परिशंसितु द्राक्, देवाः स्पष्टस्तलतः परिवाहयेति ।

वाद्यानि सगलनिवाद्यक्रानि मद्यो, सिध्नात्नमोहजघिनः शुभगानि च स्युः ॥ ८८१ ॥

ॐ ह्रीं दुदुभिप्रातिहार्यषपनाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

छत्रत्रयं जिनपभूर्धनि आत्ममानं, त्रैलोक्यराजपतिताम्रभिदशोषद् वा ।

स्योसार्कवह्निर्निभं स्निहपीतरक्तनादिराजतम्रिद्ध मज संगलाय ॥ ८८२ ॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्यषपनाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

नालारापन्नचमरध्वजसुधर्तीकभृगुगारदपणवटा प्रतिथीथिचारं ।

खन्मगलानि पुरतो विलसंति यस्य, पादारविद्युगलं शिरसा वहामि ॥ ८८३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टमण्डलव्यषपनाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

बुद्धीशामरनाथिकार्यवस्तु उयोनिष्कद्वयंमरनागस्त्री भवमेकाकिपुरुषसज्ज्योतिष्करूपामाराः ।

मर्त्यो वा पशवश्च यस्य हि स तथा आदित्यसंख्या वृषपीयूषं रवभक्तानुरूपसखिलं स्वादंति तस्मै नमः ॥ ८८४ ॥

ॐ ह्रीं द्वादशमभासपत्तिधर्मनाथ जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

(यद्वा १२ सभामें कौनर बठते हैं सो समझादे—१ मुनि, २ आर्थिका व श्राविका, ३ कल्पवाची देवी, ४ ज्योतिषी देवी, ५ व्यंतरदेवी, ६ भवनवाची देवी, ७ भवनवाची देव, ८ व्यंतरदेव, ९ ज्योतिषी देव, १० कल्पवाची देव, ११ मनुष्य, १२ पशु) ।

आगे २४ कोठोके मडककी पूजा की जाय ।

गीताछद-चौबीस जिनवर तीर्थकारी, ज्ञान कल्याण धरं । महिमा अपार प्रकाश जगमें, मोह मिथ्या तम हरं ॥
कीने बहुत भविजीव सुखिया, दुःखनागर उद्धरं । तिनकी चरण पूजा करं, तिन सम यने यह रुचि धरं ॥

ॐ हीं चतुर्विंशति जिनैन्द्रेभ्यो पुष्पाजलि क्षिपेत् । (पुष्प डाले)

छद चामरा-नीर ल्याय शीतलं महान सिष्टता धरे, गन्ध शुद्ध मेलिके पबिन्न द्वारिका भरे ।

नाथ चौविंसों महान वर्तमान फालके, बोध उत्सर्ध करूं प्रभाव सर्व टालके ॥

ॐ हीं रेषभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतिजिनैन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्वेत चन्दन सुगन्धयुक्त लार लणके, पात्रमें धराय शान्तिकारणे चढायेके ॥ नाथ ० ॥ चन्दनं ॥
नन्दुलं मले सुश्वेत वर्ण दीप लाइये, पाच गुण सु अक्षतं अतृप्तिना नशाइये ॥ नाथ० ॥ अक्षतं ॥
वर्ण घण पुस्र सार लाइये चुनायेके, फाम कष्ट नाश हेतु पूजिये स्वभायेके ॥ नाथ० ॥ पुस्र ॥
क्षीर मोदकादि शुद्ध तुतं हो बनाइये, मुखरोग नाश हेतु चर्णमें चढाइये ॥ नाथ० ॥ नैवेद्यं ॥
दीप धार रत्नमय प्रकाशना महान है, मोह अंधकार हर शोन स्वच्छ ज्ञान है ॥ नाथ० ॥ दीपं ॥
धूप गन्ध सार लाय धूपदान खेइये, कर्म आठको जलाय आप आप वेइये ॥ नाथ० ॥ धूपं ॥
लौंग औ पदाम आम्र आदि पक्क फल लिये, सु सुक्तिधाम पायके श्वभात्र अमृत पिये ॥ नाथ० ॥ फलं ॥
तोय गंध अक्षतं सु पुस्र चास चरु धरे, दीप धूप फल मिलाय अर्घ देय सुख करे ॥ नाथ० ॥ अर्घ्यं ॥

छद वाली-एकादशि फागुन षड्विकी, मरुदेवी माता जिनकी ।

इत घाती केवल पायो, पूजन हम चित उमगायो ॥

ॐ हीं फल्गुणकृष्ण। एकादश्या श्रीवृषभनाथ जिनैन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

एकादशि पूष सुदीको, अजितेश हतो घातीको । निर्मल निज ज्ञान उपाये, हम पूजत सम सुख पाए ॥

ॐ हीं पीषशुक्ला एकादश्या श्री अजिननाथाय जिनैन्द्राय ज्ञानाणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

कार्तिक वदि चौप सुहाई, स भव केवल निधि पाई । भविजीवन बोध दियो है, मिथ्यामत नाश कियो है ॥

ॐ हीं कार्तिककृष्णार्चतुर्थ्या श्रीधंभवनाथजिनैन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

चौदशिशुभपौषसुदीको, अग्निन्दनहनघातीको। केवलयाधर्मप्रभारा, पूज् चरणाहितकारा ॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्ला चतुर्दशं श्री अग्निन्दननाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

एकादशिशुभसुदीको, जिनसुमतिज्ञानलब्धीको। पाकरअविजीवउधारे, हमपूजतभवहरतारे ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ला एकादशं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५)

मधुशुक्लापूरणमानी, पद्यमसुतरयअभ्यासी। केवललेतरनप्रकाशा, हमपूजतसुखसाधा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ला पूर्णमास्यां श्री पद्यप्रसुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

छठिफागुनकीअंधयारी, चउघातीरुर्मनिघारी। निमलनिजज्ञानउपया, घनघनसुपार्थजिनराया ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा षष्ठ्यां श्री सुपार्थजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

फागुनवदिनौमिसुहाई, बन्दरपमआत्मध्याई। हनघातीकेवलपाया, हमपूजतसुखउपजाया ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा नवम्यां श्री बन्दरप्रसुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

कातिकसुखिदुतियाजानो, श्रीपुषदंतभगवानो। रजहरकेवलदरशानो, हमपूजतपापधिलानो ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्ला द्वितीयायां श्री पुषदंतजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

चौदसिवदिपौषसुहानी, शीतलपसुकेवलज्ञानी। भवकासंतापहटाया, समतासागरपगटाया ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णा चतुर्दशं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

वदिमाघअमावसिजानो, श्रेयांसज्ञानउपजानो। सप्तजामेंश्रेयकराया, हमपूजतमंगलपाया ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा अमावस्यां श्री श्रेयांस्नाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

शुभदुतिशमाघसुदीको, पायोकेवललब्धीको। श्रीवापुसूज्यभधितारी, हमपूजतअष्टप्रकारी ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्ला द्वितीयायां श्री वापुसूज्यजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)

छठिमाघवदीहटघाती, केवललब्धीसुखलाती। पाईश्रीबिमलजिनेशा, हमपूजतकटतकलेशा ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा षष्ठ्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

वदिचैनअमावसिगाई, निसुकेवलज्ञानउपाई। पूज् अनन्तजिनचरणा, जोहैंअशरणकेशरणा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्या श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

मासांतपौषदिनभारी, श्रीधर्मनाथहितकारी। पायोकेवलसद्बोध, हमपूजेंछांडकुबोध ॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्ला एकादशं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

- ॐ हीं पौषपूर्णिमायाम् श्री भर्मानायजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)
सुदि पूस इकादसि जानी, श्री शांतिनाथ सुखदानी । लहि केवल धर्म प्रचारा, पूजूं मैं अघ हरनारा ॥
- ॐ हीं पौषशुक्लाएकादश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)
बदि चैत्र तृतीया स्वामी, कुन्धुनाथ गुण धामी । निमल केवल उपजायो, हम पूजत ज्ञान बढ़ायो ॥
- ॐ हीं चैत्रकृष्णातृतीयां श्री कुन्धुनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)
कार्तिक सुदि बारस जानो, लहि केवलज्ञान प्रमाणो । परतरब निजस्व प्रकाशा, अरनाथ जज्ञो हतआशा ॥
- ॐ हीं कार्तिकशुक्लद्वादश्यां श्री अरनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)
बदि पूष द्वितीया जाना, श्री महिनाथ भगवाना । इत घाती केवल पाए, हम पूजत ध्यान लगाए ॥
- ॐ हीं पौषकृष्णाद्वितीयां श्री महिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानतपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)
वैसाख बदि नौमीको, सुनिसुव्रत जिन केवलको । लहि वीर्य अनन्त सम्हारा, पूजूं मैं सुख करतारा ॥
- ॐ हीं वैशाखकृष्णानवम्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय ज्ञान कल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)
अगहन सुदि ग्यारस आप, नमिनाथ ध्यान लौ लाए । पाया केवल सुखदाई, हम पूजत चित हरवाई ॥
- ॐ हीं अगहनशुक्ला एकादश्यां श्री नेमिनाथायजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)
पडिवा शुभ कार सुदीको, श्री नेमनाथ जिनजीको । इच्छो केवल सत ज्ञानं, हम पूजत ही बुद्ध हानं ॥
- ॐ हीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदायां श्री नेमनाथजिनेन्द्राय ज्ञानतपकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)
तियि चैत्र चतुर्थी इयामा, श्री पार्श्वप्रभू गुण धामा । केवल लहि तस्व प्रकाशा, हम पूजत कर शिव आशा ॥
- ॐ हीं चैत्रकृष्णाचतुर्थी श्री पार्श्वजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)
दशमी वैशाख सुदीको, श्री बद्धमान जिनजीको । उपजो केवल सुखदाई, हम पूजत विघ्न नशाई ॥
- ॐ हीं वैशाखशुक्लादशम्यां श्री बद्धमानजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)
**सुखिणी छन्द-स्तुति-जय ऋषभनाथजी ज्ञानके सागरा, घातिया घातकर आप केवल बरा ।
 कर्मबन्धनमई सांकला तोड़कर, आपका स्वाव ले स्वाव पर छोड़कर ॥ १ ॥
 धन्य तू धन्य तू धन्य तू नाथजी, सर्व साधू नमें तोहिको नाथजी ।
 दर्श तेरा करै ताप मिट जात है, मर्म भाजें सभी पाप इट जात है ॥ २ ॥**

धन्य पुरुषार्थं तेरा, महा अशुभं, मोहसा शत्रु मारा त्रिघाती हतं ।
 जीत प्रलोकको सर्वदर्शी भए, कर्म सेना हती दुर्ग चेतन रूप ॥ ३ ॥
 आप सत् तीर्थं प्रथम रत्नसे निर्मिता, भव्य लेखें शरण होय भव भव रिता ।
 वे कुशलसे तिरें संस्तुती सागरा, जाय ऊरध लहें सिद्ध सुन्दर घरा ॥ ४ ॥
 यह समबशर्णा भवि जीव सुख पात हैं, बाणि तेरी सुनें मन यही भात हैं ।
 नाथ कीजे हमें धर्म अमृत महा, इस विना सुख नहीं दुःख भवमें सहा ॥ ५ ॥
 ना क्षुधा ना तृषा राग ना द्वेष है, खेद चिन्ता नहीं आति ना क्लेश है ।
 लोभ मद क्रोध माया नहीं लेश है, बन्धता हूं तुम्हें तू हि परमेश है ॥ ६ ॥

इंद्र ऊपरकी स्तुतिको पमास ही न कर पाए कि इतनेमें ही बभामें महाराज भरत व अन्य उनके कुछ भाई ऐसे ५-७ राजा अपनी २ ली बहिन अर्ध लिये जाते हैं और विनय करके सदाक चन्दनादि पदकर अर्घ्य चढ़ाते हैं । उक्त समय कियी एक तरफ व भारतादि पुरुष एक तरफ खड़े हो स्तुति पढ़ते हैं—

पदरी छन्द—जय परम ज्योति ब्रह्मा सुनीश, जय आदिदेव धृषनाथ ईश ।

परमेष्ठी परमात्म जिनेश, अजरामर अक्षय गुण विवेश ॥ १ ॥

शङ्कर शिवकर हर सर्व मोह, योगी योगीश्वर काम द्रोह ।

हो सूक्ष्म निरञ्जन सिद्ध बुद्ध, कर्मजन सेदन तोय शुद्ध ॥ २ ॥

भवि कमल प्रकाशन रवि महान, उत्तम वागीश्वर राग हान ।

हो वीत द्वेष हो ब्रह्म रूप, सम्पद्गृष्टी गुण राज भूप ॥ ३ ॥

निर्मल सुख इन्द्रिय रहित धार, सर्वश सर्वदर्शी अपार ।

तुम वीर्य अनन्त धरो जिनेश, तुम गुण पावत नहिं गणेश ॥ ४ ॥

तुम नाम लिये अध दूर जाय, तुम दर्शनते भव भय नशाय ।

स्वामिन् अब तत्त्वन्का प्रभेद, कहिये जासे हठे कर्म छेद ॥ ५ ॥

यह स्तुति पद नमस्कार कर सब यथायोग्य बैठ जाते हैं । जब भारतजी आदि आए थे तब इन्द्र व आचार्य व इन्द्राणी सब यथायोग्य बैठ गए थे ।

(९) भगवानका धर्मोपदेश—अब आचार्य मात्र उठते हैं। वे पूजा करते हैं। सूचक पात्र या अन्य विद्वान् धमाकी भगवानका उपदेश संक्षेपमें समझाता जाता है—

**ज्ञानाभिन्नः सततचिदाद्युत्त एवोऽस्ति जीवोऽनार्द्यतः स्याच्छिन्नजगद्वितश्रक्रमायोगयोगात् ।
पर्यायार्थैर्नरसुरपशुश्वश्रिभेदाद्विरर्थयाथातथ्यैर्निस्तुखचिदानन्द एव ह्यसैत्सीत् ॥ ८८५ ॥**

ॐ ही जीवतत्त्वस्वरूपनिरूपकाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

तत्र सूचकपात्र यह दोहा पढकर अर्थ कादे । पढ़के यह कहे कि भगवानकी दिव्यध्वनि प्रारम्भ हुई है । भगवान् तत्त्वोंको दर्शाते हैं ।

दोहा—जीव अनादि अनन्त है, चेतनमय अविकार । कर्मबन्ध तो जग अर्धे, कर्म छुटे अब पार ।

इसी तरह द्वार पर तरंगको दोहा कढकर सूचक समझता है ।

**रूपी रपशोद्विभिरपि गुणः स्वः प्रधानैर्निरुक्तः, स्कंधानुभ्यामनणुविष्टृत्तिरव्यापृतः पुद्गलः स्यात् ।
कर्माकर्मप्रकृतिनिगडैर्विश्वमापद्य हेतुर्बन्धस्येति प्रभवति जिनः जल्पयंतं नमामि ॥ ८८६ ॥**

ॐ ही पुद्गलतत्त्वस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—रूपी पुद्गल द्रव्य है, अणु आ खद्य स्वरूप । कर्म और नौकर्मसे, बंधे जीव बहु रूप ।

लोकस्थानां भवति गमने जावत्पुद्गलानां, हेतुर्धर्मः सद्बन्धविमौढास्यमाश्रयप्रमेयः ।

लोकालोकस्थितिष्विभ्रजनेऽप्राण एतं सु धर्मं, स्वास्मानं संगदति जिनपः सोऽस्तु मे ह्येवाहता ॥ ८८७ ॥

ॐ ही धर्मतत्त्वनिरूपकाय जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

**दोहा—जिय पुद्गलके गमनमें, उदासीन सङ्कार । लोकालोक धिभागकर, धर्म द्रव्य अविकार ।
चैतक्षयं तत्र उपगता जीषमत्पुद्गलानां, स्याता धर्मः सद्बन्धरथौदास्यमाश्रेऽपि तेषाम् ।
एवं तस्य स्वभवमसद्विद्यमानो जिनैः श्रो, आहक्षाणां भवविधिहृतिः संकरोत्वात्मनीनां ॥ ८८८ ॥**

ॐ ही अवर्धद्रव्यस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—जिय पुद्गलके भंजनमें, उदासीन सङ्कार । लोकद्रव्यापि असूर्त है, द्रव्य अधर्म निहार ।

जीवाजीवाद्युपधुनितयाऽऽधार स्यूतो खनतो, मध्ये तस्य त्रिभुवनमिद लोकनाम्ना पमिद्धं ।

सर्वेषां स्याद्व्यवकथनन्द शुभसूर्तिर्महांश्चाकाशोऽनजिजगुणगणं वक्ति तं पूजयामि ॥ ८८९ ॥

ॐ ही आकाशद्रव्यस्वरूपप्रकाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रतिष्ठा

॥१४९॥

दोहा-सर्वं द्रव्यं अवकाशा दे, है अनन्त आकाश । मध्य लोक षट् द्रव्य मय, बाहर फक्ताकाश ॥
 वस्तुदूस्नागुणपरिणमस्यानुभूतेष्व हेतुः, ससार्थानां यदुपगमनादेव जातिं विधत्ते ।

सोऽयं कालो व्यवहरणकार्यानुमेयः क्रियायां, कर्तृत्वादित्यकथयदिनो मुक्तिलक्ष्मीं ददातु ॥ ८९० ॥

ॐ ह्रीं कालद्रव्यस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-वस्तु परिणमन हेतु है, निश्चय काल प्रमाण । समग्र घटी दिन रात इति, व्यहृत काल वखाण ॥
 कायस्थांतवचःक्रियापरिणनिर्योगः शुभो, वाऽशुभ-स्तकर्मोर्गमनायनं निजयुजो रागद्विषोरुद्भवात् ।
 ईर्योमार्गं भवौषधद्विविधया तत्संविधि वेदयन् । जीयाच्छ्रुपतिपूज्यपादकमलस्तीर्थकरः पुण्यगीः ॥ ८९१ ॥

ॐ ह्रीं आश्रयतत्त्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-काय वचन मन परिणमन, योग शुभाशुभ रूप ! कर्मोश्रव कारण यही, मोह सहित भव रूप ॥
 कषायाद्युत्पत्तेश्चैतान्प्रविषयं स्वत्वं कृतं तद्विधे-र्योश्याः कर्मविभावशक्तिसहिता ये पुद्गलाश्चात्मना ।
 संश्रुष्टा अवगानैक्यमटिनास्त्पक्रमो धंभमाक् तं छित्त्वा निजशुद्धभावविरतिप्राप्तः स मे स्यात् गुरुः ॥ ८९२ ॥

ॐ ह्रीं वषतत्त्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-कर्म वर्गणा जीवके, भाव कषाय प्रमाण । एक क्षेत्र अवगाह हो, बंधतरा यह जान ॥
 तद्रोधः खलु सरो निगदितो द्रव्यायसेदाद् द्विधा, तद्धेतुर्व्रतगुप्तिधर्मसमितिषध्यां चरित्रात्मता ।
 मूलं निर्जरणस्य कर्भंविभतेर्नृनागमस्य स्वय, तद्रूपं कथितं गणेश्वरपुरोभागे स आशो मय ॥ ८९३ ॥

ॐ ह्रीं-धरतत्त्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-गुप्ति समति व्रत धर्मसे, कर्मोश्रव रुक जाय, वीतरागस्य भाव जहं, संवशतत्त्व सुहाय ॥
 स्वोद्भूयानुभवात्तथा कृततपोवीर्येण तच्छालनाद्, द्वेषा निर्जरणं विसंयमियमिस्वाम्याश्रयेणास्ति यत् ।
 तद्रूपं समवश्रिंशं गदितवान् भव्यात्मनां श्रेयसः, संप्राप्त्य स जिनोऽस्तु से दुरितसंब्रतस्य सच्छित्तये ॥

ॐ ह्रीं निर्जातत्त्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-कर्म अवधिसे निर्जरै, तप प्रभाव क्षय होय । दुद्धिध निजरा अत्यधिक, संयमीनिके होय ॥
 मोहस्यात्थतनाशात् ज्ञपितिहृशचिदाच्छादकाशेषलोपात्,
 प्रत्यूहस्यापि मूलं कवचिमशानादात्मशक्तेः प्रकाशात् ।

निःसापत्नं उच्यते परमशिवसुखास्वादसंबन्धमाना,

सुक्तिश्रीर्विष्णुतत्त्वं त्विति सकलजनादेश्यमुक्ते जिनेन्द्रैः ॥ ८९५ ॥

ॐ ह्रीं मोक्षतत्त्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-मौहादिक सप्त कर्मसे, रहित मोक्ष सुखरूप । आत्मशक्ति पूरण प्रगट, अविनाशी इक रूप ॥

देवोऽर्हन् सकलामधव्यपगतो हृष्टवाग्देशको, भव्यद्वैर्नारागदोषकलनो मोक्षार्थिभिः श्रेयसे ।

आश्रेयः परिसेवनीय उदितज्ञानप्रभौघः स्वयं, शास्ता सर्वहितः प्रमाणपटुभिर्ध्वेयो जिनः पातुः नः ॥ ८९६ ॥

ॐ ह्रीं आप्तस्वरूपरूपकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-वीतराग सर्वज्ञ जिन, हित उपदेशी जान । निर्मल तत्र प्रकाश कर, भजो आप्त पहचान ॥

रागद्वेषकलंकपंकगणिकाहीनो विसंवादको, निर्वाँछो हितदेशनो व्रतगुणग्रामाग्रगण्य प्रभुः ।

आस्माकं भवपद्धतावनुसद्वाघादितानां महा-नाराध्यः प्रियकारको गुरुयं प्रोक्तो जिनेन स्वया ॥ ८९७ ॥

ॐ ह्रीं गुरुस्वरूपनिरूपक जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-बैरागी निस्पृह व्रती, सर्वपरिग्रह हीन । आत्मध्यानी गुरु कहे, हितकर तत्र प्रवीण ।

यत्रामूलननूनमन्यजडतापीडोत्कथाप्रच्युतिर्यत्र श्रेयसि दीपिकेव सरणिः प्राकाश्यमास्कंदते ।

विश्वप्रोतमहार्तिमोहमदिरानिभ्रतसंनं सद्गुणाश्लेषा वास्त्रियं जिनवरैर्गीतो (1) धृषोऽस्तुश्रिये ॥ ८९८ ॥

ॐ ह्रीं धर्मस्वरूपरूपकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-व्रतत्रय मय मोहहर, पीडा सप्त निवार । शिवकारण भव उद्धरण, धर्म सत्त्व अबिकार ॥

शब्दावाच्यमवस्त्वनादिकृतसंकेतेन वस्तुग्रहः,

केनापि ध्वनिना भवत्यथ स वै संजायते मातृकृत ।

सौप्त्येक्षासहिती एनेकगुणतस्ता एव तस्मात् स्थितं

वस्तु स्यात्पदसंस्कृतं तदुदयन स्याद्वाक् एवार्हतः ॥ ८९९ ॥

ॐ ह्रीं मनोऽर्हते भगवते स्वाहात्स्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-वस्तु वाक्य अवाक्य है, नित्यानित्य स्वरूप । अथ प्रमाण तै साधनां, स्वाद्वाक् सुस्वरूप ॥

तीर्थेषां भरतेशिनो हलजुषां नारायणानां ततः, शश्रूणां त्रिपुरद्विषां च महतां सद्भाग्यसंशालिनां ।
पुण्यापुण्यचरित्रमत्र निहितं पूर्वायुयोगं विदन्, दृष्टान्तप्रतिपत्तिर्द्वं जिनपतिः प्रारब्धवान् शासनं ॥९००॥

ॐ ह्रीं प्रथमानुयोगवेदस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-तीर्थंकर चक्रीषा हर, प्रतिहर हलचर व्रत । पुण्य पाप दृष्टान्त कहे, प्रथमनुयोग पवित ।

संस्थानायामसंख्यागणितमसृश्रुतां मार्गणास्थानतज्ज-

कर्मोदीर्णोदयादिप्रकथनमधिपो वर्णयामास सम्यक् ।

लोकालोकोक्तभेदे नरकसुरमनुष्यादिसंस्थित्युदंतष्टुत्ति

त्वारख्यानमेतत्करणगमनुयोगं प्रकाश्य स्वयंभूः (?) ॥९०१॥

ॐ ह्रीं करणानुयोगवेदस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-लोकत्रय रचना सकल, जीव मार्गणा धान । करणानुयोग बखानता, कर्मबंध आख्यान ॥

शीलानां संयमानां व्रतसमितिविभ्रादिसाध्वर्हितानां,

सागारार्थोक्तमौवधुतविरमणश्धूलुधर्मक्रियाणां ।

तत्तत्स्थानोक्तबुद्धय निजनिजहृदयोद्भूतस्त्वं निरूप्य,

कर्तव्यत्वोपदेशो यद्बुधिवचनाख्यानमुक्तं जिनेन ॥ ९०२ ॥

ॐ ह्रीं चरणानुयोगवेदस्वरूपप्रकाशक जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-मुनि संयम व्रत आचरण, गृही धर्म आचार । कर्महरणविवि सब कहे, चरणानुयोग विचार ।

षट्द्रव्यस्वत्वस्वरूपाणवथ नयघटता तत्प्रमाणस्वरूपं,

नामस्थापादिकृत्यं तदधिकरणभिसूतत्वं संस्थापनावि ।

मेयामेधव्यवस्था यद्वबधिसमिता यत्र षड्भङ्गवाणी,

द्रव्याख्यानं निरूप्य प्रथममभिविहितं मोक्षमार्गं जिनेन ॥ ९०३ ॥

ॐ ह्रीं द्रव्यानुयोगवेदस्वरूपप्रकाशकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रतिष्ठा-
॥१५२॥

दोहा-नय प्रमाण निक्षेपसे, द्रव्य छद्मोंको साध तत्त्व सप्त शुद्धात्म कथ, द्रव्यानुयोग अबाध ॥

श्रीमत्सम्बद्धक्तिभारयम्बिनतशिरसः केचिद्विच्छंति मुक्तिं,

ते मद्यः साधुदीक्षाप्रणयनपटवस्तत्प्रसादाबलंयात् ।

केचिद्व्युच्छंति धर्मं गृहपतिनिरुत रुद्रसार्गोषरुदं,

स्वामिन् हस्ताबलं च कुरु शरणगमनान् रक्ष रक्षेशनाथ ॥ १०४ ॥

ॐ ह्रीं मुनिश्रावकधर्मोपदेशकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-तब प्रसाद भवि लक्ष्म हैं, मुनि दीक्षा अविकार । प्रतिमा ग्यारा भवि धरें, तुम्हीं उतारन पार ॥

इसप्रकार धर्मोपदेश होजाय तब सब कहें-श्री सत्य आप्त वृषभ जिनेन्द्रकी जयरे । फिर मात्र इन्द्र उठता है और सब बैठ रहते हैं ।

स्तुति ।

चौपाई-धर्म्य धन्य जिनराज प्रयाणा, धर्म वृष्टिकारी भगवाना ।

सत्य मार्ग दरजावन हारे, सरल शुद्ध मग चालन हारे ॥ १ ॥

आपीसे आपी आरहन्ता, पूज्य भार त्रैलोक महन्ता ।

स्वपर भेद विज्ञान बताया, आत्म तत्त्व पृथक् दरशाया ॥ २ ॥

स्वानुभूतिमय ध्यान जनाया, कर्मकाष्ठ पालन समझाया ।

धर्म अहिंसामय दिखलाया, प्रेम करन हितकरन बताया ॥ ३ ॥

वस्तु अनेक धर्मघरतारा, स्याद्वाद परकाशन हारा ।

मत विवादको भेटनहाया, मत्य वस्तु झलकावन हारा ॥ ४ ॥

धन तीर्थकर तेरी बाणी, तीर्थ धर्म सुखकारण मानी ।

कारहु विहार नाथ बहु देशा काहु प्रचार तत्त्व उपदेशा ॥ ५ ॥

(१०) भगव नका विहार-इतना कहते ही इन्द्र देवोंको भेजता है कि विहारका प्रबन्ध करो। बाहर सब तय्यारी रहती है, रथ तय्यारा रहता है। सब इन्द्र भगवानको मतकपर विाजमान करता है। तब समय सर्व खड़े होजाते है। आचार्य नीचके श्लोक पढ़कर भगवानके आगे अर्घ्य उढाता है।

काश्यां काशमीरदेशे कुरुषु च सगधे कौशले कामरूपे,
कच्छे काले कलिंगे जगपदमहिते जांगलाति कुरावौ ।

किङ्किजधे मल्लदेशे सुकृतिजनमनस्तोवदे धर्मश्रुष्टि,
कुर्धन् शास्ता जिनेन्द्रो विहरति नियतं तं यजेऽहं त्रिकाल ॥ १०७ ॥

पांचाले केरले वाऽमृतपदमिहिरोमन्द्रचेदीदशार्ण-

वंगांगांधोलिकोशीनरमलयबिदभेषु गौडे सुसखे ।

शीतांशुरहिमजालादमृगपिव ससां धर्मपीथूषधारां,

सिचन् योगाभिरामा परिणमयति च स्वांतशुद्धिं जगानां ॥ १०८ ॥

पुनाटचौलबिषयेऽपि च मौड्रदेशे सौराष्ट्रमध्यमकलिङ्किरातकावौ ।

सुयोग्ये सुदेशमहिते सुबिहृत्य धर्मचक्रेण मोहविजयं कुनवान् जनानां ॥ १०९ ॥

दोहा—काशी कुरु काशमीरमें, सगध सुकोशल काल । कच्छ कलिंग रकालमें, कुरुजांगल शुभ धाम ॥

किङ्किरघा पांचालमें, मलय सुकेरल मन्द्र । चेदि दशार्ण सुधंगमें, अंग उलिक शुचि अन्ध ॥

गौड बिदर्भ उलीनरे, सख चौल पुनाट । मौड्र सौराष्ट्र किरातमें, मध्य कलिङ्ग विराट् ॥

इत्यादिक बहु देशमें, धर्मदेशनाकार । धंधहु पूजहुं प्रेमसे, करहु कर्म निरवार ॥

ॐ ह्रीं नमोऽहंते भगवते विहारवस्थाप्राप्ताय देशे धर्मोपदेशोद्धर्ते जिनाय वर्षं निर्धयमीति श्वाहा ।

फिर बाले बजने लगे, जगजयकार शब्द हो । भगवानपर पुष्पोकी वर्षा हो । इन्द्र श्री जिनेन्द्रको लेजाकर रथपर विराजमान करे, बौध्म इन्द्र स्वामीपर बैठे, ईशान इन्द्र रथ चढावे, वानकुमार महेन्द्र दोनों तरफ चमर ढारें । रथपर चार भाइयोंके शिष्य और कोई न हो । रास्तेमें जय जय होते हुए नंगे पैर भक्तिमें भीजे सब चले, कमसे कम चार जगह आने जानेके मार्गमें धामियाणा हो वहां शांतिसे सब श्रोता बैठ जावें, भगवान्का रथ आगे खड़ा हो । पहले एक भजन बालेके साथमें ५ मिनटमें होजावे फिर उपदेश हो । चार स्थानमें भिन २ विषयपर अच्छे विद्वान् भिन २ उपदेश करें । २० मिनटमें भाषण धारणमित कदा जाय-यह बताया जाय कि श्री जिनेन्द्र विहार करते हुए उपदेश कर रहे हैं । नीचे क्लिबे विषयमेंसे क्लिबे जावें—

(१) निश्चय व्यवहार धर्म, (२) वस तस्थ, (३) चार वेद प्रथमानुयोगादि, (४) मुनिधर्म, (५) श्रावकधर्म, (६) कर्मवच, (७) आत्मधरूप, (८) स्याद्वादका मद्दत्त, (९) आत्मानदका उपाय, (१०) मोक्षस्वरूप, (११) एकांत खंडन, अनेकांत मंडन, (१२) अहिंसा धर्म, (१३) दशकृष्णधर्म, (१४) आत्मध्यान, (१५) बारह भावना, (१६) जगत अनादि, जैनधर्म अनादि ।

शक्यनुसार रास्तेमें ठहरा जावे । अर्थात् पहले २ लौट आया जावे । जब उधर श्रीजीका विहार हो इधर आचार्य अन्य प्रति-माओंपर तिलकदान, श्रीमुखोद्घाटन, नयनोन्मीलन, सूरिमंत्र प्रदान इन क्रियाओंको प्रक्षोसे करके पुष्पोंको क्षेपण कर ज्ञानकल्याणकका आरोपण करे ।

(११) धर्मोपदेशकी सभा—रात्रिको टिकटोंद्वारा सभा लगे । भगवानकी गधकुटीको शे भनीक बनाया जावे, आगे रेशनी इतनी हो कि भगवान्का दर्शन सबको दूरसे होसके । ठीक समय परदा खुले । पहले इन्द्रादि देव भगवान्की आगतां १५ मिनिट तक करें । बड़े मनोहर शब्दोंमें पढ़ें । फिर सब यथास्थान बैठ जावें । जो विद्वान् व्याख्याता नियत किये गए हों वे उपदेश देवें । उपदेश बहुत समतारूप शांतिका प्रचार मात्र जिनधर्म सम्बन्धी विषयोंपर हो । एक उपदेशके पीछे एक भजन हो । उपदेश दो घंटे होजावे फिर आष घटा इच्छिये दिया जावे कि जिष किधीको जो नियम लेना हो वह अपने स्थानपर खड़े होकर हाथ जोड़कर कहे कि मैं श्री जिनैन्द्रके भक्तधारणमें यह नियम लेता हू । फिर आष घटा समय वास्ते दर्शन करने व भटारमें देनेके लिये नियत किया जावे । भटारमें डालनेको थाल एक ओर चतुरेपर रक्खा हो । पहले क्रमसे ५ नर ५ नारी आवे जावें । भंडारमें कुछ डाल नमस्कार करके चलते जावें । १० टिकटोंसे काम लिया जावे । भंडारमें जो रुपया आवे प्रतिष्ठाके कार्यमें लगे ।

नोट—यदि ज्ञानकल्याणककी विधि करते हुए समय विहारका न रहे तथा मार्ग दूरका हो तो विहार दूबरे दिन किया जावे । तब रात्रिको धर्मोपदेश सभा हो । दूबरे दिन सबरे पहले दिनके समान नियम समान पूजा होम हो । पीछे एक घटा सबरे धर्मोपदेश भगवान्का हो । फिर सबने खा पीछे तब १ बजेसे विहार प्रारंभ किया जावे तब इष रात्रिको भी धर्मोपदेश हो, नियमादि हो । रात्रिको धर्मोपदेशके पीछे तुल्य भजनादि भी कायदेके साथ किये जा सकते हैं । ऐसी दशामें मोक्षकल्याणक तीबरे दिन होगा । यदि विहार ज्ञान कल्याणकके दिन होजावे तो सबके दूबरे दिन बड़े सबरे मोक्षकल्याणक किया जावे ।

अध्याय आठवां ।

मोक्षकल्याणक ।

दूधरे दिन बरे ही पहले दिनके समान आचार्य न्हवणपूजा व होम कर चुके तब मोक्षकल्याणक किया जावे । मंडप उचीताह नरनारियोसे पूर्ण भरा हो । पहले ही दूधरे चतूतरेपर परदा आगे डालकर उधपर ऐषी रचना बनावे—एक ऊंची वेदी ऐषी हो जिधपर अर्धचन्द्राकार शीशेका व स्फटिकका सिंहासन हो या अन्य षातुका हो । यह अभी खाली रक्खा जावे । उसके कुछ नीचे कैलाशपर्वतके समान कोई पहाड या ऊंचा स्थान बनाके उधपर शिला स्थापन करे । तिधपर बाधिया बनाकर जिन प्रतिमाको विराजमान करे, यहाँ अष्ट प्रातिहार्थदिक कुछ न हों । भगवान् योग निरोध करके ध्यानमें मग्न हैं ऐषा दिखे तब परदा उठे । तब सूचक यह प्रगट करे कि भगवान् ऋषभदेव विहार बंद करके अब कैलाशगिरिपर स्थित हैं । यहापर आचार्य पहले सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति, चारित्र्यभक्ति तथा निर्वाणभक्ति तथा शांतिभक्ति पढ़े । व आगे पुष्प क्षेपे । फिर नीचेका छंद पढके अर्घ चढावे—

त्रिमंगी छन्द—जय जय वृषभेशा ध्यादि जिनेशा हो परभेशा नमहुं तुम्हें,
प्रभु वेश विहारे धर्म प्रचारे भवि उद्धारे नमहुं तुम्हें ।
कैलाश पधारे आत्म विधारे योग मगन जिनराज भए,
सूक्ष्मक्रिय शुंक्रु धार स्वधं निज मोक्ष तभी निकटात भए ॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभदेव जिनेन्द्राय तृतीयशुक्लध्यानारूढाय भव निर्वपामीति स्वाहा ।
यहा सूचक कहे कि भगवान् तीर्थे शुक्लध्यानमें है, योगोका अति सूक्ष्म चलन हो रहा है । फिर—

जय जय तीर्थंकर, धर्म प्रभाकर, शिवसुख रजन नाथ भए,
व्युपरतक्रिय ध्यानं शुंक्रु महानं धारत ध्यात्म विशाल भए ।

औदारिक तेजस कार्मण वपुते नाथ रहित अब होवेंगे,
हम पूजें ध्यावें मंगल गावें शिवपथगामी होवेंगे ॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथजिनेन्द्राय चतुर्थशुक्लध्यानारूढाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यहाँ सूचक कहे कि भगवान्की आर्थमें अ इ उ ऋ ल इन पाच अक्षरोको उच्चारने मात्र काल शेष है । प्रभु चौदहवें गुणस्थानमें चढ़कर चौथे शुक्लध्यानको ध्या रहे हैं । फिर झटसे परदा बंद तरफ गिर जावे तत्र आचार्य प्रतिमाजीको यहासे उठाकर अर्द्धचन्द्राकार सिंहासनपर बाधिया करके विराजमान करादे । परदा उठे । उस समय सब कहे—निर्वाणकल्याणककी जय, सिद्धपरमेष्ठीकी जय ।

दृढिष्ठवमाणस्पशदीवएहिं, संजगआणं सिरिदीवएहिं ॥ अचेमि० ॥ दीपं ॥ ६ ॥
 कालाअरुं भूयसुहृवएहिं, जीयाण पावाण सुहृवएहिं ॥ अचेमि० ॥ धूपं ॥ ७ ॥
 अणगघभूएहिं फलव्यएहिं, भव्वस्स संदिणणफलव्वएहिं । अचेमि० ॥ फलं ॥ ८ ॥

णयेण णाणेण य दंमणेण, तदेण उट्टेण य संजमेण ।
 सिद्धे निकालेसु विसुद्धबुद्धे, समग्नयामो सयलेयि सिद्धे ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

प्रत्येक अर्घं ।

जानाति थोथो यदनुग्रहेण, द्रव्याणि सर्वाणि सपर्ययाणि ।
 तुराग्रहत्यक्तनिजात्मरूपं, तं सिद्धवम्यक्तयगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धवम्यकगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जानाति नित्य युगपरस्वतोन्म्य, सर्वार्थसामान्यविशेषपूर्वम् ।
 निबोधक स्पष्टतर च वस्तं, सिद्धात्मंविज्ञानगुण यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धात्मविज्ञानगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वात्मस्थसामान्यविशेषसर्वं, साक्षात्कारोत्थेव सम सदा यः ।
 सुनिश्चितासंभवबाधकं तं, सिद्धात्मनो हृष्टिगुण यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनन्तविज्ञानमन्तहृष्टिं, द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु ।
 इयापारायन्तं हृतसंकरादिसिद्धात्मवीर्याख्यगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अबाधकं मानमबाध्यमेव, निरपीतसर्वार्थमसंगसगम् ।
 सर्वज्ञवेद्यं तदवाच्यमेव, सिद्धात्मसूक्ष्माख्यगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धसूक्ष्मगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

एकत्र सिद्धात्मनि चान्यसिद्धा, वसंयसंवाधमनंतसंख्याः ।
यस्य प्रभावात्सुनयस्थितं तं, सिद्धावगाहाख्यगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धावगाहगुणाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

अधो न पातोस्ति यथा शिलादेर्न, तूलबद्धायुक्तेरणं च ।
सिद्धात्मनां तेन सुयुक्तिसिद्धं, गुणं यजामोऽगुरुलक्षवभिरुच्यम् ॥

ॐ ह्रीं सिद्धागुरुलक्षगुणाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

भवामिश्रांत्यै विहितश्रमोऽव्यावाधात्प्रनायं परिणाममेति ।
स्वात्मोत्थनोत्थैकनिबन्धनत, सिद्धात्मनिर्वाधगुणयजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धव्यावाधगुणाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ! फिर नीचे लिखे अनादि सिद्ध मन्त्रको २१ बार जपे—
ॐ णमो सिद्धा ' सिद्धा मंगलं, सिद्धा लोयुत्तमा, सिद्धे सरणं पव्वजामि ह्रीं शांतिं कुरु कुरु स्वाहा ।

इत्थं समभ्यर्चिन्तसिद्धनाथसम्यक्त्वसुखाब्जगुणास्तदीया ।
सर्वाचिन्ताः लब्धजनार्चनीयाः, स्वात्मोपलब्ध्ये मम सन्तु तेऽमी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धगमेष्टने पूर्णाधं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रतिमासं सिद्धोंके आठ गुण नीचे प्रमाण करे ।

जानाति बोधो यदनुग्रहेण, इव्याणि सर्वाणि सपर्ययाणि ।
दुराग्रहत्यक्तनिजात्मरूप, सिद्धेय सम्यक्त्वगुणं न्यसामि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं परमावगाढव्यक्तगुणभूषिताय नमः । ऐसा कह आचार्य प्रतिमापर पुष्प क्षेपे ।

जानाति नित्यं युगपत्स्वतोन्वत्सर्वार्थसामान्यविशोबसर्वम् ।
निर्वाधकं स्पष्टतरं च यत्, सिद्धेत्र विज्ञानगुणं न्यसामि ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

स्वात्मस्थसामान्यविशोबसर्वं साक्षात्करोत्येव समं सदा यः ।
सुनिश्चितासंभववाधकत, सिद्धेत्र हृदयाख्यगुणं न्यसामि ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अनन्तविज्ञानमन्तवृष्टिं, द्रव्येषु सर्वेषु च पर्येषु ।

व्यापारयन्तं हतसकरादिं, सिद्धेन वीर्यव्यगुणं न्यसामि ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अथाधकं मानमवाध्यमेव, निरपीतसर्वार्थमसङ्गसङ्गम् ।

सर्वज्ञवेद्य तदवाच्यमेव, सिद्धेन सुद्वमाख्यगुणं न्यसामि ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

एकत्र सिद्धात्प्रति चान्यसिद्धा, वसन्त्यसंवाधमन्तसंस्थाः ।

यस्य प्रभावात्सुनयस्थितं तं, सिद्धेनगहाख्यगुणं न्यसामि ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अथगाहनगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अधोनुपातोऽस्ति यथा शिलादेर्न तूलबद्धयुक्तैरणं च ।

सिद्धात्प्रभातेन सुयुक्तिसिद्धं, गुणं न्यसामोऽगुरुलक्षवभिर्यम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलक्षगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

भवाभिशान्त्यै विहितश्रमोव्यावाघात्मना यं परिणाममेति ।

स्वात्मोत्थसौख्यैकनिबन्धनं तं, सिद्धेन निर्वाधगुणं न्यसामि ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अव्यावाधगुणभूषिताय नमः । (प्रतिमापर पुष्प क्षेपे) (अत्र २४ कोठोंकी पूजा करे)

विभगी—जय जय तीर्थकर मुक्तिधधूवर भवसागर उद्धार करे,

जय जय परमात्म शुद्ध विदात्म कर्मकलंक निवारकरं ।

जय जय गुणसागर सुखरसाकर आत्ममगनता सार लरं,

जय जय निर्वाण पाय सुज्ञान पूज्य पग संसार हरं ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थकुरेभ्यो पुष्पाजलि क्षिपेत् ।

वसन्ततिलका छन्द-पानी महान भरि शीतल शुद्ध लाजं । जन्मादि रोग हर कारण भाव ध्याजं ॥

पूजं सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं । पाजं महान शिवमंगल नाश कालं ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो नमः जल ।

केशर सुमिश्रित सुगन्धित बन्दनार्दी । आताप सर्व भव नाशन मोह आवी ॥ पूंजूं सदा० ॥ बन्दनं ॥
 बन्दा समान बहु अक्षत धार थाली । अक्षय स्वभाव पाऊं गुण रत्नशाली ॥ पूंजूं सदा० ॥ अक्षतं ॥
 बम्पा गुलाब मरुवा बहु पुष्प लाऊं । दुख टार काम हरके निज भाव पाऊं ॥ पूंजूं सदा० ॥ पुष्पं ॥
 ताले महान पकवान धनाय धारे । बाधा मिटाय शुभरोग स्वयं सम्हारे ॥ पूंजूं सदा० ॥ नैवेद्यं ॥
 दीपावली जगमगाय अंधेर घाती । मोहादि तम विघ्न जाय भव प्रतापी ॥ पूंजूं सदा० ॥ दीपं ॥
 बन्दन कपूर अगारादि सुगन्ध धूपं । बाह्यं तु अष्ट कर्म हो सिद्ध भूपं ॥ पूंजूं सदा० ॥ धूपं ॥
 मीठे रसाल बादास पवित्र लाए । जासे महान फल मोक्ष सु आप पाए ॥ पूंजूं सदा० ॥ फलं ॥
 आठों सुद्रव्य ले हाथ अरघ बनार्जं । संसार बाम हरके निज सुक्ल पाऊं ॥ पूंजूं सदा० ॥ अर्घ्यं ॥

प्रत्येक अर्घ ।

गीता-चौदस वदी शुभ माघकी, कैलाशगिरि निज ध्यायके । बृषभेश सिद्ध हुवे शचीपति, पूजते हित पायके ॥
 हम वार अर्घ महान पूजा, करे गुण मन लायके । सब राग दोष मिटायके, शुद्धात्स मनमें भायके ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

शुभ चैत सुदि पांचम दिना, सग्मेदगिरि निज ध्यायके ।

अजितेश सिद्ध हुवे भविकगण, पूजते हित पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं वैश्रशुक्लापचम्यां श्रीअजितनाथाय जिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

शुभ माघ सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

सम्भव निजातम केलि करते, सिद्ध पदवी पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लाषष्ठ्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

वैशाख सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

अभिनन्दनं शिव धाम पहुँचे, शुद्ध निज गुण पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाषष्ठ्यां श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

शुभ चैत सुदि एकादशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री सुमतिजिन शिव धाम पायो, आठ कर्म नशायके ॥ हम० ॥

- ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लाएकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (५)
- शुभ कृष्ण फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्री पद्मप्रभु निर्वाण हुवे, स्वात्म अनुभव पायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णासप्तम्यां श्री पद्मप्रभुजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६)
- शुभ कृष्ण फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्री जिन सुपार्श्व स्वस्थान लीयो, स्वकृत आनन्द पायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णासप्तम्यां श्री सुपार्श्वजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (७)
- शुभ शुक्ल फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीचन्द्रप्रभु निर्वाण पहुंचे, शुद्ध ज्योति जगायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्ला सप्तम्यां श्री चन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (८)
- शुभ भाद्र शुक्ला अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीपुष्पदंत स्वधाम पायो, स्वात्म गुण झलकायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाअष्टम्यां श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (९)
- दिन अष्टमी शुभ द्वार सुद, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीनाथ शीतल शोक्ष पाए, गुण अनन्त लखायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं भास्विनशुक्लाअष्टम्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)
- दिन पूर्णमासी श्रावणी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
जिन श्रेयनाथ स्वधाम पहुंचे, ज्ञातम लक्ष्मी पायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं श्रावणपूर्णमास्यां श्री श्रेयनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (११)
- शुभ भाद्र सुद चौदश दिना, मंदारगिरि निज ध्यायके ।
श्रीवासुपूज्य स्वधान ली हो, कर्म आठ जलायके ॥ ह्रमं ॥
ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाचतुर्दश्यां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)
- आपाठ चद्र शुभ अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीविमल निर्मल घाम लानो, गुण पवित्र बनायके ॥ ह्रमं ॥

ॐ ह्रीं भाषाढकृष्णाभष्टया विमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

अमनाथसी वद वैश्रकी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

स्वामी अनन्त स्वधाम वायो, गुण अन्नत लवायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअभावया श्री अनतनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

शुभ ज्येष्ठ शुक्ला चौथ दिन सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्रीधर्मनाथ स्वधर्म नायक, अप्प निज गुण पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाचतुर्था श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

शुभ ज्येष्ठ कृष्णा चौदसा सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्रीशांनन थ स्वधाम धुंत्ते, परम मार्ग बतायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्था श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)

वैशाख शुक्ला प्रतिपदा, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्रीकुन्थुनाथ स्वधाम लानो परम पद झलकायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदा श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)

अमनाथसी वद चैतका, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री अरुहनाथ स्वथान लानो, अमर लक्ष्मी पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअभावया श्री अरुहनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)

शुभ शुक्ल फाल्गुण पंचमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री बल्लनाथ स्वथान धुंत्ते परम पदवी पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुशुक्लपंचमी श्री बल्लनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)

फाल्गुण वदा शुभ द्वादशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

जिननाथ मुनिसुव १ पधारे, मोक्ष धानन्त्र पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाद्वादशा श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)

वैशाख कृष्णा चौदशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

नमिनाथ मुक्ति विशाल पाई, सकल कर्म नशायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णाचौदशी श्री नमिनाथमुक्तिविशालपाईसकलकर्मनशायके ॥ ह्रम० ॥ (२१)

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णाचतुर्दश्यां श्री नमिनायजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)

आषाढ शुक्ला सप्तमी, गिरिनार गिरि निज ध्यायके ।

श्री नैमिनाथ स्वधाम पहुँचे, अष्ट गुण झलकायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लाष्टम्यां श्री नैमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)

शुभ आशुषणी सुद भसमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री पार्श्वनाथ स्वधाम पहुँचे, सिद्धि अतुपम पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं आशुषणशुक्लाष्टम्यां श्री पार्श्वजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)

अस्माधस्मी बहू कार्तिकी, पाषापुरी निज ध्यायके ।

श्री बहूप्रान स्वधाम लोनो, कर्म वंश जलायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णा अमावास्यां श्री बहूप्रानजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

मुजंतप्रयात छद-नमस्ते नमस्ते जिनन्दा । तुम्हीं सिद्ध रूपी हरे कर्म फंदा ॥

तुम्हीं ज्ञान सूरज भक्तिक नीरजोको । तुम्हीं ध्येय वायू हरो सब रजोको ॥ १ ॥

तुम्हीं निवकलंकं चिदाकार चिन्मय । तुम्हीं अक्षजोतं निजाराय तन्मय ॥

तुम्हीं लोक ज्ञाता तुम्हीं लोक पालं । तुम्हीं सर्वदर्शी हता मान कालं ॥ २ ॥

तुम्हीं क्षेमकारी तुम्हीं योगिराजं । तुम्हीं शांत ईश्वर कियो आप काजं ॥

तुम्हीं निर्भय निमल वीतमोहं । तुम्हीं साम्य अमृत पियो वीतद्रोहं ॥ ३ ॥

तुम्हीं सब उदधि पारकतो जिनेशं । तुम्हीं मोह तमके निवारक दिनेश ॥

तुम्हीं ज्ञानवीरं भरे क्षीर सागर । तुम्हीं रत्न गुणके सु गम्भीर आकर ॥ ४ ॥

तुम्हीं बन्दरमा निज सुधाके प्रचारक । तुम्हीं योगियोंके परम प्रेम धारक ॥

तुम्हीं ध्यान गोचर सु तीर्थकरोंके । तुम्हीं पूज्य स्वामी परम गणधरोंके ॥ ५ ॥

तुम्हीं हो अनादी नहीं जन्म तेग । तुम्हीं हो सदा सत् नहीं अंत तेरा ॥

तुम्हीं सर्वव्यापी परम बोध द्वारा । तुम्हीं आरमन्व्यापी चिदानन्द धारा ॥ ६ ॥

तुम्हीं हो अन्तर्धं स्व परिणाम द्वारा । तुम्हीं हो अभेदं अमिदं द्रव्य द्वारा ॥
 तुम्हीं भेदरूपं गुणानन्त द्वारा । तुम्हीं नास्तिरूपं परानन्त द्वारा ॥ ७ ॥
 तुम्हीं निर्विकारं अमूर्त अखेदं । तुम्हीं निष्कषायं तुम्हीं जीव वेदं ॥
 तुम्हीं हो चिदाकार साकार शुद्धं । तुम्हीं हो गुणस्थान दूरं प्रबुद्धं ॥ ८ ॥
 तुम्हीं हो समयसार निजमें प्रकाशी । तुम्हीं हो स्वचारित्र आत्म बिकाशी ॥
 तुम्हीं हो निरास्रव निराहार ज्ञानी । तुम्हीं निर्जरा बिन परम सुख निधानी ॥ ९ ॥
 तुम्हीं हो अवन्धं तुम्हीं हो असोक्ष । तुम्हीं कल्पनातीत हो नित्यं मोक्षं ॥
 तुम्हीं हो अवाच्यं तुम्हीं हो अचित्य । तुम्हीं हो सुवाच्य सु गणराज नित्यं ॥ १० ॥
 तुम्हीं सिद्धराजं तुम्हीं मोक्षराजं । तुम्हीं तीन सूके सु ऊरुध विराजं ॥
 तुम्हीं वीतरागं तदपि काजं सारं । तुम्हीं भक्तजन भावना मल निवार ॥ ११ ॥
 करं मोक्ष कल्याणकं भक्त भीने । कुरै भाव शुद्धं यही भाव कीने ॥
 नमे हैं जजे हैं सु आनन्द धारें । शरण भंगलोत्तम तुम्हींको विचारें ॥ १२ ॥
 दोहा-परम सिद्ध चौबीस जिन, वर्तमान सुखकार । पूजत भजत सु भावसे होय विघ्न निरवार ।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिवर्तमानजिनेन्द्रेभ्यो नमः कल्याणकेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-विम्बप्रतिष्ठा हो सफल, नरनारी अथ हार । वीतराग विज्ञानमय, धर्म बढो अधिकार ॥

इत्याशीर्वादः । पुष्प क्षेपे ।

फिर आधारणतया पूजा विभर्जन करे, परदा पड़े । कवेरे यह कार्य हो जावे तब नरनारी भोजनादि करें । ऊपर आचार्य शेष प्रतिमाओंपर पुष्प द्वारा कल्याणककी स्थापना करे । अस्मिन्बिम्बे निर्वाणकल्याणक आरोपयामि स्वाहा । विद्वद्युगुणानि न्ययामि स्वाहा ।

अध्याय नौवां ।

अन्तिम होम. अभिषेक व शांति

तीघरे पहर करीव १ बजे फिर मंडप टिकटोंके द्वारा भरा जावे । होमकी सामग्री इतनी तैयार की जावे जिबसे १२००० के करीव आहुति हो सके । अभिषेकके लिये १०८ ककश हों तो ठीक है । यदि न हो सके तो ५४, २७, ९ भी हो सकते हैं । इनमें जन्मकल्याणकक समान दूबसे मिला जल जो सफेद दीले भरा जावे व एक बड़ा ककश केशरादि सुगन्ध द्रव्योंसे भरा हुआ हो व चार ककश दोनोंके हों । पहले आचार्य व इन्द्र मन्त्र स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन घड़ेके समान अंग शुद्ध करें फिर एक बिंदू पूजा कारके तीनों कुण्डोंमें होम करें । तब समय वह सब विधि करें जो यागमण्डलकी पूजाके प्रारम्भमें की थी (होम विधि अध्याय दूसरा पृष्ठ २१ परसे बिद्वार्चन चन्द्रन्वी पीठिका मंत्रोंसे होम करे । “ ॐ सत्य जाताप नमः ” आदिसे ऐवी ११२ आहुतियां देवे । फिर जिब मन्त्रकी एक कास जाप्य की थी तब मन्त्रको १००० आहुति तीनों कुण्डोंमें देवे । अर्थात् कुल ३००० इई । एक ही वाप एक मन्त्र पढ़ा जावे व तीनों कुण्डोंमें दो दो इन्द्र आहुति देवे—“ ॐ हा हीं हू हौं ह्रः पर्वविघ्नविनाशनाय स्वाहा ।

इसप्रकार होम हो चुके तब महा अभिषेक प्रारम्भ किया जावे । पहले आचार्य और इन्द्र कायोहर्षण कारके बिद्वोंका ध्यान करें फिर बिद्वभक्ति, चारित्रभक्ति तथा समाधिभक्ति पढ़ें । फिर पूजन करें ।

(१) जिनयज्ञ विधानम् ।

आहुता भक्षनामरैः सुगता य सर्वदेवास्तथा, तस्यौ यस्त्रिजगत्सर्वांतरमथापोठाग्रप्रतिहासने ।
यं ह्येवं हृदि सन्निधाप्य मन्तं, ध्यायंति योगीश्वराः, त देव जिनमर्चितं कृतधियाभावाशाननाथैर्भजे ॥

ॐ हा हीं हू हौं ह्र अघि आ त वाईर्न् एदि २ योषट् । ॐ हा हीं हू हौं ह्र अघि आ त वा अर्हन् तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ हा हीं हू हौं ह्र अघिआतवा अर्हत् मम अनिहितो भय भव वषट् । पुष्पाजलि क्षेपे ।

ध्यापना ।

यत्रागाधविशालनिमलगुणे लोकत्रय सर्वदा । सालोकं प्रतिबिधितं प्रविशतां नित्यासुतानन्दनम् ।

सर्वोब्जानिभिवाश्यदं स्मृतिगन्तं पापापह धीमताम् । अर्हतीर्थमपूर्वमश्रयमिदं बाधोरया धारये ॥ १ ॥

ॐ हीं परमप्रसूणे अनन्तानन्तज्ञानशक्तये जल निर्वगामीति स्वाहा ।

गन्धअन्दनगन्धबन्धुरतरो यद्विद्वयदेशेन्द्रो, गन्धबीज्यमरस्तुतो विजयते गन्धांतरं सर्वतः ।

गन्धादीनिखिलान्वैति विशदं गन्धादिस्तुतोऽपि यः, तं गन्धाद्यघग्घमानहतये गर्धेन सम्पूजये ॥

ॐ ह्रीं भवाताप विनाशनाय षट्दनम् ।

ॐ ह्रीं अक्षयफलप्राप्तये अक्षय निर्वपामीति स्वाहा ।

यस्य द्वादशयोजने स्रद्धसि सद्गन्धादिभिः श्वोपया । नप्यर्थीन्सुमनोगणान्सुमनसो बर्षन्ति विद्वत्कसदा ।
यः सिद्धिं सुधनः सुखं सुमनसां स्वं ध्यायताम्नावष्टे-सं देवं सुमनोसुखैश्च सुमनोभेदैः समभ्यर्चये ॥

ॐ ह्रीं कामनाय विध्वशनाय पुण्यम् ।

यद्बुध्याबाधविवर्जितं निरूपमं स्वात्मोत्थमस्त्यूजितम् । नित्यानन्दसुखेन तेन लभते यस्तृप्तिमात्यन्तिकीम् ।
यं चाराध्य सुधाशिनो ननु सुधास्वादं लभंते चिरम् । तस्योद्यद्ब्रह्मचरुणैव बरुणा ओपाद्दमाराराधये ॥

ॐ ह्रीं सुगम-सुखप्रदाय नैवेद्यम् । नर्वपामीति स्वाहा ।

स्वस्यान्पस्य ऊ हृत्प्रकाशनविधौ दीपोपमोप्यन्वहम्, यः सर्वं उचलयन्नंतंकिरणैर्खलोक्यदीपोऽस्त्यतः ।
येनोद्दीपितघर्मतीर्थप्रभवस्तरयं विभो स्वरस्य स-दीप्त्या दीपितदिङ्मुखस्य षरणौ दीपैः समुद्दीपये ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।

येनेदं मुक्चनत्रयं चिरमभ्यूहूपितं सोप्यहो मोहो येन सुधूपितो निजमहाधयानाग्निना निर्दयम् ।
यस्यास्थानपदस्थधूपघटजैर्धूमैर्जगदूपितम् । धूपैस्तस्य जगद्दशीकरणमदूपैः पदं धूपये ॥

ॐ ह्रीं वशीकृतत्रिकोकनायाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

यद्भक्त्या फलदायि पुण्यसुद्धितं पुण्यं नधं वध्यते । पाप नैव फलप्रदं किमपि नो पापं नधं प्राप्यते ।
आर्हन्स्यं फलमदुसुं शिवसुखं नित्यं फलं लभ्यते । पादौ तस्य फलोत्तमादिसुफलैः श्रेयः फलायाव्यते ॥

ॐ ह्रीं कभीष्टफलप्राप्तये फल निर्वपामति स्वाहा ।

धार्गंधतंदुल्ललतांतह्विःप्रदीपै-धूपैः फलैः कनकपात्रगतंजिनाग्रे ।
नयादिबर्तदधिस्वस्तिकदर्भदूर्वा-सिद्धार्थकैश्च कृतमहर्धर्मिहोद्गरामः ॥

ॐ ह्रीं विनष्टाष्टकर्मणे अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्तुतिः ।

तुभ्यं नमो दशगुणोजितदिव्यगाम् । कोटिप्रभाकरनिशाकरजैत्रतेजः ।
तुभ्यं नमोऽतिचिरबुर्जयघातिजात- । घातोपजातदशस्यारगुणामिराम ॥ १ ॥

तुभ्यं नमः सुरनिकायकृतेविंशारे । दिव्यैश्चतुर्दशविधातिशयैरुपेत ॥
 तुभ्यं नमस्त्रिभुवनधिपतित्वलक्ष्म-श्रीप्रातिहार्याष्टकलक्षितार्हन् ॥ २ ॥
 तुभ्यं नमो निरुपमान भनन्तवीर्यं । तुभ्यं नमो निजनिर्जननित्यसौर्य ॥
 तुभ्यं नमः परमकेवलबोधवार्धे । तुभ्यं नमः समसमस्तपदाबलोक ॥ ३ ॥
 तुभ्यं नमः सकलमंगलवस्तुमुख्य । तुभ्यं नमः शिबसुखप्रद पापहारिन् ।
 तुभ्यं नमस्त्रिजगदुत्तमलोकपूज्य । तुभ्यं नमः शरणभृत्रय रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥
 तुभ्यं नमोस्तु नवकेवलपूर्वलब्धे । तुभ्यं नमोस्तु परमैश्वर्योपलब्धे ।
 तुभ्यं नमोऽस्तु सुनिकुंजरयूथनाय । तुभ्यं नमोस्तु सुवनत्रितयैकनाथ ॥ ५ ॥

(२) सिद्ध पूजा ।

आहूता इव सिद्धशुक्तिवनितां मुक्तान्यसंगा ययुः । तिष्ठत्यष्टमभूमिमौघशिखरे मानननसौर्याः सदा ॥
 साक्षात्कूर्वत एव सर्वमनिशं सालोक्यलोकं सम । तानद्वेष्ट्विद्युदसिद्धनिकरानावाहनाद्यर्भजे ॥

ॐ ह्रीं गमो विद्वाण विद्वपरमेष्ठिन् अत्र एहिरे प्रबोधट् । ॐ ह्रीं गमो विद्वाण विद्वपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ ठः ठः ॥
 ॐ ह्रीं गमो विद्वाण विद्वपरमेष्ठिन् अत्र मम प्रनिहितो भव भव वषट् ।

गंगादितितपस्पयवषट्पण्डिं सरगंधदाणिममलदापण्डिं । अच्चेमि णिचं परमदृसिद्धे सवष्टुसम्पादय सव्वसिद्धे ।

ॐ ह्रीं श्रीं नम विद्वाधिपतये जल निर्वणामीति स्थाहा ।

गन्धेहिं धाणाण सुष्टप्यएहिं, समच्चयाणं पि सुष्टप्यएहिं । अच्चेमि० ॥ गन्धं ॥ २ ॥
 परंत छोणासिय कारणेहिं, वारवदएहिं सियकारणेहिं ॥ अच्चेमि० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥
 पुष्केहिं दिव्येहिं सुवणएहिं, कन्धे कऊसेहिं सुवणएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥
 बन्धेहिं गाणासुरसप्यएहिं, भव्वाणाणाणायिरसप्यएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ बरु ॥ ५ ॥
 देदिव्यमाणप्यहदीकएहिं । मंऊयआणं मिरिदिवएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ दीपम् ॥ ६ ॥
 काळाअरुअप्यसुहृवएहिं । जोयाण पाषाण सुहृवएहिम् ॥ अच्चेमि० ॥ धूपं ॥ ७ ॥

अणयधभूरिं फळव्यएहि । एववस्म संदिणफळव्यएहिम् ॥ अवेमि० ॥ फलं । ८ ॥

गणेण णाणेण य दसणेण तवेण उट्टेण य संजसेण ॥
सिद्धे तिराले तुविसुद्धबुद्धे । समग्रयामो सयले वि सिद्धे ॥

ॐ ह्रीं ह्रीं श्री सिद्धाधिपतये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्तुति ।

नमस्ते पुक्खार्थीनां, परां काष्ठासधिष्ठिन सिद्धभट्टारकस्तोम, निष्ठितार्थं निरञ्जन ॥ १ ॥
स्वःपदाय नमस्तुभ्यं अत्रलाय नमोस्तु ते । कक्षयाय नमस्तुभ्यं, अठ्ठायाघाय ते नमः ॥ २ ॥
नमस्तेऽनंतनिजानहृष्टार्थं तुखास्पद । नमो नीरजसे तुभ्यं निर्मलायास्तु ते नमः ॥ ३ ॥
अच्छेद्याय नमस्तुभ्यं, असेद्यय नमो नमः । अक्ष्णाय नमस्तुभ्यं, अवसेय नमोस्तु ते ॥ ४ ॥
नमोस्त्वणर्धवास्य, नमोऽगौरवलाघव ॥ अक्षोऽस्याय नमस्तुभ्यसविलीनाय ते नमः ॥ ५ ॥
नम एरमकाष्ठान्तयोगरूपत्वमीयुषे लोकाप्रवासिने तुभ्यं, नमोऽनंतगुणाश्रय ॥ ६ ॥
निःशेषपुक्खार्थीनां, निष्ठां सिद्धिमधिष्ठिन । सिद्धभट्टारकवात, भूयो भूयो नमोस्तु ते ॥ ७ ॥

विनिपदुरितशुद्धान्मर्वतत्रार्थबुद्धान् । परमसुखसष्टद्वान्युक्तिशास्त्राविरुद्धान् ॥
पद्भिधगुणवृद्धान्सर्वलोकपसिद्धान् । प्रमितसुनयसिद्धान्संस्तुवे सर्वसिद्धान् ॥ ८ ॥

(३) महर्षिपूजा ।

ये येऽनगारा ऋषयो यतीन्द्रा, सुनीश्वरा अव्यभक्त्यतीताः ।
तेषां समेषां पदपंक्त्यानि, सपूजयामो गुणशीलसिद्धय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अनादूर्गमज्ञानचारित्रपविप्रतरंगान्त्रचतुरशीतिवृक्षगुणगुणधरचरणा आगच्छत २ स्वोषट्, ॐ ह्रीं अत्र तिष्ठ २ ठः ठः;
ॐ ह्रीं मम लक्षणयशुद्धि कुरुत २ वषट् ।

सुगंधिगीतलैः स्वच्छैः, स्यादुभिविर्मलैर्जलैः । साधद्वीपद्वयातीतभवद्भूव्ययतीग्यजे ।

ॐ ह्रीं गणधरचरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सारकर्पूरकाशमीरकलितश्चन्दनद्रवैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ गंधम् ॥ १ ॥
 अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षैस्क्षमन्त्रिभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ अक्षतम् ॥ ३ ॥
 पुष्पैः प्रसरदामोदाहृतपुष्पंधयावृत्तैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ पुष्पम् ॥ ४ ॥
 हृद्यैर्नवघृतापूपपायसैर्वर्धजानन्वितः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ चरु ॥ ५ ॥
 कर्पूरप्रभ्रवैर्दीपैर्दीप्या दीपितदिङ्मुखैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ दीपं ॥ ६ ॥
 दशांगधूपमद्भूमैदकाशापूर्णसौरभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ धूप ॥ ७ ॥
 चोचमोचाभ्रजंजीवीरफलपूरादिसत्फलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ फलं ॥ ८ ॥

गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैककथन्धुन् प्रकृतिनिजमार्गोऽव्यस्तमिध्यात्प्रमाणोन् ।

परिचिन्निजतत्त्वान्पालिताशेषसत्त्वान् । शरमसजितचन्द्रानर्धयामो सुनीद्रान् ॥ अर्धं ॥ ९ ॥

स्तुति ।

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेन्द्राः, सप्तर्षयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः ।
 तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, वचोमनोमूर्द्धसु धारयामः । १ ॥
 तपोबलाक्षीणरसौषपद्धिन्, विज्ञानक्वद्वीनर्पि विक्रियद्धिन्
 सप्तद्धियुक्तानखिलावृषीद्र न्मरामि वन्दे प्रणमामि नित्यम् २ ॥
 भवेषु तार्थेषु तदतरेषु, सप्तर्षयो ये महिता यन्मृदुः ।
 भवांबुधेः पारमिताः कुनार्थाः । भवन्तु नस्ते सुनय. प्रसिद्धाः ॥ ३ ॥
 ये केवलीद्राः श्रुतकेवलीद्रा, ये शिक्षकात्तूर्यतृतीययोधाः ।
 सविक्रिया ये वरवादिनश्च सप्तर्षिसजाहि तान्प्रवन्दे ॥ ४ ॥
 प्रमत्तसुल्येषु पदेषु सार्धद्वीपद्वये ये युगपद्भवन्ति ।
 उत्कृषंतस्नात्रककाटिसंख्यान्वदे त्रिसंख्यारहितान्मुनीद्रान् ॥ ५ ॥

(४) नीचेका स्वस्तिपाठ पढ़कर पुष्पांजलि क्षेपे ।

श्री पंचकल्याणमहार्हणार्हा, वागात्समाग्यातिशयैरुपेताः ।

तीर्थकारा केवलिनश्च शोषाः, स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥ १ ॥

ते शुद्धमूलोत्तारसद्गुणानामाद्याश्च भवादनगारसंज्ञाः निर्ग्रथत्रयो निरग्रथत्रयो ॥ स्वस्ति० ॥ २ ॥
 ये वाणिमाद्यष्टत्रयिक्रियाद्वयस्तथाक्षयाथासमहानमाश्च । राजपंयस्ते सुरराजपूज्याः स्वस्तिक्रियां० ॥ ३ ॥
 ये कोष्ठबुध्यादिचतुर्त्रयद्वीरवापुरासकोमुखीपधर्द्धीः । ब्रह्मर्षयो ब्रह्मण तत्परास्ते ॥ स्वस्ति० ॥ ४ ॥
 जलादिनानाविधचारणा ये, ये चारणाग्ध्यांवरचाराणाश्च । देवर्षयस्ते ननदेवद्वंदाः ॥ स्वस्ति० ॥ ५ ॥
 मालोकलोकोत्सृजलनेकतानं, प्रासाः परं ज्योतिरनेतंधोधम् । सर्वषिबंध्या परमर्षयस्ते । स्वस्तिक्रियां० ॥ ६ ॥
 श्रेणीद्वयारोहणमावधानाः, कर्षोपशांतिक्षयणप्रवीणाः । एते समस्ता भययो महान्तः ॥ स्वस्ति ॥ ७ ॥
 समग्रमध्यक्षमिताक्षदेशपत्यक्षमुखानुरक्ताः । मुनांस्वरास्ते जगदेकजन्याः ॥ स्वस्ति० ॥ ८ ॥
 उग्रं च दीप्तं च तपोभित्तं, महच्च धार च तरां चरन्तः । सपोथना निर्धुनमाथनांत्काः ॥ स्वस्ति० ॥ ९ ॥
 मनोवचाःकाण्ठबलपकृष्टाः, स्पष्टकृताप्रांगमहानिमित्ता । क्षारासुतस्रविमुखा मुनीन्द्राः । स्वस्ति० ॥ १० ॥
 प्रत्येकबुद्धप्रमुखा मुनीन्द्रा शोपश्च ये ये त्रिविधद्विद्युक्ताः । सर्वेऽपि ते भवजर्नानमुक्ता ॥ स्वस्ति० ॥ ११ ॥
 शापानुग्रहशक्तगद्यतिशयैरुच्चारचैरचिनाः । ये सर्वे परमर्षया भगवन्नां तेषां गुणान्ताद्यन्तः ॥
 एतत्स्वस्ययनादपैति सकल, सक्लेशभावः शुभो । भावस्यात्सुकृतं च तच्छुभादिधेगादाविदं श्रेयसे ॥ १२ ॥

फिर आचार्य नीचे लिखा मंत्र पढ़ भूमिशुद्धिके लिये जल छिड़के । “ॐ ही श्री क्षीं भूः स्वाहा ।” फिर शुद्ध भूमिपर या बड़ी चौकीपर बाधिया कारके १०८ या ५४ या २७ या ९ कलश क्षीर जलसे भरे स्थापित करे, या रक्खे हों तो यह मंत्र पढ़ उनपर पुष्प क्षेपे—“ॐ ही स्वस्तये कलशस्थापन करोमि स्वाहा ।” तथा जिस उच्च स्थानपर न्द्वन करना हो उसके चारों कोनोंपर ४ कलश शुद्ध जलके भरे स्थापित करे तब भी ऊपर लिखा मंत्र पढ़े । इसके ऊपर एषा पात्र विराजमान करे जिसके दोनों ओर पानी बहनेकी नाली हो जिससे न्द्वनका जल दोनों तरफ गिरकर नीचे रक्खे हुए तबलोंमें पड़े । भूमिपर दो तबले ऐसे दोनों तरफ रख दिये जावे जिससे कुल कलशोका न्द्वन जल उनमें आ सके । फिर जिस पीठ या चौकीपर भगवानको विराजमान करना हो उसे उच्च पात्रके ऊपर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर रक्खे—“ॐ हीं अई क्ष्म ठः ठः स्वाहा ।” फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ उच्च पीठको धोवे—

ॐ हां हीं हूं हौं हं नमो अर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन श्रीपीठाक्षालन करोमि स्वाहा । फिर नीचे का मंत्र पढ़ लए पीठपर श्री लिखे— ' ॐ हीं श्रीं अर्हं श्रीं श्रोत्रेभ्यन नमोमि स्वाहा । ' फिर नीचे लिख मंत्र पढ़ इन्द्र जिन प्रतिमाको जिष्की प्रतिष्ठा हो चुकी है स्पर्श करे । " ॐ हीं वात्रे गण्टु प्रतिपार्ष्णीन्म् । " फिर बीच प्रतिमाका बड़ी विनयसे इन्द्र कोवे और पीठपर विराजमान करे तब आचार्य नीचे का श्लोक व मंत्र पढ़े—

नीत्वा सूरिविभूतिः भुग्निरि, श्रीं पांडुक्ताश्रासने । पूर्वाभ्य चिन्वेदय ते सुरधराः, सस्तापयंति स्म यम् ॥
तं देवं स्तानार्थं प्रहृष्टपत्निम्, नीत्वा निभूत्या स्वमं । पांठेन श्रुनवीजभासुरतले, पूर्वाननं स्थापये ॥

ॐ हीं अर्हं श्रीं वर्मानार्थं धनाय भगवन्निह पाण्डु-शिश्रपठे तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा ।

फिर नीचे लिख. मंत्र पढ़ प्रतिमाके चरणोंको इन्द्र स्पर्श—

ॐ उग्रहाय त्रिभुवदेहाय इज्ज जादाय मरुत्त गाय अणनचरदुगाय परमसुहृष्टुगाय गिण्मन्त्राय पयभुवे अजगामपरमदपत्ताय वउमुहृपरमे ठुणे शरदनाय त्रिदोषणाणाय त्रिदोषपूत्राय अष्टदिग्बदेहाय देवत्रयपूजिताय परमदाय मम यय भन्निदिदाय स्वाहा ।

फिर दोनों ओर वीरुम ईशान १०८ कलकमेंसे एक कलकसे एक सहे हो तब आचार्य नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़े । इसके पहले यदि भाषा मगळ पढ़ना हो तो दूसरा मगळ पढ़ले

मेरोमूर्धनि सृष्टिन यस्य पयसां, धारं पयोशरिदेः सौधर्मः प्रथमं जयेति परया, भक्त्या समापातयत् ॥
ईशानादिसुरेश्वराग्नदत्तुं, सस्तापयान्नकिरे तं देवं न्जयंपकपाननकृते, संस्तापयामो जिनम् ॥ १ ॥

यदज्ञानादिसद्वयनिजिनमहत्त्वाकाकश्रेत्यां वना । व्याजातन्वभिविचितीह, जिनमित्याविष्कृताशंककैः ॥
सच्छ.च्छैपि यीनलेः सुप्रथुरैर्नार्थीरर्नातेर्जलेः । शांण्यापादितवारिमुर्निमनघं, देवं जिनं स्तापये ॥ २ ॥

ॐ हीं श्रीं ह्रीं ऐं अर्हं व म हृ ष त प व न हृ इ ष त त प प ह्रीं ह्रीं क्षीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्राक्षय द्रावय नमोर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिवेचयामि स्वाहा ।

आचार्य ऊपर के मंत्रको पढ़ना रहे, १०८ कलकशोसे दोनों इन्द्र अभिपेक करते रहे, दोनों तर्फ कतावच दूसरे इन्द्र सहे हो जावे और कलकोंको देते रहे । खाली कलकोंको पछेके इन्द्र केकर रखते रहे । इवनके समय बाहर वजे चजते रहे, स्त्रियां मंगलगीत गावे, जय जय शब्द हो फिर उदक चन्दनादि वलनर अर्घ्य चढावे । फिर केशरादि मिश्रित गाढे जलके कलकशसे स्नान हो तब यह श्लोक व मंत्र पढ़ा जाये—

चतुर्विंशतियक्षा आदित्यचन्द्रमंगलबुधशुक्रशनिराहुकेतुप्रभृत्यष्टाशीतिप्रहाः वासुकिशंखपालककौटपशकुलिकानततक्षकमहापद्मवज्र
विजयनागाः देवनागयक्षगर्भब्रह्मराक्षसभूतव्यतरप्रभृतिभूताश्च वैश्वेते जिनशासनवत्सला ऋष्यायिकाश्रवकश्राविकाथष्टयाजकराजमन्त्रि
पुरोहितपामतारक्षिकप्रभृतिपमस्तलोकप्रभृत्स्य शातिवृद्धिपुष्टिपुष्टिक्षेमकल्याणस्वायुशोरोरुपदा भवन्तु । सर्वसौख्यप्रदाश्च सन्तु । देशे राज्यपुरे
च सर्वदेव चौारिभारीतिदुर्भिक्षावप्रहविघ्नौघदुष्टप्रहभूतशाकिनीप्रभृत्यशोषानिष्टानि प्रलयप्रतीति, राजा विजयी भवतु ब्रजाप्रौढ्य भवतु, राज-
प्रभृतिपमस्तलोकाः एतत् जिनधर्मवत्सला, पूजादानत्रयशीलमहासहस्रप्रभृतिषुधता भवतु त्रिकाल नन्दन्तु । यत्र स्थिता भव्यप्राणिनः,
एवमारण्य लीलये तीर्थनुपम सिद्धिबौद्धमन्तकाळमनुभवति तच्चाशेषमणिगणशरणभूत जिनशासन नदन्ति स्वाहा ।
फिर न चेके श्लोक पढे व इन्द्रादि हाय जोड़े व पुष्प क्षेपण करते रहे ।

ये सामग्रीविशेषद्विपभरहवात्क्षिसदुर्भारैरि-

त्रातप्रेष्यत्पताकासतपरचितज्ञानसाम्राज्यलीलाः ।

क्षिसास मन्यमाना जगदतिपुनते ते

रसूज्जच्छलद्युदचिर्भरमसितदशासाकृतैन पतंगाः ।

स्थानाकाराक्षरैरक्षणसुमरनिराकारलाकारचित्काः ।

व्योम्नोविश्वैकथाशः कृततिलरुचः प्रष्टमात्मंभराणां,

व्यंजन्तः स्थं सदान्यजिनसमयजुषाः सन्तुसिद्धाः शिवाय ॥ ५ ॥

श्रुतधृतिवल्सिद्धाः पञ्चधाचारसुचैः, शिवसुखमनसो ये चारयन्तश्चरन्ति ।

शमरसमरसंविद्भूरयः सूरयस्ते, विदधतु जिनधर्मराशनाशिष्टसिद्धिम् ॥ ६ ॥

येऽगपविष्टबहिरंगजिनागमाब्धिपारंगमा, निरतिचारचरिभ्रमाराः ।

धर्मं यथावदनुशासति शिष्यवर्गान्, पुष्पन्तु पाठकवृषा जगतां नमस्ते ॥ ७ ॥

सुद्ध्वा ध्यानात्परमपुरुषं तत्स्वत अद्धधानाः, ये विद्वांसःस्वयमुपरतप्रत्यनीकप्रतापम् ।

एकीकुर्वन्त्युद्यानन्दनिष्पीतचित्तास्ते, भव्यानां दुरितमनिशं साधव संहारन्तु ॥ ८ ॥

ये मंगललोकोत्तमशरणात्मानं समृद्धमहिमानं, पातु जयंत्यहस्तिद्धसाधुकेचन्युषश्चधर्मास्ते ॥ ९ ॥

सुते भेदाभेदरत्नत्रयात्मानाद्यंताद्यंताथोदितौ सुक्लिशुक्ती ।

सोस्मिन् राजामात्यपौरादिलोकान्, धर्मस्तन्वन् शर्म पायादपायात् ॥ १० ॥
शांतिः स तनुतां समस्तजगति संगतवतां धार्मिकं, श्रेय श्री परिषद्भूतां नयधुराधुर्यो धारित्रीपतिः ।
सद्विद्यारसमुद्भिन्तु कवयो नामाप्यध स्यान्तु मा, प्रार्थय वा क्रियदेक एव शिष्यकृद्धर्मो जयत्वर्हताम् ॥ २० ॥

फिर नोचेके श्लोक पठकर आचार्य इन्द्रादिके मस्तकपर पुष्प क्षेपे ।

आयुस्तन्वन्तु तुष्टि विदधतु विधुनंस्वापदो व्रंतु विज्ञान्,
कुर्वन्वारोग्यसुवीषलयचिलासितां कीर्तिवल्लीं सृजन्तु ।
धर्मं संवर्धयन्तु श्रियमभिरमयत्वर्पयंत्विषष्टकामान्,
कैवल्यश्रीकृटाक्षानपि जिनचरणाः संजयन्तु सदा वै ॥ २५ ॥
आज्ञैश्वर्यमकायकार्थविचयेः सन्तानवृद्धिजयः, सौभाग्य धनधान्यवृद्धिरभयं निःक्षेपशत्रुक्षयः ।
पांडित्य कविना परार्थपरता कार्तिज्ञमोजस्थिता, मानित्व विनयो जयश्च भवतादर्हप्रत्सादेन वः ॥ २६ ॥
कांताः कांतिकलानुरागमधुराः पुण्यास्त्रिवर्गोद्धरा,

भृत्याः स्वाम्यनुरक्तिशक्तिरुचिरा इच्योतन्मदाः कुञ्जरा ।

बाहस्तजिनशकसूर्यतुरगाः शौर्योद्धताः पतयो,
भूयासुर्भवतां जिनेन्द्रचरणां भोजप्रसादात्सदा ॥ २७ ॥

गार्भार्थमौदार्यमजर्थमार्थशौर्यं सशौंडीर्यमवार्थवीवीर्यम्,
धैर्यं विपद्याज्वमार्थमक्तिः संवद्यतां श्रीजिनपूजनाद्गः ॥ २८ ॥
भवतु भवतामर्हद्भक्त्या सदा मुदितं मनो, ग्रहसुपचिता चौरौचित्यं प्रदासेन परस्माः ।
प्रणयविधशः स्वेसंबौसौइयागयमाहितं, स्थितिरपि चित्ते प्रज्ञापराधपराहतिः ॥ २९ ॥
दृक्संशुद्धिरतोन्यतोस्तु भवतामर्हत्प्रतिष्ठाविधे, जातु कृष्टि कथंचिदीषदपि मा शीलं व्रतं म्लायतु ।
दूरादेव शिरस्यधीरमरयो बध्नंतु देवांजलिं, प्रेम्णा सद्गुणसंपदा च सुहृदः श्लिष्यंतु पुष्णंतु च ॥ ३० ॥
यष्टृणां याजकानां प्रतिनितिकृतामभ्यनुज्ञायकानां, भूयस्यांतः पुरस्य क्षितिपतनुभुवां मंत्रिसेनापतीनाम् ।
सामंतानां पुरोधः पुरविषयवनादिस्थवर्णाश्रमाणां, सर्वेषामस्तु शांत्यै सततमयमिह । थापितो विश्वनाथः ॥ ३१ ॥

विचित्रैः खैर्द्रव्यं प्रतिसमयमुद्यद्विपदिपि, स्वरूपादुल्लोलैर्जलमिव मनागप्यविचलम् ।
अनेहो माहात्म्याहितनवनवीभावमखिलं, प्रणिष्ठाः स्पष्टं युगपदिह ते पांतु जिनपाः ॥ ३२ ॥
संभुज्यार्थिभिः संविभज्य च यथाविधेयमवायथा, निर्विण्णास्तुगवद्विसुज्य क्रमलां खं स्व स्वयं केऽपि ये ।
संवेद्यामलकेवलाचलच्चिदानदे अदवाभते ते सिद्धाः पथयतु व प्रति शिवश्रीमद्विलासान् ॥ ३३ ॥

जात्वा श्रद्धाय तत्त्वं भजति समरमारवादमानान्यनीहा,-

वृत्त्या घ्राण नुसर्पन्मरुतनु च कवानष्टमे ब्रह्मरध्रे ।

भृशत्प्यह्वाय मोहौ मृतिमयति मनः केवलं चापि भाया -

रहून्यध्यानेन येषां प्रयद परमिसे योगिनस्तन्वतां वः ॥ ३४ ॥

नार्पन्त्यान् विरमयांतर्हितपतनरुजौ दत्तज्ञंपान्वितन्वन्,

निःश्रेणीकृत्य भोगं षलघितपृथुतःसूलमाद्रोहिनांघ्रि ।

श्रीकुंड्रगगुह्यावनितरुचि खरा यौवर्तोणः स्वर्षण,-

व्यासंग संगमस्य व्यधितवहुमहाः वीरनाथः स बोध्यात् ॥ ३५ ॥

फिर आचार्य व इन्द्र आदि मायोर्भर्ग वरे, ९ दफे णमोकार मत्र पढे । फिर नीचे लिखी स्तुति शर्व पात्र मिलकर पढे । फिर
पश्चा खडी होजावे तब पुण भवको वाट दिये जावे और यागमंडल बहिन वेदीकी अथवा फेरीका स्थान न हो तो मध्यभरकी तीन
प्रदक्षिणा देवे । पहले आचार्य फिर इन्द्र फिर पात्र फ' पुरुष फिर लिया रहे । शक्तिपाठ पढ़न रहे । शक्तिपाठ होजावे तो दूसरे पाठ
पढते रहे । फिर आका कायोर्भर्ग करे । तथा १ व २ भजन पढे जावे । फिर विघर्जन की जावे । इस समय बड़ा आनंद मनाया
जावे । जो गणवर्षादि याचक हो उनको दान दिया जावे । व बहार भूखोंको अनादि बाटा जावे । प्रतिमाको मूल वेदीपर विराजमान
किया जावे, यह प्रतिष्ठविधि पूर्ण हो ।

स्तुति ।

विभगी छन्द-जय जय अरहंता मिद्ध महंता, आचारज उच्चशाय वरं,

जय साधु ब्रह्मानं सम्पगजानं, सम्पक्चारित पालकर ।

है भंगलकारी भव हगतारी, पाप प्रहारी पूज्यवरं,

दीनन निस्तारन सुख विस्तारन, करुणाधारी ज्ञानवरं ॥ १ ॥

हम अबसर पाए पूज रचाए करी प्रतिष्ठा बिम्ब महा,
 बहु पुण्य उपाए पाप धुवाए सुख उपजाये सार महा ।
 जिन गुण कथ पाए भाव बढ़ाए दोष हटाये यश लीना,
 तन सफल कराया आत्म लखाया दुर्गतिकारण हर लीना ॥ २ ॥

निज मति अनुसारं बल अनुसारं यज्ञविधान बनाया है,
 सब भूल चूक प्रभु क्षमा करो अथ यह अरदास सुनाया है ।

हम दास तिहारे नाम लेत हैं इतना भाव बढ़ाया है,
 सब याहासे सब काज पूर्ण हों यह श्रद्धान जमाया है ॥ ३ ॥

तुम गुणका चिन्तन होय निरन्तर जावत मोक्ष न पद पावें,
 तुमरी पदपूजा करै निरन्तर जावत उच्च न हो जावें ।

हम पढन तत्त्व अभ्यास रहे नित जावत बोध न सर्व लहें,
 शुभ सामायिक अर ध्यान आत्मका करत रहें निज तत्त्व गहें ॥ ४ ॥

जय जय तीर्थकर गुण रत्नाकर सम्यक्ज्ञान दिवाकर हो,
 जय जय गुण पूरण औगुण चूर्ण संशय तिमिर हरणकर हो ।

जय जय भवसागर तारण कारण तुम ही भवि आलम्बन हो,
 जय जय कुतकृत्यं नमै तुम्हें नित तुम सब संकट टारन हो ॥ ५ ॥

अध्याय दशवाँ ।

आचार्यादि प्रतिविम्ब प्रतिष्ठाविधि ।

सिद्ध प्रतिविम्ब—अर्हत और बिद्धके विम्बमें इतना अन्तर होता है कि अर्हतके आठ प्रतिधार्य होते हैं जब कि बिद्धके नहीं होते । हमारी रायमें आर्हन्त और बिद्धकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठामें ऊँई अन्तर नहीं है, क्योंकि आर्हन्तके विम्बमें दस पाँचों कल्याणशोका आरोप कर देते हैं । अन्य आचार्यादिकी प्रतिष्ठामें अन्तर होना ही चाहिये क्योंकि इनके कल्याणक नहीं होते हैं ।

(१) आचार्य प्रतिविम्ब प्रतिष्ठाविधि—पीछी रूपडठके बिद्ध रहित आचार्याकी मूर्ति होती है । आपन पचासत या सट्ठासत ही मूल्य है, नमना होती है, आचार्यकी प्रतिष्ठामें १००० मन्त्रकी जाप देवें । जैसे तीर्थंकरकी मूर्तिमें १ लाखकी टी गी, मन्त्र वही है । पहले मउप बनाकर यागमडलका मांडला बनावे तबमें पहले अध्ययगके अनुचार मन्त्रमें ऊँ लिखे तबके चारों तरफ १७ मानेका बलय करे, फिर दूसरा बलय ३६ कोठोंका हो चित्रमें आचार्यक छत्तीस गुण लिखे जाय । फिर तीसरा बलय १८ कोठोंका हो जिनमें ऋद्धिये लिखी जाय । इस तरह तीन बलयका मडल बनाकर जो पूजा दूधरे अन्त्यायमें लिखा उपसक्तो उवा विधिमें इन्द्र व आचार्य करे । अँगशुद्धि, स्याब व मऊलीकरण विधि पहलेके अनुचार जो जाय । फिर पूजामें अर्घ १७+३६+१८=१०१ इतने चढ़े श्लोक व छन्द वे ही हैं । पूजाके पहले पूज्य प्रतिमा अर्हतका अभियेक करे फिर तीन कुण्डोंमें दू म किया जावे । होममें पत्यानाय नम आदि मंत्रोंके विषय १०८ आर्हति सभी मन्त्रकी देवें जो वहाँ लिखा है । फिर श्रुति पढी जाय व मडलकी पूजा का नावे । पूजाके पछे आचार्यभक्ति, अर्हतभक्ति, सिद्धभक्ति व चारित्रभक्ति पढ़ें । फिर दूधरे दिन या सभी दिन मध्यमें पढली पित्तिके अनुचार अँगशुद्धि, अभियेक नित्यपूजा व होम करके आचार्यके विम्बकी प्रतिष्ठाका प्रारम्भ करे । यदि उषो दिन प्रतिष्ठा करना हो तो फिर होम करनेकी जरूरत नहीं है । आचार्यके विम्बको अभियेक करनेकी पीठार विराजमान करे । फिर इन्द्र शुद्ध जलसे स्नान करावे । पीछे पाँच आचारके रूपमें पाँच कळशोंसे जिनमें केशरादि द्रव्य बहुत मिला हो सर्वविधिके रूपमें उनसे स्नान करावे । फिर प्रतिमाको पीछेकर पाँचवें अध्ययगमें ऊँडे प्रमाण मातृकासत्रको १०८ बार जपकर प्रतिमाके अँगपर बोमकी बजाईये लिखकर ३८ न० तक लिखा नावे फिर महवि उपासना की जाय ।

ये येऽथगारा ऋषयो घनीन्द्रा, सुनीश्वरा भव्यभक्तवृत्तीताः ।

तेषां मसेयां पदपंकजानि, सम्पूजयामो गुणशीलसिद्धये ॥ १ ॥

ऊँ हीं वम्यदशोमज्ञानचारित्रपवित्रतरगात्रचतुर्शीलिकक्षगुणगणधराचराणा आगच्छत २ वजीवट् । ऊँ हीं वम्यगु० अत्र तिष्ठत २
ठः ठः । ऊँ हीं वम्यगु० मम रत्नत्रयशुद्धि कुंठत २ अत्र मम पविहितता भवत २ वषट् । अयाष्टकम् ।

सुगन्धिधीतलैः स्वच्छैः स्वादुभिर्विमलैजैः सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्यतीत्यजे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं गणवाचरणेभ्यो जलं निर्वगामिति रगाहा ।

सारकर्पूरकादमीरकलितैश्चन्द्रनद्वैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं गन्धम् ॥
 अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षैकक्षसंनिभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं अक्षतान् ॥
 पुष्पैः प्रसरदामोदाहनपुष्पबंधयावृत्तैः । स्वाधद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं पुष्पाणि ॥
 हृदयैर्नवघृतापूपपायसयंजनान्वितैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं चक्रं ॥
 कर्पूरप्रभवदीपैर्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं दीपम् ॥
 दशांगधूपसदूधूमैर्दशाशार्चुणसौरभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं धूपम् ॥
 चोचमोचचाञ्जमवीरफलपुंगुगादिसरफलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भ्ययतीत्यजे ॥ ॐ ह्रीं फलम् ॥
 गुणमणिगणसिधून्भवयलोकैकवन्धून् । प्रकटितनिजमार्गन्धस्तमिथ्यात्वमार्गान् ।
 परिचितनिजतत्वान्पालिनाशेषसत्वान् । शमरसजितचन्द्रानर्धयामो सुनीद्रान् ॥ ॐ ह्रीं अर्घं ॥

स्तुति ।

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेन्द्राः, समर्द्धयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः ।
 तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, बचोमनोमूर्धसु धारयामः ॥ १ ॥
 तपोबलाक्षीणरसौषधर्द्दीन्, विज्ञानकृद्धीनपि विक्रियर्द्दीन्
 समर्द्धियुक्तानखिलानृषन्द्वान्स्मरामि वन्दे प्रणममि नित्यम् ॥ २ ॥
 सर्वेषु तीर्थेषु तदन्तरेषु, समर्षयो ये महिता बभूवुः ।
 भवांबुधे पारजिताः कृतायो, भवन्तु नस्ते सुनयः प्रसन्नः ॥ ३ ॥
 ये केवलीन्द्राः श्रुतकेवलीन्द्रा, ये शिक्षकास्तुर्थतृतीयबोध्याः ।
 सविक्रिया ये वरयादिनश्च, समर्षिसंज्ञानिह तान्प्रबन्दे ॥ ४ ॥
 प्रमत्तमुख्येषु पदेषु सार्ध, दीपद्वये ये युगपद्भवन्ति ।
 उत्कर्षतस्मान्नवकोटिसंख्यान्वन्दे, त्रिसंख्यारहितान्मुनीन्द्रान् ॥ ५ ॥

किं प्रातमाको र्षशं कारके पुण्याजलं देवे और पच आचार प्रतिमामें स्थापित करे । नीचे प्रमाण मन्त्र पढ़कर प्रतिमापर पुष्प क्षेपे-

ॐ हूं दर्शनाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं शानाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं चारित्राचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं तपाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं वीर्याचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः ।

फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर प्रतिमापर पुष्प क्षेये—

ॐ हूं णमो आश्रियाण आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र एहि ब्रह्मिण्डे, ॐ हूं णमो आश्रियाण आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ हूं णमो आश्रियाण मम च्छिन्हितो भव भव वषट् । फिर १०८ दफे नीचे लिखा मन्त्र पढ़े—

ॐ णमो आश्रियाण धर्माचार्याधिपतये नमः । फिर सुगंधित केशसे चोनेकी बल्वाईसे नाभिमैं हूं लिखे । यह तिलकदान विधि हुई । फिर अधिवासनाविधिमैं नीचे प्रमाण अष्टद्वय चढ़ावे । ॐ हूं णमो आश्रियाण आचार्यपरमेष्ठिन् जलं प्रहाण २ नमः । इसी तरह जलके स्थानमें चन्दनादि चढ़ावे । फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ मुखपर वल ठकें व परदा काढ़ें । ॐ हूं मुखबलं दधामि स्वाहा । फिर आचार्य नम्र होकर चारित्रमक्ति पढ़कर नीचे लिखा मन्त्र १०८ दफे पढ़कर मुखसे कपडा अलग करे ।

ॐ हूं आचार्यमुखबल अपनयामि स्वाहा । फिर १०८ दफे नीचे लिखा मन्त्र पढ़ चोनेकी बल्वाई आखोंमें फेरे ।

“ ॐ हूं आचार्यपबुद्धस्वध्यातृजनमनांसि पुतीहि २ स्वाहा । ” तब परदा हट जावे और सब कहें—श्री आचार्यपरमेष्ठीकी जय । फिर आचार्यकी पूजा नीचे प्रमाण की जावे—

गीता छन्द-सुनिराज आचारज बड़े, शिव मांगको दर्शावते, जो पालते आचारको, अर अन्यको पलवावते । जो जैन आगम तत्र जाने, स्व पर भेद लखावते, निज आत्ममें रमते सदा, निज स्थान सम्यक् भावते ॥

ॐ हूं श्री आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र अवतर २ आदि स्थापना ।

स्थापना-अष्टक ।

चाली छन्द-भर सलिल महा शुचि शारी, है तीन धार हितकारी ।

पद आचारज सुखकारी, पूजत त्रय रोग निवारी ॥ जलम् ॥

चन्दन घस केसर लाऊँ, मनमें बहु चाष धराऊ ।

आचारज हैं गुणदाई, पूजत सब ताप मिटाई ॥ चन्दनम् ॥

अक्षत ले कीर्ध आरुण्डे, उज्ज्वल शशि ममदुति मण्डे ।

गुरु पाद जजो मन लाई, अक्षयपद हो सुखदाई ॥ अक्षतम् ॥

ले फूल सुवर्ण सुहाई, बहु गंध गुनं सुखदाई ।

गुरु पूज काम सुखदाई, भयभीत होय नश जाई ॥ पुरुषम् ॥

ताजे यकबान बनाऊँ, आदर युत गुरु दिग लाऊँ ।

पूजत छुद रोग शमाऊँ, अमृत निज ले सुख पाऊँ ॥ नैवेद्यम् ॥

ले दीपक तम हर तारा, बहु ज्योति प्रगट करतारा ।

गुरु पाद पूज सुख पाऊँ भ्रम तम सब तुतै नशाऊँ ॥ दीपम् ॥

बहु धूप सुगंधित लाऊँ धूपायन माहिं खिवाऊँ ।

आचारन जज हितकारी, जल जांय कर्म दुखकारी ॥ धूपं ॥

बहु दाख बढाम छुहारा पिस्ता अखरोट समहारा ।

गुरु पाद जजे हित पाधे, शिव बनिताको परणावे ॥ फलम् ॥

शुचि द्रव्य जु आठ मिलौं, करि अर्घं महा सुख पाऊ ।

गुरु बरणन शीश नबाऊँ, जासे सब दोष मिटाऊँ ॥ अर्घम् ॥

जयमाल ।

उन्द सुविनी—जय कृपाकन्द आनन्दरूपी सदा । आत्म गुण वेदते हैं न तृष्णा कदा ।

धन्य आचाय है साधु रक्षा करे । बोध दे वण्ड दे तत्त्व शिक्षा करे ॥ १ ॥

सात तत्त्वार्थको श्रद्धते भावसे । तत्त्व शुद्धात्मको चाहते चावसे ॥

दर्शनाचारमें लीन सुख पावते । अन्यको बोध दे दर्श झलकावते ॥ २ ॥

शास्त्रको जानते ज्ञान उपजावते । सप्तभङ्गी सुनय तत्त्वको सावते ॥

मोह मिध्यात्वके हेतुको टालते । बोध दे ज्ञानको लोक विस्तारते ॥ ३ ॥

अन महा पालते गुप्ति उर धारते पंच समितीनको ध्यानसे पालते ॥

आत्ममें लान हो ध्यान हटु धारते । सब आचारको लोक विस्तारसे ॥ ४ ॥

तप महा द्वादशं पालते भावसे । अनशन आदिको धारते चावसे ॥

सेव कर साधुजन मानको टालते । भव्यको मार्ग तपमें सदा लावते ॥ ५ ॥

वीर्यको गुप्त रखते नहीं हैं यती । कार्य उत्साहसे श्रुक्ते नहीं रती ॥

आत्मशक्तिको दिन दिन अधिक पावते । अन्यको बोध दे वीर्य वीस्तारते ॥ ६ ॥

पंच आचार ये पालते भावसे । अन्य आधूनको बोधते चावसे ।

निश्चयं आत्प्रसन्न पीवते प्रेससे । धन्य आचार्यं ह्ये चालते नेमसे ॥ ७ ॥ महार्घं ० ॥
दोहा-जो पूजे आचार्यको, मन एकाग्र कराय । सौ पावे निज निधि सही, भव-सागर तर जाय ॥

॥ इत्याशीवदि ॥

फिर आचार्यभक्ति या चारित्र्यभक्ति पढके नीचेका श्लोक पढ़कर चहुँओर पुष्प क्षेपें ।

प्राड्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां, जायतां दीर्घमायु-

र्भूयाद्भूयांश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तात्सदा रोग्यमश्रयम् ।

कीर्तिव्यसाखिलामा, प्रभवतु भवतान्निःप्रतीप प्रतापः,

क्षिप्रं स्वर्गोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां, धर्मसुरप्रसादात् ।

फिर शांतिपाठ विपर्जन करके आचार्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा पूर्ण की जाय ।

(२) उपाध्याय विभवप्रतिष्ठाविधि—उपाध्यायका निम्न भी मुनिके समान पीछी कमण्डल बहित हो तथा हाथमें या अग्रभागमें शास्त्र चिह्न भी हो सकता है । इसकी भी सब विधि आचार्यविम्बकी प्रतिष्ठा विधिके समान है । अन्तर नीचे प्रमाण है—

- (१) मण्डलमें १७ कोठेका पड़ला वलय फिर २५ कोठोंका फिर ४८ कोठोंका हों ।
- (२) उपाध्यायके विम्बको पांच कलशोंके स्थानमें प्रथमानुयोग आदि ४ अनुयोगके रूपमें चार कलशोंसे अभिवेक करे ।
- (३) पंच आचारके स्थानमें चार अनुयोग प्रतिमामें नीचेके मंत्रोंसे स्थापित करे—ॐ हौं प्रथमानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः । ॐ हौं काणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः । ॐ हौं चरणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः । ॐ हौं द्रव्यानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः ।

(४) तिलकदानमें आह्वानन मंत्र नीचे प्रमाण पढ़े—ॐ हौं गमो उवञ्ज्मायाण उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र एहि २ ष्वीषट् । ॐ हौं गमो अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ॐ हौं गमो० ममननिहितो भव २ वषट् । तथा जाप १०८ दफे नीचे लिखे मंत्रकी देवे—ॐ हौं गमो उवञ्ज्मायाण पाठकाय नमः । तथा नामिमें हौं लिखे ।

- (५) अधिवाचनाविधिमें नीचेके मन्त्रसे आठ द्रव्य चढ़ावे । ॐ हौं गमो उवञ्ज्मायाण उपाध्यायपरमेष्ठिन् जल गुहाण २ नमः इत्यादि ।
- (६) मुखको ढकनेका नीचेका मन्त्र पढ़े—ॐ हौं मुखवल दवामि स्वाहा ।
- (७) मुखके उद्घाटनमें यह मन्त्र पढ़े—ॐ हौं उपाध्यायमुखवल अपनयामि स्वाहा ।
- (८) नयनोन्मीलन मन्त्र यह पढ़े—ॐ हौं उपाध्यायप्रबुद्धस्व ध्यातुजनमनाधि पुनीहि २ स्वाहा ।
- (९) पूजा नीचे प्रमाण की जावे—

सुनिराज पाठक तत्त्वज्ञानी, तत्त्व शिक्षा देते हैं । बहु शिष्य पढ़न जिनागमं, अज्ञान तिनहर लेते हैं ॥ अनुयोग चारों जानते, अध्यात्म विद्या नाथ हैं । चारित्र साधु सुपालते बहु, साधु रहते साथ हैं ॥

ॐ हीं उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र अवतर २ अर्थ निर्वाणमोति साहा ।

छन्द मालिनी—सम रस सम चोखा लाय पानी सुमारं । सुवरण झारी ले अब गढ़ सर्व दारं ॥

कार शुचि मन पूजूं, पाठकं तत्त्व धारी । नमत सब कुबोध, होय आनंद भारी ॥ जलं ॥
बहु सुरभि धराई, बन्दनं लाय नीके । अब नाप बुझाई, असृतं ज्ञान पीके ।

कार शुचि मन पूजूं, पाठकं तत्त्वधारी । नशत लय कुबोधं, होय आनन्द भारी ॥ चन्दनं ॥
कारमें अक्षत ले, दीर्घ अति श्वेतधर्ण । अखय गुण प्रचारी, सर्व बन्देह हर्ष ॥ कर शुचि मन ॥ अक्षतं ॥
सुमन सुगन्धित ले, पंचधा वर्णधारी । दुख काम मिटावे, शील धर्म पचारी ॥ कर शुचि ॥ पुरुषं ॥
चक्र कारके ताजे, शुद्ध सुनि अश धारुं । शुद्ध रोग नशाऊँ, तुमता गुण सम्पारुं । कर शुचि ॥ चक्रं ॥
कार दीप संजोऊँ, धान्यकार नशाई । सम सोहनिमिर लष, एक क्षणमें पलाई ॥ कर शुचि ॥ दीपं ॥
बहु सुरभि धराई, धूप अग्नि जलाई । मन आठ करम लष, अस्म हों साधु ध्याई ॥ कर शुचि ॥ धूपं ॥
ले शुचि फल नीके, दाख चाढाम पिस्ना । जासे शिवफल हो, नाश संसार रस्ता ॥ कर शुचि ॥ फलं ॥
ले ले अठ द्रव्यं, शुद्ध अर्थ वनाऊँ । अठ कर्म नशाके, अष्ट गुण सार पाऊँ ॥ कर शुचि ॥ अर्थं ॥

जयमाल ।

सुजगप्रयात छन्द—गुणानन्दधारी उपाध्याय प्यारे, सु साधु चरित्रं धरे निर्विकारे ।

परम साम्य धारी सभी दोष धारी, रतनत्रय सम्यारी निजातम विचारी ॥१॥
इकादश सु अंगं पढ़े तत्व जाने, चतुर्दश सु पूरव लखें सत् पिछाने ।

सकल श्रुत विचारें परम ज्ञान धारी, लखे आत्मको निश्चयं निर्विकारी ॥२॥
चतुर्विंश तीर्थकरोंके चरित्रं, सुचकी सु बलदेव जीवन पवित्रं ।

हरी प्रतिहरी वृत्तको जानते हैं, सु अनुयोग प्रथमं जु पहचानते हैं ॥३॥

त्रिलोकं लखें सर्व रचना पिछाने, गुणस्थान मार्गण करम भेद जाने ।
करण सूत्रसे सर्व गिनती लखाने, सु अनुयोग करणं भलीभांति माने ॥४॥
यतीका सु आचार सष भेद पाया, गृही भेद चारित् इकावश बताया ।

क्रिया-कांड व्यवहारको जानते हैं, सु चरणानुयोगं सकल मानते हैं ॥५॥
पदारथ नवम तत्व शुभ सात ज्ञानी, छहों द्रव्य पचास्तिकाया पिछानी ।

भलीभांति आत्म परम तत्व माने, सु द्रव्यानुयोग सकल भेद जाने ॥६॥
अनेकांत वस्तु सु स्याद्वाद ठाने, तिसे जान समता हृदय माहि आने ।

नहीं है विरोध नहीं कोई खेदं, परम तत्व जाने लखें सर्व भेदं ॥ ७ ॥
दयासागरं पाठकं भक्ति वरनी, पढ़ावैं यती मीख संसार तरणी ।

नहीं खेद माने परम सर्व ठाने, सकल ज्ञान दे आप सम साधु आने ॥ ८ ॥

नमूं पाद सुखदायक उषधायजीके, लहूं ज्ञान सुन्दर करूं कर्म फीके ।

सु छाया गुरूकी परम रक्षिका है, जजू मन लगाई परम दक्षिका है । ९॥ महार्घ ॥
सोरठा—पाठक पूजूं पाय, पाठ पठन पटुना कबै । गुण गाऊं नित गाय, मगल हो अघ सब भगी ॥

(१०) फिर चारित्रभक्ति पढ़के नीचेका श्लोक पढ़े ।

माज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुनरां जायतां दीर्घमायु-

र्भूयाद्भूयांश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तात्सदारोग्यमश्रमम् ॥

कीर्तिव्याप्त्याखिलाशा ममवस्तु भवतादित्यतीपः प्रतापः ।

क्षिप्रं स्वसौख्यलक्ष्मीर्भवतुतनुभृतां पाठकेन्द्रप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विवर्जन करके उपाध्याय विम्बकी प्रतिष्ठा पूर्ण करे ।

(३) साधुविम्बप्रतिष्ठाविधि—पीछी कमदल बहित ध्यानमय बाधुकी विम्ब बनावे । इसकी प्रतिष्ठाविधि भी पहलेके समान है । विशेष यह है—

(१) मण्डलमें १७ कोठिका पहला फिर २८ कोठिका फिर ४८ कोठोंका हो । (२) बाधुके विम्बको रत्नत्रयमई तीन कुम्भोंसे अभिषेक किया जावे । (३) तीन रत्न नीचेके मन्त्रीसे प्रतिमामें स्थापित करे । ॐ हः ध्यः ध्यः दर्शनभूषिताय बाषवे नमः । ॐ हः ध्यः ध्यः दर्शनभूषिताय बाषवे नमः । ॐ हः ध्यः ध्यः चारित्रभूषिताय बाषवे नमः । (४) तिलकदानमें बाहानन मन्त्र नीचे प्रमाण पढ़े ।

ॐ हः णमो लोए षव्रषाडूण षाधुणमेष्टिन् अत्र एहि २ षवौषट् इत्यादि तथा जाप १०८ दफे नीचेके मन्त्रसे देखे । ॐ हः णमो लोए षव्रषाडूण षाधवे नमः तथा नामिर्म हः लिखे । (५) अधिवाचना विधिमें नीचेके मन्त्रसे आठ द्रव्य चढावे । ॐ हः णमो लोए षव्रषाडूण षाधुणमेष्टिन् जल गुहाण २ स्वाहा इत्यादि । (६) मुखके ढकनेका नीचे लिखा मन्त्र पढे—ॐ हः मुखवक्त्र षषामि स्वाहा (७) मुखके तद्घाटनेमें यह मन्त्र पढे—ॐ हः षाधुणमेष्टिन् मुखवक्त्र अपन्यामि स्वाहा । (८) नयनोन्मीलन मन्त्र यह पढे—ॐ हः षाधु प्रमुदस्व-ध्यातृजननाधि पुनीहि २ स्वाहा । (९) पूजा नीचे प्रमाण करे—

स्थापना ।

ॐ गीता-मुनिराज हैं गुणधाम जगमें मोक्षमारग साधते,

त्रय इत्यधारी निज विचारी ज्ञान आसन मांडते ।

तप करत द्वादश भेद अनुपम नहत हैं उपसर्गको,

जिनचरण पूजूं थाप उरमें लहूं मैं अपवर्गको ॥

ॐ हः श्री षाधुपरमेष्टिन् अत्र०

अष्टक ।

वपन्तलिका छन्द-पानी महान अति शीतल कुम्भ धारा । धारा सुदेत मृत जन्म जरा निधारा ॥

पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीर्ते । पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने ॥ जलं ॥

केशर मिलाय शुभ चन्दन अन्न धारुं । आताप भव शमन थाय स्वगुण सम्हारुं ॥ पूजूं ॥ चंदनं ॥

चन्दा समान अति श्वेत सुगन्ध अक्षत । धारुं सुधाल पाऊं गुण सार अक्षत ॥ पूजूं ॥ अक्षतं ॥

नीरज गुलाब वेल चम्पा सुहाई । बहु पुष्प धार निज काम व्यथा नशाई ॥ पूजूं ॥ पुष्पं ॥

ताजे पवित्र पकवान सु लाय थारी । जासे मिटाय क्षुद्र रोग स्वकाज हारी ॥ पूजूं ॥ नवेद्यं ॥

दीपक जराय घृत सार कपूर लाऊ । मन मोह सर्व अधियार तुरत मिटाऊं ॥ पूजूं ॥ दीपं ॥

धूपदि खेप शुचि अग्नि धुआं प्रतारा । आठों महान मल कर्म जलाय हारा ॥ पूजूं ॥ धूपं ॥

पिस्ता बदाम अक्षरोट सुफल धराए । जासे सुमोक्ष फल आप नजोक आए ॥ पूजूं ॥ फलं ॥

जल चन्दनादि वसु द्रव्य मिलाय थारी । संसार पार झट होय स्वगुण विचारी ॥ पूजूं ॥ अर्घं ॥

जयमाल ।

त्रोटकलन्द-जय साधु सदा गुण धाम नमो, धनगर सु सत्य सुवास नमो ।

भवमागर तारण पोट नमो, निजमें धारत निज जोत नमो ॥ १ ॥

जय सप्त, तन्त्र रुचिकार नमो, आपा पर भेद विचार नमो ।

निज आत्म सु श्रद्धाकार नमो, सम्यग्दर्शन अधिकार नमो ॥ २ ॥

जय जिन आगम बुध धार नमो, जाघक निश्चय व्यवहार नमो ।

निज आत्म पदारथ ज्ञान नमो, धारें निज सम्यग्ज्ञान नमो ॥ ३ ॥

जय पंच मन्नात्रत धार नमो, समिती गुप्तो प्रतिपाल नमो ।

निज साम्यभाष झलकाय नमो, सम्यक्चारित उर ध्याय नमो ॥ ४ ॥

जय आत्म समाधि प्रकाश नमो, सप इंद्रिय आश निराश नमो ।

चहुं दुष्ट कषाय विनाश नमो, निज शांत भाव हुलास नमो ॥ ५ ॥

जय साधु सु साधत आत्म बली, जय साधु सु अनुभव सार रली ।

जय साधु परम उपकारी हैं, भयम सामायिक धारी हैं ॥ ६ ॥ महार्घ ॥

दोहा—बन्दत साधु महन्तको, पूजत गुण अविकार ।

निजानन्व पावे सुधी, खुलजावे शिबद्वार ॥ इत्याशीर्वादः ॥

(१०) फिर चारित्रिक पदके नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

प्राड्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां, जायतां दीर्घमायु-

भूयान्मूयांश्च भोगैः स्वजनपरिजनैस्तात्मदा रोग्यमग्र्यम् ।

कीर्तिर्घोषाखिलाशा प्रभवतु भवताश्रिपतीपः प्रतापः,

क्षिप्रं स्वमोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभूतां सर्वसाधुपसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विभर्जन करके पाधुत्रिप्वकी प्रतिष्ठा पूर्ण करे ।

(४) श्रुतस्कंध प्रतिष्ठाविधि—द्वादशागवणीका एक पद धातुका बनवाया जाता है जैसा नहुना दक्षिणमें भिळता है न बिझात-
मवन-आरामें विद्यमान है । उषकी प्रतिष्ठाकी विधि नीचे प्रकार है—

- (१) इषमें भी यागमंडलकी पूजा की जाय । बीचमें ॐ बनाकर पहला वलय १७ कोठोंका बनावे फिर ११ अंग-१४ पूर्व अर्थात् २५ कोठोंका बनावे और पहलेकी भांति पूजा करे । जो विधि आचार्यके विनकी प्रतिष्ठामें है वो करे ।
 (२) इष जिनवाणीकी मूर्तिको चार अनुयोगरूप चार कलशोंमें स्नान करावे तब कहे—

“ॐ ह्रीं शुनदेव्याः कलशरत्नग्न करोमि इति स्वाहा ।”

(३) फिर नीचेकी खुति पढ़े और मूर्तिपर पुष्प क्षेपे—

निर्मूलमोहतिमिरक्षणैकदक्षं, न्यक्षेण सर्वजगदुज्ज्वलनैकतानम् ।
 सोषेख चिन्मयमहो जिनवाणि नूनं, प्राचीमतो जयसि देवि तदल्पसूतिम् ॥
 आभवादपि दुरामदमेव आयसं, सुखमनन्तमचित्यम् ।

जयतेषु सुलभं खलु पुंसां, त्वत्पसादात् इहांव नमस्ते ॥

चेतश्चमत्कारकरा जनानां, महोदयाश्चाभ्युदयाः समस्ता ।

हस्ते कृताः शस्तजनैः प्रसादात्, तवैष लोकांब नमोस्तु तुभ्यम् ॥
 सकलयुवतिष्टेरंबचूडामणिस्त्व, त्वमसि गुणसुष्टुर्धर्मसुष्टुश्च मूलम् ।
 त्वमसि च जिनवाणि स्वेष्टसुकृत्यंगमुख्या, तदिह तव पदाब्जं भूरिभक्त्या नमामः ॥

(४) फिर नीचे लिखी खुति पढ़े—

वारह अंगंगिज्जा दंसर्णातलया चरित्तवत्पहरा । चोद्दसपुव्वाहरणा ठावे दठवाय सुयवेवी ॥ १ ॥
 आचारशिरसं सूत्रकृतवक्त्रां सुकण्ठिकाम् । स्थानेन समवायांगव्याख्याप्रज्ञसिदोल्लताम् ॥ २ ॥
 वाग्देवतां ज्ञातृकथोपासकाध्ययनस्तनीम् । अन्तकृद्दशसन्नाभिमस्तुत्तरदशांगतः ॥ ३ ॥
 सुतितां सुजघनां प्रश्रव्याकरणश्रुतात् । विपाकसूत्रहृत्वाद्दशरणां चरणांबराम् ॥ ४ ॥
 सम्पदत्वतिलकां पूर्वचतुर्दशविभूषणाम् । नावत्प्रकीर्णकोदीर्णा-षारुप्रसंक्रुरभ्रियम् ॥ ५ ॥
 आसहृष्टपवाहौशद्रव्यभावाधिदेवताम् । पत्ररूपयाहसां स्यादुक्ति सुक्तिमुक्तिवाम् ॥ ६ ॥
 सर्वदर्शनपाल्पणद्वैतयत्नगाचिताम् । जगन्मातरमुद्धतुं जगदप्रायनारयेत् ॥ ७ ॥

(५) फिर नीचे लिखे मंत्रको १०८ बार पढ़कर प्रतिमाको स्पर्श करे ।

ॐ अर्हंमुखकमलवासिनी पापांश्चकारक्षयकारिणी श्रुतउवाचाबह्नुपवळिते चरन्वति मम पाप हन खां क्षीं क्षू क्षीं क्षः क्षीर-
 बवळे अमूनसंभवे व व म इ स्वाहा ।

(६) फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर प्रतिभार पुण्य क्षेपे ।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकाम्बध्याधिनी पापाघकारक्षयकारिणी श्रुतशालाबाहसप्रखचिते परस्थिति अत्र एहि २ प्रबोधट । ॐ ह्रीं अर्हन्मुख०
अत्र तिष्ठ २ ठः ठ । ॐ ह्रीं अर्हन्मुख० मम प्रविहिता भव भव वषट् ।

(७) फिर १०८ दफे नीचे का मन्त्र पढ़े—ॐ ह्रीं सरस्वतीदेव्यै नमः । तथा तत्र विम्बके मध्यमें ह्रीं लिखे । यह तिलकदान विधि हुई ।

(८) फिर अविवाधना विधिर्म नीचे क मन्त्रोंसे आठ द्रव्य चढाये—

ॐ ह्रीं श्रीं वद वद वाग्धादिनि भगवति परस्थिति जल गृह्णाण २ स्वाहा । इत्यादि ।

(९) फिर नीचे का मन्त्र पढ़ वक्त्रसे टके व परदा करे । ॐ ह्रीं मुखवक्त्र द्वाभामि स्वाहा । (१०) फिर आचार्य मन्त्र हो श्रुतभक्ति पढ़े व नीचे लिखा मन्त्र १०८ दफे पढ़ मुखसे कपडा अलग करे । ॐ ह्रीं भगवति अस्थिति मुखवक्त्र अग्नयामि स्वाहा, फिर नीचे लिखा मन्त्र १०८ बार पढ़कर घोनेकी छलाई तब विम्बपर फेरे यह नयनाम्बुखन क्रिया है । ॐ ह्रीं श्रुतदेवि प्रबुद्धस्य ध्यात् नन मनसि पुनीहि २ स्वाहा । तब परदा हटे व जगन्नाथकार शब्द हो । (११) फिर पूजा नाचे प्रकार का जाये—

स्थापना ।

गीता—श्री जिन विनिर्गत याणी, अनुपम परम प्रकाशनी ।

सिधयात मल घोकर सु भविजन चित्त उज्वल कारिणी ॥

संसार ताप प्रशान्त कारण, चन्द्र कर सुखदायनी ।

आनन्द अमृत वाय बाणी, पूजहुं भव नाशनी ॥

ॐ ह्रीं बाग्वादिनी भगवती सरस्वती अत्र अबतर २ इत्यादि ।

अष्टक ।

छन्द नाराच—महान गन्ध धार नीर लाहये सु प्रेमसौं । अनादि जन्म व्याधि सेट दीजिये सु नेमसौं ॥

सरस्वती महान देवि पूजिये सु भावसे । हटे कुबोध तम अपार ज्ञान होय भावसे ॥ अहं ॥

परम सुगन्ध बन्दनं मिलाय शुद्ध केशर । मिटाय ताप संसृती सुपाय शानता बरं ॥ सरस्वती० ॥ चन्दनं ॥

छरे अखण्ड अक्षतं सफेद शुद्ध धालमें । करे प्रकाश अक्षतं गुण निजात्म हालमें ॥ सरस्वती० ॥ अक्षतं ॥

गुलाब कुंज चम्पकं सुवर्ण फूल लाहये । महा कठोर काम बाण टाल शील पाहये ॥ सरस्वती० ॥ पुष्पं ॥

बनाय शुद्ध अन्न तुतं मिष्टता मिलायके । क्षुधा कुरोग नाश होय भावना सु भायके ॥ सरस्वती० ॥ चरुं ॥

करूको जलाय स्वर्ण दीपदान मैं धरूं । मिठाय मोह अन्धकार ज्ञान दीप प्रज्वलूं ॥ सरस्वती० ॥ दीप ॥
 मंगाय धूप गंधकार धूपदान मैं दिया । निजाठ कम काठ जाल धूमको उड़ा दिया ॥ सरस्वती० ॥ धूप ॥
 सुगंध मिष्ट आन्न आदि फल महान धारके । महान मोक्ष लाभ काज भावको सम्हारके ॥ सर० ॥ फल ॥
 सुधार गंध अक्षतं सुषुष्य चारु चक्रु लिये सु दीप धूप फल मंगाय अर्घ्य शुद्ध यों किये ॥ सरस्वती० ॥ अर्घ्य ॥

जयमाल ।

छन्द मुक्तदास—नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु हमेश, श्री जिनवाणी स्वत स्वदेश ।

श्री सर्वज्ञ विगत सब दोष, कहें परकाश भविक जन तोष ॥ १ ॥

तिसे धारें गणधर मुनिराज, सु बारह अङ्ग रचें भवि काज ।

पढ़े आधारज शिष्य समाज, रचें बहु ग्रन्थ सु आतम काज ॥ २ ॥

यही श्रुतज्ञान हरे अज्ञान, दिखावे तत्त्व स्वर पर पहचान ।

लखावे वस्तु स्वरूप अपार, मिटे संशय संमोह असार ॥ ३ ॥

जुई स्याद्वाद परम हिनकार, विरोध मिटाय जु ऐक्य प्रचार ।

यही दर्पण सम तत्त्व प्रसार, यही समता प्रगटावन हार ॥ ४ ॥

सही जिनधर्म सु आतम रूप, यही रतनत्रय ध्यान स्वरूप ।

यही भवसागर तारण सेतु, यही सुखसागर वर्द्धन हेतु ॥ ५ ॥

इसे समझावे यह जिनवाणी, मिटावे दोष परम गुण दानी ।

सरस्वती मात नसूं मैं तोहि, करहु किरपा जो आनन्द होहि ॥ ६ ॥ मशार्घ ॥

दोहा—श्री जिन मात प्रसादसे, सुधरे हम सब कार्य । बन्धु पुन पुन मातको, दीजे हमें स्वराज ॥

॥ इत्याशीर्वादिः ॥

फिर श्रुतभक्ति पढ़े और नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

प्राड्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुकरां जायतां दीर्घमायु-

र्ध्याद्भूयान्श्च भोगः स्वजनपरिजनेस्तात्सदारोग्यमग्रयम् ॥

क्षिप्रं स्वर्गोन्नतधूमोर्भवतु तनुभुतां पाठकेन्द्रप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विषजन किया जावे ।

(१) श्री चरणपादुका प्रतिष्ठाविधि—जहां २ तीर्थंकरोंके कल्याणरू होते हैं वहां २ चरणचिह्न स्थापित किये जाते हैं, इनकी प्रतिष्ठा विधिमें इन्द्र अगशुद्धि आदि काके पूर्ववत् १७ कोठीकी पूजा प्रथम वलय अनुचार व नित्य पूजा तथा एक या तीन कुण्डमें होम करे, मण्डल बनावे या योही करे । फिर जिस तीर्थंकरकी चरणपादुका हो उनका पूजन किया जावे । पूजनके पहले चरण-पादुकाका अभिषेक करे । फिर नीचे लिखे मन्त्रको १०८ बार जपे—ॐ ह्रीं अस्मिन् क्षेत्रे जन्मस्थानस्थापना करोमि स्वाहा या तपस्थान ॥ या ज्ञानस्थान या निर्वाणस्थान स्थापना करोमि स्वाहा । फिर चरणचिह्नमें ॐ इं लिखे । यह तिलकदान विधि है । पश्चात् सिद्धमक्ति, निर्वाणमक्ति, आचार्य मक्ति आदि मक्तिययायोग्य पढ़े, स्तुति पाठ पढ़े, शांति विषजन करे । यदि आचार्य उपाध्याय या ब्राह्मणकी पादुका हो तो उसके प्रतिष्ठा उनहीके अनुचार करे, जैसा पहले कह चुके हैं ।

अध्याय ग्यारहवाँ ।

मंदिर या वेदीप्रतिष्ठा विधि ।

मंदिर व वेदी निर्माण होनेपर उसके प्रतिष्ठा या शुद्धि नीचेमकार कानी योग्य है—शुभ मुहूर्तमें अलग मण्डप बनाकर टाई हीप व २४ तीर्थंकर व समवशाणका कोई पाठ किया जावे । मण्डल बना लिया जावे । यदि बहूष बक्षे। करना हो तो बिना मण्डल बनाए २४ तीर्थंकरकी या पामेष्ठीकी पूजा की जावे । मंदिर या वेदीप्रतिष्ठाके दिन जलयात्रा की जावे तथा शुद्धिविधान करके प्रतिमा बिराजमान वी जावे । कमसेकम ८००० जप उसी मंत्रसे व उसी विधिसे जैसा विष्णुप्रतिष्ठाके चतुर्वर्षमें पहले अभ्यासमें कह चुके हैं, करे उसी प्रमाण जैसा पहले आचार्य इन्द्रकी स्थापना करे जैसा विष्णुप्रतिष्ठामें किया था । वह इन्द्र प्रतिष्ठाविधिमें सेवा करनेकी आज्ञा करे उसी प्रमाण जैसा पहले अध्याय (न० ९) में मण्डपपञ्चाविधिमें कहा गया है ।

स्तुर्णिकागामरसंघ एष, आगत्य यज्ञे विधिना नियोगं ।

स्वीकृत्य भक्त्या छि गयाईदेशे, सुस्था भवंत्बाह्विकल्पनायां ॥ ३२२ ॥

आयात मारुतसुराः पवनोद्गटाशा, सघसलमितिर्निलतांतरीक्षाः ।

वात्प्रादिदोषपरिभूतवसुन्धरायां, पर्युत्कर्मनिखिल परिमार्जयन्तु ॥ ३२३ ॥

आयात वास्तुविधिषूद्रसंनिवेशा, योग्यांशभागपारपुष्टव्युः नदंशाः ।
 अस्मिन् मखे रुचिरसुस्थितमूर्षणांके, सुस्था यथाहंविधिना जिनभक्तिभाजः ॥ ३२४ ॥
 आयात निर्मलनमः कृतसंनिवेशा, मेधासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।
 * अस्मिन्मखे कृतविक्रयया निताते, सुस्था भवन्तु जिनभक्तिमुदाहरन्तु ॥ ३२५ ॥
 आयात पावकसुराः सुरराजपूज्य, संस्थापनाविधिषु संस्कृतविक्रियार्हाः ।
 स्थाने यथोचितकृते परिषदकक्षाः, सन्तु श्रियं लभत पुण्यसमाजभाजां ॥ ३२६ ॥
 नागाः समाविशतभूतलसन्निवेशाः, स्वां भक्तिमुल्लसिनगात्रया प्रकाश्य ।
 आशीविषादिकृतविघ्नविनाशहेतोः, स्वस्था भवन्तु निजयोग्यमहासनेषु ॥ ३२७ ॥

पुरुषुतद्विशिस्थितिमेहि करोद्भूतकांचनदंडगखण्डरुचे ।
 विधिना कुसुरेश्वरसव्यशद्ये धृतपंकजशंकिताकरणके ॥ ३२८ ॥
 वामनाशुभमदिग्भिभागतः स्थानमेहि जिनयज्ञरुर्मणि ।
 भक्तिभारकृतदुष्टनिग्रह पूतशासनकृतामबंध्यकः ॥ ३२९ ॥
 वस्त्रिमासु विततासु हरितसु भूरिभक्तिभरभूकृतपीठाः ।
 अंजनस्वद्वितकाम्ययाऽध्वरे तिष्ठ विघ्नविलयं प्रणिण्येहि ॥ ३३० ॥
 पूषपदन्तभवनासुरमध्ये सत्कृतोऽसि यत् इत्थमबोधयाम् ।
 उत्तरत्र मणिदण्डकराग्रस्तित्त विघ्नविनिष्टुत्तिलि... ॥ ३३१ ॥

करकृतकुसुमानामंजलिं सवितीर्थं धनदमणिमुगरत्नानीशपूजार्थसार्थे ।
 विकिर विकिर शीघ्र भक्तिमुद्भावयित्वा निगदतु परमांके मंडपोधर्वाबकाशे ॥ ३३२ ॥

जलयात्रामें गाजेबाजेके पाप इन्द्र य जाचाये किन्नी नदी या बरोत्र या कूपर या जल भाने जावें । बायमें कलश १०८ या ५४ या २७ या २१ या ९ या ५ जितने भंभव हों उतने, जो नारियलसे दके हो, ऊपर केपरसे रंगा छत्रा हो, कलशोंके कंठमें फलमाळाए सुशोभित हों, उनको शुद्ध केशरिया बल पहले हुए कुलीन स्त्रियां मत्तकार रखके लेजावें, बाप्री पाय जावै । मार्गमें इन्द्र जब चले उष षमयसे लेकर पहुंचने तक मार्गमें जाते आते नीचे लिले मंत्रसे मंत्रितकर जो और परबों बलेरता जाय जिनमें कोई विघ्न न हो व शांति रहे ।

मन्त्र-ॐ हूँ शू फट् किरिटि घातय २ परविघ्नान्स्फोटय २ षडस्रखडान्कुरु २ परमुद्रा छिद्र २ परमन्त्रात् भिद्र २ क्षः हू फट् स्वाहा ।

जलस्थान पर जाकर किसी ऐसे तीर्थकी पूजा करे जो नदी व शरोवर तटपर हो । जैसे चिद्वरकूट, पाश्चापुरी, अथवा निर्वाणक्षेत्र पूजा या चिद्रपूजा करे फिर छानकर कलशोंसे जल भरे । लवग चूरा या चन्दन मिलावे । वे ही खियां मन्त्रकर रक्खे हुए मडपमें लवि, यदि कहीं खिया न जायके तो इन्द्र ही अधिक करने और वे ही कलश लावे, उनको विराजमान किया जावे । फिर इसी जलसे मंदिर या देवीको धोकर शुद्ध किया जावे तब यह मन्त्र पढा जावे । ॐ नीरजसे मम । फिर जिन्न वेदीमें श्रीजीको विराजमान करना हो उसीके आगे एक उच्च पीठपर जिन्न भूर्तिको वेदीपर विराजमान करना हो लाकर स्थापित करे । उसीके आगे १७ कोठोंका वलययुत याग मंडल बनाया जावे । यदि न नने तो भी पूजा हो सकती है । आगे एक चौखुटा कुण्ड या तीनो होमकुण्ड बनाए जावे । प्रतिमाजीको लानेके पहले जहाँपर रखे हो पूजन करे वहा डामका आसन दर्पमथनाय नमः पढ़कर बिलावे “ सील्यघाय नमः ” यह मंत्र पढकर प्राशुकु-जलसे छटे । विमलाय नम यह मन्त्र पढकर पुष्प चढ़ावे, “ अक्षताय नमः ” यह पढ़कर अक्षत चढ़ावे, “ श्रुतधूपाय नमः ” यह पढ़कर धूप देखे, “ ज्ञानोद्याताय नमः ” यह पढकर दीप चढ़ावे, “ परमविद्याय नमः ” यह पढकर नैवेद्य चढ़ावे, प्रतिमाको विराजमान करे, अभिषेक उसी जलसे करे जो लाया गया है । अभिषेककी विधि पहले कही जाचुकी है । जो विधि अभिषेककी व होमकी दूबरे अथायमें यागमण्डलकी पूजामे कही है उसी तरह करे । नित्यनियम व चिद्रपूजा करके शरत्कालाय नमः आदि पीठिकामन्त्रोंसे होम करे । पश्चात् १०८ आहुति उसी मन्त्रसे देने जो दूबरे अध्यायमें लिखी है । फिर स्तुति आदि पढे ।

ध्वजा व कलश भी चढाना होता है वे भी इसी समय प्रतिमाजीके पास स्थापित रहे । वेदीके ऊपर व मंदिरके शिखारके ऊपर कलश व ध्वजा चढती है । पूजाके समय विनायक यन्त्रको भी स्थापित करे । यदि न हो तैयार करावे या थालपर खींचे । मध्यमें ॐ लिखके पांच कोठेका वलय करना, उभमें अ सि आ उ चा लिखे । फिर १२ कोठेका वलय करके अरहन्त मंगल आदि लिखना । उभको हीं कौं से श्रेष्ठत करे । फिर इन्द्र सिद्धभक्ति पढ़े । फिर कायोऽर्घ्य कर ९ दफे मन्त्र पढे । फिर पढे—

ॐ जय जय जय, निरसही, निरसही, निरसही, वर्षस्रव, वर्षस्रव, वर्षस्रव, स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति, जिनशासनं । गमो अरहंताणं, गमो सिद्धाणं, गमो आशरीयाणं, गमो उवज्झायाणं, गमोलोए सब्बसाहूणं । चत्तारि मंगलं, अरहतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहुमंगल, केवल्लिपणत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवल्लिपणत्तो धम्मो लोगुत्तमा चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहन्तसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवल्लिपणत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ।

ॐ अथ वेदीमण्डपप्रतिष्ठायां, तत्शुद्धयर्थं भावशुद्धये पूर्वं आचार्यभक्तिपूर्व कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

फिर यत्रकी पूजा करे ।

अथ यंत्रपूजा

परमेष्ठिन् । मंगलादित्रय विघ्नविनाशने । समागच्छ तिष्ठ तिष्ठ मम सन्निहितो भव ॥ २६३ ॥

ॐ अहंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपरमेष्ठिन् ! मंगल लोकोत्तम ॥ शरणभूत ॥ अत्रावतर अवतर संबौषट् (आह्वाननं), अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं), अत्र मम सन्निहितो भव भव षषट् । (सन्निधिकरणं) स्वच्छैर्जलैस्तीर्थभवेर्जरापमृत्युग्रोरापनुदे पुरस्तात् ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ २६४ ॥
ॐ ह्रीं अथ विवप्रतिष्ठोत्सवे वेदिकाशुद्धिविधाने अहंलिखद्वाचार्योपाध्यायसर्वसाधुमण्डलोकोत्तमशरणेभ्यो जल निर्घपामीति स्वाहा ।

संबंदनैर्गंधद्वतालियुद्धचितैर्हिमांशुपसरावदातैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ बंदनं ॥
सदक्षतैर्मौक्तिककांतिपाटच्चरैः सितैर्मौनसनेत्रमित्रैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ अक्षतं ॥
पुष्पैर्नैकैरसवर्णगन्धप्रभासुरैर्बोसितदिवितानैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ पुष्पं ॥
नैवेद्यपिंडैर्घृतशर्कराक्तहविष्यभागैः सुरसाभिरामैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ नैवेद्यं ॥
आरार्तिकैरत्नसुवर्णरुक्मपात्रापितैर्ज्ञानविकाशहेतुः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ दीपं ॥
आशासु यद्भूमवितानमृद्धं तैर्धूपमृद्धैर्हृदह्नोपसर्पैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ धूपं ॥
फलैरसालैर्धरदाडिमाथैर्द्वुप्राणहार्थैरमलैरुदारैः ।

अहंमुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ फलं ॥ २७१ ॥

द्रव्याणि सर्वाणि विधाय पात्रे, ह्यनर्घमर्घवितरामि भक्त्या ।

भवे भवे भक्तिरुदारभावाद्येषां सुखायास्तु निरन्तराया ॥ अर्घ ॥ २७२ ॥
अनादिसन्तानमवान् जिनेन्द्रानर्हत्प्रेष्ठानुपदिष्टधर्मान् ।

द्वेषा श्रिया लिंगितपादपदमान्, यजामि वेदीप्रकृतिप्रसस्यै ॥ २७३ ॥
ॐ ह्रीं वद्विनानतन्नागभस्निषट्ठलोका लोकानुभावात् मोक्षमार्गप्रकाशानतचिद्गूणविलाषान् अर्हत्प्रेमेष्ठिनः सपूजयामि स्वाहा अर्घ ।
कर्मोष्ठनाशाच्छयुतभावकर्मोद्भूतीन् निजात्मस्वविद्यासम्भूतान् ।

सिद्धाननंतांस्त्रिककालमध्ये, गीतान् यजामीष्टविधिप्रशक्त्यै ॥ २७४ ॥
ॐ ह्रीं द्विविषकर्मताडवापनोदविलपरस्त्राकारचिद्द्विबाधृतीन् निजाष्टगुणमणोद्गुणान् प्रगुणीभूतानतमाहात्म्यान् लोकप्रशिक्षाराव-
साधिनः चिद्धपरमेष्ठिनेऽर्चयामि स्वाहा ॥ अर्घ ॥

ये पचवाचारपरायणानामग्रेसरा दीक्षणाशिक्षिकासु ।

प्रमाणनिर्णीतपदार्थसार्थानाचार्यवर्यान् परिपूजयामि ॥ २७५ ॥

ॐ ह्रीं व्यवहाराधाराचारवत्प्रशानेकगुणमणिभूवितोरस्त्रात् सवप्रतिपाद्यवाहनाचार्यवर्यान् परिपूजयामि स्वाहा ॥ अर्घ ॥
अर्थश्रुतं सत्यविबोधनेन, द्रव्यश्रुतं ग्रन्थविदर्भनेन ।

येऽध्यापयन्ति प्रवरानुभावास्तेऽध्यापका मेऽर्हणया दुहन्तु ॥ २७६ ॥
ॐ ह्रीं द्वादशांगश्रुतानुविधियारगतान् परिपासपदार्थस्वरूपान् तपाध्यायपरमेष्ठिन पूजयामि स्वाहा ॥ अर्घ ॥

द्विधा तपोभावनया प्रवीणान्, स्वकर्मभूतिश्रविलण्डनेषु ।

विविक्तशययामनहर्म्यपीठस्थितान् तपस्विपवरान् यजामि ॥ २७७ ॥
ॐ ह्रीं धोतपश्चरणोद्युक्तप्रयासमाचमानान् स्वकारुण्यगुणगुण्ययागपणपरन्मालकृतपादान् बाधुपरमेष्ठिन पूजयामि स्वाहा ॥ अर्घ ॥
अर्हन्मङ्गलमर्घं सुरनरविद्याधैरैकपूजयदं । तोयप्रभृतिभिरधैर्विनीतसूध्नी शिवाप्तये नित्यं ॥ २७८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मङ्गलाय अर्घम् ।

श्रीहयोत्पाद्विनाशरूपाखिलवस्तुजाननार्थकरं । सिद्धिमंगलमितिवा मत्सार्धं चाष्टविधवस्तुभिः ॥ २७९ ॥

ॐ ह्रीं चिद्धमङ्गलायार्घं ।

यदर्शनकृतविमवाद् रोगोपद्रवगणा मृगा इव मृगैर्द्रात् । दूरं भजन्ति देशं साधुभ्रेयोऽर्च्यन्ते विधिना ॥ २८० ॥

ॐ ह्रीं बाधुमङ्गलाय ।

केवलिसुखावगतया वाण्या निर्दिष्टभेदधर्मगणं । मत्वा भवसिधुतरीं प्रयजे तन्मंगलं शुद्धय ॥ २८१ ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसिधर्ममङ्गलायार्धे ।

लोकोत्तममय जिनराट् पद्मान्जसेधनमित्तदोषविलयाय । शक्तं मत्वा धृतये जलगंधैरीडितुं प्रभवे ॥

ॐ ह्रीं अरहंतलोकोत्तमायार्धे ।

सिद्धाश्च्युत दोषमला लोकाग्र्यं प्राप्य शिवसुखं व्रजिताः । उत्तमपयगा लोके तानर्धे वसुविधार्चनया ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्धे ।

इंद्रनेंद्रसुरैर्द्रैर्यिततपसां व्रतैषिणां सुधियां । उत्तमपंथानमस्र विचेंदंश्च सलिलगंधमुखैः ॥२८४॥

ॐ ह्रीं पाधुलोकोत्तमेभ्यः अर्धे ।

रागपिशाचधिसर्दनमत्र भवे धर्मधारिणाममनुलम् । उत्तममवातिकामो वृषमर्धे शुचितरं कुसुमैः ॥२८५॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसिधर्मोप लोकोत्तमायार्धे ।

अर्ह्वरणमथार्धेऽनंतजनुष्पि न जातु संप्राप्तं । नर्तनगानादिविधिसुद्दिश्याष्टकर्मणां शांस्यै ॥२८६॥

ॐ ह्रीं अरहत्शरणायार्धे ।

निन्द्याबाधशुणादिक प्राग्र्यं शरणं समेतच्चिदन्तं । सिद्धानाममृतानां भूत्यै पूजेयमशुभहान्यर्थम् ॥२८७॥

ॐ ह्रीं सिद्धशरणायार्धे ।

श्विदचिद्भेदं शरणं लौकिकमाप्यं प्रयोजनातीतं । त्यक्त्वा साधुजनानां शरणं भूत्यै यजामि परमार्थम् ॥

ॐ ह्रीं पाधुशरणायार्धे ।

केवलिनाथसुखोद्गतधर्मः प्राणिसुखसहितार्थसुद्विष्टः । तत्प्राप्त्यै तद्यजनं कुर्वे मखविघ्ननाशाच्च ॥ २८९ ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसिधर्मशरणायार्धे ।

औषधीरसबलद्धिं तपःस्थ्या क्षेप्रबुद्धिकलिताः क्रिययाह्याः ।

विक्रपधिमहिनाः प्रणिधानप्राप्तसस्तुतितटा मुनिपूज्याः ॥ २९० ॥

केवलावधिमनः प्रसरांगाः बीजकोष्ठमतिभाजनशुद्धाः ।

वीतरागमदमत्सरभावा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९१ ॥

यद्बुधचोऽमृतमहानन्दमग्ना जन्मदाहपरितापमपास्य ।

निर्धनुः सुखसमाजतटेषु बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९२ ॥

श्रोत्रभिन्नमतयः पदपंथाः हृष्टसंस्तुतपदार्थविभाषाः ।

तत्रसंकलितधर्म्यसुशुक्लाः बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९३ ॥

स्पर्शनश्रवणलोकनबुद्धाः घ्राणस्थरसनोपकृता ये ।

दूरतोऽप्यनुभवं समाप्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९४ ॥

छिन्नसर्व्यविधिना चतुर्दश दिग्बुद्धपूर्वमतिना निमित्तगाः ।

वादिबुद्धकृतिनो मतिश्रमा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९५ ॥

अष्टधोक्तदशधाभिदया ये बुद्धिवृद्धिमहिता शिष्यवत्ना ।

विषमलादिगदहापनदेहा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९६ ॥

हृष्टिवक्त्रमनसां विषभक्ति प्रीणिता श्रुतस्मरितपतिपुष्टा ।

लोकमगलिषु सन्धिसिता ये बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९७ ॥

वाक्यमानसबलेन समप्राः उग्रदीप्तपसस्त्रिकगुप्ताः ।

योरव्यर्थगुणभावितचित्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९८ ॥

दुग्धमध्वसृतभोजनकृत्याः सर्पिषाश्रववचोऽभिनियुक्ताः ।

अणवलाघवशित्त्वविदर्भा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९९ ॥

कामरूपगुरुताप्रतिसर्पावर्द्धहीनवसतिगृहयुक्ताः ।

चारणा जलफलाशिसूत्रा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ ३०० ॥

आत्मशक्तिभवागतसर्वपौद्गलीष समताहच्युतवस्त्राः ।

सत्परीषहभटार्दनदास्ते बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ ३०१ ॥

ॐ ह्रीं अष्टप्रकारकलहृद्दिवासेभ्यो मुनिभ्योऽर्धम् ।

द्येसितुष्टुषभसेनपुरस्सरा ये, सिंहादिसेनपुरतोऽजिततीर्थभर्तुः ।

श्रीसम्भवस्य किल चारुविसेनमुख्यास्तुर्यस्य बज्रधरमुख्यगणाधिराजाः ॥ ३०२ ॥

कोकध्वजस्य चमराधिपूर्वगाः स्युः, पद्मप्रभस्य कुलिशादिपुरस्थिताश्च ।

श्रीसप्तमस्य बलमुख्यकृताः पुराणे, चन्द्रप्रभस्य शमिनः खलु दत्तमुख्याः ॥ ३०३ ॥

सकरांकितो गणभृतश्च विद्मस्तुल्याः, श्रीसीतलस्य गणया अनगारगण्याः ।
 श्रेयो जिनस्य निकटे ध्वनि कुन्धपूर्वा, धर्मादयो गणधरा वस्तुष्यसूनोः ॥ ३०४ ॥
 मेर्षादयश्च विमलेशितुरुद्धुद्धया, जग्यार्थनामभरणाश्चतुर्दशस्य ।
 धर्मस्य भांति शामिनः सदरिष्टमूलाश्चक्रयुधप्रभृतयः खलु शांतिभर्तुः ॥ ३०५ ॥
 कुन्धुप्रभोधंमभृतः कथिताः स्वयंभूवर्योः पुनन्त्वरविभोः स्मृतकुम्भमान्याः ।
 मल्लेर्विशाखमुनयो मुनिसुव्रतस्य, मल्लिप्रवेकगणता नमिभर्तुरिष्टाः ॥ ३०६ ॥
 ससद्धिंश्रुजितपदा सुप्रभासस्तुल्या, नेमिश्वरस्य बरदत्तमुखा गणेशाः ।
 याश्वप्रभो स्वयमितः सुभवोतनाज्ञा, धीरस्य गौतमसुनीन्द्रमुखाः पुनन्तु ॥ ३०७ ॥
 एभ्योऽर्घ्यपाद्यमिह यज्ञधरावनार्थं, दत्तं मया विलसतां शुचिवेदिकायां ।
 पुष्पांजलिप्रकरतुंदिलमाज्यपात्र, सुत्तारयामि मुनिमान्यचरित्रभवत्या ॥ ३०८ ॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितैर्यंकरणवरभ्यस्त्रिषञ्चाशश्चहित चतुर्दशशतवक्ष्येभ्यश्चरुपात्रमग्रे कृवाऽर्घ्यमुत्तारयामि स्थाहा ।

इन्द्रभृतिरिशिभृति, वांयुभृतिः सुधर्मकः । मौर्यमौल्यी पुत्रमित्रावकम्पनसुनामधृक् ॥ ३०९ ॥
 ॐ ह्रीं गौतमादि एकादशसुनिभ्योऽर्घ्यं ।

अन्धवेलः प्रभासश्च, रुद्रसंख्यानं सुनीन् यजे । गौतमं च सुधर्मं च, जम्बूद्वारामिनमूर्ध्वगम् ॥ ३१० ॥
 ॐ ह्रीं अर्यकेवलित्रयायार्घ्यं ।

श्रुतकेवलिनोऽन्यांश्च, विष्णुनन्द्यपरजितान् । गोवर्धनं भद्रबाहुं, दशपूर्वधरं यजे ॥ ३११ ॥
 ॐ ह्रीं श्रुतकेवलिनोऽर्घ्यं ।

विशाखमोष्ठिलनक्षत्र, जयनागपुरसरान् । सिद्धार्थधृतिषेणाहो, विजय बुद्धिबलं तथा ॥ ३१२ ॥
 गंगदेवं धर्मसेनमेकादश तु सुश्रुतान् । नक्षत्रं जयपालाख्यं, पांडुं च ध्रुवसेनकम् ॥ ३१३ ॥

ॐ ह्रीं कर्तिकेवलिनोऽर्घ्यं ।

कामाचार्यं पुरोगीयजातारं प्रयजेन्महं । सुभद्रं च यशोभद्रं, भद्रबाहुं सुनीश्वरम् ॥ ३१४ ॥
 लोहाचार्यं पुरा पूर्वज्ञानचक्रधरं नमः । अर्हद्बलि भूतबलिं, माघनन्दिनसुत्तमम् ॥ ३१५ ॥
 धरसेनं सुनीद्रं च, पुष्पदन्तसमाह्वय । जिनचन्द्रं कुन्दकुन्दसुमारशामिनमर्थये ॥ ३१६ ॥

ॐ ही ऐदुगीनदीक्षावाणधुरधरनिर्प्रयाचार्यवर्यान् वेदीप्रतिष्ठाने प्रस्थाप्याष्टविधार्चन करोमि स्वाहा ।
निर्ग्रथान् बहुशान् पुलककुशलान्, किंशीलनिर्ग्रथकान् ।

मूलस्वोत्तरमद्गुणावधृतान् ॥
बन्दित्रा जिनकल्पसूत्रितपदान्, प्रध्वस्वपापोदयान् ।

वेदीशुद्धिविधिं ददन्तु मुनयो, ह्यर्घेण संपूजिताः ॥ ३१७ ॥

ॐ हीं पुलाकवकुशकुशीलनिर्प्रयात्प्रनातकपदधरत्रिकर्यूनेनककोटिवह्यमुनिवरेभ्योऽर्घं ।

फिर ९ दफे णमोकार मन्त्र पढकर कलश व ध्वजाके ऊपर पुण्य डालना । फिर १०८ दफे णमोकार मन्त्र जपकर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ वेदी तथा मंदिरके शिखरपर कलश व ध्वजा चढावे ।

ॐ णमो आहृताण स्वस्तिन भद्र भवतु ष्वलोकस्य शांतिर्भवतु स्वाहा ।

मंदिरके ऊपरकी ध्वजा—१२ अंगुल लम्बी व ८ अंगुल चौड़ी हो, कपड़ा लाल व पीला हो । उषमें, चन्द्रमा, माला, नक्षत्र, आदिका चिह्न हो । तथा कलश, पातिया, दीपदण्ड, छत्र, चमर, घर्मचक्र लिखकर ध्वजाके ऊपर जिनविम्ब हो । ऊपर छत्र हो । ध्वनामें अशोक आदि वृक्षका चिह्न भी हो । जो ध्वजा मंदिरकीके शिखरपर चढाई जावे उषका दंड मंदिरकी ऊँचाईसे चौथाई हो तो ठीक हो अथवा शोभाके अनुसार हो । ध्वजा चढ़ाते समय बाले बजें व जयजयकार शब्द हो । फिर वेदीपर मातृकायन्त्रको केपरसे लिखे । यह मन्त्र छठे अध्यायमें नं० (२) में दिया हुआ है तथा मन्त्र भी वहीं लिखा है उषको १०८ बार जपे । वेदी उष समय चमर छत्रादिके सुशोभित की जावे, बाजे बजते रहें । तथा जयजयकार शब्दके बीचमें प्रतिमाजीको वेदीपर विराजमान करे । वेदीकी भीतर केशाके बाधिये पहलेसे किये जावे । यदि मातृकायन्त्र नहीं लिख सके तो श्री लिखले व १०८ दफे णमोकार मन्त्र जपले । फिर मूलनायक तोर्थ सारकी पूजा बड़ी भक्तिसे की जावे । पूजाके पीछे आचार्य यह प्रबन्ध करा दे कि मन्दिर या वेदीका जीर्णोद्धार किस तरह होगा व नित्य पूजापाठमें अन्तर न पड़े । मुख्य प्रतिष्ठा करानेवालेको पूजा आदिका यथाबंभव नियम दिवावे तथा चार दान करनेके लिए कहे व अन्य माइयोंको भी दानके लिए कहे । इस समय भजनान्दि हों व याचकोंको दान दिया जावे । गरीबोंको भोजन कराया जावे तथा यदि सामर्थ्य हो तो भ्रष्टका भोजनकार किया जावे ।

(२) किंबी भी नए कार्यमें जैसे गृह प्रवेश या विवाहादि-उषमें यथायोग्य विधिके साथ यन्त्र या प्रतिभाका अभिषेक काके समयत्राताय नम आदिसे होम करके वही १७ बख्यबली पूजा जो वेदीप्रतिष्ठामें लिखी है की जावे । यह मंगलीक पूजा है, हर साल कार्यमें काने योग्य है ।

(३) जब कोई नया मन्थ तैयार हो व लिखा जावे तो उषकी विशेष पूजा नेठ सुदी ५ या श्रुतपञ्चमीकेदिन कीजावे।श्रुतमफिक पढ़कर श्रुनपूजा हो । फिर शाल पढ़कर सुनाया जावे ।

अध्याय बारहवाँ ।

भक्तियां आदि ।

अथ सिद्धभक्तिः ।

असरीरा जीवधना उबलुता, दंसणेय णाणेय । सायारमणायारा, लक्खणमेयंतु सिद्धाणं ॥ १ ॥
 मूलोत्तरपयडीणं बन्धोदयमत्तकम्मउम्मुक्का । मंगलभूदा सिद्धा, अट्टगुणा तीदसंसारा ॥ २ ॥
 अट्टवियकर्भविघडा सोदीभूता णिरंजणा णिच्चा । अट्टगुणा क्किक्किच्चा, लोयगणिवसिणो सिद्धा ॥ ३ ॥
 सिद्धा णट्टमला विसुद्धबुद्धो घ लद्धिमवभावा । तिहुअणसिरिसेहरथा, पसियन्तु भड्डारया सब्बे ॥ ४ ॥
 गमणागमणविमुक्के, विहडियकम्मपयडिसंधारा । सामहसुहसंपत्ते ते, सिद्धा वंदियो णिच्चं ॥ ५ ॥
 जयमंगलभूदाणं विमलाणं, णाणदसणमयाणं । तहलोहसेहराणं, णमो सदा सब्बसिद्धाणं ॥ ६ ॥
 समत्तणाणदंसणवीरियसुहुमं, तहेव अवरगहणं । अगुरुल्लु अवावाहं, अट्टगुणा होंति सिद्धाणं ॥ ७ ॥
 तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे, चरित्तसिद्धे य । णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे, सिरसा णमरसामि ॥ ८ ॥

इच्छामि भंते सिद्धमत्ति काओमगो कओ तरसालोचेओ, सम्मणाणमदंसणसम्मचरित्तजुताणं,
 अट्टविहकम्ममुक्काणं अट्टगुणसम्पणणाणं, उड्डहलोयमच्छयम्मि, पयड्डुद्धियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं, सजम-
 सिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं, सम्मणाणममदंसणसम्मचरित्तसिद्धाणं, तीदाणागदवहमाणकालत्तयसिद्धाणं
 सब्बसिद्धाणं वन्दामि, णमरसामि दुक्कलक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगहगमणं समाहिरणं जिण-
 गुणसम्पत्तिहोउमब्बं ।

इति पूर्वार्चानुक्रमेण भावपूजास्तवसमेतं कायोत्सर्गं करोमि ।

अथ श्रुतभक्तिः ।

अर्हदुक्कत्रपसूतं गणधारचित्तं, द्वादशांगं विशालं, चित्र बहर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्धोरितं बुद्धिमद्भिः ।
 मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं, ज्ञेयभाषपदीपं, भक्त्या नित्यं प्रबन्धे, श्रुतमहमखिलं सर्वलोकैकसारम् ॥१॥
 जिनेन्द्रवक्त्रप्रविनिर्गतं वचो, यतीन्द्रभूतिप्रमुखैर्गणाधिपैः ।

श्रुतं धृतं तश्च पुनः प्रकाशितं, द्विषट्प्रकारं प्रणसाम्यहं श्रुतं ॥ २ ॥

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिर्यधिकानि चैव ।

पंचाशदष्टौ च, सहस्रसंख्यमेतच्छुनं पंच पदं नमामि ॥ ३ ॥

अंगबाणश्रुतोद्भूतान्यक्षराण्यक्षराश्रये । पंचसप्तैकमष्टौ च दशाशीतिं समर्चये ॥ ४ ॥

अरहतभासियस्यं गणहरदेवेहि गंधिय सम्म । पणमामि भन्तिजुत्तो सुदणानमहोवहि सिरसा ॥ ५ ॥

इच्छामि भन्ते सुदभसि काओसगो कओ तस्सालोचेओ अंगोवगपङ्गणघणुडपरियम्मसुत्तपह-
मासिओय पुब्बगघचूलिया चैव सुत्तत्थयत्थुइधम्मकहाइयं सुद णिवकालं अंचेमि पूजेमि बन्दामि णमस्सामि
दुक्खखओ कम्मखओ वोहिळाओ सुगइगमण सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ चारित्रभक्ति ।

समारव्यसनाहतिप्रचलिता, नित्योदयप्रार्थिनः । प्रत्यासन्नविस्तृत्यः सुमतयः शान्तनैलः प्राणिनः ।

मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं सोपानसुवैस्तारा-मारोहंतु चरित्रसुत्तममिदं, जनैर्द्रमोजस्विनः ॥ १ ॥

तिलोए मन्वजीवाणं हिय. धम्मोवदेसणं । वड्डमाणं महाधीर, बन्दिता सव्ववेदिनं ॥ २ ॥

घाइकम्मविघातस्यं, घाइकम्मविणाभिणा । भासियं भव्वजीवाणं, चारित्तं पंचभेददो ॥ ३ ॥

सामायिय तु चारित्तं, छेदोवड्डावणं तथा । त परिहारविसुद्धिं च, सयमं सुहम पुणो ॥ ४ ॥

जहाखायं तु चारित्तं तथाखायं तु त पुणे । किवाइ पंचहाचार, मङ्गल मलसोहणं ॥ ५ ॥

अहिंसादीणि वुत्तानि, महव्वयाणि पञ्च य । समिदीओ तदो पञ्च, पञ्चेन्द्रियणिगगहो ॥ ६ ॥

छब्भेयावासभूसिद्धा, अण्हाणत्तमचेल्दा । लोयत्त ठिद्धिसुत्ति च, अदन्तवणमेव च ॥ ७ ॥

एयभत्तेण संजुत्तां, रिसिसूलगुणा तहो । दसधममा तिगुत्तीओ, सीलाणि सयलाणि य ॥ ८ ॥

सव्वे वि य परीसहा, वुत्तत्तरगुणा तथा । अण्णे वि भासिया सन्ता, तेसिहाणीमयेकया ॥ ९ ॥

जइ रागेण दोसेण, मोहेण णदरेण वा । बन्दिता सव्वसिद्धाणं, सजुशा सामुसुक्खुण ॥ १० ॥ (१)

संजडेण भए सम्म, मव्वसजमभाविणा । सव्वसंजमसिद्धीओ, लब्भदे सुत्तिज सुहं ॥ ११ ॥

धम्मो मंगलसुक्किट्ट अहिंसासजमो तओ । देवा चि तरस पणमंति, जस्स धम्मे सया मणो ॥ १२ ॥

इच्छामि भन्ते चारित्तभन्ति काओसगो कओ तस्सालोचेओ सम्मणणजोयरस सम्मत्ताहिद्वियस्य

सकषणक्षणास्य विलक्षणप्रथमेश्वर रीतिसरस्य अस्त्वगिन्द्रसकलस्य असाक्षरस्य अक्षयप्रथमपरंपरणास्य तिसृस्त्रि-
 मूर्तस्य पञ्चमसिद्धिद्वयस्य गणपद्भ्यामसाक्षरार्थस्य सप्तमपरमेश्वरस्य सप्तमसिद्धिस्य सप्तमिच्छाशालं अनेनैव
 पूर्वेणैव चत्वारि नामानि तुल्यगणेशो अकारणो भोक्तिशशो सुगन्धमणो समाधिपरणं विणयण सस्यसि
 शोऽथ मन्त्रो ।

अथ भाष्यनिर्वाहः ।

शैवसूक्तानामुक्ता निरुद्धव्यामनायायगोचरता । तुमहे व्यापयोऽग्रहृदिष्य महालक्ष्मि ये विष्णु ॥ १ ॥
 सप्तपरमपरमसिद्धयुक्त आत्मसद्बुद्धिं चानि जागिता । सुसमन्ता विणयणो विणयद्व्यापणस्येण ॥ २ ॥
 बालप्रमहृदभैरे विद्याणपेरेमन्मणरीजिता । आशानमनाअण्ये तुसरीके चानि जागिता ॥ ३ ॥
 मयागिद्धिगुत्तितया मुत्तियथे राजया पुणो अण्ये । अज्ञानमयमणागिळया साहस्रमण्येनायि रंजिता ॥ ४ ॥
 उक्तमयाग्राह्यया वचणाभाषेण अकलजाक्षरिया । प्रतिमयाग्राह्यणाती अगणा यास्य अरंजाशो ॥ ५ ॥
 याणमिय निरसलेभ्या अस्तोक्षा सप्तसप्त सुमिवमया । परिमण्यगिळयाणं यथा यणमामि उक्तमणो ॥ ६ ॥
 रंजितमकाणो पून मममममाणेदि नन्दवतीरेदि । विरुवाणस्य तु ममो कळो तुमहे पसाएण ॥ ७ ॥
 अविश्रुतलेभारभया गिराजलेमिदि परिणवा उक्ता । अद्भूते पुणचर्या परमो योषे य रंजुसा ॥ ८ ॥
 जोडवमर्द्धानावाचारणगुणागण्यदि रंजिता । सुसमन्तामणाए भाविमण्येदि मन्त्रायि ॥ ९ ॥
 तुमहे यणमणरीशुदि अणणमण्येण णं मए मृसा । दिव मया बोद्धिलए अकभस्त्रिण्यवलयो णिचं ॥ १० ॥

इत्यादि शब्दे आभस्त्रियर्थात् काञ्चोमन्त्रो कर्त्तव्यो मन्त्राद्योष्यो सम्भवाणामसगन्तंरणासप्तचरिस्त-
 दुस्ताणं पंचविश्वाराथं आयस्त्रिणणं आयारादिश्रुतव्याणोर्बदेतायाणं लभज्ञायाणं तिस्रणयणपालणस्याणं
 सत्त्वसायुणं णिचत्तं अनेमि पूलेमि चत्वारि नामस्यायि तुल्यत्वञ्चो अकारणो भोक्तिशशो सुगन्धमणो
 समाधिपरणं विणयणरंजति शोऽथ मन्त्रो ।

अथ योगवर्तिः ।

धोसायि वणधराणं अणणाराणो मण्येदि मन्त्रेदि । अंजलिमञ्जलिगहरो अक्षिचरुत्तो यन्मियेण ॥ १ ॥
 मन्त्रं श्रेव य भाते विन्दतामाशे तथे च योज्ज्वला । चारुण मिल्कामाशे सप्तमामि उक्तसिद्धिे मन्त्रे ॥ २ ॥
 दोषोसन्निष्णगुणे विद्वणचन्त्रिये तिसहस्रपरिसुद्धे । त्रिणिगणयारभरुदिए तिस्रणपुद्धे नामससामि ॥ ३ ॥

षडविहकसायमहणे षडगहसंसारगमणशयनीए । पञ्चासवपडिविरे पंचेन्द्रियजिन्दे बन्दे ॥ १ ॥
 छज्जीबदयावर्णणे छहायदणविबल्लिये समिदभावे । सत्तभयविप्पसुक्के सत्ताणभयंकरे बन्दे ॥ ५ ॥
 णद्वदमघट्टाणे पणद्वकम्मदण्डसंसारे । परमद्वणिट्टिमट्टे अट्टगुणट्टीसरे बन्दे ॥ ६ ॥
 णववंभवेरुत्त णवणयसब्भावजाणगे बन्दे । दसविह्वममट्टाई दससंजमसंजुदे बन्दे ॥ ७ ॥
 एयारसगसुदसायपरारगे वारसंगसुदणि उणे । वारसविह्वतवणिरदे तेरसकिरयापडे बन्दे ॥ ८ ॥
 भूदेसु दयावर्णणे षडदस षडदस सुगन्धपरिसुद्धे । षडदसपुव्वपगन्धे षडदससलवज्जिदे बन्दे ॥ ९ ॥
 बन्दे चउत्थभत्तादिजावळममासखवणिपडिपुण्णे । धंदे आदावन्ते सूरस य अहिमुहट्टिदे सूरे ॥ १० ॥
 बहुविह्वपडिमट्टाई णसेज्जवीरासणोवञ्जावासीयं । अणिट्टु अकुम्भदीये चतदेहे य णवससामि ॥ ११ ॥
 ठाणियमोगयदीए अब्भोवासी य सखत्तलीय । धुदकेसमंसु लोसे णिप्पडियममे य वन्दामि ॥ १२ ॥
 जल्लपललितगत्ते बन्दे कम्ममलकल्लुपपरिसुद्धे । दोहणहणमंसु लोये तवनिरिअरिए णवससामि ॥ १३ ॥
 णाणोदयाहिसित्ते लीलुणविव्हिसिये तवसुगन्धे । ववगयरायसुदट्टे सिवगहपहणायगे बन्दे ॥ १४ ॥
 उरगतवे द्वित्तलवे सहातवे य घोरतवे । वन्दामि तवमहंते तवसंजमह्विदिसम्पत्ते ॥ १५ ॥
 आमोसहिएखेलोसहिएजल्लोसहिय तवसिद्धे । विप्पोसहिए क्कञ्जासहिए वन्दामि तिविहेण ॥ १६ ॥
 अभयसुहवीरलथी सव्वथी अक्खोण सहाणसे बन्दे । मणवत्तिवंचवलिक्कायवणिणगी य वंदामि तिविहेण ॥
 वरकुट्टवीयसुद्धी पयाणुमारीयलमिणणसोयारे । उरगहईहसमत्थे सुत्तथविसारे बन्दे ॥ १८ ॥
 आभिणिवोहियसुद्धे ओहिणामणणाणि सव्ववणाणाय । बन्दे जगप्पदीवे पच्चक्खपरोक्खणाणीय ॥ १९ ॥
 आयासतजुलसेहिवारणे जंघवारणे बन्दे । विउव्वणह्विद्धिणे विज्जाहरपणमणे य ॥ २० ॥
 गह्वउरंगुलगमणे तहेव फलफुल्लचारणे बन्दे । अल्लुवमतयमहंते देवासुरवन्दिदुदे बन्दे ॥ २१ ॥
 जियभगजियउवमग्गे जियइंदियपरिमहे जियकसाये । जियरायदोसमोहे जियसुहवुक्खे णमससामि ॥
 एवमए अभित्तुआ अणयारा रायदोसपरिसुद्धा । संघरस वरसमाहि मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु ॥ २२ ॥

रच्छामि भन्ते जोगमत्ति काओवग्गे कओ तस्वालोचेओ अट्टारजजीवदोपसुद्धेसु पणारपणम्मभूमोसु आदावणहक्खेपूल अब्भो-
 वापठणमोणवीरापचेक्कवापकुक्कडावणव उरयपरकावळणादिजोगजुत्तण वरवणहूण णिवत्तल अचेमि पूजेमि वन्दामि णमससामि दुक्खक्खय
 कम्मसखय वोहिलोई सुगहगमण वम्म वमाहिवरण जिणगुगववत्ति हाउ मज्झ ॥ २५ ॥

अट्टावयम्मि उसहो वमगाए थासुपुज्ज जिणणाहो । उज्जन्ते पेम्मिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥ १ ॥
 वीसं तु जिणयरिदा अमरासुरवन्दिता बुद्धकिलेसा । सममेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ २ ॥
 वरदत्तो य वरङ्गो सायरदत्तो य तारवरणयरे । आहुट्टयकोडोओ णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ ३ ॥
 पेम्मिसामि पज्जणो संबुक्कुमारो तहेव अणिकद्धो । वाहत्तरकोडोओ उज्जन्ते अत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥
 रामसुवा वेणिण जणा लाङ्गणरिदाण पचकोडोओ । पावागिरियरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ ५ ॥
 पंडुसुआ तिणिणजणा दंबिडणरिदाण अट्टकोडोओ । सेतुंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ ६ ॥
 सन्ते जे बलभहा जटुषणरिदाण अट्टकोडोओ । गजपथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ ७ ॥
 रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णोलमहाणोलो । णवणवदीकोडोओ तुङ्गो गिरिणिव्वुदे वन्दे ॥ ८ ॥
 णंगाणगकुमारा कोडोपंचद्धसुणिवरा सहिया । सुवणागिरिवरिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ ९ ॥
 वरसुहरायस्स सुवा कोडोपंचद्धसुणिवरा सहिया । रेवाउहयतड्ढगे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १० ॥
 रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरक्कुडे । दो चक्को दह कप्पे जाहुट्टयकोडिणिव्वुदे वन्दे ॥ ११ ॥
 बड्ढवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे । इंदजीदक्खुअथणो णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १२ ॥
 पावागिरिवरसिहरे सुषणभहाइसुणिवरा चउरो । चलणाणईतड्ढगे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १३ ॥
 फलहोडोवरगामे पश्चिमभायम्मि दोगगिरिसिहरे । गुरुदत्ताइसुणिदा णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १४ ॥
 णायकुमारसुणिदो वालि महावाली चव अज्जेया । अट्टावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १५ ॥
 अबलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे । आहुट्टयकोडोओ णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १६ ॥
 वंसत्थलवरणियरे पच्छिमभायम्मि कुन्थुगिरिसिहरे । कुलदेसभूषणमुणा णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १७ ॥
 जसरहरायस्स सुधा पंचासयाइं कलिं गदेम्मि । कोडिसिलाकोडिसुणी णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १८ ॥
 पासस्स अमवसरणे सहिया वरदत्तसुणिवरा पंच । रिंसिदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसि ॥ १९ ॥

इच्छामि मंते परिणिव्वाणभत्ति काओषण्णो कओ तत्सालोवेओ इमम्मि अवन्नणिणीए चउत्थप्रमयस्स पच्छिमे भागे आहुट्टयमावहीणे
 वावउक्कम्मि सेवकालम्मि पावाए णयरए कत्तियमावस्स किण्हउइएरि एतोए पादीए णसत्ते पंचूसे मयवटोमहदि महावीरो वड्डमाणो
 णिद्धिगदो तीसुवि लोएसु भक्षणवासियवाणवितरजोइविहं कथमाशिय चि चउठियहा देवा वपरिवारा दिव्वेण गधेण दिव्वेण पुण्फेण दिव्वेण

ध्रुवेण दिग्भेगेण दिग्भेगेण वासेण दिग्भेगेण गृह्णाणेण गिच्छकालं अञ्चति पुञ्जति वदति गममति परिणिन्वाणमहाकछाणपुञ्ज करंति महमवि
इहप्रतो तस्य वताइ गिच्छकाल अचेमि पूजेमि वदामि गमंस्यामि परिणिन्वाण महाकछाणपुञ्ज करेमि दुक्खकखओ कम्मखओ बोहिलाओ
सुगरामण वग्ग वमाहिमण णिणगुणवप्पत्ति होउ मग्ग ।

अथ तीर्थकरमक्तिः ।

चउधीसं तीरथयरे उसहाईवीरपच्छिमे वन्दे । सव्वेसिं सुणिगणहरसिद्धे सिरसा गमंसामि ॥ १ ॥
ये लोकैष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयाणोवांतगता । ये सम्यग् मज्जालहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोधिकाः ॥
ये माध्विन्द्रसुरागमरोगणशतैर्गीतप्रणृत्यार्चिताः । तान्देवान्धृषमादिवीरचरमानभक्तया नमस्याम्यहम् ॥ २ ॥
नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपं । सर्वज्ञं सममवाख्यं मुनिगणशृषभ नन्दनं देवदेवम् ॥
कर्मारिहनं सुद्युद्धिं वारकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगन्धं । क्षातं दातं सुपाश्वं सकलशक्तिनिभं चंद्रनामानमीडे ॥ ३ ॥
विरूपातं पुष्टपदन्तं अथभयमथन शीतलं लोकनाथं । श्रेयांसं शीलकोशं मवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ॥
मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमलसृषिपतिं सिंहसैन्यं सुनीदं ।

धर्मं सद्धर्मभेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शांतिं शरण्यम् ॥ ४ ॥

कुन्धु सिद्धालयसं श्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषुचक्रम् ।

मल्लिं बिलयातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं मोल्यराशिसम् ॥

शैवेन्द्रार्च्यं नमीश हरिकुलतिलक नेमिचन्द्रं सवांतम् ।

पार्श्वं नागेन्द्रबन्ध शरणमहमितो बद्धमानं च भक्त्या ॥ ५ ॥

इच्छामि भते चत्रीवतिःपयामक्तिकातस्वर्गो कञ्जो तस्वालाःचेउ । पचगइकछाणवग्गणाण, अट्टमहापाडिहेरवहियाण, वउतीव-
अतिपयविसेवसुत्ताण, वत्तीवदेविदमणिमउडमयमहियाण, बलदेववासुदेवचक्रहरिषिमुणिअइ अणगारोवग्गुटाण, थुरवयवहस्सणिल्लयाणं,
उपहाइवीरपच्छिमगळमहपुुरिवाण गिच्छकाल अचेमि, पुजेमि, वदामि, गमवामि, दुक्खकखओ, कम्मखओ, बोहिलाहो, सुगरमण,
वमाहिमण, जिणगुणवप्पत्ति होउ मग्ग ।

अथ शांतिमक्तिपाठः ।

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्पाठद्वयं ते प्रजाः । हेतुस्तत्र विचित्रदुःखनिचयः संसारघोराणोवः ॥
अरण्यन्तस्तुरदुम्रदिमनिकारव्याकीर्णोन्मण्डलो । प्रैरुमः कारयतीन्नुपादसल्लिहच्छायानुरागं रविः ॥ १ ॥

कदाशीविषदष्टदुर्जयविषडबालावलीविक्रमो । विद्याभेषजमन्त्रतोषहवनैर्योति प्रशान्तिं यथा ॥
 तद्वत्से चरणारुणांबुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणाम् । विद्वनाः कायविनायकाश्च सहसा शाम्भंत्पद्मे हो विस्मयः ॥ २ ॥
 संतप्तोत्तमकांबनश्चिन्तिविरश्रीस्वच्छिगौरद्युते । पुंसां त्वस्वरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयान्ति क्षयं ॥
 उद्यद्भास्करविस्फुरत्करशातड्याघानिष्कासिता । नानादेहिबिलोचनद्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ॥ ३ ॥
 त्रैलोक्येश्वरमंगलञ्चविजयादयंतीरौद्रात्मकान् । नानाजन्मशान्तीरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ॥
 को वा प्रस्वलतीह केन विधिना कालोद्गदावानला । स्र स्याच्चैत्तव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ॥ ४ ॥
 लोकालोकनिरन्तरप्रविततज्ञानैकसूर्ते विभो ! नानारत्नपिनद्धदण्डरुचिरश्वेतातपत्रत्रय ॥
 त्वत्पादद्वयपूतगीतरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः । दर्पाधमातमृगेन्द्रभीमनीनदाङ्गन्या यथा कुँजराः ॥ ५ ॥
 दिव्यस्त्रीनयनाभिरामबिपुलश्रीमेरुचूडामणे । भास्वदालदिवाकरद्युतिहर प्राणीष्टभाममंडलम् ॥
 अढ्याबाधमचित्पयसारमतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम् । सौख्यं त्वस्वरणारविंदयुगलस्तुत्येव संभाष्यते ॥ ६ ॥
 यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करो भासयं-स्तावद्धारयतीह पंकजवनं निद्रातिभाश्रमम् ॥
 यावत्स्वरणद्वयस्य भगवन्न स्यात्प्रसादोदय-स्तावज्जीवनिकाय एव बहति प्रायेण पापं महत् ॥ ७ ॥

शान्ति शान्तिजिनेन्द्र शान्तमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात् ।

संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहव शान्त्यर्थिनः प्राणिनः ॥

कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो हृष्टिं प्रसन्नां कुरु ।

त्वत्पादद्वय दैवतस्य गदतः शाल्यष्टकं भक्तितः ॥ ८ ॥

शान्तिजिनं शशिनर्मलवक्त्र, शीलगुणव्रतसंयमपात्रं ।

अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममवुजनेत्रम् ॥

पंचमसीपिसितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणेश्च ।

शान्तिकर गणशान्तिमभीष्टुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ ९ ॥

दिव्यतरुः सुरपुण्यसुष्ठुष्टिदुःखभिरासनयोजनघोषो ।

आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥

तं जगद्विंशतिशांतिजिनेन्द्र, शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।

सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं, मन्त्रमरं पठते परमां च ॥ १० ॥

येभ्यश्चिंता मुकुटकुण्डलहाररत्नेः । शक्रादिभिः सुरगणः स्तुतपदपद्माः ॥

ते मे जिनाः प्रथवंशजगत्प्रदीपाः । तीर्थकराः संततशांतिकरा भवन्तु ॥ ११ ॥

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतींद्रसांभान्यतपोधनानां ।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य रांज्ञ, करोतु शांति भगवान् जिनेंद्रः ॥

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः ।

काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा, व्याघ्रयो यांतु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां, मासभ्रूज्जीवलोकै ।

जैनेन्द्रं धर्मवक्त्रं प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि ॥ १२ ॥

तदद्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः । सन्तन्यता प्रतपतां सततं स कालः ॥

भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण । रत्नत्रय प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गै ॥ १३ ॥

इच्छामि मन्ते शांतिभक्तिकावस्पर्गो कञ्चो तरसालोचेठ । पचमहाकक्षाणम्पण्णो, अठुमहापाण्डिरेरुदियाण, चरतीवातिसय-
विसेवबहुताण, वसीबदेवेदमणिमवठमथयमदियाण, बलदेववासुदेवचक्ररिसिमुणिजदिअणगारोवगूढाण, शुद्वयवइस्पणिलयाण, उवहाइ-
वीरपुण्ड्रमङ्गलमहापुरिषाण णिच्चकालं अचेमि, पूजेमि, वदामि, णमवामि, दुक्कवखओ, कम्मकवओ वोडिओ, सुगद्दगण, पमादिसरण,
जिणगुणवग्गत्ति होठ मज्झ ।

अथ समाधिभक्तिः ।

स्वात्माभिमुख सन्नित्तिलक्षणं श्रुतचक्षुषा । पश्यन्पद्यामि देवत्वां केवलज्ञानचक्षुषा ॥ १ ॥

शास्त्राभ्यासो जिनपत्तिस्तुतिः संगतिः सर्वदायैः । सद्बुत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ॥

सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावनाचात्मतत्त्वे । संपद्यंतां मम यवभवे यावदेतेऽपवर्गं ॥ २ ॥

जैनमार्गैरुच्चिरन्यमार्गनिर्भेगता जिनगुणस्तुतौ मतिः ।

निष्कलंकाधिमलौकिकाशनाः स भवन्तु मम जन्मजन्मनि ॥ ३ ॥

गुरुसूले यतिनिचिते वैश्यसिद्धांतवादिंसद्बोधे । मम भवतु जन्मजन्मनि सन्यसनसमन्वितं मरणम् ॥ ४ ॥

जन्मजन्मकृतं पापं जन्मकोटिसमाजितम् । जन्ममृत्युजरासूलं इत्यते जिनवन्दनात् ॥ ५ ॥
 आवाल्याजिनदेश्च अथतः श्रीपादयो सेवया । सेवासक्तविनेयकल्पलतया कालोद्ययावद्गतः ॥ ६ ॥
 तव पादौ मम हृदये मम हृदये तव परद्वये लाभम् । त्वन्नामप्रतिबद्धवर्णपठमे कण्ठोस्त्वक्कुण्ठो मम ॥ ७ ॥
 एकापि समयेयं जिनभक्तिर्दुर्गति निवारयितुम् । पुण्याभि च पूरयितुं दातुं मुक्तिश्रिय सम्प्राप्तिः ॥ ८ ॥
 पचसुख दीवणामे पचस्मिप्रय मायरे जिणे वन्दे । पंच जल्योयरणामे पचस्मिप्रय मन्दरे वन्दे ॥ ९ ॥
 रयणत्तर्यं च वन्दे चञ्चीसजिणे न मन्वबद्धा वन्दे । पचशुरूणं वन्दे चारणचरणं सदा वन्दे ॥ १० ॥
 अहंमित्यक्षरब्रह्म वाचकं परमेष्ठिनः । स्त्रिद्वचकस्य सर्वदीजं सर्वतः प्रणिदधमहे ॥
 कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादि गुणोपेतं स्त्रिद्वचकं नमाम्यहम् ॥ ११ ॥
 आकृष्टिं सुरसम्पदां विदधते मुक्तिश्रियो वश्यतां । उच्चाट विपदां चतुर्गतिशुभां विद्वेषभ्रातृमैतसाम् ॥
 स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनम् । पाथात्पंचनमस्त्रिक्रियाक्षरमयी साराधना देवता ॥ १३ ॥
 अनन्तानन्तसंसारसन्ततिच्छेदकारणम् । जिनराजपदाः भोजसमरणं चरणं मम ॥ १४ ॥
 अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम । तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ १५ ॥
 नहि ज्ञाता नहि ज्ञाता नहि ज्ञाता जगन्नये । वीतरागात्पश्यो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ १६ ॥
 जिने भक्तिजिने भक्तिजिने भक्तिदिने दिने । सदा मेस्तु सदा मेस्तु सदा मेस्तु भवे ॥ १७ ॥
 याचेहं याचेहं जिन तव चरणारविदयोर्भक्तिम् । याचेहं याचेहं पुनरपि तामेव तामेव ॥ १८ ॥
 इच्छामि भंते समाहिमात्तिकाउरसग्नो कथो तस्सालोचेडं । रयणत्तपपरुवपरमप्यज्ञाणलक्षणं
 समाहिमत्तीये निबकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, गर्मंशामि, दुक्खकखओ, कम्मकखओ, वोहिलाओ,
 सुगणगणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।



प्रशस्ति ।

दोहा-मंगल श्री अरहंत हैं, मंगल सिद्ध महान । मंगल आचारज सुधी, पाठक मुनि गुण-खान ॥ १ ॥
 अबध सुलक्ष्मणपुर जनम, अग्रवाल शुभ वंश । मंगलसेन सुवर पिता, आत्म जानन हंश ॥ २ ॥
 पिता जु मक्खनलाल हैं, गृह प्रबन्धमें लीन । तृतीय पुत्र यह दास है, नाम जु "शीतल" दीन ॥ ३ ॥
 विक्रम उन्निस पैतिसे, जन्म सुकातिक मास । बत्तिस वय घर तज करो, श्रावकव्रत अभ्यास ॥ ४ ॥
 सम्बत् उन्निस असी चउ, वर्षाकाल मंझार । नगर खंडवा वास किया, ममताभाव सम्हार ॥ ५ ॥
 पोड़वाड़ पंवास घर, जण्डेलवाल जु वीश । धर्म दिग्गम्बर साधते, नमैं चरण जिन ईश ॥ ६ ॥
 मन्दिर एक सुहावना, विद्याशाला एक । औषधिशाला एक है, शाला धर्म जु एक ॥ ७ ॥
 सेठ पोमडू साह हैं, चम्पालाल धनेश । धन्नालाल सु सेठ हैं, रामा माह सुवेश ॥ ८ ॥
 बुन्नीलाल सु चौधरी, पन्नालाल बखान । दशरथ मन्नालाल सा, श्री घनश्याम सुजान ॥ ९ ॥
 भागचन्द सा चुन्नी सा, और हजारीलाल । मूलचन्दजी सुरजमल, सुधी कन्हैयालाल ॥ १० ॥
 इत्यादिक धर्मीनकी, संगति शुभ सुखदाय । सेठ जु सुन्दरलालकी, बाग सु आश्रय दाप ॥ ११ ॥
 बार बार विनती करी, अजितप्रसाद वकील । करहु प्रतिष्ठा मग सुगम, धर्म सुजलमय झील ॥ १२ ॥
 जैनी जन दुखिया अती, रीति न जाने भेद । तांनैं हम उद्यम किया, मदद परम गुरु वेद ॥ १३ ॥
 देख प्रतिष्ठा पाठ त्रय, श्री जयसेन मुनीश । पंडित आशाधर जु कृत, नेमचन्द बुत्र ईश ॥ १४ ॥
 श्री जिनसेन मुनीश कृत, आदिपुराण विचार । आदि पुरुष जीवनचरित, पंचकल्याणक सार ॥ १५ ॥
 तदनुसार रचना करी, अल्पबुद्धि परमाण । धर्म प्रभावना हेतु ही सब जनका हित मान ॥ १६ ॥
 ज्ञान बुद्धि अति अल्प है, साहस बहुत कराय । कार्य कठिन पूरा हुआ, भीजिन चरण सहाय ॥ १७ ॥
 आश्विन कृष्ण नवमिको, सोमवार शुभ बार । ग्रन्थ सभापत यह भया, हो शुचि मंगलकार ॥ १८ ॥

नित्यनियम पूजा ।

देवशास्त्ररूपूजा ।

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु । नमो अरहताण, नमो सिद्धाण, नमो आयरीयाणं, नमो उक्तायाणं, नमो लोए
 वववाहूण । ॐ अनादिमूलमत्रेभ्यो नमः । (यहाँ पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिये)
 चत्वारि मंगलं-अरहन्तमंगलं सिद्धमंगलं, साहुमंगलं, केवलपणणतो धम्मो मंगलं । चत्वारि लोयुत्तमा, अरहन्तलोयुत्तमा, सिद्धलोयुत्तमा, साहुलोयुत्तमा, केवलपणणतो धम्मो लोयुत्तमा । चत्वारि-
 मरण पव्वज्जामि-अरहन्तसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलपणणतो धम्मो सरण पव्वज्जामि ।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा । पुष्पाञ्जलि ।
 अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोपि वा । ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥
 अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्परमात्मानं, स पाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥ २ ॥
 अपराजितमन्त्रोऽयं, सर्वविघ्नविनाशनः । मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥
 एषो पंषणमोयारो, सब्बपावपणासणो । मंगलाणं च सब्बेहिं, पहमं होह मंगलं ॥ ४ ॥
 अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचक परमेष्ठिनः । सिद्धवक्रस्य सदुद्योज सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥
 कमोष्टकविनिमुक्तं, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादियुगोपेत, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥

(यदि अवकाश हो, तो यहार बहस्रनाम पढकर दश अर्घ देना चाहिये, अथवा नीचेका श्लोक पढ एक अर्घ चढ़ाना चाहिए)
 उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्वरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः । धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृह जिननाथमहं यजे ॥७॥
 पुष्पाञ्जलि ।

ॐ ह्रीं श्रीमगवज्जिनबहस्रनामेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्प्रदेशं, स्याद्वादनयकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।
 आमूलसंवसुहशां सुकृतैकहेतु-जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यवाधि ॥ ८ ॥
 स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय, स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।
 स्वस्ति प्रकाशावहजोऽज्ञितहृदयाय, स्वस्ति प्रमञ्जललिताद्भुतवैभवाय ॥ ९ ॥

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा । पुष्पाञ्जलि ।

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोपि वा । ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥

अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्परमात्मानं, स पाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥ २ ॥

अपराजितमन्त्रोऽयं, सर्वविघ्नविनाशनः । मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥

एषो पंषणमोयारो, सब्बपावपणासणो । मंगलाणं च सब्बेहिं, पहमं होह मंगलं ॥ ४ ॥

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचक परमेष्ठिनः । सिद्धवक्रस्य सदुद्योज सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥

कमोष्टकविनिमुक्तं, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादियुगोपेत, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाह्वयाय, स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय ।
 स्वस्ति त्रिलोकवितैतकचिदुद्गमाय, स्वति त्रिकालसकलायतवाितुताय ॥ १० ॥
 द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ।
 आलम्बनानि विविधान्यबलस्य बलगन्, भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥ ११ ॥
 अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि, वस्तुन्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।
 अस्मिन् उबलद्विमलकेवलबोधवह्नौ, पुण्यं समयमहमेकवना जुहोमि ॥ १२ ॥
 (पुष्पाञ्जलि क्षेपण काना)

श्रीधृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः । श्रीसुमतिः
 स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः । श्रीसुपार्थ्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचंद्रप्रभः । श्रीपुण्ड्रदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः ।
 श्रीश्रेयांस्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपुङ्गवः । श्रीविमलः स्वस्ति, स्वति श्रीअनंतः । श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वति श्रीशांतिः ।
 श्रीकुन्धुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः । श्रीमल्लिः स्वति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रत । श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति
 श्रीनेमिनाथः । श्रीपार्थ्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रावर्द्धमानः ।

(पुष्पाञ्जलि क्षेपण काना)

(भागे प्रत्येक श्लोकके अन्तमें पुष्पाञ्जलि क्षेपण काना चाहिये ।)

नित्याप्रकम्पाद्भुवनकेवलौघाः, स्फुरन्मनःपृथ्व्यशुद्धबोधाः ।

दिव्याबधिज्ञानबलप्रयोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १ ॥

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं, संभिन्नं श्रोतृपदानुसारि ।

चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः ॥ २ ॥

दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्बहन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ३ ॥

प्रज्ञापधानाः अमणाः समृद्धा, परयेकबुद्धा दशसर्षुर्धैः ।

प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तबिज्ञा स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ४ ॥

जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतनुपसूत्रबीजाङ्कुराचाराणाहः ।
नमोऽङ्गणेश्वरविहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ५ ॥

अग्निसि दशाः कुशला महिसि, लघिसि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि ।
मनोवपुर्बाण्यलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ६ ॥

दीर्घं च तप्तं च तथा महोन्नं, घोरं तपो घोरपराकमस्थाः ।
तथाऽपतीघातगुणमधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ७ ॥

आमर्षं सर्वौषधयस्तथाशीर्षिषंविषा हृष्टिविषविषाञ्च ।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ८ ॥

सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ९ ॥
अक्षीणलंबाममहानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १० ॥
इति स्वस्तिमंगलविधानं ।

सार्धः सर्वज्ञेनाथः सकलतनुभृतां पापसन्तापहता, त्रैलोक्याक्रान्तकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्षीतिकर्मप्रणाशः ।
श्रीमाम्निर्वाणसम्पद्धारयुधतिकरालीढकण्ठः सुकण्ठैर्देवेन्द्रैर्बन्धपादो जयति जिनपतिः प्राप्तकल्याणपूजाः ॥ १ ॥
जय जय श्री जय श्री सत्कान्तिप्रभो जगतां पते ! जय जय भवानेय स्वामी भवाम्नासि मल्लताम् ।
जय जय महामोहध्वान्तप्रभातकृतेऽर्चनम् जय जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं भागवज्जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर ! अवतर ! (इत्याह्वानम्) ॐ ह्रीं भागवज्जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
देवि श्री श्रुतदेवते भगवति त्वपादंपंकेकहृ-द्वन्द्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्या मया प्रार्थयते ।
मातश्रेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा प्राहि मां, हरशनेन मयि प्रसीद भवतीं सम्पूजयामोऽधुना ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं जिनमुख, द्रुमदाशागश्रुतज्ञान ! अत्र अवतर अ-तर अवतर । ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतदाशागश्रुतज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतदाशागश्रुतज्ञान ! अत्र, मम च्चिहितो भव मम वषट् ।
ठः ठः । ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतदाशागश्रुतज्ञान ! अत्र, मम च्चिहितो भव मम वषट् ।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः । तपःप्राप्तपतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महारमनः ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय पर्वपाधुपमूह ! अत्र अवतर एवौषट् । ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ
ठः ठः । ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूह ! अत्र मम बन्निहितो भव भव वषट् ।

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रबन्धान्, शुभभक्तपदान् शोभितसारवर्णान् ।

दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलोर्ध्वैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं पात्ररूपेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हैश्वर्यमेष्टिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं वन्यादर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूहो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

तामग्रत्त्रिलोकोदरमध्यस्थतिंसमस्तसत्त्वाऽहितहारिवाक्यान् ।

श्रीचन्द्रनैर्गन्धविलुब्धभृंगैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं पात्ररूपेऽन्तनन्तानज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हैश्वर्यमेष्टिने सगतापविनाशनाय चन्दन नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतम्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय सगतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं वन्यादर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूहो सगतापविनाशनाय चन्दनं निर्वधं०

अपारसंसारमहासमुद्रमोक्षारणे प्राड्यतरीन् सुभक्त्या ।

कीर्घोक्षनगैर्घषलाश्रतौर्घजिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं पात्ररूपेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हैश्वर्यमेष्टिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं वन्यादर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूहो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्योन्वयान् सुचटयो कथनैकधुर्योन् ।

कुन्दारचिन्वप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं पात्ररूपेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हैश्वर्यमेष्टिने कामत्राणविध्वंशनाय पुष्पं नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय कामत्राणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं वन्यादर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायपर्वपाधुपमूहो कामत्राणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

कुदूर्पकन्दर्पविसर्पसस्यनिर्णोषान्धैनेतेयान् ।

प्राड्यजयस्यैश्वरमी रसाढ्य जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ५ ॥

- ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने क्षुबारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सम्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यः क्षुबारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

धरतोद्यमानधीकृतविश्वबिम्बमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।

दीपैः कनक्तकांचनभाजनस्यैजिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ६ ॥

- ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोहावकारविनाशनाय दीप नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोहावकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सम्यदर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यग्चारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यो मोहावकार विनाशनाय दीपं नि० ।

दुष्टाष्टकर्मन्धनपुष्टजालसंधूपने आसुरधूमकेतून् ।

धूपैर्विधूतान्यसुगन्धगन्धैजिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ७ ॥

- ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपाम् ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सम्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान्, कुवादिवादाऽस्खलितप्रभान् ।

फलैरलं मोक्षफलाभिसारैजिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ८ ॥

- ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सम्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्धारिगन्धाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूपधूपत्रैः ।

फलैर्विचित्रैर्धनपुण्ययोगान्, जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ९ ॥

- ॐ ह्रीं परब्रह्मणेनंतानतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सम्यदर्शनचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ये पूर्वां लिखनाथशास्त्रयमिनां भक्त्या मदा कुर्वते.

त्रैसन्ध्यं सुविचित्रकाव्यरचनावानुष्कारपन्नो नगः ।
पुण्योढ्या मुनिराजकीर्तिमहिता भूत्वा तयोःसूयणा-

स्तै भव्याः सकलाभयोर्वरुचिर्वां सिद्धिं लभन्ते पराम् ॥ १० ॥

रत्याशीर्वादः (पुण्य क्षेत्रेण काना)

श्रुयभोऽजितनामा च, सम्भवश्चाभिनन्दनः । सुमतिः पद्मवासश्च, सुपान्थो जिनसत्तमः ॥ १ ॥
चन्द्राभः पुद्गलश्च, शीतलो भगवान्मुनिः । श्रेयाश्च वासुपुत्रश्च, विमलो विमलभृतिः ॥ २ ॥
अनन्तो धर्मनामा च, गांतिः कुन्दुर्जिनोत्तमः । अश्व मल्लिनाथश्च, सुव्रतो नमिनीधरश्च ॥ ३ ॥
हरिवशासमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः । दशतोपमगोद्वैतपरिः, पाठत्रो नागेन्द्रपूजितः ॥ ४ ॥
कर्मभान्तकृन्महाबीरः, विद्वार्थकुलभक्तः । जते सुरासुरोन्नेण, पूजिता विमलत्वियः ॥ ५ ॥
पूजिता भरताथेश्च, भूपेन्द्रेर्भूरिचूतिभिः । चतुर्विंशत्य संवत्स्य शान्तिं, कुर्वन्तु शान्धनीम् ॥ ६ ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः मदाऽस्तु मे । चतुर्विंशत्य संवत्स्य शान्तिं, कुर्वन्तु शान्धनीम् ॥ ७ ॥
श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः मदाऽस्तु मे । मज्जानमेव संसारपारणं मोक्षकारणम् ॥ ८ ॥ (पुण्यां०)
गुरो भक्तिगुरो भक्तिगुरो भक्तिः मदाऽस्तु मे । चारिश्चमेव संसारपारणं मोक्षकारणम् ॥ ९ ॥ (पुण्यां०)

अथ देवत्वयमात्रा माला ।

वत्ताण्डाणे जगत्पुत्राणे, पदपोमिड तुष्ट सत्तचक्र ।

तुष्ट चरणविहाणे केवल्लगाण, तुष्ट परमपद परमरु ॥ १ ॥

जय मिरह रिसोसर णमिययाय, जय अजिय जियंगमरोसराय ।

जय सम्भव सम्भवकयबिओय, जय अत्रिणंक्षुण कंदिप यओय ॥ २ ॥

जय सुमङ्ग सुमङ्ग सम्मपययास, जय पडमपपङ्क पडमपिवासा ।

जय जयदि सुपाम सुपामगस, जय चन्दपङ्क चन्द्याइयस ॥ ३ ॥

जय पुण्यन्त दन्तंतरण, जय सीयल सीयलवयणवग ।

जय सेय सेयकिरणोइसुज, जय वासुपुञ्ज पुञ्जाणपुञ्ज ॥ ४ ॥

जय विमल विगलगुणसेहिठाण, जय जयहि अणताणंतणाण ।
 जय कुन्थुं कुन्थुं पडुअंगिसदय, जय अर अर माहर विहियसमय ।
 जय नछि मछिआदामगन्ध, जय पुणिसुव्वय सुव्वयणिवन्ध ॥ ५ ॥
 जय णमि णमियामरणियरसामि, जय णोमि धम्मरहक्कणेमि ।
 जय पास पाल्लिदणकिवाण, जय बड्डमाण जस बड्डमाण ॥ ७ ॥

इह जाणिय णामहिं, दुरियविरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावल्लिहिं ।
 अणहणहि अणाइहि, समियकुवाइहि, पणविमि अरहन्तावल्लिहिं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो महावै निर्वामीति स्वाहा ।
 अथ शास्त्रजयमाला प्राकृत ।

सम्पद सुहकारण, कम्मविधारण, भवसमुद्दतारणतरणं ।
 जिणंदमुहाओ चिणिगगतार, गण्दिद्विगुम्फिय गन्थपयार ।
 अवग्गहईहअबायजुएहि, सुधारणभेयहि तिणिसएहि ॥ १ ॥
 सुदं पुण दोणिण अपेयपयार, सुबारहमेय जगत्तयसार ।
 जिणिंदगणिदणरिदह रिद्धि, पयासह पुणपुराकिउलद्धि ।
 सुरिदणरिदससुच्चिओ जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ३ ॥
 जिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ४ ॥
 लोयअलोयह तुत्ति जणेह, तुं तिणिणवि कालसरूथ भणेह ।
 चउग्गहलक्खण तुल्लउ जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ६ ॥

जिणिदचरितविचित्त मुणेह, सुसावधम्मस ज़ुत्ति जणेह ।
णिउग्गुवित्तिउ इत्थु वियाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ७ ॥

सुजीवअजीवह तवह चक्खु, सुपुण विपाव विबन्ध विमुक्खु ।
चउत्थुणिउग्गु विभासिय णाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ८ ॥
तिभेयहिं ओहि विणाण विचित्तु, चउत्थु रिजोविउलं सयउत्तु ।

सुखाइय केवलाणाण वियाण, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ९ ॥
जिणिदह णाणु जगत्तयभाणु, महात्तमणासिय सुक्खणिहाणु ।

पयवहु भन्निआरेण वियाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ १० ॥
पयाणि सुआरहकोडिसयेण, सुलक्खनिरासिय जुत्ति भरेण ।

महसअट्टावण पंचवियाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ ११ ॥
इक्कावण कोडिउ लक्ख अठेव, महस तुलसीदिसया छक्केव ।

सदाइगवीसह गंधपयाणि, सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥ १२ ॥
वत्ता ।

इह जिणवरवाणि विसुद्धमई, जो भवियण णियमण धरई ।
सो सुरणरिदंभपय लइई, केवलणाण वि उत्तरई ॥ १३ ॥

ॐ हीं निनमुखोद्भूतभ्याद्वादयगमित्त्वाद्दशांगश्रुतज्ञानाय अर्घं निर्विषामीति स्वाहा ॥

अथ गुरुजयमाला प्राकृत ।

भवियह भवतारण, सोलह कारण, अज्जवि तिरथयरत्तणहं ।
तव कम्म असंगह दयधम्मंगह पालवि पंच महठवयहं ॥ १ ॥
बन्दांमि महारिसि सीलवन्त, पंचेदियसंजम जोगजुत्त ।
जे ग्यारह अंगह अणुसरंति, जे चउदहपुव्वह सुणि युंणंति ॥ २ ॥
पादाणुसारवर कुट्टबुद्धि, उप्पणज्जाह आयासरिद्धि ।
जे प्राणहारी तोरणीय, जेरुक्खमूल आतावणीय ॥ ३ ॥

जे मोणिधाय बन्दाहणीय, जे जयत्यवणि निवासणीय ।
 जे बद्धहि देह विरत्तचित्त, जे रायरोसभयमोहवत्त ।
 जे जल्ल मल्लगण लिप्त गत्त, आरम्भ परिग्गह जे विरत्त ।

जे इक्क गास दुइ गास लिति, जे नीरसभोयण रह करंति ॥ ५ ॥
 ते सुणिवर बंदुँ डियमसाण, जे कम्म उहहरसुक्कसाण ॥ ६ ॥
 बारह विह संजम जे धरंति, जे चारिउ विकहा परिहरंति ।

बाबीस परोसह जे सइंति, संसीरमइणउ ते तरंति ॥ ७ ॥
 जे धम्ममुद्ध महियलि शुणंति, जे काउस्सग्गो णिस गमंति ।
 जे सिद्धबिलासणि अहिलसंति, जे पक्खमास आहार लिति ॥ ८ ॥

जे सत्तुमित्त समभावचित्त, ते सुणिवर बंदुँ दिट्ठचरित्त ।
 चउवीसह गंधह जे विरत्त, ते सुणिवर बंदुँ जगपचित्त ॥ ११ ॥
 जे सुज्झाणिज्झा एकचित्त, बन्दाभि महारिसि मोकलपत्त ।

रणत्तयरंजिय सुद्ध भाव, ते सुणिवर बंदुँ डिद्धिसहाव ॥ १२ ॥
 जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धबधूअपुराईया ।
 रयणत्तयरंजिय, कम्मह गंजिय, ते रिसिबर मह झाईया ॥ १३ ॥

रयणत्तयरंजिय, कम्मह गंजिय, ते रिसिबर मह झाईया ॥ १३ ॥
 अं ही बन्परदर्शज्ञानचारिआदियुणविराजमानाचार्योपाध्यायवर्षाद्युच्यो महावं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ सिद्धपूजा ।

ऊर्ध्वाधोरयुतं सचिन्दुसपरं, ब्रह्मशरावेष्टितं, वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं, तत्संधितस्वान्वितं ।
अंतःपत्रतटेष्वनाहयुतं, हींकारसंवेष्टितं, देव ध्यायति यः स सुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर । स्वौषट् । ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ २
ठः ठः । ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम पत्निहितो भव भव कषट् ।

निरस्तकर्मसम्बन्धं, सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् । बदेऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥१॥ सिद्धयन्त्रकी स्थापना ।

सिद्धोनिवासमनुग परमात्मगम्यं, होनादिभावरहितं भवतीतकायम् ।

रेवापगावरसरो-यसुनोद्भवानां, नीर्येजे कलशगैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

आनन्दकन्दजनकं घनकर्मसुक्तं, सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननातिवीतम् ।

सौरभ्यवासितसुखं हरिचन्दनानां, गन्धैर्यजे परिमलेर्वरसिद्धचक्रम् ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने सघारतापविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं, सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम् ।
सौगन्ध्यशालिबनशालिवराक्षतानां, पुंजैर्यजे शशिनभैर्वरसिद्धचक्रं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयप्रदासये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
नित्यं स्वदेशपरिमाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानपेक्षमयुतं मरणाद्यतीतम् ।

मन्दारकुन्दकमलादिवनस्पतीनां, पुष्पैर्यजे शुभतभैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविधिवचनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।
ऊर्ध्वरश्मिभाषणमनं सुमनोव्यपेतं, ब्रह्मादिवीजसहितं गगनावभासम् ।

क्षीरान्नसाज्यबटकै रसपूर्णैर्गर्भै-नित्यं यजे चरुवैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने शुभरोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।
आतकशोकभंयरोगमहमशांतं, निर्दुन्दुभाषणं महिमामनिवेशम् ।

कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातै-रीर्यैर्यजे रुचिबैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये विद्मः। मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

पश्यन्समस्तसुखं युगपन्नितांतं, त्रैकाल्यवस्तुविषये निविद्धप्रदीपम् ।

सद्बुद्धयगन्धघनसारविमिश्रितानां, धूपैर्यजे परिमलैर्ध्वरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये विद्मः। अष्टकमेदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धासुरादिपतिघक्षनरेन्द्रचक्रैर्-धैर्यं शिवं सकलभव्यजनैः सुबन्धम् ।

नारिं गृह्यन्कदलीफलनारिकेलैः, सोऽहं यजे वरफलैर्ध्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये विद्मः। मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः, संगं वरं चन्दनं, पुष्पौघं विमलं सदक्षतव्यं, रम्यं वरुं व्रीपकं ।

धूपं गन्धयुतं ददामि विविध, श्रेष्ठं फलं लब्धये, सिद्धानां शुभपत्क्रमाय विमलं, सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये विद्मः। अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं, सूक्ष्मस्वभावपरमं यद्दन्तवीर्यम् ।

कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं, वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये विद्मः। महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रैलोक्येश्वरचन्दनीयवर्णाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं, यानाराध्य निरुद्धलण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थकराः ।
सत्सम्यक्त्वविधोघवीर्यं विशदाऽव्याथायार्थगुणै-र्युक्तास्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ ११ ॥

पुष्पाञ्जलि ।

अथ जयमाला ।

विराग सनातन शांत निरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस ।

विदूरितसंसृतभाव निरंग, समामृतपूरित देव विसङ्ग ।

निवारितबुद्भुतकर्मविपाश, सदामलकेवलकेलिनिवास ।

भवोदधिपारग शांत विमोह, प्रसीद विमोह, प्रसीद विमोह सुसिद्धसमूह ॥ १ ॥

भवोदधिपारग शांत विमोह, प्रसीद विमोह, प्रसीद विमोह सुसिद्धसमूह ॥ २ ॥

भवोदधिपारग शांत विमोह, प्रसीद विमोह, प्रसीद विमोह सुसिद्धसमूह ॥ ३ ॥

अनन्तसुखान्मृतसागर धीर, कलङ्करजोमलशूरिसमीर ।

विखण्डितकाम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ४ ॥

विकारविषवर्जित तज्जितशोक, विषोषसुनेत्रविलोकितलोक ।

विहार विराय विरङ्ग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥

रजोमलखेदविमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखान्मृतपात्र ।

सुदर्शनराजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ६ ॥

नरामरवन्दित निर्मलभाव, अनन्तमुनीश्वरपूज्य विहाव ।

सदोदय विश्वमहेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ७ ॥

विदम्भ वितृष्ण विदोष चिन्दि, परापरशङ्कर सार वितन्द ।

विकोप विरूप विशङ्क विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ८ ॥

जरामरणोद्धत धातविहार, विचिन्तित निर्मल निरङ्कार ।

अचित्यचरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ९ ॥

विषर्ण विगन्धविमान विलोभ, विमाय विक्राय विशब्द विशोभ ।

अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १० ॥

पता-असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं, परपरणतिमुक्तं पद्मानन्दोद्भवन्धम् ।

निखिलगुणनिकेतं सिद्धवक्तं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं विद्मपरमेष्ठिन्यो महाधर्मं निर्वपामीति स्थावा ।

अडिल्लुब्ध-अविनाशी अविहार परमरसधाम हा, समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ।

शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो, जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥ १ ॥

ध्यानअगनिकर कर्म कलंक सबे दहे, नित्य निरञ्जनैव सरूपी है रहे ।

ज्ञायकके आकार समस्तनिवारकै, सो परमात्म सिद्ध नमू सिर नायकै ॥ २ ॥

दोहा-अत्रिचलज्ञानप्रकाशते, गुण अनन्तकी खान । ध्यान धरे सौ पाइए, परमसिद्ध भगवाव ॥ ३ ॥

इत्याशीर्वादिः (गुण्याजलि)

अथ शान्तिपाठः ।

(शान्तिपाठ बोधते प्रथम दोनो हायोसे पुष्पवृष्टि करते रहना चाहिये ।)

दोषकवृत्तम् ।

शान्तिजिनं शशिनिसर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।

अष्टशताक्षितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥

पंचमसीपिसतचक्रशरणां, पूजितमिन्द्रनरेंद्रगणैश्च ।

शांतिकर गणशांतिमभीष्टुः, षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥

दिव्यतकः सुरपुष्पवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषी ।

आतापवारणबामरयुग्मे, यस्य विश्रान्ति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥

ते जगद्विंशतिशांतिजिनेन्द्रं, शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।

सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं, मलयकरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

वसन्ततिलका-येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः, शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ।

ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥

इन्द्रवज्रा-संपूजकानां प्रतिबालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥

सर्वरावृत्तम्-क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्, धार्मिको भूमिपालः ।

काले काले च सम्यग्वर्धतु मघवा, व्याघयो यांतु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां, मास्मभृज्जीवलोके । जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सतत, सर्वसौख्यप्रदायि ॥७॥

अनुष्टुप्-प्रध्वस्तघातिकर्माणः, केवलज्ञानभास्कराः । कुर्वन्तु जगतः शांतिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्टप्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिव्रुतिः संगतिः सर्वदार्ढ्यैः, सद्ब्रुतानां गुणगणकथा दोषघाते च मौनम् ।

सर्वस्यापि प्रियद्विधितवचो भावना चात्मतपश्चे, सम्पद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ ९ ॥

आर्थावृत्तम् ।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदहृदये लीनम् । तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ १० ॥
 अक्खरपयस्यहीणं मत्ताहीणं च ज मए भणियं । तं खमउ पाणदेव य मज्झवि दुःखखखयं भित्तु ॥ ११ ॥
 दुःखखखओ कम्मस्रओ समाहिमरणं च बोद्धिला होय । मम होउ जगतबन्धव तव जिणवर चरणसरणेण ॥ १२ ॥
 त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानन्दककारण कुरुव्व । मयि किंकरेऽत्र करुणां यथा तथा जायते सुक्तिः ॥ १३ ॥
 निर्बिणोह नितरामहंत्त ! बहुदुक्खया भवस्थित्या । अपुन भंवाय भवहर ! कुरु करुणामत्र मयि दीने ॥ १४ ॥
 उदर मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा । अहंलसुद्धरेणे त्वमसीति पुन पुनर्वन्निम ॥ १५ ॥
 त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं । मोहरिपुद्वलितमानं फूत्कारं तव पुरः कुर्वे ॥ १६ ॥
 ग्रामपत्तैरपि करुणा, परेण केनाप्युपच्यते पुसि । जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥ १७ ॥
 अपहर मम जन्म दयां कुत्सेयेकवचसि वक्तव्ये । तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वं ॥ १८ ॥
 तव जिनवर ! चरणाब्जयुगं, करुणामृतशीतलं यावत् । संसारतापमसः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥ १९ ॥
 जगदेकशरण ! भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघा । किं बहुना ? कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥ २० ॥

गुणपञ्चलि ।

अथ विसर्जनम् ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि, शास्त्रोक्तं न कृतं मया । तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु, त्वत्प्रसादाब्जिनेश्वर ॥ १ ॥
 आह्वानं नैव जानामि, नैव जानामि पूजनं । विसर्जनं न जानामि, क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
 मन्त्रहीनं क्रियाहीनं, द्रव्यहीनं तथैव च । तत्सर्वं क्षम्यतां देव, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥
 आह्वता ये पुरा देवा, लब्धभागा यथाकर्म । ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या, सर्वे यान्तु यथास्थितिं ॥ ४ ॥

इति शक्तिपाठः ।

भाषास्तुतिपाठः ।

तुम तरणतारण भव निवारण, यद्विक्रमन आनन्दनो ।

श्रीनामिनन्दन जगत बन्धन, व्याधिनाथ निरंजनो ॥ १ ॥

तुम आदिनाथ अनादि सेऊँ, सेय पदपूजा करूँ ।

कैलासगिरिपर रिषभजिनवर, पद कमल हिरदे धरूँ ॥ २ ॥

तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली ।

यह विरद सुनकर सरन आयो, कृपा कीजे नायजी ॥ ३ ॥

तुम चन्द्रवदन सु चन्द्रलच्छन, चन्द्रपुरि परमेश्वरो ।

महासेननन्दन, जगतवन्दन, चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥

तुम शांति पाँच कल्याण पूजोँ, शुद्धमनववकायजू ।

दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलायजू ॥ ५ ॥

तुम बालब्रह्म विवेकसागर, षड्यकमलविकाशनो ।

श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥

जिन तजो राजकुन्या, कामसैन्या बश करी ।

चारित्र्य चहि भये दूल्ह, जाय शिष्यमणो धरी ॥ ७ ॥

कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्भद कियो ।

अश्वसेननन्दन जगतवन्दन, सकलसंघ मंगल कियो ॥ ८ ॥

जिन घरी बालकपणे दीक्षा, कमठमानविदारकै ।

श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमो शिर धारकै ॥ ९ ॥

तुम कर्मघाता मोखदाता, दीन जानि दया करी ।

सिद्धार्थनन्दन जगतबंधन महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥

छत्र तीन सोहँ सुर दृ सोहँ, वीनती अवधारिये ।

कर जोडि सेवक वीनथे प्रसु, आषागमन निवारिये ॥ ११ ॥

अब होउ भव स्वामी मेरे, मैं सदा सेवकरहोँ ।

कर जोह यो बरदान मांगोँ, मोक्षफल जायत लहोँ ॥ १२ ॥

जो एकमाहीं एक राजै, एकमाहीं अनेकनो ।

इक अनेककी नहीं संख्या, नमों सिद्ध निरंजनो ॥ १३ ॥

चौपाई—मैं तुम चरणकमलगुणगाय, बहुविध भक्ति करी मन लाय ।

जनम जनम प्रसु पाऊं तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि ॥ १४ ॥

कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय ।

बारबार मैं चिनती करू, तुम सेये भवसागर तरू ॥ १५ ॥

नाम लेत सब दुख मिटजाय, तुम दर्शन देखा प्रसु आय ।

तुम हो प्रसु देवनके देव, मैं तो करूं चरण तब सेव ॥ १६ ॥

मैं आयो पूजनके काल, मेरो जन्म सफल ययो आज ।

पूजा करकैं नवाऊ शीश, सुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥ १७ ॥

दोहा—सुख देना दुख भेटना, यही तुम्हारी वान ।

मो गरीबकी चीनती, सुन लोड्यो भगवान ॥ १८ ॥

दर्शन करते देवका, आदि मध्य अवसान ।

स्वर्गनके सुख भोगकर, पावे मोक्ष निदान ॥ १९ ॥

जैसी महिमा तुमविषै, और धरै नहिं कोय ।

जो सूरजमें ज्योति है, तारनमें नहिं सोय ॥ २० ॥

नाथ तिहारे नामतै, अथ छिनमाहिं पलाय ।

ज्यों दिनकर परकाशतै, अन्धकार विनशाय ॥ २१ ॥

बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रसु बहुत अजान ।

पूजाविधि जानूं नहीं, शरण राखि भगवान ॥ २२ ॥



इति भाषास्तुतिपाठ समाप्त ।

प्रतिष्ठासारसंग्रह पंचकल्याणक दीपिका समाप्तम् ।

॥ ३३ नमः सिद्धेभ्यः ॥

प्रतिष्ठासार संग्रह

(पंचकल्याणकदीपिका हिन्दी छन्द सहित)

सम्पादक व सम्प्रहर्ता - स्व० ब्र० सीतलप्रसादजी ।

(समग्रसार, प्रबन्धनसार, प्रबन्धस्तिकास, निश्चयसार, इष्टोपदेश आदि

अनेक अध्यात्म ग्रन्थोंके टीकाकार)

प्रकाशक - मूलचंद्र किसनदास कापडिया, मालिक दिगम्बर जैन पुस्तकालय, गांधीचौक-सुरत

द्वितीयावृत्ति]

वीर सं० २४८८, विक्रम सं० १९१५

मूल्य सं० १-०-०

920

[प्रति ५००

“ जैन विजय ” प्रिन्टिंग प्रेस-सुरतमे मूलचन्द्र किसनदास कापडियानं मुद्रित किया ।